झाँसी की रानी

लक्ष्मीबाई

वृन्दावनलाल वर्मा

परिचय

दीवान आनन्दराय मेरे परदादा थे। रानी लक्ष्मीबाई की ओर से लड़ते-लड़ते सन् १८५८ में मऊ की लड़ाई में मारे गये थे। जब मेरी परदादी का देहान्त हुआ; मैं आठ-दस वर्ष का था। तब परदादी से रानी के विषय में बहुत-सी कहानियां सुना करता था। उन्होंने रानी को देखा था।

उन कहानियों की धरोहर मेरी दादी के पास रही। वह समय-समय पर उनसे मुझको मिलती रही। जब दादी का देहान्त हुआ, मुझको वकालत आरम्भ किये छः वर्ष के लगभग हो चुके थे।

वह धरोहर अद्भुत होते हुये भी अस्पष्ट थी और उसकी रूपरेखा धुँधली तथा सत्य के आधार पर कम और भक्ति के ऊपर अधिक। इधर इतिहास के अध्ययन और तथ्य के अनुशीलन ने उस धरोहर के मूल्य को कम कर दिया। सामने केवल पारसनीस की पुस्तक 'रानी लक्ष्मीबाई का जीवन चरित्र' थी। वह इतिहास का कङ्काल मात्र न थी; परन्तु दादी-परदादी की बतलाई हुई परम्परा के विरुद्ध थी। पारसनीस के अन्वेषण काफी मूल्यवान होते हुये भी उनका विचार कि रानी झाँसी का प्रबन्ध अङ्गरेजों की ओर से 'गदर' के जमाने में करती रहीं, परदादी और दादी की बतलाई हुई परम्पराओं के सामने मन में खपता नहीं था। तो भी मैं सोचता था, शायद ये परम्परायें जनता के इच्छा-संकल्पों (wishful thinking) का फल हैं, इसलिये छुटपन से जिस मूर्ति की मन में निष्ठापूर्वक पूजा करता चला आ रहा था, उसके प्रति कुछ नास्तिकता उत्पन्न हो गई।

सुनता रहता था कि रानी स्वराज्य के लिये लड़ी थीं, पारसनीस के ग्रन्थ में पढ़ा कि इनका शौर्य विवशता की परिस्थितियों में उत्पन्न हुआ था! मैं जब बोर्डिङ्ग हाउस के जीवन में था, एक स्वप्न देखा कि हौकी-ग्राउण्ड पर युद्ध हो रहा है और मैं रानी की तरफ से, 'स्वराज्य' के लिये लड़ता हुआ घायल हो गया हूँ, तब जागने पर बड़ा अचम्भा हुआ, क्योंकि खेल में उस दिन हौकी का डण्डा भी नहीं खाया था।

यह स्वप्न मुझको प्रायः दिक किया करता था।

सन् १९३२ तक यह उथल-पुथल अर्द्ध-सुसुप्त रूप में मन के किसी कोने में पड़ी रही।

एक दिन एक साहब ने कहा, 'जजी कचहरी की एक अलमारी में चालीस-पचास चिट्ठियां रखी हुई हैं जो १८५८ में किसी अङ्गरेज फौजी अफसर ने लैं० गवर्नर के पास झांसी को अधिकृत कर लेने के बाद रोज-रोज भेजी थीं।

मैंने उन चिट्ठियों की नकल करवाई। उनमें कोई खास बात तो नहीं मिली परन्तु एक विश्वास जगह करने लगा—रानी का शौर्य विवशता की परिस्थिति में उत्पन्न नहीं हुआ था।

कचहरी में नवाब बन्ने नाम के एक अर्जीनवीस काम करते थे। वह मुझको प्रायः रोज ही कचहरी में मिलते थे। वह राजा रघुनाथराव के लड़के नवाब अलीबहादुर की लड़की के लड़के निकले! मैंने सोचा, शायद इनके पास रानी सम्बन्धी कोई सामग्री हो। पूछने पर उन्होंने बतलाया कि नवाब अलीबहादुर का रोजनामचा इत्यादि घर पर रक्खे हैं। मैं उत्सुकता के मारे परेशान हो गया। रोजनामचा देखने को मिला। उसको मैंने पढ़वाया। नवाब अलीबहादुर कैसे थे और उनका नौकर पीरअली किस तरह का आदमी था यह तो उनके रोजनामचे से प्रकट होता ही था परन्तु रानी लक्ष्मीबाई की विलक्षणता और तत्कालीन समाज की प्रगति और रहन-सहन का भी उससे पता चला। रोजनामचा दीमक के हमलों से जर्जर हो चुका था; और अब तो उसके शुरू का भाग नष्ट ही हो गया है परन्तु मैंने नोट ले लिये।

१८५८ में नवाब अलीबहादुर ने अपनी राजभक्ति के प्रमाण में कुछ बयान दिये थे। उन बयानों में पीरअली का भी जिकर किया था। वे बयान भी मुझको मिल गये।

इससे बढ़कर, मुझको एक व्यक्ति मिले—मुं० तुराबअली दरोगा। ये, ८, १० वर्ष हुये तब परलोकगामी हुये ११५ वर्ष की आयु में। 'गदर' के जमाने में तुराबअली साहब अङ्गरेजों की ओर से पुलिस के

थानेदार थे। इनसे मुझको रानी के विषय में बहुत बातें मालूम हुईं—दादी परदादी की परम्पराओं की पोषक ! और अंग्रेजों के दरोगा से !!

उन्हीं दिनों झाँसी में एक बुड्ढा और मिला। नाम अजीमुल्ला। यह रानी के विषय में तुराबअली की अपेक्षा कहीं अधिक बातें जानता था। इसने रानी को देखा था परन्तु वह उस समय छोटा था। तुराबअली ने तो रानी को सैकड़ों ही बार देखा था।

इसके उपरान्त मैंने झाँसी के बुड्ढे-बुढ़ियों को परेशान करना शुरू कर दिया। परन्तु वे जिस उत्साह और भक्ति के साथ रानी की बातें बतलाते थे उससे मैं यह सोचता हूं कि वे परेशान न हुये होंगे।

सवाल था रानी स्वराज्य के लिये लड़ीं या अंग्रेजों की ओर से झाँसी का शासन करते-करते उनको जनरल रोज से विवश होकर लड़ना पड़ा ?

रानी ने बानपुर के राजा मर्दनसिंह को जो चिट्ठी युद्ध में सहायता करने के लिये लिखी थी उसमें 'स्वराज्य' का शब्द आया है। यह चिट्ठी इस प्रश्न का सदा के लिये स्पष्ट उत्तर देती है। खेद है कि मैं इस संस्करण में उस चिट्ठी का चित्र न दे सका—बानपुर के राजा के वंशज ने वह चिट्ठी या उसका फोटो मेरे हवाले नहीं किया परन्तु अगले संस्करण में दे सकने की मुझको आशा है।

राजा गङ्गाधरराव का हस्ताक्षर मुझको राजा साहब कटेरा ने अपनी एक सनद दिखला कर सुलभ कर दिया। कृतज्ञ हूँ। सनद की नकल भी मेरे पास है। उस समय, ९५ वर्ष पहले लगभग आज ही की तरह की हिन्दी लिखी जाती थी, इस सनद से पता लगता है।

मराठी में विष्णुराव गोडशे का 'माझा प्रवास' एक छोटा-सा प्रबन्ध है। गोडशें रानी के साथ किले में था, जब रोज के मुकाबले में रानी लड़ीं। मैंने अपनी पुस्तक में माझा प्रवास का भी उपयोग किया है।

मोतीबाई ऐतिहासिक है। मुझको उसका पता अकस्मात ही चला। ओर्छे दरवाजे एक मस्जिद है। जमीन का झगड़ा कचहरी में चला। मैं मस्जिद वालों की तरफ से वकील था। जमीन का खेवट झाँसी में न था। ग्वालियर में था। वहाँ से नकल मँगवाई। उसमें जमीन की पूर्व

स्वामिनी निकली मोतीबाई नाटकशाला वाली ! गङ्गाधरराव को नाटक खेलने और खिलवाने का बड़ा शौक था। स्त्रियों का अभिनय स्त्रियाँ ही करती थीं। इनमें मोतीबाई भी थी। मोतीबाई का पता लगाते-लगाते जूही, दुर्गा और मुगलखाँ भी निगाह में आये। इन सबके सम्बन्ध की घटनाओं का सार सच्चा है।

सन् १९३२ से मैं इन अनुसन्धानों में लगा।

एक दिन रानी लक्ष्मीबाई के भतीजे मुझको झांसी में घर पर ही मिले। वे रानी के ऊपर हिन्दी में कुछ लिखना चाहते थे। रानी क्यों लड़ीं, इस समस्या पर हम दोनों एक मत थे।

फिर एक दिन डाक्टर सावरकर के एक सेक्रेटरी मुझको झाँसी में ही मिले। वे मराठी में 'सत्तावनी' लिख रहे थे। रानी के सम्बन्ध की जो सामग्री उनके ग्रन्थ के लिये आवश्यक थी, मैंने दी। मैं सोचता था कि रानी के विषय में बहुत लोगों ने कुछ न कुछ लिखा है और लिख रहे हैं, मैं क्यों कुछ और प्रयत्न करूँ ? कुछ दिनों बाद मेरी यह धारणा बदल गई।

कलक्टरी में कुछ सामग्री मिली। १८५८ में लोगों के बयान लिये गये थे। इनको मैंने पढ़ा। इनको पढ़कर मैं अपने विश्वास में और दृढ़ हुआ—रानी 'स्वराज्य' के लिये लड़ी थीं।

मेरा वह स्वप्न—जिसकी भूमिका हौकी ग्राउण्ड पर थी, फिर ताजा हुआ। मैंने निश्चय किया कि उपन्यास लिखूंगा, ऐसा जो इतिहास के रग-रेशे से सम्मत हो और उसके संदर्भ में हो। इतिहास के कङ्काल में माँस और रक्त का सञ्चार करने के लिये मुझको उपन्यास ही अच्छा साधन प्रतीत हुआ। उस साधन को मैंने जो कुछ रूप दे पाया है वह पाठकों के सामने है।

यदि आनन्दराय ने रानी के लिये गोली खाई और मेरी कलम ने थोडी-सी स्याही—तो इस अन्तर को पाठक अवश्य ध्यान में रखने की कृपा करें।

वृन्दावनलाल वर्मा

प्रस्तावना

[१]

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के प्रतिनिधि ने झांसी के शासक रामचन्द्रराव के पास खरीता भेजा, 'नवाब गवर्नर जनरल साहब, लार्ड विलियम वेन्टिक ने आपको आज से राजा की उपाधि दी है। कम्पनी सरकार की मित्रता के प्रतीक रूप में यूनियन-जैक झण्डा आपको भेंट किया जाता है। इसके गौरव की रक्षा कीजियेगा।'

झाँसी के किले वाले महल के मैदान में, धूमधाम और तड़क-भड़क के साथ जो दरबार सन १८३२ में हुआ था उसमें उपरोक्त घोषणा सुनाई गई थी। रामचन्द्रराव ने उपाधि और पताका सहर्ष ग्रहण की। झांसी के शासक के साथ कम्पनी की सबसे पहली सन्धि सन् १८०४ में हुई थी। उस समय पन्त प्रधान (पेशवा) बाजीराव द्वितीय की मातहती में शिवराव भाऊ झांसी के शासक थे और वह सूबेदार कहलाते थे। यह सन्धि परस्पर मैत्री और सहायता के आधार पर की गई थी। पेशवाई निर्बल हो चुकी थी। सूबेदार सशक्त थे। बुन्देलखण्ड को अधिकृत करने के लिये अङ्गरेजों को झांसी के सूबेदार की मित्रता अभीष्ट थी।

इस सन्धि का बुन्देलखण्ड के रजवाड़ों पर प्रभाव पड़ा।

सन् १८१७ के जून में पन्तप्रधान-बाजीराव से अंग्रेजों की अन्तिम संधि हुई। इस संधि ने पेशवा के सम्पूर्ण अधिकार, ठोस और खोखले, जो उसको बुन्देलखण्ड में प्राप्त थे, ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दे दिये।

बाजीराव को इस संधि द्वारा आठ लाख रुपये वार्षिक पेन्शन, बिठूर खास की जागीर और पूना त्याग कर बिठूर का प्रवास मिला।

उसी साल नवम्बर के महीने में शिवराव भाऊ के पौत्र रामचन्द्र के साथ, जो उस समय नाबालिग था, दूसरी संधि हुई, जिसमें पेशवा का स्थानापन्न कम्पनी सरकार को मनवाया गया। एक शर्त उस सन्धि में यह भी थी कि झांसी का राज्य रामचन्द्रराव के कुटुम्ब में 'दवाम' के लिये रहेगा, चाहे वारिस और सन्तान हों, चाहे सगोत्रज हों अथवा गोद लिये हुये हों।

सन् १८३२ में रामचन्द्रराव और उसके वारिसों को राजा की उपाधि दी गई।

उस दरबार में शिवराव भाऊ के लड़के रघुनाथराव और गंगाधरराव भी थे। शिवराव भाऊ का जेठा लड़का कृष्णराव था। उसका देहान्त हो चुका था। रामचन्द्रराव कृष्णराव का पुत्र था। शिवराव भाऊ के जेठे लड़के की सन्तान होने के कारण झाँसी की गद्दी उसको मिली थी।

राजा की उपाधि मिलने के उपलक्ष में जो दरबार हुआ था, उसमें राज्य के छोटे बड़े सब जागीरदार पुरस्कृत किये गये। छोटे जागीरदारों में मऊ का एक युवक आनन्दराय कायस्थ था। उसके घराने में ताम्रपत्रों की सनदों द्वारा जो माफी लगी थी, वह पुष्ट की गई। कुछ बढ़ा भी दी गई। गायक, वादक और नर्तकियों पर भी पुरस्कार बरसाये गये।

रामचन्द्रराव की नाबालिगी के जमाने में शासनसूत्र उसकी माँ सखूबाई के हाथ में था। जब वह वयस्क हो गया तब भी सखूबाई अधिकार-लोलुपता का त्याग न कर सकी।

रामचन्द्रराव ने राजा की स्थायी उपाधि पाते ही शासनसूत्र, पूरे तौर पर, अपने हाथ में ले लिया और दो-दिन में ही खजाने को लगभग रीता कर दिया। सखूबाई को खजाने का खाली होना इतना नहीं अखरा जितना अपने हाथ से राज्य की बागडोर का चला जाना।

सखूबाई जरा ढली आयु की प्रचण्ड वेगमयी राजमाता थी। माथे और चेहरे की शिकनें राजदण्ड के निरन्तर कठोर उपयोग और क्रोध के आवेशों के व्यवहार की कथा कहती थीं। उसकी कठोरता विख्यात थी।

सखूबाई से रामचन्द्रराव का राजा होना नहीं सहा गया। उसने रामचन्द्रराव को मरवा डालने का षड्यन्त्र रचा।

झाँसी के लक्ष्मी-फाटक के बाहर लक्ष्मी-तालाब के दक्षिण-पश्चिमी सिरे पर महालक्ष्मी का मन्दिर है। इस मन्दिर के चौपड़े में सखूबाई ने अपने लड़के का वध करने के लिये भाले गड़वाये। रामचन्द्रराव को तैरने का बहुत शौक था—विशेषकर रात में। सखूबाई को विश्वास था कि उस रात रामचन्द्रराव चौपड़े में तैरने के लिये मुटार लगायेगा—और समाप्त हो जायगा।

परन्तु लालू कोदेलकर नाम के एक मराठा युवक और मऊ के उपरोक्त आनन्दराय की सहायता के कारण रामचन्द्रराव बच गया। आनन्दराय तो अपने घर मऊ निकल भागा, पर कोदेलकर को दो दिन बाद सखूबाई ने मरवा डाला। लालू कोदेलकर के तीन दरिद्र नातेदार थे। वे झाँसी से भागे। लालू के देहान्त के कुछ समय उपरान्त इन तीनों के एक एक लड़की हुई। इन बालिकाओं के नाम थे काशी, सुन्दर और मुन्दर। तीनों बालिकायें सुन्दर थीं। परन्तु इनका लालन-पालन बड़ी दरिद्रता में हुआ। सखूबाई का क्रोध कोदेलकर तक ही सीमित न था, उसके नातेदार भी आतंकग्रस्त थे और राजाश्रय से वंचित।

रामचन्द्रराव अपनी माँ के साथ, इतना सब होने पर भी, कठोर बर्ताव नहीं करना चाहता था। परन्तु उसके दोनों काका—रघुनाथराव

और गंगाधरराव—तथा दीवान, सखूबाई को स्वतन्त्र नहीं छोड़ना चाहते थे। वह कैद कर दी गई। लालू कोदेलकर के नातेदार झाँसी बुला लिये गये और मऊ के आनन्दराय को संरक्षण मिल गया।

रामचन्द्रराव सन १८३५ में निस्सन्तान मरा। उसकी विधवा रानी ने कृष्णराव नामक एक बालक को गोद लिया। कम्पनी सरकार ने इस गोद को नहीं माना। रघुनाथराव को उत्तराधिकारी करार देकर, गद्दी दी। गंगाधरराव रघुनाथराव से छोटे थे।

जब शिवराव भाऊ के जेठे भाई रघुनाथ हरि (१७५६—१७९६) झाँसी के सूबेदार होकर आये तब जो लगान किसानों पर बाँधा गया, ज्यादा था। सब का सब कभी वसूल नहीं होता था। पूरा बीस लाख रुपया साल सखूबाई ने ही रामचन्द्रराव की नाबालिगी के समय में वसूल करने का प्रयास किया। गाँवटी पञ्चायतें हाहाकार कर उठीं। परन्तु उस सामन्त युग में, बिचारे किसान लुटेरों और बटमारों के सन्ताप के मारे कुछ कर ही नहीं सकते थे।

रामचन्द्रराव के राज्यकाल में लगान उत्तरोत्तर कम वसूल किया जाने लगा। खजाने में जो कुछ रुपया था उसका एक अंश सखूबाई ने दाब लिया और अधिकाँश रामचन्द्रराव ने खर्च कर डाला। बाकी रघुनाथराव के शिथिल शासन में साफ हो गया।

रघुनाथराव रङ्गीली प्रकृति के रईस थे। उनकी वेश्याओं में से लच्छो नाम की एक मुसलमान वेश्या थी। इसके दो लड़के और लड़कियाँ हुईं। बड़े लड़के का नाम नवाब अलीबहादुर था। जब रघुनाथराव सन् १८५२ में झाँसी के राजा हुए अलीबहादुर की आयु २२ वर्ष की थी। लच्छो की कबर आँतिया ताल के बंध के नीचे मेंहदी-बाग में है।*एक समय था जब लच्छो नईबस्ती के महल में रहती थी

*झांसी के सदर अस्पताल के अहाते में जिस गजरा वेश्या की कबर है उसको गंगाधरराव के पिता शिवराव भाऊ रक्खे थे, न कि रघुनाथराव या गंगाधरराव, जैसा कि अनेक इतिहास लेखकों का भ्रम है।

और मेंहदी बाग के फूल उस पर न्योछावर होते थे—अब उसकी टूटी कबर पर घास और जङ्गली पौधे खड़े हुये हैं। रघुनाथराव और लच्छो के महल खण्डहर हो गये हैं और उनमें झांसी म्युनिस्पैलिटी की कूड़ा-गाड़ियां रक्खी जाती हैं, बैल बाँधे जाते हैं और उनके लिये घास-चारा भरा जाता है।

सखूबाई के शासनकाल में रघुनाथराव और गङ्गाधरराव—दोनों भाइयों—की मनोवृत्तियां आमोद-प्रमोद की ओर झुकीं, बढ़ीं और उसी में तल्लीन हुईं। लड़ाइयाँ लड़नी नहीं थीं कि जिस कारण प्रजा को—ख़ासकर किसानों को—सन्तुष्ट रक्खा जावे।

कुराज्य था, कुशासन था। परन्तु गाँवटी पंचायतें बनी हुई थीं। पूरा लगान वसूल नहीं होता था। पंचायत की रक्षा प्रत्येक ग्रामीण को सहज ही प्राप्य थी। पंचायतों के अधिकार जब्त होकर अदालतों के हवाले नहीं हुये थे। जरा-जरा सी सड़ी-गली बात के लिये राज्य के पदाधिकारियों के घरों पर हाजिरी नहीं देनी पड़ती थी। बड़े मामलों के लिये बँधे हुये हक-दस्तूरों—रिश्वतों—के छेदों में होकर जनता अपने नित्य के जीवन में आराम और निभाव को खींचती-घसीटती चली जाती थी।

शासन-शक्ति का केन्द्रीयकरण नहीं हुआ था। लोगों को अपने औसान और पराक्रम का सहारा पकड़ने के बहुधा अवसर मिलते रहते थे। समाज में सन्तुलन यथेष्ट नहीं था—समानता, विषमता स्पष्ट थी। परन्तु आर्थिक श्रृङ्खलाओं की कड़ियां मजबूती के साथ जुड़ी हुई थीं। धन एक जगह इकट्ठा हो-होकर बट-बट जाता था। एक-एक आश्रय पर शत्-शत् आश्रित टँगे हुये, लिप्त और संलग्न थे। आश्रय और आश्रित सब क्रियाशील। जहां आश्रय श्रमहीन, प्रयत्न रहित और दुश्शील हुआ कि गया और उसका स्थान दूसरे प्रबल सबल स्थानापन्न ने ग्रहण किया। खोखला गौरव अपनी कहानी बहुत अल्प समय तक ही कह सकता था।

उस समय के इस प्रकार के वह आश्रय—रघुनाथराव—अपनी निष्क्रियता में मुश्किल से दो वर्ष टिक पाये थे कि झाँसी के अड़ौस-पड़ौस तक में लूट मार, भम्भड़ और दंगा-फसाद होने लगा। झाँसी राज्य पर अनेक साहूकारों का बहुत कर्जा चढ़ गया। इसलिये सन् १८३७ में झांसी राज्य कोर्ट कर लिया गया।

रघुनाथराव ने राज्य के कोर्ट होने के पहिले ही झाँसी का बचा-खुचा खजाना भांड़-भगतियों में वितरित कर दिया और अपने पुत्र नवाब अलीबहादुर को करेरा पिछोर तथा डामरोंन परगनों के ८५ गांव जागीर में लगा दिये; जिसकी आय साढ़े छहत्तर हजार रुपये वार्षिक समझी जाती थी।

रघुनाथराव ने एक काम और किया—सखूबाई को कैद से मुक्त कर दिया।

सन् १८३८ में रघुनाथराव का देहान्त हो गया।
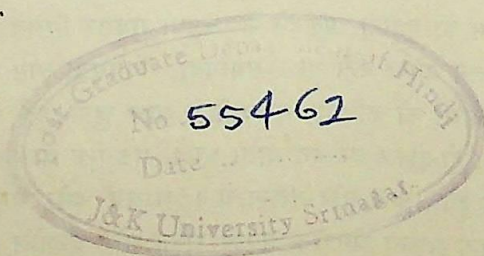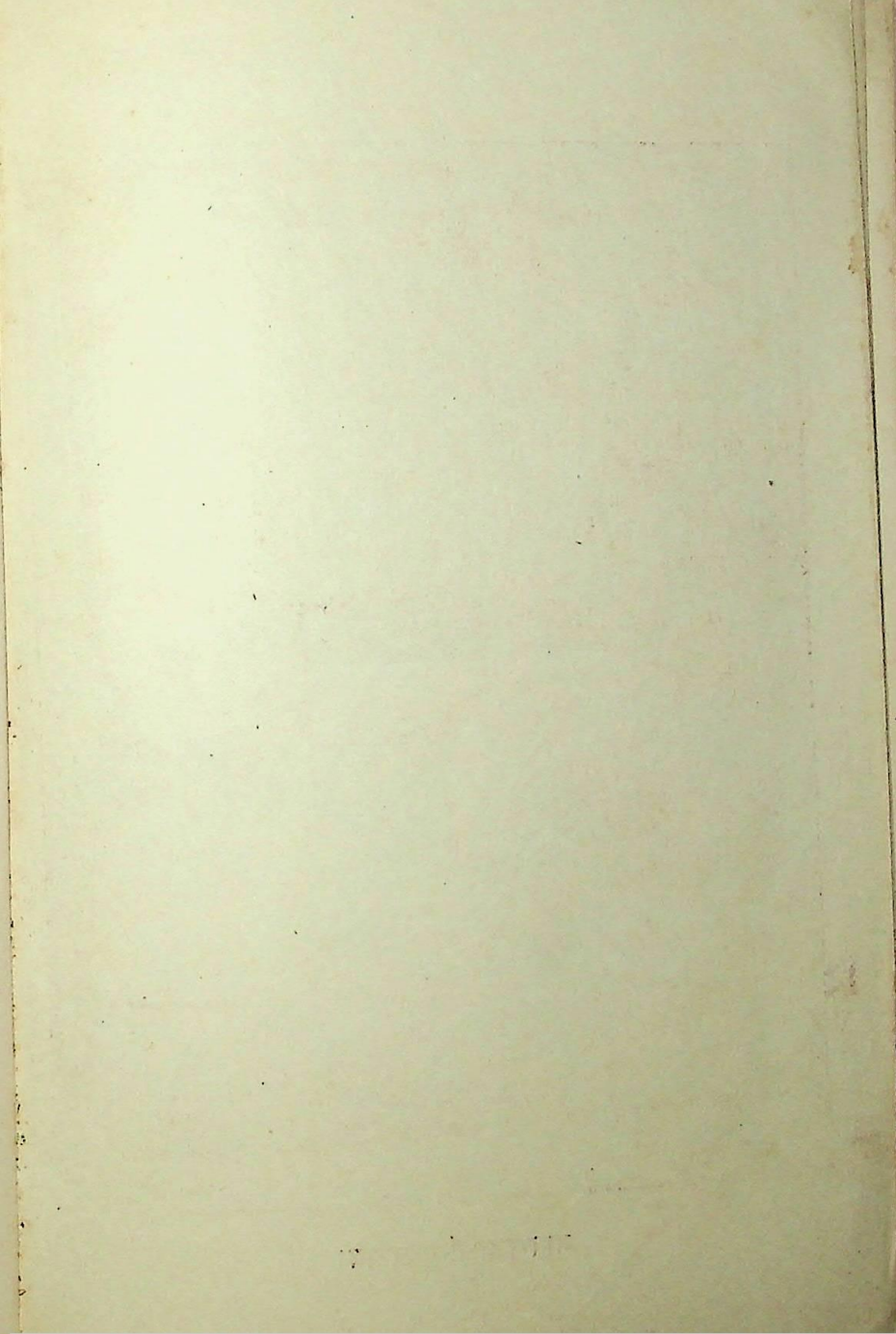
महाराजा गंगाधरराव

[२]

रघुनाथराव के उपरान्त राज्य के लिये चार मुख्य दावेदार खड़े हुये गंगाधरराव (भाई), कृष्णराव (रामचन्द्रराव का कथित दत्तक पुत्र) अलीबहादुर और रघुनाथराव की विधवा रानी।

कृष्णराव की पीठ पर सखूवाई थी। बन्दीगृह के जीवन ने सखूवाई का दमन नहीं कर पाया था, प्रत्युत वह अधिक सतर्क, सतेज और सनकीली हो गई थी।

रघुनाथराव की अन्त्येष्टि क्रियायें भी सांगोपांग न हो पाई थीं कि सखूबाई ने किले पर अधिकार कर लिया, खजाने पर अपने संत्री बिठला दिये, तोपों पर अपने तोपचियों को और सिलहखाने पर अपने सिलेदारों को नियुक्त कर दिया।

गंगाधरराव शहर वाले महल में थे। उनको ऐसा लगता था जैसे अपने ही घर में कैद हों।

सखूवाई को कैद करने का निर्णय जिन लोगों ने दिया था उनमें गंगाधरराव भी थे। सखूवाई की प्रतिहिंसा के भय से और साधन हीन होने के कारण गंगाधरराव झाँसी से भागे और अंग्रेजों के पास सीधे कानपूर पहुँचे। उस समय कानपूर अंग्रेजों की बढ़ी हुई शक्ति का काफी बड़ा अड्डा था।

अलीबहादुर ने करेरा के दुर्ग में शरण ली और वह वहाँ से सैन्य-संग्रह करने लगे। उस समय मध्यभारत के लिये गवर्नर जनरल का एजेण्ट साइमन फ्रेजर था—सन् १८५७ के विप्लवकाल में यह आगरे का लैफ्टिनैंट गवर्नर हो गया था।

इस गड़बड़ की खबर पाकर फ्रेजर झाँसी आया। कम्पनी सरकार के प्रबल संगठन और बल के आतङ्क ने उसके कर्मचारियों को उद्धत बना दिया था। वह दो-एक चोबदारों को लेकर सखूबाई के पास किले में पहुंचा और उसने सखू को धमकाया।

सखू ने कोई परवाह नहीं की।

मधुमास का महिना था। होली हो चुकी थी। जनता अपने रङ्ग में मस्त थी। सखूबाई के इशारे पर फ्रेजर की किले से बाहर निकलते ही, बहुत दुर्गति हुई।

फ्रेजर सेना और तोपखाना लेकर लौटा। सखूबाई किला छोड़कर भाग गई। अलीबहादुर करेरा त्याग कर कम्पनी के शरण में आ गये; और उनको ५००) मासिक पेन्शन देना तै हो गया। झाँसी राज्य का मामला तै करने के लिये एक कमीशन बैठा। कमीशन ने उत्तराधिकार का निश्चय गङ्गाधरराव के हक में किया।

गङ्गाधरराव कानपूर से झाँसी आ गये। धूमधाम के साथ उनका अभिषेक हुआ। परन्तु झाँसी राज्य पर कुप्रबन्ध और ऋण का इतना बोझ बढ़ गया था कि फिर कोर्ट हो गया। बात सन् १८३९ की है।

गङ्गाधरराव साहित्य और ललित-कलाओं के पूरे रसिक थे। सुखलाल काछी उनका चित्रकार था। पढ़ा-लिखा कम परन्तु कलम और कूंची की सही विधि; कोमलता और हथौटी का आचार्य! गायक, वादक, खास कर ध्रुवपद, वीणा और पखावज के उस्ताद और रीतिकाल तथा भक्ति-रस की ओट वाले कवि, गंगाधरराव की महफिल को आबाद करने लगे। उन्होंने दूर-दूर से नाना प्रकार के हस्तलिखित ग्रन्थ इकट्ठे करवाये और विशाल पुस्तक भण्डार से अपने पुस्तकालय को भर दिया। वेद, उपनिषद्, दर्शन, पुराण, तन्त्र, आयुर्वेद, ज्योतिष, व्याकरण, काव्य इत्यादि के इतने ग्रन्थ उनके पुस्तकालय में थे कि लोग दूर-दूर से उनकी प्रतिलिपि के लिये आने लगे।

नाटकों का उन्हें विशेष शौक था। वे संस्कृत नाटकों का अनुवाद हिन्दी और मराठी में करवाया करते थे और उनका अभिनय भी करवाते थे। शहर के महल के ठीक पीछे पश्चिमी दिशा में नाटकशाला थी।*

*अब यह खंडहर है। गिरजाघर के उत्तर में केवल सड़क बीच में है।

गङ्गाधरराव स्वयं अभिनय करते थे। पुरुष के अभिनय से सन्तोष नहीं होता था, इसलिये स्त्री की भूमिका में भी आ जाते थे। स्त्रियों का अभिनय करने के लिये उन्होंने बहुत सुन्दर नाचने-गाने वालीं नियुक्त कर रक्खी थीं। इनमें मोतीबाई बहुत प्रसिद्ध थी।*

उसका सौन्दर्य अप्सरा सा था। फूलों जैसी कोमलाङ्गी। स्वरलहरी सी मोहक और चंचल; परन्तु वेश्यापुत्री होने पर भी वह कुमारी थी और नाटकशाला के बाहर पर्दे में रहती थी। बहुत कुशल अभिनेत्री थी परन्तु इसको भी गङ्गाधर राव अपने उदाहरण से यथावत् अभिनय सिखलाते थे।

गङ्गाधरराव की नाटकशाला में मोतीबाई छोटी उम्र में आ गई थी। जो लोग गङ्गाधरराव की कृपा से नाटकशाला में खेल देखने जाया करते थे वे बाहर आकर उसके रूप की नृत्य और संगीत की, उसके हाव भाव की तथा अभिनय की प्रशंसा करते नहीं अघाते थे।

---

*झाँसी के खेवट में मोतीबाई नाटकशाला वाली के नाम से विख्यात है '

[३]

झाँसी की गद्दी पर राजा गङ्गाधरराव को बैठे और झाँसी राज्य के शासन को अंग्रेजों द्वारा चलते सात-आठ साल हो गये। नगर का शासन गङ्गाधरराव के हाथ में था और बाकी राज्य का कम्पनी के कर्मचारियों के हाथ में।

चैत लग गया। वसन्त ने पत्थरों और कङ्कड़ों तक पर फुलवाड़ियाँ पसार दीं। टेसू के फूलों ने क्षितिज को सजा दिया और धरती पर रङ्ग-बिरंगे चौक पूर दिये। समीर और प्रभञ्जन में भी महक समा गई। रात और दिन संगीत में पुलकित हो उठे।

उस रात नटकशाला में 'रत्नावली' का अभिनय था। हिन्दी अनुवाद द्वारा। मोतीबाई को रत्नावली का रूपक करना था। निर्देशन स्वयं राजा का। गायन-वादन और नृत्य बड़े उस्तादों के दिग्दर्शन में तैयार हुये थे।

दर्शक सब निमन्त्रण पर आये थे। राजा गङ्गाधरराव सबसे आगे बैठे थे। उनकी आयु इस समय जीवन के लगभग बीचोंबीच थी। सुन्दर, स्वस्थ और राजसी। पीछे परन्तु पास ही उनके सङ्गी खुदाबख्श, दीवान रघुनाथसिंह, राव दूल्हाजू, दीवान जवाहरसिंह इत्यादि दायें-बायें बैठे हुये थे। सब नौजवान। स्वास्थ्य और यौवन की उमङ्गों में भरे हुये। मोतीबाई के छलकते-मदमाते यौवन और सौन्दर्य को देखने के लिये आतुर। पर्दा खुला। सूत्रधार का मङ्गल गान हुआ। कुछ समय बाद रत्नावली की भूमिका में मोतीबाई इठलाती हुइ रङ्ग-मञ्च पर आई। खुदाबख्श के मुँह से यकायक 'वाह!' निकल पड़ा। मोतीबाई ने खुदाबख्श को देखा। खुदाबख्श ने आंखें गड़ाईं। जब जब मोतीबाई रङ्गमञ्च पर जिस जिस दृश्य में आई उसने दर्शकों पर से दृष्टि को समेटकर खुदाबख्श पर केन्द्रित किया।

मोतीबाई ने नृत्य भी बहुत मोहक किया। नृत्य के समय चितवन की कोरों को मस्ती से भरने का प्रयत्न किया। और, पलकों को अनेक

बार अर्ध-मुकुलित झपकियाँ दीं। खुदाबख्श के मुँह से फिर 'वाह!' निकली। राजा को अच्छा नहीं लगा। बोले, 'तुम मूर्ख हो। जिस रत्नावली का विवाह राजा के साथ होने वाला है उसको क्या वेश्याओं जैसा नयन-मटकौअल करना चाहिये ?'

दर्शकों की सम्मति थी कि सारा नाटक सफल अभिनय और मनोहर गायन-वादन तथा नृत्य के साथ समाप्त हुआ है। दर्शक नाटकशाला के बाहर गये। राजा गङ्गाधरराव रङ्गमञ्च के शृङ्गार-कक्ष में पहुँचे। मोतीबाई ने नतमस्तक प्रणाम किया। उसको विश्वास था कि आज सब कार्य कला के सर्वाङ्ग सहित पूरा किया। प्रफुल्लता के मारे उसका चेहरा दमक रहा था। राजा के मुँह से प्रशंसा के दो शब्द सुनने की ललक थी।

राजा ने कहा, 'आज क्या शराब पीकर आई थी ?'

मोतीबाई सन्नाटे में आ गई। चेहरा उतर गया। जैसे एकदम कुम्हला गई हो। धीमे, कोमल, मधुर स्वर में बोली, 'श्रीमन्त सरकार, मैंने शराब तो कभी भी नहीं पी है। आज क्यों पीती ?'

'फिर आँखों को आज इतना ढाल क्यों दिया ?' राजा ने प्रश्न किया।

एक छोटी-सी आह को भीतर ही दबाकर मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'मैं भूल गई।'

राजा कुछ शान्त हुये। बोले, 'जिस भूमिका का अभिनय करना हो उसके चरित्र को कभी न भूलो। अभिनय सफल तभी कहलावेगा जब पात्र अपने को तो बिलकुल भूल जावे परन्तु अपनी भूमिका की एक एक रेखा को अच्छी तरह स्मरण रक्खे। उसमें तन्मय हो जावे। मैंने पहले भी बतलाया है। समझी ?'

मोतीबाई के मन में एक प्रतिवाद उठा, परन्तु उसने अपने को पूरी तौर से संयत करके विनय की, 'हाँ सरकार। आगे कभी भूल न होगी।'

राजा ने कहा, 'अबकी बार कालिदास का अभिज्ञान शकुन्तला होगा। तुमको शकुन्तला का अभिनय करना है।'

मोतीबाई की उदासी चली गई। बालों जैसी सरल प्रफुल्लता के साथ उसने कहा, 'महाराज मैं भरसक प्रयत्न करूँगी। सरकार के दिग्दर्शन का अपमान न होगा।'

राजा प्रसन्न होकर चले गये। पात्रों और पात्राओं ने जय-जयकार किया, 'श्रीमन्त सरकार महाराज गङ्गाधरराव बहादुर की जय।'

नियुक्त तिथि और समय पर शकुन्तला नाटक का अभिनय हुआ। लगभग वे ही सब दर्शक उपस्थित हुये।

आभूषण विहीन परन्तु पुष्पों से लदी हुई मोतीबाई तपोवन की सहेलियों के साथ वेलों और लताओं को सींचते ही दर्शकों के मन को मद-सा वितरित करने लगी। परन्तु खुदाबख्श उस रात की रत्नावली की प्रमत्त आंख की झलक देखने के लिये व्याकुल था।

होते होते नाटक के अन्तिम दृश्यों की बारी आई।

सुरासुर संग्राम में इन्द्र की सहायता करने के उपराँत दुष्यन्त लौटा। आश्रम में सिंह के बच्चों के साथ खेलता हुआ लड़का मिला। स्नेह उमड़ा। बालक के हाथ से गण्डा खिसक गया। दुष्यन्त ने उठा लिया। गण्डा सांप के आकार में परिवर्तित नहीं हुआ। इस व्यापार को देखने वाली शकुन्तला की एक सहेली को विस्मय हुआ। दुष्यन्त को उस बालक की माता का नाम मालूम हो गया। मलिन वेशधारिणी शकुन्तला भी बाल बिखेरे आश्रम से बाहर निकल आई। दुष्यन्त ने पहिचान लिया। उसको परिताप हुआ। शकुन्तला ने अपनी विपत्ति का कारण अपने दुर्भाग्य को बतलाया परन्तु उससे दुष्यन्त को सन्तोष नहीं हुआ। क्षमा प्राप्ति और प्रायश्चित करने के लिये दुष्यन्त शकुन्तला के पैरों पर गिर पड़ा।

दुष्यन्त के पैरों पर गिरते ही मोतीबाई की दृष्टि एक क्षण के लिये खुदाबख्श पर गई। उसकी आँखें तरल थीं। और अनेक दर्शक भी अपने आंसुओं से, मानो स्त्रियों के साथ किये गये दुर्व्यवहारों का प्रायश्चित्त कर रहे थे? मोतीबाई की आंखों में बड़े-बड़े आँसू आ गये।

गङ्गाधरराव ने खुदाबख्श की ओर गर्दन मोड़ी। कहा, 'क्यों रे कैसा रहा ?'

मोतीबाई की आंखों के आँसुओं की ओर जरा-सी निगाह फिर डालकर खुदाबख्श ने रुद्ध स्वर में कहा, 'महाराज बहुत अच्छा ?'

'पर 'वाह' 'वाह' नहीं निकली ?' राजा ने पूछा।

खुदाबख्श जरा झेंपा। झेंप को दबाने के लिये मुस्कराकर बोला, 'हुज़ूर उसके लिये कोई जगह नहीं पाई।'

राजा इस बात को पीकर रह गये। खेल की समाप्ति पर दर्शक नाटकशाला के बाहर हुये और गङ्गाधरराव शृङ्गार कक्ष में। मोतीबाई अब भी मलीन वेश में थी। अभिनय के विषय में सम्मति सुनने के लिये प्रणाम करती हुई राजा के सम्मुख आई। उन्होंने उसकी पीठ पर थपकी देकर शाबाशी दी। कहा, 'तुम्हारा आज का अभिनय बहुत अच्छा और स्वाभाविक रहा। कालीदास महान् हैं। उन्होंने उस समय शकुन्तला के हृदय को जो आँसू दिये थे, तेरे बड़े नेत्रों में ब्याज के साथ लौटा दिये।' मोतीबाई प्रसन्नता के मारे फूल गई। बिना पुष्पों के ही पुष्पों से लदी जान पड़ी।

राजा ने उसको एक बड़ा बाग जागीर में लगा दिया।*

दूसरे दिन राजा गङ्गाधरराव ने खुदाबख्श को राजदरबार से अलग कर दिया और घोषणा करवाई कि यदि खुदाबख्श फिर कभी झाँसी शहर में दिखलाई पड़ा तो उसके नंगे शरीर पर कोड़े लगाये जायेंगे।

लोगों को इस आज्ञा पर आश्चर्य था। परन्तु लोग राजा के सुलभ-कोपी स्वभाव को जानते थे, इसलिये किसी खास कारण को जानने की लालसा जनता के मन में नहीं हुई।

---

*यह बाग ओरछे दरवाजे के भीतर, दरवाजे से लगा हुआ था। आजकल इसके एक सिरे पर सड़क के किनारे मसजिद है। बाकी में अब साग-भाजी की खेती होती है।

दीवान रघुनाथसिंह और राव दूल्हाजू के मन में असली कारण के विषय में जो शङ्का थी, उन्होंने किसी पर प्रकट नहीं की। उन्होंने सोचा कि इस नाटकशाला से दूर ही रहना चाहिये परन्तु राजा के निमन्त्रण की अवज्ञा भी कैसे कर सकते थे ?

मोतीबाई सावधानी और लगन के साथ नाटकशाला में काम करती रही। परन्तु दर्शकों में खुदाबख्श को उसने फिर कभी नहीं देखा। और न कभी गङ्गाधरराव ने मोतीबाई को किसी विशेष दर्शक पर आंख को केन्द्रित करते पाया। इच्छा रखते हुये भी मोतीबाई रङ्गमञ्च पर फिर कभी बड़े-बड़े आंसू नहीं निकाल सकी।

इन दिनों नाटकशाला में जूही नाम की एक अल्प-वयस्का लड़की और आई। परन्तु उसको अपने घर पर नाचने गाने की और अधिक तालीम पाने की अनुमति मिल गई थी। जूही उनाव दरवाजे भीतर मेवातीपुरा के सिरे पर रहती थी। इसका भवन माधवराव भिड़े के बाग से लगा हुआ था। उसने अभी अल्हड़पन से बाहर कदम नहीं रक्खा था। रंगमञ्च पर इसका नृत्य और गायन अधिक होता था अभिनय कम।

उदय

[१]

वर्षा का अन्त हो गया । कुवाँर उतर रहा था । कभी-कभी झीनी-झीनी बदली हो जाती थी । परन्तु उस सन्ध्या के समय आकाश बिलकुल स्वच्छ था । सूर्यास्त होने में थोड़ा-सा विलम्ब था । बिठूर के बाहर गंगा के किनारे तीन अश्वारोही तेजी के साथ चले जा रहे थे । तीनों बाल्यावस्था में । एक बालिका, दो बालक । एक बालक की आयु १६, १७ वर्ष, दूसरे की १४ से कुछ ऊपर । बालिका की तेरह साल से कम ।

बड़ा बालक कुछ आगे निकला था कि बालिका ने अपने घोड़े को एक एड़ लगाई । बोली, 'देखूं कैसे आगे निकलते हो ।' और वह आगे हो गई । बालक ने बढ़ने का प्रयास किया तो उसका घोड़ा ठोकर खा गया, और बालक धड़ाम से नीचे जा गिरा । सूखी लकड़ी के टुकड़े से उसका सिर भिड़ गया । खून बहने लगा । घोड़ा लौटकर घर की ओर भाग गया । बालक चिल्लाया, 'मनू मैं मरा ।'

बालिका ने तुरन्त अपने घोड़े को रोक लिया । मोड़ा, और उस बालक के पास पहुँची । एक क्षण में तड़ाक से कूदी और एक हाथ से घोड़े की लगाम पकड़े हुये झुक कर घायल बालक को ध्यानपूर्वक देखने

लगी। माथे पर गहरी चोट आई थी और खून बह रहा था। बालिका मिठास के साथ बोली, 'घबराओ मत, चोट बहुत गहरी नहीं है। लोहू बहने का कोई डर नहीं।'

मझला बालक भी पास आ गया। उतर पड़ा और विह्वल होकर अपने साथी की चोट को देखने लगा।

'नाना तुमको तो बहुत लग गई है।' उस बालक ने कहा।

'नहीं, बहुत नहीं है' बालिका मुस्कराकर बोली, 'अभी लिये चलती हूँ। कोठी पर मरहम-पट्टी हो जायगी और बहुत शीघ्र चंगे हो जायेंगे।'

'कैसे ले चलोगी मनू ?' बड़े लड़के ने कातर स्वर में कराहते हुये पूछा।

मनू ने उत्तर दिया, 'तुम उठो। मेरे घोड़े पर बैठो। मैं उसकी लगाम पकड़े तुम्हें अभी घर लिये चलती हूं।'

'मेरा घोड़ा कहाँ है ?' घायल ने उसी स्वर में प्रश्न किया।

मनू ने कहा, 'भाग गया। चिन्ता मत करो। बहुत घोड़े हैं। मेरे पर बैठो। जल्दी। नाना, जल्दी।'

नाना बोला, 'मनू मैं सध नहीं सकूंगा।'

मनू ने कहा, 'मैं साध लूंगी। उठो।'

नाना उठा। मनू एक हाथ से घोड़े की लगाम थामे रही, दूसरे से उसने खून में तर नाना को बिठलाया और बड़ी फुर्ती के साथ उचटकर स्वयं पीछे जा बैठी। एक हाथ से घोड़े की लगाम सम्भाली। दूसरे से नाना को थामा और गाँव की ओर चल दी। पीछे-पीछे मझला बालक भी चिन्तित, व्याकुल, चला। जब ये गाँव के पास आ गये तब कई सिपाही घोड़ों पर सवार इन बालकों के पास आ पहुँचे।

'लगी तो नहीं ?'

'ओफ बहुत खून निकल आया है।'

'आओ मैं लिये चलता हूँ।'

'घर पर घोड़े के पहुंचते ही हम समझ गये थे कि कोई दुर्घटना हो गई है।' इत्यादि उद्‌गार इन आगन्तुकों के मुँह से निकले। इन लोगों के अनुरोध करने पर भी मनू नाना को अपने ही घोड़े पर सँभाले हुये ले आई। पहुंचते ही कोठी के फाटक पर एक उतरती अवस्था के और दूसरे अधेड़ वय के पुरुष मिले। दोनों त्रिपुण्ड लगाये थे। उतरती अवस्था वाला रेशमी वस्त्र पहिने था और गले में मोतियों का कण्ठा। अधेड़ सूती वस्त्र पहिने था। उतरती अवस्था वाले को कुछ कम दिखता था। उसने अपने अधेड़ साथी से पूछा, 'क्या ये सब आगये मोरोपन्त?'

'हाँ महाराज।' मोरोपन्त ने उत्तर दिया। जब वे बालक और निकट आ गये तब मोरोपन्त नामक व्यक्ति ने कहा, 'अरे यह क्या? मनू और नाना साहब दोनों लोहूलुहान हैं!'

जिसको मोरोपन्त ने 'महाराज' कह कर सम्बोधन किया था, वह पेशवा बाजीराव द्वितीय थे। उन्होंने भी दोनों बच्चों को रक्त में सना हुआ देख लिया घबरा गये।

सिपाहियों ने झटपट नाना को मनू के घोड़े पर से उतारा। मनू भी कूद पड़ी।

मोरोपन्त ने उसको चिपटा लिया उतावले होकर पूछा, 'मनू कहाँ लगी है बेटी?'

'मुझको तो बिलकुल नहीं लगी काका,' मनू ने जरा मुस्कराकर कहा, 'नाना को अवश्य चोट आई है; परन्तु बहुत नहीं है।'

'कैसे लगी मनू?' बाजीराव ने प्रश्न किया।

कोठी में प्रवेश करते-करते मनू ने उत्तर दिया, 'उँह साधारण सी बात थी। घोड़े ने ठोकर खाई। वह सँभल नहीं सके। जा गिरे। घोड़ा भाग गया। घोड़ा ऐसा भागा, ऐसा भागा कि मुझको तो हँसी आने को हुई।'

मोरोपन्त ने मनू के इस अल्हड़पने पर ध्यान नहीं दिया। नाना को मनू अपने घोड़ों पर ले आई, वे इस बात पर मन ही मन प्रसन्न थे।

बाजीराव को सुनाते हुये मोरोपन्त ने पूछा, 'तू नाना साहब को कैसे उठा लाई ?'

मनू ने उत्तर दिया, 'कैसे भी नहीं। वह बैठ गये। मैं पीछे से सवार हो गई। एक हाथ में लगाम पकड़ ली, दूसरे से नाना को थाम लिया। बस।'

नाना को मुलायम बिछौनों में लिटा दिया गया। तुरन्त घाव को धोकर मरहम पट्टी कर दी गई। घाव गम्भीर न होने पर भी लम्बा और जरा गहरा था। बाजीराव बहुत चिंतित थे। उन्होंने रो तक दिया।

मोरोपन्त को विश्वास था कि चोट भयप्रद नहीं है तो भी वह सहानुभूति के कारण बाजीराव के साथ चिन्ताकुल हो रहे थे।

जब मनूबाई और मोरोपन्त उसी कोठी के एक भाग में जहां उनका निवास था अकेले हुये, मनू ने कहा, 'इतनी जरा सी चोट पर ऐसी घबराहट और रोना पीटना!'

'बेटी, चोट जरा सी नहीं है। कितना रक्त बह गया है!'

'आप लोग हमको जो पुराना इतिहास सुनाते हैं उसमें युद्ध क्या रेशम की डोरों और कपास की पोनियों से हुआ करते थे?'

'नहीं मनू। पर यह तो बालक है।'

'बालक है! मुझसे बड़ा है। मलखंब और कुश्ती करता है। बाला गुरू उसको शाबाशी देते हैं। अभिमन्यु क्या इससे बड़ा था?'

'मनू, अब वह समय नहीं रहा।'

'क्यों नहीं रहा काका? वही आकाश है, वही पृथिवी। वही सूर्य-चन्द्रमा और नक्षत्र। सब वही है।'

'तू बहुत हठ करती है।'

'जब मैं सवाल करती हूँ तो आप इस प्रकार मेरा मुँह बन्द करने लगते हैं। मैं ऐसे तो नहीं मानती। मुझको समझाइये, अब क्या हो गया है!'

'अब इस देश का भाग्य लौट गया है। अङ्गरेजों के भाग्य का सूर्योदय हुआ है। उन लोगों के प्रताप के सामने यहां के सब जन निस्तेज हो गये हैं।'

'एक का भाग्य दूसरे ने नहीं पढ़ा है। यह सब मन-गढ़न्त है। डरपोकों का ढकोसला।'

'तू जब और बड़ी होगी तब संसार का अनुभव तुझको भी यह सब स्पष्ट कर देगा।'

'मैं डरपोक कभी नहीं हो सकती। आप कहा करते हैं—मनू तू ताराबाई बनना, जीजाबाई और सीता होना। यह सब भुलावा क्यों? अथवा क्या ये सब डरपोक थीं?'

'बेटी, ये सब सती और वीर थीं परन्तु समय बदलता रहता है। बदल गया है।'

'यह तो हेरफेर कर वही सब मनमाना तर्क है।'

'फिर कभी बतलाऊँगा।'

'मैं ऐसी गलत-सलत बात कभी नहीं सुनने की।'

'तो सोवेगी या रात भर सवाल करती रहेगी!' अन्त में खीझकर परन्तु मिठास के साथ मोरोपन्त ने कहा। मनू खिलखिलाकर हँस पड़ी। बोली, 'काका आपने तो टाल दिया। मैं इस प्रसंग पर फिर बात करूँगी। अभी अवश्य करवट लेते ही सोई, यह सोई।' फिर एक क्षण उपरांत मनू ने अनुरोध किया, 'काका देख आईये नाना सो गया या नहीं। आपको नींद आ रही हो तो मैं दौड़कर देख आऊँ।' मोरोपन्त ने मनू को नहीं जाने दिया। स्वयं गये। देख आये। बोले, 'नाना साहब सो गये होंगे।'

मनू सो गई। मोरोपन्त जागते रहे। उन्होंने सोचा, मनू की बुद्धि उसकी अवस्था के बहुत आगे निकल चुकी है। अभी तक कोई योग्य वर हाथ नहीं लगा। दक्षिण जाकर देखना पड़ेगा। इसी विचार के लौटफेर में मोरोपन्त का बहुत समय निकल गया। कठिनाई से अन्तिम पहर में नींद आई।

[२]

मनूबाई सवेरे नाना को देखने पहुँच गई। वह जाग उठा था, पर लेटा हुआ था। मनू ने उसके सिर पर हाथ फेरा। स्निग्ध स्वर में पूछा, 'नींद कैसी आई ?'

'सोया तो हूँ, पर नींद आई-गई बनी रही। कुछ दर्द है।' नाना ने उत्तर दिया।

मनू—'वह दोपहर तक ठीक हो जायगा। तीसरे पहर घूमने चलोगे न ? सन्ध्या से पहले ही लौट आयेंगे।'

नाना—'सवारी की धमक से पीड़ा बढ़ने का डर है।'

मनू—'आरम्भ में कदाचित् थोड़ी सी पीड़ा हो परन्तु शीघ्र उसको दाब लोगे और जब लौटोगे याद न रहेगा कि कभी चोट लगी थी।'

नाना—'यदि पीड़ा बढ़ गई तो ?'

मनू—'तो सह लेना, फिर कभी गिरोगे तो चोट कम आंसेगी।'

नाना—'और यदि आज ही फिर फिसल पड़ा तो ?'

मनू—'तो मैं तुमको फिर उठा लाऊँगी। चिन्ता मत करो।'

नाना—'और जो तुम खुद गिर पड़ी तो ?'

मनू—'तब मैं फिर सवार हो जाऊँगी। किसी की सहायता नहीं लेनी पड़ेगी और घर आ जाऊँगी।'

नाना—'मेरे बस का नहीं।'

मनू—'लड्डू खाओगे ?'

नाना—'मुझे चुपचाप पड़ा रहने दो !'

मनू—'कब तक ?'

नाना—'तीन चार दिन लग जायेंगे।'

मनू—'किसने कहा ?'

नाना—'काका कहते थे। वैद्य ने भी कहा था।'

मनू—'वैद्य तो लोभवश कहता होगा, पर दादा क्यों कहते थे?'

नाना—'उनसे ही पूछ लेना। मेरा सिर मत खाओ।'

मनू हँस पड़ी। फिर दाईं ओर का होठ थोड़ा सा—बिलकुल जरा सा—दबा कर बोली, 'तुम कहते थे—बाजी प्रभु देशपाण्डे की कीर्ति से बढ़कर कीर्ति कमाऊँगा, तानाजी मालसुरे को पछाड़ूंगा, स्वर्गवासी छत्रपति शिवाजी को अपने कृत्यों से फड़का दूंगा, श्रीमन्त पन्त प्रधान प्रथम बाजीराव की बराबरी करूंगा,........'

इतने में वहाँ बाजीराव आ गये। मनू इतनी तीक्ष्णता के साथ बोल रही थी कि बाजीराव ने उसका अन्तिम वाक्य सुन लिया।

बोले, 'तेरी चपलता न जाने कब कम होगी? यह सब क्या बके जा रही है?'

मनू रंचमात्र भी नहीं दबी। बोली, 'इसको दादा आप बकना कहते हैं? आप ही हम लोगों को यह सब छुटपन से सुनाते आये हैं। मैं उसी को दुहरा रही हूं। अब इसे आप बकवास समझने लगे हैं! यह क्यों दादा?'

बाजीराव ने कहा, 'बेटी क्या आज उन बातों के स्मरण से जीवन को चलाने का समय रहा है? महाभारत की कथायें सुनो और अपने पुरखों की बातें सुनो। अच्छी भली बनो। मन बहलाओ और जीवन को पवित्र सुख से सुखी बनाओ। नाना को चिढ़ाओ मत।'

मनू ने मुस्कराकर होठ जरा सा दबाया, थोड़ी सी त्योरी संकुचित की और बाजीराव के बिलकुल पास आकर बोली, 'क्या हम लोगों को अब सोकर, खाकर ही जीवन बिताना सिखलाइयेगा दादा?'

बाजीराव को हँसी आई। कुछ कहना ही चाहते थे कि मोरोपन्त कहते हुये आ गये, 'नाना साहब को हाथी पर बिठला कर थोड़ा सा घूम आने दीजिये। बाहर तैयार खड़ा है।'

बाजीराव ने प्रश्न किया, 'हाथी की सवारी में चोट की धमक तो नहीं लगेगी?'

मोरोपन्त ने उत्तर दिया, 'नहीं, पलकिया में बहुत मुलायम गद्दी-तकिये लगा दिये गये हैं और हाथी बहुत धीमे चलाया जावेगा।'

मनू हाथी को देखने बाहर दौड़ गई। नाना निस्तार इत्यादि के लिये उठ गया। मनू ने हाथी पहले भी देखे थे, फिर भी वह इस हाथी को बार-बार चारों ओर से घूम-घूमकर देख रही थी। और उसके डील-डौल पर कभी मुस्करा रही थी, कभी हँस रही थी।

थोड़ी देर बाद बाजीराव नाना को लिये बाहर आये। साथ में छोटा लड़का भी था, मोरोपन्त पीछे-पीछे। हाथी पर पहले नाना को बिठला दिया गया। फिर छोटे को। महावत ने हाथी को अंकुश छुलाई। हाथी उठा।

मनू ने मोरोपन्त से कहा, 'काका मैं भी हाथी पर बैठूंगी।'

बाजीराव के घुटनों से लिपट कर बोली, 'दादा मैं बैठूंगी।'

नाना हौदे में महावत के पास बैठा था। उसने महावत को अविलम्ब चलने का आदेश किया। मनू की ओर देखा भी नहीं। बाजीराव ने नाना से कहा, 'लिये जाओ न मनू को!'

नाना ने मुंह फेर लिया! तब बाजीराव ने दूसरे बालक से कहा, 'रावसाहब, मनू को ले लेते तो अच्छा होता!'

महावत कुछ ठमका तो नाना ने उसकी पसलियों में उँगली चुभोकर बढ़ने की आज्ञा दी। वह नाना साहब और रावसाहब—दोनों लड़कों—को लेकर चल दिया। मनू की आँखों में क्षोभ उतर आया। मोरोपन्त का हाथ पकड़ कर बोली, 'हाथी लौटाओ काका। मैं हाथी पर अवश्य बैठूंगी।'

बाजीराव कोठी में चले गये।

मोरोपन्त को भी क्षोभ हुआ परन्तु उन्होंने उसको नियन्त्रित करके कहा, 'वह चला गया बेटी।'

मनू मोरोपन्त का हाथ पकड़कर खींचने लगी, 'महावत को पुकारिये, वह रुक जायगा। मैं बिना बैठे नहीं मानूंगी।'

मोरोपन्त का क्षोभ भड़का। उन्होंने उसका फिर दमन किया। मनू ने फिर हाथी पर बैठने का हठ किया। मोरोपन्त ने क्रुद्ध स्वर में मनू को डाटा, 'तेरे भाग्य में हाथी नहीं लिखा है। क्यों व्यर्थ हठ करती है ?'

मनू तिनक कर सीधी खड़ी हो गई। तमक कर कुछ कहना चाहती थी। एक क्षण होठ नहीं खुल सके।

मोरोपन्त ने शान्त करने के प्रयोजन से, भरसक धीमे स्वर में परन्तु क्रोध के सिलसिले में कहा, 'सैकड़ों बार कहा कि समय को देखकर चलना चाहिये। हम लोग न तो छत्रधारी हैं और न सामंत—सरदार। साधारण गृहस्थों की तरह संसार में रहन-सहन रखना है। पढ़ी लिखी होने पर भी न जाने सुनती समझती क्यों नहीं है। कह दिया कि भाग्य में हाथी नहीं लिखा है। हठ मत किया कर।'

मनू के होठ सिकुड़े। चुनौती सी देती हुई बोली, 'मेरे भाग्य में एक नहीं दस हाथी लिखे हैं।'

मोरोपन्त का क्रोध-क्षोभ भीतर सरक गया। हँस पड़े। मनूबाई को पेट से चिपका लिया। कहा, 'अब चल कोई शास्त्र-पुराण पढ़। तब तक वे दोनों लौट आते हैं।'

मनू मचली। बोली, 'मैं अपने घोड़े पर बैठकर सैर को जाऊँगी और उस हाथी को तंग करूँगी।'

मोरोपन्त सीधे शब्दों में वर्जित करना चाहते थे परन्तु इस उपकरण में सफलता के चिन्ह न पाकर उन्होंने तुरन्त बहाना बनाया, 'घोड़े से यदि हाथी चिढ़ गया तो तू भले ही बचकर निकल आवे, पर नाना साहब राव साहब तथा महावत मारे जावेंगे।'

वह मान गई।

'तब तक कुछ और करूँगी', मनूबाई ने कहा, 'पुस्तकें तो नहीं पढ़ूंगी। बन्दूक से निशानाबाजी करूँगी।'

[३]

थोड़ी देर में घण्टा बजाता हुआ हाथी लौट आया। मनू दौड़कर बाहर आई। एक क्षण ठहरी और आह खींचकर भीतर चली गई। नाना और राव, दोनों बालक, अपनी जगह चले गये। बाजीराव ने नाना को पुचकार कर पूछा, 'दर्द बढ़ा तो नहीं?'

'नहीं बढ़ा' नाना ने उत्तर दिया, 'अच्छा लग रहा है। मनू कहाँ गई?'

बाजीराव ने कहा, 'भीतर होगी।'

रावसाहब—'उसे बुरा लगा होगा। नाना ने साथ नहीं लिया, मैंने तो कहा था।'

नाना—'वह मुझको सवेरे से चिढ़ा रही थी।'

बाजीराव—'क्या? कैसे?'

नाना—'उसका स्वभाव है।'

कुछ क्षण उपरान्त मनू वहाँ आ गई।

नाना ने हँसते हुये कहा, 'छबीली, तुम क्या कोई ग्रंथ पढ़ रही थीं?'

मनू जल उठी। बोली, 'मुझसे छबीली मत कहा करो।'

नाना ने और भी हँसकर कहा, 'क्यों नहीं कहा करूं? यह तो तुम्हारा छुटपन का नाम है।'

मनू की आँख लाल हो गई। बोली, 'मुझको इस नाम से घृणा है।' नाना गम्भीर हो गया। बोला, 'मुझको तो यही नाम सुहावना लगता है। छबीली, छबीली।'

'इस नाम को कभी नहीं सुनूंगी।' कह कर मनू वहाँ से जाने को हुई बाजीराव ने उसको पकड़ लिया। मनू ने भागना चाहा। न भाग सकी। तब नाना ने भी पकड़ लिया।

'क्या मनू बुरा मान गई?' नाना ने स्नेह के साथ पूछा।

मनू होठ सिकोड़कर, रुखाई के साथ बोली, 'अवश्य। आगे इस नाम से मेरा सम्बोधन कभी मत करना।'

इसी समय पहरे वाले ने बाजीराव को सूचना दी, 'झाँसी से एक सज्जन आये हैं। नाम तात्या दीक्षित बतलाते हैं।'

नाना बोला, 'मनू एक से दो तात्या हुये।'

मनू का क्षोभ घुला। बाजीराव ने प्रहरी से झाँसी के आगंतुकों को बिठलाने के लिये कह दिया।

मनू ने कहा, 'झाँसी वाला तात्या कुश्ती लड़ता होगा ?'

रावसाहब—झाँसी में कोई बाला गुरू होंगे तो कुश्ती का भी चलन होगा। वह तो राज्य ठहरा।'

नाना—'बड़ा राज्य है ?'

बाजीराव—'बड़ा तो नहीं है, पर खासा है। हमारे पुरखों का प्रदान किया हुआ है, जानते होगे।'

रावसाहब—'अपने को फिर नहीं मिल सकता है ?'

मनू—'दान किया हुआ फिर कैसे वापिस होगा।'

बाजीराव—'हाँ वापिस नहीं हो सकता। झाँसी के राजा हमारे सूबेदार थे। इस समय अपना बस होता तो झाँसी में हम लोगों का काफी मान होता। परन्तु झाँसी तो बहुत दिनों से अंग्रेजों की मातहती में है।'

मनू—'ग्वालियर, इन्दौर, बरोदा, नागपुर, सतारा इत्यादि के होते हुये भी थोड़े से अङ्गरेजों ने आप सबको दबा लिया !'

बाजीराव—'यह मानना पड़ेगा कि वे लोग हमसे ज्यादा चालाक हैं। हथियार उनके पास अधिक अच्छे हैं। शूरवीर भी हैं और भाग्य उनके साथ है। और आपसी फूट हमारे साथ...'

मनू—'दादा क्या भाग्य में शूरवीर होना भी लिखा रहता है ? यदि ऐसा है तो अनेक सिंह स्यार होते होंगे और अनेक स्यार सिंह।'

बाजीराव—'जब स्यार पागल हो जाता है तब सिंह भी उससे डरने लगता है।'

मनू—'वह भाग्य से पागल होता है अथवा और किसी कारण से ?' बाजीराव हँसने लगे।

इसी समय मोरोपन्त ने आकर कहा, 'दादा साहब, तात्या दीक्षित झाँसी से आये हैं।'

बाजीराव बोले, 'मैंने उनको बिठला लिया है। यहीं ठहरने, भोजन इत्यादि का प्रबन्ध कर दिया जावे।'

मोरोपन्त ने कहा, 'तात्या मुझको एक बार काशी में मिले थे। यात्रा के लिये गये हुये थे। विद्या-विदग्ध हैं, सज्जन हैं। राजा के यहाँ उनका मान है।

मनू ने हंसकर पूछा, 'कुश्ती लड़ते हैं ? तलवार-बन्दूक चलाते हैं ? घोड़े पर चढ़ते हैं ?'

'दुर पगली', मोरोपन्त ने कहा, 'जो यह सब न जानता हो वह क्या कुछ है ही नहीं ? दीक्षित जी पक्के ब्राह्मण हैं। शास्त्री, आचार्य।'

नाना ने मनू की ओर देखते हुए कहा, 'और यदि ब्राह्मण हथियार बाँध उठे तो वह पक्के से कच्चा हो जायगा ? मनू ! तुम बतलाओ !'

मनू हँसी। बाजीराव भी हँसे। मोरोपन्त ने मुस्कराकर कहा, 'इस लड़की जैसी वाचाल तो शायद ही कोई हुई हो।'

मनू ने होठों की समेट में मुस्कराहट को दबाकर गर्दन मोड़ी, फिर विशाल नेत्र संकुचित करके बोली, 'आप ही कहा करते हैं, ताराबाई ऐसी थीं, जीजाबाई ऐसी थीं, अहिल्याबाई ऐसी, मीरा ऐसी। मैं पूछती हूं, क्या ये सब मुंह पर मुहर लगाये रहती थीं ?'

[४]

भोजनोपरांत तात्या दीक्षित से बाजीराव और मोरोपन्त मिले। तात्या दीक्षित ज्योतिष और तन्त्र के शास्त्री थे। काशी, नागपूर, पूना इत्यादि घूमे हुये थे। महाराष्ट्र समाज से काफी परिचित थे। बिठूर (ब्रह्मावर्त) में बाजीराव के साथ दक्षिणी ब्राह्मणों का एक बड़ा परिवार आ बसा था। * उस काल में मलखम्भ और मल्लयुद्ध के आचार्य बाला गुरू का अखाड़ा दक्षिणियों और हिन्दुस्थानियों से भरा रहता था और गुरू बल यौवन और स्वाभिमान को वितरित सा करते रहते थे। वह स्वयं इतने दृढ़ बलिष्ठ और स्वाभिमानी थे कि उनको लेटने तक में चित होने से घृणा थी! औंधे लेटा करते थे।

मोरोपन्त ने अवसर निकाल कर तात्या दीक्षित से प्रार्थना की 'दीक्षित जी, मुझे अपनी कन्या मनूबाई के विवाह की बड़ी चिंता लग रही है। मैंने बहुत खोज की है परन्तु कोई योग्य वर नहीं मिला। अब भी खोज कर रहा हूँ। आपका संसार में बहुत परिचय है। आप इस कन्या के लिये योग्य वर ढूंढ़ दीजिये। बड़ा अनुग्रह होगा।'

बाजीराव ने भी कहा, 'कन्या बहुत सुन्दर है। बड़ी कुशाग्र बुद्धि और होनहार। उसके लिये अच्छा वर ढूँढ़ना ही चाहिये।'

मोरोपन्त बोले, 'सब हथियार चलाना बहुत अच्छी तरह जानती है। घोड़े की सवारी में पुरुषों के कान पकड़ती है। जब चार वर्ष की थी इसकी मां का देहांत हो गया था। इसलिये मैंने स्वयं उसकी दिन रात देख भाल की है, लालन पालन किया है। मराठी, संस्कृत और हिन्दी पढ़ाई है। शास्त्रों में उसकी रुचि है।'

---

* इनकी संख्या लगभग आठ सहस्र थी। बाजीराव की पेंशन का एक बड़ा भाग इन लोगों पर खर्च होता था।

बाजीराव ने कहा, 'बालिका है, इसलिये इस आयु में जितना पढ़ सकती थी उतना ही पढ़ा है परन्तु तेज बहुत है। पूजा-पाठ मन लगा कर करती है।'

पूजा-पाठ सम्बन्धी रुचि पर बाजीराव ने ज्यादा जोर दिया। अश्वारोहण इत्यादि पर बहुत कम।

तात्या दीक्षित ने जन्मपत्री मांगी। मोरोपन्त ने ला दी। दीक्षित ने उसकी परीक्षा करके कहा, 'ऐसी जन्मपत्री मैंने कदाचित् ही पहले कभी देखी हो। इसको कहीं की रानी होना चाहिये।'

मोरोपन्त फूल गये। बाजीराव को भी सन्तोष हुआ। बोले, 'जब आप जावें साथ में जन्मपत्री लेते जावें। योग्य वर से मेल खाने पर हमको सूचित करें।'

दीक्षित ने स्वीकार किया।

उसी समय रावसाहब के साथ वहाँ मनू आ गई।

बाजीराव ने दीक्षित से कहा, 'यही वह कन्या है।'

दीक्षित ने मनूबाई के विशाल नेत्र, भौंरे को लजाने वाले चमकीले बाल, स्वर्ण-सा रङ्ग और सम्पूर्ण चेहरे का अतीव सुन्दर बनाव देखकर प्रसन्नता प्रकट की।

दीक्षित ने ममता प्रदर्शित करते हुये कहा, 'आ बेटी आ! तूने शास्त्र पढ़े हैं उच्च कुल की ब्राह्मण कन्या के लिये उपयुक्त ही है।'

मनू और रावसाहब बाजीराव के पास मसनद पर बैठ गये।

मनू विना किसी संकोच के बोली, 'मैंने शास्त्र आंखों से देख भर लिये हैं। मुझको तुलसीदास की रामायण बड़ी प्रिय लगती है परन्तु तलवार चलाना, मलखंब भांजना, घोड़े की सवारी, ये उससे भी बढ़कर भाते हैं…।'

बाजीराव ने हँसकर टोका, 'और बात बनाना, चबड़-चबड़ करना इन सबसे बढ़ कर अच्छा लगता है।'

मोरोपन्त के मन में क्षणिक रोष आया। वह चाहते थे कि लड़की तात्या दीक्षित के सामने ऐसी बातें करे कि शील संकोच का अवतार जान पड़े।

'परन्तु', दीक्षित ने हँसकर कहा, 'बालिका है। अभी संसार का उसने देखा ही क्या है।'

'बिलकुल अबोध है', मोरोपन्त बोले, 'सयानी होने पर अपने घर-द्वार का खूब प्रबन्ध करेगी।'

तात्या दीक्षित ने उत्साहित होकर भविष्यद्वाणी सी की, 'यह किसी राज्य की रानी होगी।'

रावसाहब अभी तक मनू के पीछे चुप बैठा था। बोला, 'राज्य तो सब अङ्गरेजों ने ले लिये हैं। नये राज्य कहाँ से बनेंगे?'

'राज्यों की और राज्य बनाने वालों की न कमी रही है और न रहेगी।' तात्या दीक्षित ने हँसकर कहा।

मनूबाई मुस्कराकर बोली, 'पर कुछ लोग तो कहते हैं कि अङ्गरेजों ने ऐसा जोर बाँध लिया है कि कोई सिर ही नहीं उठा सकता।'

बाजीराव विषयान्तर करना चाहते थे। बोले, 'झाँसी में बाग-बगीचे कितने हैं?'

तात्या दीक्षित—'बहुत हैं। राजा के बगीचे हैं। सरदारों और सेठ-साहूकारों के हैं। नगर के भीतर ही अनेक हैं।'

मनू—'सेना बड़ी है?'

दीक्षित—'खासी है।'

मनू—'घोड़े अच्छे हैं?'

रावसाहब—'हाथी?

दीक्षित—'बहुत से हैं।

मनू—'कितने?'

इतने में वहाँ सुगठित शरीर का एक-युवक आया।

बाजीराव ने पूछा, 'क्या है तात्या ?'

अपने नाम के एक और मनुष्य को सम्बोधित होते देखकर दीक्षित चौंका।

मनू ने बेधड़क कहा, 'यह हमारे गुरू के अखाड़े के प्रधान हैं। आपके नामधारी।'

तात्या दीक्षित ने मन में चाहा कि लड़की और अधिक बात न करे।

युवक तात्या ने पेशवा से विनय की, 'महाराज, गुरूजी ने कहलवाया है कि झांसी से जो आचार्य आये हैं वे हमारे अखाड़े को देखने की कृपा करें।'

दीक्षित ने हामीं भरी। तीसरे पहर सब लोग बाला गुरु के अखाड़े पर गये। मलखम्भ और मल्लयुद्ध का प्रदर्शन हुआ।

[५]

महाराष्ट्र में सतारा के निकट वाई नाम का एक गाँव है। पेशवा के राज्यकाल में वहाँ के कृष्णराव ताम्बे को एक ऊंचा पद प्राप्त था। कृष्णराव ताम्बे का पुत्र बलवन्तराव पराक्रमी था।

उसको पेशवा की सेना में उच्च पद मिला। बलवन्तराव के दो लड़के हुये—एक मोरोपन्त और दूसरा सदाशिव। ये दोनों पूना में दरबार के कृपापात्रों में थे।

उस समय पेशवा बाजीराव द्वितीय पूना में रहते थे। सन् १८१८ में अंगरेजों ने पेशवाई खत्म करके बाजीराव को आठ लाख रुपया वार्षिक पैन्शन और बिठूर की जागीर दी। बाजीराव ब्रह्मावर्त (बिठूर) चले आये। बाजीराव के निज भाई चिमाजी अप्पा साहब थे। वे बनारस चले आये। मोरोपन्त ताम्बे पर चिमाजी की बड़ी कृपा थी। मोरोपन्त चिमाजी के साथ पूना से काशी चले आये और उनका काम-काज करते रहे। इसके उपलक्ष में मोरोपन्त को पचास रुपया मासिक वेतन मिलता था। यही मोरोपन्त मनूबाई के पिता थे।

मोरोपन्त की पत्नी का नाम भागीरथीबाई था। सुशील, चतुर, रूपवती।

मनूबाई कार्तिक वदी १४ सं० १८९१ (१९ नवम्बर सन् १८३५) के दिन काशी में इन्हीं से उत्पन्न हुई थी।

चिमाजी का शरीरान्त हो गया। मोरोपन्त को अपने कुटुम्ब के पालन के लिये कोई सहारा काशी में नहीं दिखलाई पड़ रहा था। बाजीराव ने काशी से बिठूर बुला लिया। मोरोपन्त पर बाजीराव की भी बहुत कृपा रही।

मनूबाई चार वर्ष की ही थी जब उसकी माता—भागीरथीबाई—का देहान्त हो गया। मनू के पालन-पोषण और लाड़-दुलार का सम्पूर्ण

भार मोरोपन्त पर आ पड़ा। मोरोपन्त ने मनू को बहुत प्यार के साथ पाला। लड़के से बढ़कर।

मनू इतनी सुन्दर थी कि छुटपन में बाजीराव इत्यादि उसको स्नेहवश 'छबीली' के नाम से पुकारते थे।

बाजीराव के अपनी कोई सन्तान न थी इसलिये उन्होंने नाना धोंडूपन्त नाम के एक बालक को गोद लिया। नाना तीन भाई थे—नाना, बाला और रावसाहब। बाला उस समय बिठूर में न था। छोटा सहोदर रावसाहब था।

मनू और ये दोनों लड़के साथ खेलते, खाते और पढ़ते थे। मलखम्ब, कुश्ती, तलवार-बन्दूक का चलाना, अश्वारोहण, पढ़ना-लिखना इत्यादि सब इन तीनों ने छुटपन से साथ-साथ सीखा था। मनू चपल, हठीली और बहुत पैनी बुद्धि की थी। कम आयु की होने पर भी वह इन हुनरों में उन दोनों बालकों से बहुत आगे निकल गई। स्त्रियों की संगति कम प्राप्त होने के कारण वह लाज-संकोच की अतीव दबन और झिझक से दूर हटती गई थी।

नाना आठ लाख वार्षिक पैन्शन अपने और अपने भाइयों की परंपरा के जीवन-सुख के लिये काफी से अधिक समझता होगा। बाजीराव को पैंन्शन 'उसको और उसके कुटुम्ब के लिये दी गई थी।' बिना किसी प्रयत्न-प्रयास के आठ लाख वार्षिक मिलते जावें तो फिर किस महत्वा-कांक्षा की जोखिम के लिये और अधिक हाथ-पैर हिलाये जावें ?

मनूबाई ऐसा नहीं सोचती थी। छत्रपति शिवाजी इत्यादि के आधुनिक और अर्जुन-भीम इत्यादि के पुरातन आख्यानों ने मनू की कल्पना को एक अस्पष्ट और अदम्य गुदगुदी दे रक्खी थी।

[६]

तात्या दीक्षित आदर और भेंट सहित बिठूर से झांसी लौट आये। उन्हें मालूम था कि मनूबाई के लिये जितना अच्छा वर ढूंढ़कर दूँगा, उतना ही अधिक बाजीराव सन्तुष्ट होंगे। और उस सन्तोष का फल उनकी जेब के लिये उतना ही महत्वपूर्ण होगा।

दीक्षित ने मन में कई वर टटोले। जिसको स्थिर करते उसी के लिये प्रश्न उठता। 'क्या पेशवा इसको पसन्द कर लेंगे?' जी उचट जाता। सरदार श्रेणी के ब्राह्मणों में कुछ की टीपनायें लाकर मिलाईं, पर मेल न खाया।

सोचा, श्रीमन्त सरकार गङ्गाधरराव की जन्मपत्री मिलाकर देखूं शायद टक्कर खा जाय। टीपना प्राप्त हो गई। मिल गई। परन्तु एक असमंजस हुआ, गङ्गाधरराव की पहली पत्नी का देहान्त काफी दिन पहले हो चुका था। वह विधुर थे। विवाह करना चाहते थे। परन्तु अपने कठोर स्वभाव के कारण बहुत बदनाम थे। भांड़-भगतियों, खसियों इत्यादि के हँसी-मजाक, आमोद-प्रमोद में उनका काफी समय जाता था। नाटकशाला में तो रात का अधिकांश प्रायः बीतता ही था। इसलिये जितना वह करते थे, उससे कहीं अधिक की, उनकी बदनामी फैल गई थी।

नाटकशाला में बहुत रुचि रखने के कारण खास तौर पर वेश्याओं गायिकाओं और नर्तकियों के नाटकशाला में नौकर रखते हुये भी स्त्रियों की भूमिका में अभिनय करने की वजह से उनकी झूठी बदनामी बहुत कर दी गई थी। इस पर, फिर उनका कठोर बर्ताव। दीक्षित सोचते थे कि विवाह सम्बन्ध स्थापित करने में सफल हो जाऊँ तो सदा याद किया जाऊँगा। मोरोपन्त तो हमेशा कृतज्ञ रहेंगे ही, बाजीराव भी मानते रहेंगे, झाँसी राज्य में कितना सम्मान होगा? मनूबाई? सुन्दर है, रानी बनने योग्य, सब गुण उसमें हैं। चपल, चंचल और उद्धत है। मुँहजोर है। किसी और घर में जायगी तो न खुद सुखी हो सकेगी

और न अपने पति को सुखी बना सकेगी। गङ्गाधरराव की रानी बनने पर चपलता न रह सकेगी। जीवन में संयम आ जावेगा। वह १३–१४ साल की है और गङ्गाधरराव चालीस से कुछ ऊपर। परन्तु उनका स्वास्थ्य अच्छा है। स्वभाव कठोर सही है, लेकिन ऐसी उग्र स्त्री के लिये तो ऐसा ही पति चाहिये। घोड़े की सवारी, तीर-तमंचा, मलखम्ब और क्या-क्या यह सब झांसी के राज्य में ही मिल सकेगा और कहीं असंभव है। यह सब सोचकर दीक्षित ने झांसी के राजा के साथ मनूबाई का विवाह सम्बन्ध कराने में किसी प्रकार की भी कसर न लगाने का निश्चय किया। गङ्गाधरराव के पास गये। एकान्त पाकर बोले, 'महाराज से एक निवेदन करने आया हूँ।'

राजा ने कहा, 'कहिये दीक्षित जी।'

दीक्षित—'रनवास को सूना हुये काफी समय हो गया है। अब...'

राजा—'मैं क्या करूँ? जन्मपत्री में मेरे इतने तेजस्वी ग्रह हैं कि मेल ही नहीं खाती। एकाध जगह मिली तो लड़की का भुखमरा पिता चाहता था कि मैं सब काम-धाम छोड़कर, बाप-बेटी की पूजा-अर्चा में ही बाकी जीवन बिताऊँ। इससे तो मेरी नाटकशाला ही अच्छी। अप्सराओं के सुन्दर अभिनय। सुखलाल के बनाये नये-नये पर्दे। सुरीला गायन-वादन और सुहावना नृत्य। आपने तो अनेक बार रङ्गशाला में अभिनय देखे हैं!'

दीक्षित—'श्रीमन्त सरकार, वंश परम्परा बनाये रखने के लिये शास्त्रों का विधान अनिवार्य है। प्रजा अपने राजा की बगल में अपना राजकुमार देखने की लालसा रखती है। सरकार का आमोद-प्रमोद भी चलता रह सकता है।

'हाँ ठीक है।' कहकर गंगाधरराव सोचने लगे।

कुछ क्षण बाद बोले, 'दीक्षित जी आप तो काव्यरसिक हैं। श्री हर्ष-देव रचित रत्नावली नाटिका कितनी कोमल, मधुर, मंजु कल्पना है और मोतीबाई अब भी कितनी सुन्दर, कितना मनोहर अभिनय करती है।'

दीक्षित ने सोचा अब खतरे में पड़े। मोतीबाई के प्रति राजा का ऐसा उत्साह देखकर दीक्षित कुण्ठित हुये।

धीरज पकड़ कर दीक्षित रह गये, 'परन्तु सरकार महल सूना है। उसमें तो दिवाली कोई सजातीय कन्या ही जगमगा सकती है।'

गङ्गाधरराव की आँख बड़ी थी और डोरे लाल। दीक्षित ने डरते डरते देखा। डोरे कुछ और रक्तिम हो गये।

राजा ने कहा, 'मैं क्या करूँ? सजातीय की कन्या को जबरदस्ती पकड़ लूं?'

दीक्षित ने तुरन्त उत्तर दिया, 'नहीं महाराज, मैंने जन्मपत्रियों की परीक्षा कर ली है, बिलकुल मिल गई है। कन्या भी देख आया हूं। बहुत सुन्दर और कुशाग्र बुद्धि है। उसमें रानी होने योग्य समस्त गुण हैं।'

'कहाँ पर?' राजा ने जरा मुस्कराकर पूछा।

दीक्षित का साहस बढ़ा। उत्तर दिया, 'महाराज वह इस समय बिठूर में है। श्रीमन्त पन्त प्रधान पेशवा का काम-काज देखने पर उसका पिता मोरोपन्त ताम्बे नियुक्त है। पढ़ी-लिखी है और समयोजित सभी गुण उसमें हैं।'

राजा ने प्रश्न किया, 'ताम्बे कुलीन होते हैं, यह मैं जानता हूं लेकिन मोरोपन्त भट्ट भिक्षुक तो नहीं है?'

दीक्षित ने जवाब दिया, 'श्रीमन्त पेशवा की यज्ञशाला पर एक रामभट्ट गोडसे है। वह मोरोपन्त का मित्र है। उसने मोरोपन्त की पुत्री को विद्याभ्यास भर कराया है। इसके सिवाय मोरोमन्त का रामभट्ट या किसी भट्ट से और कोई सम्बन्ध नहीं है।'

गङ्गाधरराव ने जरा तीखेपन से कहा, 'मैं पूछता हूँ, मोरोपन्त भिक्षुक है या नहीं!'

दीक्षित ने दृढ़ता के साथ उत्तर दिया, 'कदापि नहीं सरकार।'

गङ्गाधरराव ने दूसरा प्रश्न किया, 'पेशवा और मोरोपन्त में कैसा सम्बन्ध है।'

दीक्षित—'बहुत घनिष्ठ। मित्रों जैसा। कोई नहीं कह सकता कि पेशवा मालिक है और मोरोपन्त नौकर। कन्या को पेशवा ने बिलकुल अपनी पुत्री के तरह मान रक्खा है। मैं स्वयं देख आया हूँ।'

राजा—'वे लोग सम्बन्ध को स्वीकार कर रहे हैं?'

दीक्षित—'कर लेगे। मुझको विश्वास है।'

राजा—'तब सगाई मंगनी इत्यादि के लिये आपको ही बिठूर जाना पड़ेगा।'

हर्ष के मारे दीक्षित का दिमाग चक्कर खा गया। बोले, 'अवश्य जाऊँगा सरकार।' फिर गला भर आया। आँख में एक आँसू।

'यह क्या दीक्षित जी?' राजा ने मिठास के साथ कहा।

दीक्षित गला संयत करके बोले, 'झाँसी की जनता को यह समाचार बहुत हर्ष देगा श्रीमन्त।'

[७]

राजा के अन्य कर्मचारियों के साथ तात्या दीक्षित बिठूर गये। मोरोपन्त और बाजीराव को सम्वाद सुनाया। उन्होंने स्वीकार कर लिया। गंगाधरराव की आयु का कोई लिहाज नहीं किया गया।

मनूबाई का शृङ्गार कराया गया। रंगीन रेशमी साड़ी, स्वर्ण के आभूषण, माणिक मोती के हार। बाजीराव ने अपने वे सब आभरण मनूबाई से फिर वापिस नहीं लिये।

मनूबाई के बड़े बड़े गोल नेत्र मणि-मुक्ताओं को भी आभा दे रहे थे। दुर्गा-सी जान पड़ती थी।

सगाई वाग्दान की रीति होने के बाद मनूबाई नाना साहब और रावसाहब एक ही कमरे में इकट्ठे हुये। वे दोनों लड़के भी रेशमी-वस्त्रों और आभूषणों से लदे थे। सगाई का उत्सव बाजीराव ने धूम-धाम से करवाया। बालकों में बातचीत होने लगी।

नाना—'अब तो मनू तू झाँसी से हाथियों पर बैठकर ब्रह्मावर्त आया करेगी।'

मनू—'एक हाथी पर या दस पर?'

नाना—'एक पर बैठेगी, बाकी पर मन्त्री, सेनापति इत्यादि बैठे आवेंगे।'

मनू—'मुझको तो घोड़े की सवारी पसन्द है।'

नाना—'झाँसी में बैठ पावेगी?'

मनू—'कौन रोक लेगा?'

नाना—'सुनता हूँ राजा बड़ा क्रोधी है।'

मनू—'तो क्या मुझको शूली मिलेगी?'

रावसाहब—'अरे नहीं। पर नबकर, झुककर चलना पड़ेगा।'

मनू ने नबकर-झुककर कमरे का एक चक्कर काटा। हँसकर बोली, 'ऐसे? ऐसे चलना पड़ेगा?'

वे दोनों लड़के भी हँस दिये। मनू की कान्ति से वह घर झिलमिला उठा। और जब वे बालक हँसे, उनके दाँतों की दीप्ति से वह घर दमक उठा।

रावसाहब—'मनू तुम्हारे चले जाने पर हम लोगों को सब तरफ सूना सूना लगेगा।'

मनू—'तो साथ चले चलना।'

नाना—'काका एकाध महीने के लिये जाने दे सकते हैं, अधिक समय के लिये नहीं।'

मनू—'अधिक समय तो यहीं रहना चाहिये। बाला गुरू से तुमको अभी बहुत बहुत सीखना है, आया ही क्या है? मलखम्ब, कुश्ती, इत्यादि से शरीर को खूब कमाओ। अच्छी तरह से हथियार चलाना सीखो...'

नाना—'और दिल्ली पर धावा बोल दो।'

मनू—'दिल्ली में क्या रक्खा है! दादा, काका और अखाड़े के सब समझदार लोग चर्चा करते हैं कि दिल्ली के कटघरे में अब एक कठपुतली भर रह गई है।'

नाना—'अब तो सब तरफ अंग्रेजों का चरचराटा है।'

मनू हँस पड़ी।

रावसाहब ने कहा, 'तो क्या अंगरेज हमको वैसे ही निगल जायेंगे?'

मनू हँसते हँसते बोली, 'नाना साहब को कदाचित् विश्वास नहीं होता कि अंगरेज भी हराये जा सकते है।'

नाना जरा कुढ़ गया। कहने लगा, 'छत्रीली को सिवाय घमण्ड मारने के और कुछ आता ही नहीं।'

उन उज्ज्वल विशाल नेत्रों को और भी विस्तार मिला। मनू बोली, 'फिर छबीली कहा?'

नाना हँस पड़ा। 'आज तो तुमने अपने ही मुंह से छबीली कह दिया! ओह मात खाई!' नाना ने कहा।

मनू भी हँसी। बोली, 'आगे कभी मत कहना।'

नाना ने गम्भीर मुख-मुद्रा करके कहा, 'अब तो झाँसी की रानी कहा करूँगा।'

मनू मुस्कराई।

उस मुस्कान में झाँसी का कितना महान और कैसा अमर इतिहास छिपा पड़ा था।

उसी समय वहां बाजीराव और मोरोपन्त आ गये। बाजीराव प्रसन्न थे और मोरोपन्त आनन्द-विभोर। उन बच्चों को सुखी देखकर वे लोग उस कमरे के वातारण में समा गये। बाजीराव के मुंह से निकल पड़ा, 'मनू तू ऐसी भाग्यवती हो कि भाग्यों को बाँटती रहे।'

मोरोपन्त ने मनू को चिढ़ाने के तात्पर्य से कहा, 'श्रीमन्त ने इसका छुटपन में क्या नाम रक्खा था? मैं तो भूल ही गया।'

मनू ने गर्दन मोड़कर ओठ सिकोड़े। आँखों में क्रोध लाने की चेष्टा की। 'ऊँ' निकली और मुस्करा दी।

बाजीराव बोले, 'क्या नाम था मनू? तू ही बतलादे बेटी।'

बाजीराव के पेट पर अपना सिर रखकर मनू ने कहा, 'नहीं दादा। छबीली नाम अच्छा नहीं लगता।'

खिलखिला कर सब हँस पड़े।

उसी समय तात्या ने आकर कहा, 'सरदार! लोग इकट्ठे हो गये हैं। बातचीत होनी है।'

वे तीनों चले गये। बैठक में ब्रह्मावर्त निवासी महाराष्ट्र के प्रमुख ब्राह्मण विवाह की चर्चा कर रहे थे।

मोरोपन्त के पास सोना चाँदी नहीं था, पर जो कुछ था वह उसे विवाह में लगा देने को तैयार थे। बिठूर के इन प्रतिष्ठित ब्राह्मणों की मध्यस्थता में तै हुआ कि विवाह का व्यय झांसी के राजा वहन करेंगे और विवाह झाँसी में होकर होगा। यह भी तय हुआ कि मोरोपन्त झाँसी में ही स्थायी तौर पर रहा करेंगे और उनकी गणना झाँसी के सरदारों में होगी।

झाँसी के मेहमान मोरोपन्त को कन्या सहित अपने साथ लिवा ले जाना चाहते थे। लेकिन यह ठीक न समझकर मोरोपन्त उन लोगों के साथ नहीं गये। अपने सुभीते के लिये उन्होंने कुछ समय उपरान्त झांसी आने का संकल्प प्रकट किया। विवाह का मुहूर्त निश्चित करके मेहमान झांसी चले गये। बाजीराव ने बाला गुरू के अखाड़े वाले तात्या को झांसी में मोरोपन्त के लिये निवास-स्थान इत्यादि की उचित व्यवस्था के लिये उन लोगों के साथ भेजा। यह ब्राह्मण था। आगे चल कर इतिहास में यही युवा तात्या टोपे के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

[८]

झाँसी में उस समय मन्त्र-शास्त्री, तन्त्र-शास्त्री, वैद्य, रणविद् इत्यादि अनेक प्रकार के विशेषज्ञ थे। शाक्त, शैव, वाममार्गी, वैष्णव सभी काफी तादाद में। अधिकाँश वैष्णव और शैव। और ऐसे लोगों की तो बहुतायत ही थी जो 'गृहे शाक्ताः बहिर्शैवाः सभामध्ये च वैष्णवाः' थे। इन सबके संघर्ष में अनेक जातियाँ और उपजातियाँ, जिनको शूद्र समझा जाता था, उन्नति की ओर अग्रसर हो रही थीं। व्यक्तिगत चरित्र का सुधार, घरेलू जीवन को अधिक शान्त और सुखी बनाना तथा जातियों की श्रेणी में ऊँचा स्थान पाना यह उस प्रगति की सहज आकाँक्षा थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जनेऊ पहिनते हैं—यह उनकी ऊँचाई की निशानी है, जो न पहिनता हो वह नीचा। इसलिये उन जातियों के कुछ लोगों ने, जिनके हाथ छुआ पानी और पूड़ी, मिष्टान्न आमतौर पर ऊँची जाति के हिन्दू ग्रहण कर सकते थे, जनेऊ पहिनने आरम्भ कर दिये। उनके इस काम में कुछ बुन्देलखण्डी और महाराष्ट्र ब्राह्मणों का समर्थन था। झाँसी नगर में ब्राह्मण काफी संख्या में थे। अकेले महाराष्ट्र ब्राह्मण के ही तीन सौ घर थे। इन सब का बहुत बड़ा भाग इस प्रगति के विरुद्ध था।

आन्दोलन उठा। शूद्र जनेऊ के अधिकारी नहीं हैं, अधिकांश पण्डित इस मत के थे। आन्दोलन के पक्ष में एक विद्वान तान्त्रिक नारायण शास्त्री नाम का था। वह शृङ्गार शास्त्र का भी पारंगत समझा जाता था। उसने शिवाजी के प्रसिद्ध अमात्य बालाजी आवजी के पक्ष में दी हुई महापण्डित विश्वेश्वर भट्ट* की व्यवस्था को जगह-जगह उद्धृत किया।

यह वाद-विवाद कुछ दिनों अपनी साधारण गति से चलता रहा।

---

*पूरा नाम—ब्रह्मदेव विश्वेश्वर भट्ट कलियुग के व्यास। महाराष्ट्र के गंग भट्ट के नाम से विख्यात।

गङ्गाधरराव के पास भी खबर पहुंची। यह तटस्थ से थे और कट्टर-पंथियों के नायकों का उन्होंने मजाक भी उड़ाया। पर इससे कट्टरपन्थ की धार को जरा और तेजी मिली। घर-घर वाद-विवाद होने लगा। अमुक वर्ग शूद्र है, अमुक सवर्ण इस बात पर खूब ले-दे मची। घरों के बाहर के चबूतरों पर, बैठकों में, तम्बोलियों की दूकानों पर, मन्दिरों में, पाठशालाओं में, दावतों-जेवनारों में, बाजार-बाजार में चर्चा का यही प्रधान विषय। उस समय झाँसी में दो अच्छे कवि थे। एक हीरालाल व्यास, दूसरे 'पजनेश'—हीरालाल ने अपना उपनाम 'हृदयेश' रक्खा था। हृदयेश वैसे उदार विचारों के थे; उस समय के लिहाज से राष्ट्रवादी।

पजनेश शृङ्गार-रस के कवि थे। अन्य जाति की एक सुन्दरी रक्खे हुये थे और नारायण शास्त्री के मित्र थे। दोनों रसिक। इसलिये कट्टर पंथियों के प्रतिकूल थे। पजनेश ने इस विषय पर कुछ छन्द भी बनाये परन्तु समय की हवा के खिलाफ होने के कारण पजनेश के तर्क-वितर्क वाले थोड़े से छन्द बिलकुल पिछड़ गये और हृदयेश का कट्टर-पन्थी पक्षपात छन्दों की बाढ़ में बहने लगा।

दुर्गा लावनी वाली एक वेश्या थी। अच्छी गायिका और विलक्षण नर्तकी। उसने बहुमत का साथ दिया। हृदयेश के छन्द गाती और कभी अपनी बनाई हुई लावनियों में उस पक्षपात को चमकाती। नारायण शास्त्री दाँत पीसते और सिरतोड़ परिश्रम अपने पक्ष की पुष्टि के लिये करते। पजनेश ने उस पक्ष के समर्थन में कविता करना बन्द कर दिया। हृदयेश को गली-कूचे, हाट-बाजार और मन्दिरों में इतना महत्व मिलते उन्हें अच्छा नहीं लगा। खास तौर पर दुर्गा सरीखी प्रसिद्ध नर्तकी और सुन्दरी द्वारा हृदयेश के बनाये हुये छन्दों का गायन। वह नारायण शास्त्री के घर अब और अधिक आने-जाने लगे और अधिक समय तक बैठने उठने लगे। नारायण शास्त्री का शास्त्रोक्त समर्थन सीख-सीख कर वाद-विवाद में पूरी मुंह जोरी के साथ उद्धृत करने लगे। एक दिन

उनके एक क्षुब्ध विरोधी ने सब दलीलों का एक जवाब देते हुये तड़ाक से कहा, 'नारायण शास्त्री, जिसकी तुम बार-बार दुहाई देते हो, ब्राह्मण ही नहीं है।'

पजनेश ने अधिकतम क्षुब्ध स्वर में पूछा, 'क्यों नहीं है ?'

उत्तर मिला, 'वह एक भङ्गिन को रखे हुये हैं !'

यह अपवाद ख़ुसफुस के रूप में फैला। परन्तु धीरे-धीरे। कुछ कट्टर-पन्थियों ने इसको अपना लिया और कुछ ने असम्भव कहकर अस्वीकृत कर दिया। पजनेश ने सोचा, 'मैं स्वयं निर्धार करूँगा।'

नारायण शास्त्री ने भी अपनी बदनामी सुन ली।

[६]

एक दिन जरा सवेरे ही पजनेश नारायण शास्त्री के घर पहुँचे। शास्त्री अपनी पौर में बैठे थे जैसे किसी की बाट देख रहे हों। पजनेश को कई बार आओ आओ कहकर बिठलाया परन्तु पजनेश ने यदि शास्त्री की आँख की कोर को बारीकी से परखा होता तो उनको मालूम हो जाता कि उनके आने पर शास्त्री का मन प्रसन्न नहीं हुआ था। पजनेश पौर के चबूतरे पर दरवाजे की ओर पीठ करके बैठ गये। शास्त्री दरवाजे की ओर मुँह किये बैठ गये। शास्त्री ने पान खाने के लिये पानदान बढ़ाया। पजनेश के जी में एक क्षणिक झिझक उठी। उसको दबा लिया और पान लगाकर खा लिया।

शास्त्री ने पूछा, 'कोई नया समाचार ?'

'अब तो आपके चरित्र पर ही लाँछन लगाया जाने लगा है।' पजनेश उत्तर देकर पछताये। उस प्रसंग का प्रवेश और किसी तरह करना चाहते थे।

शास्त्री ने आँख चढ़ाकर कहा, 'मैंने भी सुन लिया है।'

पजनेश ने दम ली। शास्त्री कहते गये, 'मूर्खों के पास जब युक्ति नहीं रहती तब वे गालियों पर आ जाते हैं। मैं क्या गाली-गलौज के दबाव में शास्त्र-चर्चा को छोड़ दूंगा ? बदमाशों को मुँहतोड़ जवाब दूँगा। उस पक्ष के जितने शास्त्री हैं, चाहे महाराष्ट्र के हों चाहे एतद्देशीय, सब इन बनियों-महाजनों और सरदारों के किसी न किसी प्रकार आश्रित हैं। और ये आश्रमदाता हैं—पुरानी लीकों के पुजारी। मक्षिका स्थाने मक्षिका वाले। ये लोग शास्त्र का पारायण नहीं करते--अथवा करते हैं तो सच बात न कहकर यजमानों को संतुष्ट करने के लिये केवल उनकी मुंह-देखी कहते हैं। तन्त्रशास्त्र वालों का मूल, ज्ञान-विज्ञान और सत्य में है; वे अवश्य पुराणियों और कथा-वाचकों के साथ असत्य की सोंझ नहीं करते।'

पजनेश—'परन्तु अपवाद का दमन जरूरी है।'

शास्त्री—'व्यर्थ है ! बकने दो। मैं परवाह नहीं करता। अपना काम देखो।'

पजनेश—'मेरी समझ में श्रीमन्त सरकार से फरियाद करनी चाहिये वे जब कठोर दण्ड देंगे तब यह बदनामी खत्म होगी।'

शास्त्री—'मैं ऐसी सड़ियल बात को राजा के सामने नहीं ले जाना चाहता। राजा तो यों भी उन कथा-वाचकों की दिल्लगी उड़ाया करते हैं।'

पजनेश—'तब मैं क्या कहूँगा।'

शास्त्री को प्रस्ताव पसन्द नहीं आया। बोले, 'यह और भी बुरा होगा। राजा कहेंगे कि कुछ रहस्य अवश्य है तब तो स्वयं फरियाद न करके मित्र से करवाई।' फिर विषयांतर के लिये कहा, 'आज घर से इतनी जल्दी कैसे निकल पड़े ?'

पजनेश ने उत्तर दिया, 'कान नहीं दिया गया तो इसी चर्चा के लिये आपके……'

पजनेश का वाक्य पूरा नहीं हो पाया था कि उतरती अवस्था की एक स्त्री डलिया झाड़ू लिये दरवाजे पर आई। वह बाहर ही रह गई। उसके पीछे उससे सटी हुई एक युवती थी। वह कुछ अच्छे वस्त्र पहिने थी, थोड़े से आभूषण भी। साफ-सुथरी। युवती उतरती अवस्था वाली स्त्री को एक ओर करके मुस्कराती हुई पौर में आ गई। प्रवेश करते समय उसने पजनेश को नहीं देखा था। परन्तु भीतर घुसते ही पजनेश की झाईं पड़ गई। ठिठकी। लौटने के लिये मुड़ी और फिर खड़ी रह गई। दूसरी स्त्री से बोली, 'कोंसा, पौर में तो कोई कूड़ा नहीं।'

कोंसा ने कहा, 'मैं आती हूं। ठहरना।'

पजनेश ने देखा ऊँची जाति की सुन्दर स्त्रियों जैसी सुन्दर है। नायिकाभेद की उपमायें स्मरण हो आईं, कमलगात, मृगनयन, कपोत ग्रीवा, कमलनालकटि। परन्तु नायिका भेद का साहित्य और आगे साथ न दे सका। कवि का मन आकर्षण और ग्लानि की खींचतान में पड़ गया।

शास्त्री ने अपनी घबराहट को किसी तरह नियन्त्रित करके उस युवती से कहा, 'थोड़ी देर में आना तब तुम्हारा काम कर दूँगा। समझी छोटी ?'

युवती के खरे रंग पर लाली दौड़ गई। वह 'हां' कहकर गजगति से नहीं, बिल्ली की तरह वहां से भाग गई।

शास्त्री और कवि दोनों किसी एक बड़े बोझ से मानो दब गये। पजनेश के मुंह से वाक्य फूट पड़ा, 'यह कौन है ?'

शास्त्री—'छोटी।'

पजनेश—'यह तो उसका नाम है। वह है कौन ?'

शास्त्री—'स्त्री।'

पजनेश—'यह तो मैं भी देखता हूँ। कौन स्त्री ?'

शास्त्री—'एक काम से आई थी।'

पजनेश—'खैर मुझको कुछ मतलब नहीं, परन्तु यदि…'

शास्त्री ने बात काटकर पूछा, 'परन्तु यदि क्या ? आप क्या इसके सम्बन्ध में मेरे ऊपर सन्देह करते हैं ?'

पजनेश ने एक क्षण सोचकर उत्तर दिया, 'बस्ती के लोग क्या इसी स्त्री की चर्चा करते हुये आप पर लांछन लगा रहे हैं ? यदि ऐसा है तो आपको सावधान हो जाना चाहिये। उस स्त्री की जाति वाले उसका सर्वनाश कर डालेंगे और राजा आपका।'

शास्त्री ने कहा, 'झूठा आरोप है। मैं किसी से नहीं डरता।'

'आप जानें,' पजनेश बोले, 'मेरा कर्तव्य था सो कह दिया।'

पजनेश उठे। शास्त्री ने एक पान और खाने का अनुरोध किया परन्तु पजनेश बिना पान खाये चले गये। बाहर निकलकर उनकी आंख ने इधर-उधर उस युवती को ढूंढ़ा परन्तु वह न दिखलाई पड़ी। उन्हें आश्चर्य था, 'इस जाति में भी पद्मिनी होना सम्भव है !'

[१०]

पजनेश जिस पक्ष का अभी तक जोरदार समर्थन करते चले आये थे उसको उन्होंने छोड़ दिया। नारायण शास्त्री लगभग खामोश हो गये। नये उपनीतों ने लड़ाई स्वयं अपने हाथों में ले ली और एकाध जगह वह लड़ाई जीभ से खिसक कर हाथ और डण्डे पर आ बैठी। झंझट का रूप जरा भयानक हो गया। मामला गङ्गाधरराव के पास पहुँचा। जाति और धर्म का झगड़ा था, इसलिये उन्होंने दखल देने की ठानी। नये जनेऊ वाले लोग बुलाये गये। प्रमुख ब्राह्मण भी।

उस दिन कुछ वाद-विवाद हुआ, राजा किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंचे। छोटी जाति के कहे जाने वाले जनेऊ धारियों ने नारायण शास्त्री को पेश करने की मुहलत माँगी। एक दिन का समय मिला। उन लोगों ने नारायण शास्त्री को सहज ही राजी कर लिया। उसी दिन बिठूर से तात्या दीक्षित और युवक तात्या झाँसी आये। दीक्षित ने बिठूर का सब समाचार राजा को सुनाया। राजा ने सब शर्तें मन्जूर कर लीं। मंगनी की रस्म बिठूर में हो आई थी परन्तु सीमन्ती इत्यादि विवाह की अन्य रीतियाँ झाँसी में किसी मकान में होकर होंगी। इसका प्रबन्ध राजा ने अपने कर्मचारियों के सुपुर्द कर दिया। इसके लिये युवक तात्या को झाँसी में दो-एक दिन के लिये ठहरना पड़ा।

दूसरे दिन जनेऊ सम्बन्धी झगड़े की पेशी होने को थी। युवक तात्या भी इस विलक्षण मुकद्दमे को सुनना चाहता था। दरबार में गया। उसको फौजी अफसर की पोशाक़ पसन्द थी। खास तौर पर लोहे की फ्रांसीसी टोपी।

गङ्गाधरराव ने उसको आदर के साथ बिठलाया। बाजीराव पेशवा का कर्मचारी और भविष्य की ससुराल से आया हुआ मिहमान। राजा अपने पदाभिमान के आतङ्क में आ गये और शास्त्रियों के थोड़े से ही विवाद के सुनने के बाद वे न्याय-निष्ठुरता पर जम गये।

राजा ने अपराधियों से पूछा, 'क्या ब्राह्मण बनना चाहते हो ?'

अपराधियों में एक अधिक साहस वाला था। उसने उत्तर दिया, 'नहीं तो सरकार !'

'फिर यह अनुचित काम क्यों किया ?'

'अनुचित तो नहीं सरकार।'

'क्यों रे अनुचित नहीं है ?'

'सरकार ! ब्राह्मणों के अलावा और अनेक जातियाँ भी तो जनेऊ पहिनती हैं।'

'अबे बदमाश उन जातियों की बराबरी करता है ?'

वह चुप रहा।

गङ्गाधरराव का क्रोध चढ़ लेने पर उतरता मुश्किल से था।

बोले, 'जनेऊ तोड़कर फेंक दे और फिर कभी आगे न पहिनना।'

उसने हाथ जोड़े और सिर नीचा कर लिया।

राजा ने कड़क कर कहा, 'क्या कहता है ? अपने हाथ से तोड़ता है या तुड़वाऊँ ?'

उसने उत्तर दिया, 'अपने हाथों तो हम लोग अपने जनेऊ नहीं तोड़ेंगे चाहे प्राण भले ही निकल जावें। आप राजा हैं, चाहे जो करें।' गङ्गाधरराव की आंखों के लाल डोरे रक्त हो गये। चोबदार को हुक्म दिया, 'एक पतला तार लाओ। तांबा, लोहा किसी का भी। जल्दी लाओ।'

वह दौड़कर ले आया। आगी मंगवाई गई। तार को जनेऊ का आकार बनाकर गरम किया गया। आज्ञा दी, 'यह गरम जनेऊ इसको पहिनाओ।'

अपराधी ने गर्व से सिर ऊँचा किया। आकाश की ओर एक क्षण के लिये हाथ बाँधकर देखा और फिर नतमस्तक हो गया। वह गरम जनेऊ उसके कन्धे को छुलाया ही था कि युवक तात्या ने विनय की, 'महाराज, धर्म की रक्षा करिये। यह ठीक नहीं है।'

गंगाधरराव ने वह गरम जनेऊ तुरन्त अलग करा दिया। युवक से बोले, 'श्रीमन्त पेशवा भी तो यही दण्ड देते।'

'नहीं सरकार', युवक ने निर्भयता के साथ सम्मति दी, 'धर्म अपने अपने विश्वास की बात है। इसमें राज्य को तटस्थ रहना चाहिये।'

'लोकाचार भी ?' गंगाधरराव ने जरा सा मुस्कराकर प्रश्न किया।

'हां महाराज', युवक ने विनीत और मधुर स्वर में उत्तर दिया, 'लोकाचार समय-समय पर बदलते रहते हैं।'

गंगाधरराव के क्रोध ने कुछ ठण्डक पाई। उनकी दृष्टि उस युवक के टोप पर जा टिकी। कुछ क्षण ठहरी। कुतूहलवश पूछा, 'यह टोप क्यों लगाते हो ?'

युवक ने उत्तर दिया, 'मैं सिपाही हूं।'

राजा को इस उत्तर पर हँसी आई। बोले, 'हमारे यहां तात्या दीक्षित एक शास्त्रज्ञ ब्राह्मण हैं, सो जानते ही हो। तुम सिपाही ब्राह्मण हो परन्तु नाम से बुलाने में कभी कभी गड़बड़ हो सकती है। इसलिये तुमको तात्या टोपी वाले या सीधे टोपे कहें तो कैसा ?'

हँसकर युवक ने जवाब दिया, 'श्रीमन्त सरकार, मुझको इसी छोटे से नाम से लोग पुकारते हैं।'

'मुझे भी पसन्द है।' राजा ने कहा। फिर जनेऊ वाले अपराधियों को बनावटी रूखे स्वर में डाटते हुये बोले, 'इस युवक ने तुमको बचा लिया—भाग जाओ।'

वे लोग चले गये। राजा ने तात्या टोपे को नाटकशाला के लिये आमन्त्रित करते हुये कहा, 'टोपे, आज रात को हमारी नाटकशाला में रत्नावली नाटक खेला जायगा। आना। बहुत अच्छा अभिनय, गायन-वादन और नृत्य है। पहले कभी देखा ?'

'नहीं सरकार', टोपे ने उत्तर दिया।

'पढ़ा है ?' दूसरा प्रश्न किया गया।

'नहीं सरकार', टोपे ने फिर उत्तर दिया।

'समय से जरा पहले आ जाना', राजा ने प्रस्ताव किया, 'मैं तुमको कथानक वहीं बतलाऊँगा।'

संध्या के कुछ घड़ी पीछे तात्या टोपे नाटकशाला पहुँच गया। राजा ने रत्नावली का कथानक उत्साहपूर्वक सुनाया और रङ्गमञ्च पर आने वाले अभिनेताओं के नाम और गुण बतलाये। कहा, 'रानी वासवदत्ता का अभिनय मोतीबाई करेगी। बड़ी कलावती है और सागरिका अर्थात् रत्नावली का अभिनय जूही करेगी। नृत्य बहुत अच्छा करती है। गाती भी है। नाटकशाला में हाल ही में आई है।'

नाटक समय पर शुरू हो गया।

राजा के निकट बैठे हुए नवागन्तुक तात्या टोपे को सभी पात्र बहुधा देखते थे। सुन्दर, बलिष्ठ और किसी उमङ्ग में तना हुआ। और सिर पर विलक्षण टोपी!

रानी वासवदत्ता का अभिनय मोतीबाई ने बहुत अच्छा किया। सागरिका (रत्नावली) का अभिनय जूही ने खूब निभाया। नाची भी बहुत अच्छा। टोपे को वह सब बहुत भला लगा। परन्तु उसके मुंह से 'वाह' या 'आह' कुछ भी नहीं निकला।

नाटक की समाप्ति पर गङ्गाधरराव रङ्गशाला के शृंगार-कक्ष में नहीं गये। टोपे से पूछा, 'कैसा रहा?'

टोपे ने जवाब दिया, 'सरकार ने जैसा कहा था, ठीक वैसा ही सब हुआ है।'

'नृत्य कैसा था जूही का?' राजा ने सवाल किया।

टोपे ने सावधानी के साथ जवाब दिया, 'मैंने इससे पहले नृत्य देखे ही नहीं हैं। मुझे तो बड़ा विलक्षण जान पड़ा।'

राजा प्रसन्न हुये। उन्होंने प्रस्ताव किया, 'थोड़े दिन ठहर न जाओ झांसी में? कुछ और अच्छे-अच्छे अभिनय देखने को मिलेंगे।'

टोपे ने कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किया।

[११]

जनेऊ विरोधी पक्ष वाले किले से परम प्रसन्न लौटे। अपने पक्ष की विजय का समाचार बहुत गम्भीरता के साथ सुनाना शुरू करते थे और फिर पर-पक्ष की मिट्टी पलीत होने की बात खिलखिलाकर हँसते हुये समाप्त करते थे। शहर भर में धूम मच गई, 'तामे और लोहे के जनेऊ आगी में लाल कर-करके राजा ने पहिनाये। नहीं तो इन्होंने आज जनेऊ पहिने थे, कल वेदों की ऋचायें आल्हा की तरह गली-गली बकते फिरते।'

कोई कहते थे, 'अजी बड़ी कुशल समझो, बिठूर वाले मिहमान दरबार में न होते तो राजा सिर काटकर फेंक देने का हुक्म दे चुके थे।'

नारायण शास्त्री यह सब वाङ्मय चुपचाप सुनते हुये घर आये। उदास थे। किवाड़ लटका कर पौर के चबूतरे की चटाई पर लेट गये। देर तक लेटे रहे। संध्या हो गई। अन्धेरा छा गया। वह उठे। दिया-बत्ती की। कुछ खा-पीकर फिर पौर में आ बैठे। किसी ने धीरे से सांकल खटकाई। नारायण शास्त्री ने किवाड़ खोले। छोटी थी।

भीतर आ गई। शास्त्री ने किवाड़ बन्द करके सांकल चढ़ा ली। छोटी चबूतरे पर बैठ गई। शास्त्री की उदासी जा चुकी थी। छोटी के नेत्रों में कटाक्ष सरल था परन्तु सरल चितवन में ही मद बहुत।

छोटी ने अपने एक घुटने पर ठोड़ी टेक कर नजर उठाई। बरौनियाँ भौंहों के ऊपर जाने को हुईं। बोली, 'मैं तो बड़ी हैरान हूँ। लोग बहुत तङ्ग करते हैं। छेड़ते हैं। आपका नाम लेकर आवाजें कसते हैं।'

शास्त्री ने भौंहें सिकोड़ कर कहा, 'उहँ, बकने दो छोटी! जरा भी परवाह मत करो।'

'मुझको आप ही की फिकर रहती है', छोटी बोली, 'अपने लिये कोई खटका नहीं। मेरी जात वाले लोग मुझको जात बाहर करना चाहते हैं। सुग-सुग चल रही है।'

'फिर क्या करोगी?'

'क्या करूँगी—आप ही बतलाइये।'

'देखा जायगा।'

'कब?'

'जब बात सामने आवेगी तब।'

'और ये लोग जो मुझसे छेड़-छाड़ करते हैं, उनका क्या करूँ?'

'उनसे आँख बरकाओ। कान मूंद कर अपना रास्ता लिया करो।'

'ऐसी छेड़-छाड़ को तो मैं अनसुनी कर सकती हूँ, करती ही रहती हूं परन्तु वे प्रेम की बातें करते हैं।'

'अच्छा!'

'हां! कोई अप्सरा कहता है। कोई कविता न्योछावर करने की बात कहता है। कोई सौगन्ध खाता है कि तेरे लिये सब कुछ छोड़ने की तैयारी में हूं।'

'तुम क्या जवाब देती हो।'

'किसी को कुछ, किसी को कुछ। कुछ से मैंने पूछा, जनेऊ भी उतार देने को तैयार हो?'

'उन लोगों ने इस सवाल के पल्टे में क्या कहा?'

'उन्होंने कहा उतार देंगे।'

छोटी मुस्कराई। शास्त्री को गुस्सा आया। थोड़ी देर सोचते रहे। कभी सिर खुजलाते और कभी छोटी को देखते थे। बोले, 'छोटी, यदि बात ऊपर ही आ जावे तो मैं मारे जाने तक के लिये तैयार हूं, तुम पक्की हो।'

उसने दृढ़ता के साथ उत्तर दिया, 'क्या आपने कभी कोई कचाहट पाई?'

शास्त्री ने नीची गर्दन करके कहा, 'वैसे ही पूछा था। एक काम करना होगा।'

'क्या?' निश्चिन्तता के साथ छोटी ने प्रश्न किया।

शास्त्री ने प्रश्न के रूप में उत्तर दिया, 'क्या इन लोगों के जनेऊ उतरवा सकोगी?'

छोटी सहज वृत्ति से बोली, 'जनेऊ उतरवाने के बदले में कुछ देना न पड़ेगा ? क्या बड़े-बड़े लोग यों ही जनेऊ उतारकर दे देंगे ?'

'कौन-कौन लोग हैं ? जाति और नाम तो बतलाओ।' शास्त्री ने कहा।

छोटी ने ब्योरेवार बतलाया। लम्बी सूची थी। बतलाने में समय लगा। शास्त्री को फिर क्रोध आया। थोड़ी देर जलते-भुनते रहे।

उसी समय ऐसा जान पड़ा जैसे किसी ने बाहर से साँकल चढ़ा दी हो। छोटी चौंकी। उसने शास्त्री को इशारा किया। शास्त्री धीरे से किवाड़ों के पास गये। आहट ली। बाहर कुछ खुस-फुसाहट और पैरों का शब्द सुनाई पड़ा। छोटी को संकेत किया। वह आँगन में चली गई। शास्त्री ने भीतर की साँकल खोलकर किवाड़ खोलना चाहा। न खुला। बाहर से साँकल चढ़ी हुई थी। उन्होंने भीतर की साँकल फिर चढ़ा ली। आँगन में छोटी के पास गये।

कहा, 'ये लोग किसी पाजीपन पर तुले हुये हैं।'

छोटी जरा आतुरता के साथ बोली, 'मैंने अभी-अभी पूछा था कि ऐसा समय आने पर क्या करूँ। समय आ गया। अब बतलाइये।'

शास्त्री ऊपर से दृढ़ और भीतर से घबराये हुये थे। चुप रहे।

छोटी शान्ति के साथ बोली, 'आप मेरी चिन्ता छोड़ें। किसी तरह अपने को बचावें। मुझको चाहे मारकर घर के कुयें में डाल दें। कह दें कि छोटी यहाँ कभी आई ही नहीं।'

शास्त्री ने दृढ़तापूर्वक कहा, 'क्या कहती है छोटी ? मेरे भीतर अभी कुछ बाकी है, जो मुझको मरने के समय भी धीरज दे सकता है। अब सब उघर गया। राजा के सामने जाना पड़ेगा। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारा बाल बांका न हो। कह देना कि शास्त्री ने जबरदस्ती की। मैं वैसे भी मारा जाऊँगा। तुम इस तरह बच जाओगी।'

'कभी नहीं', छोटी गर्व के साथ बोली, 'अगर हमारी जाति में कोई गुण है तो एक—हम लोग बेईमानी नहीं कर सकते।'

शात्री सोच-विचार में पड़ गये ।

कुछ देर बाद उन्होंने एक अनुरोध किया, 'कुछ न कुछ झूठ बनाना पड़ेगा ।'

छोटी बोली, 'सिवाय उस झूठ के और जो कहिये कह दूंगी ।'

शास्त्री ने कहा, 'तुम कुछ ब्राह्मणों, बनियों इत्यादि के नाम लेकर कह सकती हो कि इन-इन लोगों ने अपने जनेऊ उतारकर तुम्हारे हवाले किये हैं ।'

छोटी ने उत्तर दिया, 'जिन जिन लोगों ने मेरा धर्म माँगा, उन्हीं-उन्हीं लोगों का नाम लूंगी । औरों के नहीं । पर जनेऊ कहां हैं ?'

शास्त्री ने समाधान किया, 'जनेऊ मैं देता हूं । नये हैं उनको मैला कर लेना । कुछ उतारे हुये भी हैं, उनको नयों में मिला लेना ।'

छोटी बोली, 'जल्दी करिये । अभी तो मैं निकल जाऊँगी ।'

शास्त्री ने पूछा, 'कैसे ?'

छोटी ने कहा, 'आप अपना काम देखिये । मैं निकल जाऊँगी ।'

शास्त्री ने बहुत से नये-पुराने जनेऊ छोटी को दे दिये ।

छोटी ने प्रस्ताव किया, 'आप पौर का दिया भीतर रख दीजिये । किवाड़ खुलवाने का उपाय कीजिये । तब तक मैं खपरैल पर से कूदकर घर जाती हूं । देर लगेगी तो ये लोग मेरी जाति वालों को दरवाजे पर इकट्ठा कर देंगे और फिर मैं बहुत मारी-पीटी जाऊँगी । अभी तो मुझको कोई न छुयेगा ।'

शास्त्री ने मान लिया । उन्होंने किवाड़ खोलने की कोशिश की परन्तु न खुले । हल्ला करना ठीक न समझा । छोटी खपरैल से कूदकर निकल गई । परन्तु उसके मार्ग में रुकावट डाली गई । फिर भी वह अपने घर पहुँच गई, घिरी हुई थी ।

[१२]

जनेऊ का प्रश्न समाप्त नहीं हुआ था कि यह विकट रौरा खड़ा हो गया। जिन थोड़े से लोगों का जीवन विविध समस्याओं के काँटों पर होकर सफलतापूर्वक गुजर रहा था, वे तो नारायण शास्त्री के कृत्य की निन्दा करते ही थे परन्तु जिसका भीतरी जीवन बाहरी छल से भिन्न था— जो जीवन के कांटों पर गुलाब की सेजों पर अंगूरी की—या महुये की—मोहक सिंचाई से मीठा बना-बनाकर हर घड़ी को मौजों में बाँट-बाँटकर, चल रहे थे—उन्होंने नारायण शास्त्री की सबसे ज्यादा बुराई की। पाखण्डी है, पाजी है, धर्म द्रोही, राक्षस है, इत्यादि—और उसको कम से कम प्राणदण्ड मिलना चाहिये। और छोटी को? उसके टुकड़े टुकड़े करके स्यारों को खिला देना चाहिये, क्योंकि उसी ने तो एक विद्वान ब्राह्मण को पतित किया! इतनी बड़ी बात बिना विलम्ब राजा के पास न पहुँचे, यह असम्भव था। राजा ने जब सुना कभी हँसी आती थी और कभी उनको क्षोभ-संताप होता था।

छोटी और नारायण शास्त्री बुलाये गये। मालूम होता था जैसे शास्त्री कुछ घण्टों में ही बूढ़े हो गये हों। छोटी चिंतित थी परन्तु उसके पैर जम-जमकर किले की ओर गये थे। जब वह गङ्गाधरराव के सामने पहुँची, तब उसको पसीना जरूर आ गया था।

इस मामले का निर्धार सुनने के लिये भी तात्या टोपे गया।

नारायण शास्त्री को उस बीभत्स में डूबा देखकर राजा को बड़े जोर की हँसी आने को हुई। उन्होंने कठोरता के साथ अपना दुस्सह संयम किया। पूछ-ताछ शुरू की।

राजा—'यह क्या हुआ शास्त्री?'

शास्त्री—'जो होना था हो गया सरकार।'

राजा—'कैसे हुआ?'

शास्त्री—'क्या कहूँ श्रीमन्त।'

राजा—'बतलाना तो पड़ेगा। न बतलाने से ज्यादा नुकसान होगा।'

शास्त्री—'क्या बतलाऊँ महाराज ?'

राजा—'यह कैसे हुआ ?'

शास्त्री—'तप और संयम के अतिरेक से। जब शरीर ने ताड़ना न सह पाई, तब जो-जो कुछ उसके सामने आया, ग्रहण कर लिया।'

राजा—'तुमको तो लोग बहुत दिन से शृङ्गार शास्त्री कहते हैं।'

शास्त्री—'वह तो उपकरण मात्र था।'

राजा—'सुनता हूं कोकशास्त्र का भी अध्ययन किया है।'

शास्त्री—'हाँ सरकार।'

राजा—'क्यों ?'

शास्त्री—'उस शास्त्र में अपने सम्बन्ध के प्रसंग ढूँढ़ने के लिये और यह जानने के लिये कि इसमें ऐसा क्या है, जिसने महर्षि वात्स्यायन से कामसूत्र की रचना करवाई।'

राजा—'क्या पाया ?'

शास्त्री—'प्रकृति के साथ जीवन की टक्कर।'

राजा—'आगे क्या पाओगे ?'

शास्त्री—'यह मेरे हाथ में नहीं है, सरकार।'

राजा—'तब किसके हाथ में है ?'

शास्त्री—'सरकार के।'

राजा ने थोड़ी देर सोचा। उपस्थित लोगों पर दृष्टि घुमाई। छोटी की विनम्र आँख को देखा। बड़े पलक और बड़ी बरौनियाँ। फिर अपने ब्राह्मणत्व का ख्याल किया। बोले, 'इस लड़की को तुरन्त झाँसी का राज्य छोड़ना पड़ेगा। इसके लिये देश निकाले का दण्ड काफी है। तुमको…'

छोटी ने तुरन्त दृढ़ स्वर में टोका, 'श्रीमन्त सरकार, शास्त्री महाराज का कोई कसूर नहीं है। मैं इनके पीछे पड़ गई, इसलिये इनका पतन हुआ। मेरे दण्ड को बढ़ाकर इनके दण्ड की कमी को पूरा कर लीजिये। मैं सिर कटवाने के लिये तैयार हूँ।'

राजा को रत्नावली नाटक का एक दृश्य प्रासंगिक न होने पर भी याद आ गया, रत्नावली को भगवान ने आत्मवध से बचाया था।

राजा बोले—'ठहर जा लड़की। शास्त्री, तुमको विधिवत् प्रायश्चित करना पड़ेगा। पञ्चगव्य इत्यादि।'

शास्त्री—'और इसको देश निकाला होगा?'

राजा—'हाँ।'

नतमस्तक अपराधी का सिर ऊँचा हुआ। जैसे कीचड़ में से कमल फूट पड़ा हो। बोला, 'सरकार, मैं प्रायश्चित नहीं करूँगा। मैंने कोई पाप नहीं किया है। यदि मुझको प्रायश्चित की आज्ञा दी जाती है तो पहले लगभग आधे शहर को पञ्चगव्य लेना पड़ेगा।'

'क्यों?' राजा ने विस्मय के साथ पूछा।

शास्त्री ने छोटी से आग्रह किया, 'बतला दे सरकार को।'

छोटी ने अपने वस्त्रों में से मिट्टी की दो डबुलियाँ निकालीं और उनमें से जनेऊ।

राजा ने उत्सुक होकर प्रश्न किया, 'यह क्या है छोकरी?'

नीची गर्दन किये, बिना आँख मिलाये छोटी ने उत्तर दिया, 'बड़ी जातों के जिन-जिन लोगों ने मुझको फाँसने की कोशिश की उन सबके मैंने जनेऊ उतरवाये और इन डबुलियों में इकट्ठे किये।'

सुनने वाले सन्नाटे में आ गये। राजा जरा असमँजस में पड़े। फिर यकायक हँसकर शास्त्री से बोले, 'तुमने इस स्त्री को केवल अपना तन ही दिया, या मन भी?'

शास्त्री ने कोई उत्तर नहीं दिया। छोटी कुछ कहना चाहती थी परन्तु राजा ने उसको हाथ के संकेत से वर्जित करके शास्त्री से फिर प्रश्न किया, 'तुम इस स्त्री को भ्रष्ट समझते हो या नहीं?'

शास्त्री के मुंह से यकायक निकला, 'नहीं सरकार।'

गङ्गाधरराव कुछ क्षण विचार-विमग्न रहे। फिर गम्भीर स्वर में बोले, 'इस स्त्री के साथ और किसी का भी संसर्ग नहीं है, मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ। इन यज्ञोपवीतों की कहानी तुम्हारी ही गढ़ंत जान पड़ती है। मैं सूत के इन डोरों को छूना नहीं चाहता। यदि परीक्षा करूँ तो पुरानों में ब्रह्मगाँठ लगी होगी और नये बिना किसी गाँठ के होंगे। ये सब तुम्हीं ने इसको दिये होंगे।'

शास्त्री पसीने में तर हो गये।

राजा कहते गये, 'तुम समझते होगे कि तुम्हारे सिवाय सब मूर्ख हैं। तुमको अवश्य कठोर दण्ड देता परन्तु तुमको दण्ड देने से इस अभागिन का दण्डभार बढ़ जायेगा।'

छोटी रोने लगी। बोली, 'मैं भुगतने को तैयार हूँ।'

राजा ने रूखे स्वर में शास्त्री से कहा, 'तुम प्रायश्चित पंचगव्य के लिये तैयार नहीं हो, इसलिये तुमको भी झाँसी तुरन्त छोड़नी पड़ेगी।'

शास्त्री प्रसन्न हुये। बोले, 'बड़ा अनुग्रह हुआ। मैं इसी के साथ झाँसी छोड़ देने को तैयार हूँ।'

वे दोनों चले गये।

राजा ने तात्या टोपे की ओर देखा। वह बिलकुल संतुष्ट जान पड़ता था।

राजा ने सोचा, बहुत सस्ता छूटा यह। वह लड़की छोटी जाति की होने पर भी इस ब्राह्मण से बड़ी है। देश-निकाला दे दिया, काफी है। बिठूर के लोग भी इसी निर्धार से सन्तुष्ट होंगे। अधिक कड़ा दण्ड देने से झाँसी के बाहर बदनामी ज्यादा होती। फिर अंग्रेज···अंग्रेज···

फिर और आगे उन्होंने नहीं सोच पाया।

छोटी और शास्त्री दूसरे दिन झाँसी छोड़कर चले गये।

[१३]

मोरोपन्त, मनूबाई इत्यादि के ठहरने के लिये कोठीकुआं के पास एक अच्छा भवन शीघ्र ही तै हो गया था। तात्या टोपे कुछ दिन झाँसी ठहरा रहा। निवास स्थान की सूचना बिठूर शीघ्र भेज दी।

टोपे को बिठूर की अपेक्षा झाँसी ज्यादा पसन्द आई। उसकी कल्पना गङ्गाधरराव की नाटकशाला में बार-बार उलझ जाती थी। इसके सिवाय झाँसी का रहन-सहन, यहाँ के स्त्री-पुरुष और यहाँ का प्राकृतिक वातावरण उसको ब्रह्मावर्त के गंगातट से अधिक मनोहर लगे। जब बिठूर लौटा, अवसर पाकर उन बालकों ने झाँसी के विषय में सवालों की झड़ी लगा दी।

नाना—'क्या झांसी बिठूर से बड़ा नगर है?'

तात्या—'कुछ बड़ा ही होगा। किला बड़ा है। नगर के चारों ओर परकोटा है। बस्ती पहाड़ी की ऊँचाई-निचाई पर बसी है। इसलिये बरसात में कीचड़ नहीं मचती होगी। घर-घर कुयें हैं। नगर के भीतर इधर-उधर फल-फूलों के बगीचे। भीतर-बाहर तालाब, अच्छे-अच्छे मंदिर। किला पहाड़ी पर है। उसमें राजमहल है। महादेव और गणपति के मन्दिर हैं। एक बड़ा महल नीचे है। महल के पीछे नाटकशाला।'

मनू—'नाटकशाला! उसमें क्या होता है?'

तात्या—'अच्छे-अच्छे नाटक खेले जाते हैं। गायन-वादन होता है।'

मनू—'मैं भी देखूंगी।'

तात्या—'श्रीमन्त राजा साहब तो नित्य ही नाटकशाला में जाते हैं। मुझको भी बुलवा लेते थे।'

मनू—'हाथी कितने हैं?'

तात्या—'दस या शायद ज्यादा हों।'

मनू—'घोड़े?'

तात्या—'सरकार को घोड़े की सवारी पसन्द नहीं है। तामझाम में चलते हैं।'

नाना—'सेना कितनी है?'

तात्या—'कई हजार है।'

मनू—'ठीक नहीं गिनी?'

तात्या—'बिलकुल ठीक तो नहीं परन्तु आठ और दस के बीच में होगी।'

मनू—'लोग कैसे हैं?'

तात्या—'उनके शरीर दृढ़ और स्वस्थ्य हैं। व्योपार अच्छा है। शहर में चहल-पहल मची रहती है। धनधान्य खूब है। गरीबी बहुत कम देखने में आई है। स्त्री-पुरुष सुखी दिखलाई पड़ते हैं। सन्ध्या समय लोग फूलों की माला डाले बगीचों और बाजारों में घूमते हैं। स्त्रियाँ घी के दिये थालों में सजाकर पूजन के लिये लक्ष्मी जी के मन्दिर में जाती हैं।'

रावसाहब—'कुश्ती मलखम्भ के अखाड़े हैं?'

मनू—'मैं भी यही पूछना चाहती थी।'

तात्या—'हैं तो परन्तु लोगों में गाने-बजाने का अधिक शौक दिखलाई पड़ता है।'

रावसाहब—'क्या रास्तों में गाते-बजाते फिरते हैं?'

तात्या—'नहीं तो।'

मनू—'फिर क्या नाट्कशाला में गाते-बजाते हैं?'

तात्या—'नहीं—घरों पर, सभाओं में, उत्सवों पर। जान पड़ता है मानो गाने का मिस ढूँढ़ रहे हों। स्त्रियाँ तो गाने का कोई न कोई बहाना लिये रहती हैं। पीसने के समय तो सब कहीं स्त्राँ गाती हैं परन्तु झाँसी में पानी भरने जावें तो गाएं, पानी भरते समय गाएं। शायद मरती भी गाते-गाते होंगी।'

मनू—'झाँसी में तोपें कितनी हैं?'

तात्या—'बड़ी तोपें चार हैं—बहुत बड़ी हैं। छोटी तो बहुत हैं।'

मनू—'किले के भीतर तालाब है ?'

तात्या—'नहीं। एक पोखरा है। एक बड़ा कुआं भी है, उसमें बहुत पानी रहता है। न जाने पहाड़ पर किसने खुदवाया होगा।'

नाना—'आदमियों ने खुदवाया होगा, देव-दानव तो खोदने आये न होंगे।'

तात्या को बाजीराव ने बुलवाया। बाजीराव ने पूछा, 'बच्चों में क्या बात कर रहे थे ?'

तात्या ने उत्तर दिया, 'झांसी का हाल सुना रहा था।'

बाजीराव—'नारायण शास्त्री वाली बात तो नहीं सुनाई ?'

तात्या—'नहीं सरकार। और न नाटकशाला की गाने-नाचने वालियों की।'

बाजीराव—'तुम मोरोपन्त के साथ कुछ दिन के लिये झाँसी जाओगे ?'

तात्या—'हाँ श्रीमन्त।'

बाजीराव—'मुहूर्त पास का निकला है। जल्दी जाना होगा।'

[१४]

यथा समय मोरोपन्त मनूबाई को लेकर आ गये। तात्या टोपे भी साथ आया।

विवाह का मुहूर्त शोधा जा चुका था। धूमधाम के साथ तैयारियां होने लगीं।

नगर वाले गणेश मन्दिर में सीमन्ती, वर-पूजा इत्यादि रीतियां पूरी की गई। राजा गङ्गाधरराव घोड़े पर बैठकर गणेश मन्दिर गये। उस दिन मनूबाई ने पहले-पहल गङ्गाधरराव को देखा। गङ्गाधरराव का मुख-सौन्दर्य अब भी वैसा ही था। आँखों का तेज लालडोरों के कारण आकर्षक कम, भयानक ज्यादा मालूम होता था। पेट कुछ बढ़ा हुआ परन्तु भद्दा नहीं लगता था। रङ्ग सांवलापन लिये हुये। सारी देह एक बलवान पुरुष की।

मनू का ध्यान शरीर के इन अङ्गों पर एकाध क्षण ठहर कर उनके सवारी के ढङ्ग पर जा अटका। वह मुस्कराई। अपनी सम्मति प्रकट करने के लिये आस-पास लड़कियों में किसी उपयुक्त पात्र को मन ही मन ढूँढ़ने लगी। उस समय मनू ने सोचा, यदि इस घड़ी नाना या राव यहां होते तो उनको सब बातें सुनाती समझाती।

राजा गङ्गाधरराव धीरे-धीरे, रुकते-रुकते गणेश मन्दिर को जा रहे थे। नगर के निवासी प्रणाम करते जाते थे और वे मुस्करा-मुस्करा कर प्रणाम का जवाब देते जाते थे।

यकायक मनू के सामने एक मराठा-कन्या आई। आयु १५ से कुछ ऊपर। शरीर छरेरा। रङ्ग हलका-सांवला। चेहरा जरा लम्बा। आँखें बड़ी। नाक सीधी। ललाट प्रशस्त और उजला। जैसे ही वह मनू के पास आई उसने आँखें नीची करके आदरपूर्वक प्रणाम किया। मनू को ऐसा लगा मानो पहले से परिचित हो। उससे बात करने की तुरन्त इच्छा उमड़ी।

बोली, 'तुम कौन हो ?'

उसने उत्तर दिया, 'आपकी दासी, सुन्दर मेरा नाम है।'

मनू—'मेरी दासी ! कैसी ?'

सुन्दर—'आप हमारी महारानी हैं। मैं सेवा में रहूंगी। आपकी दासी होकर अपना भाग्य बढ़ाऊँगी।'

मनू—'मेरी दासी कोई न हो सकेगी। मेरी सहेली होकर रहोगी।' मनू ने उसका हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींचा। वह झिझकी। मनू ने उसका हाथ ढीला करके पूछा, 'तुम क्या सचमुच सदा मेरे पास रहोगी ?'

'सदा सरकार', सुन्दर ने उत्तर दिया, 'हम १६ दासियां आपकी सेवा में रहा करेंगी।'

मनू को हँसी आई परन्तु उसने रोक ली। गङ्गाधरराव की सवारी अब भी सामने थी। मनू ने धीरे से सुन्दर से कहा, 'तुम घोड़े पर चढ़ना जानती हो ?'

सुन्दर बोली, 'थोड़ा सा। दौड़ना खूब जानती हूं। कोस भर दौड़ जाऊँगी और हांफ न आयेगी।'

'धीरे धीरे जाने वाले घोड़े को भी यह जाँघ से कसे जा रहे हैं !' गङ्गाधरराव की ओर संकेत करके मनू ने कहा।

सुन्दर ने चकित होकर पूछा, 'आपने कैसे जाना सरकार ?'

मनू हँसी दाँतों की सफेदी चेहरे के निखरे गोरे रङ्ग से होड़ लगाने लगी।

मनू ने कहा, 'तुम हथियार चलाना जानती हो सुन्दर ?'

'नहीं सीखा सरकार।' सुन्दर ने जवाब दिया।

इतने में गङ्गाधरराव की सवारी आगे बढ़ गई। दो लड़कियां और मनू के निकट आईं। सुन्दर की ही उम्र की एक। दूसरी लगभग १४ वर्ष की। उन्होंने भी सिर झुकाया, प्रणाम किया।

सुन्दर ने परिचय दिया, 'इसका नाम मुन्दर है और इसका काशी। मेरी तरह यह भी आपकी दासियां हैं।'

मनू ने बिना किसी प्रयत्न के कहा, 'मेरी सहेलियाँ बनकर रहोगी। दासी मेरी कोई भी न होगी।'

वे दोनों हर्ष के मारे फूल गईं। काशी जरा छोटे कद की और सुगठित शरीर वाली। मुन्दर छरेरे शरीर की और जरा लम्बी। मुन्दर और काशी दोनों गौर-वर्ण की मुन्दर का चेहरा बिलकुल गोल, आंखें सुन्दर से कुछ ही छोटी परन्तु चञ्चल और तेज। काशी की कुछ बड़ी और स्थिर।

मनू ने तीनों से अलग-अलग प्रश्न किये।

'तुम लोग कौन हो?'

तीनों ने उत्तर दिया, 'कुणबी।'

'झांसी में कब आईं?'

'पुरखे आये थे।'

'झाँसी के आस-पास घूमी हो?'

'बहुत कम।'

'घोड़े पर चढ़ना जानती हो?'

'थोड़ा थोड़ा।'

'हथियार चलाना?'

सुन्दर तो पहले ही बतला चुकी थी। मुन्दर ने तलवार चलाना सीखा था और काशी ने बन्दूक। मनू को जानकर अच्छा लगा।

बोली, 'मैं तुम लोगों को घोड़े पर चढ़ना सिखाऊँगी। हथियार चलाना भी। मलखम्भ जानती हो?'

वे तीनों सिर नीचा करके मुस्कराईं। सिर हिला दिये नहीं जानतीं।

'गाना-बजाना जानती हो?' मनू ने बहुत सूक्ष्म चुटकी लेते हुये कहा।

सुन्दर बोली, 'वह तो हम तीनों जानती हैं। हम लोग, जब सरकार की मर्जी होगी, सुनावेंगी।

मनू ने कहा, 'जब इच्छा होगी सुनूँगी परन्तु मुझको उसका शौक कुछ कम है। वह अच्छा है किन्तु घुड़सवारी, हथियार चलाना, मलखंब, कुश्ती, प्राचीन गाथाओं का श्रवण—ये सब—मुझको बहुत अधिक भाते हैं।'

'कुश्ती!' सुन्दर ने अपने बड़े नेत्रों को जरा घुमाकर आश्चर्य प्रकट किया।

मनू के होठों पर सहज मुस्कराहट आई। बोली, 'हाँ कुश्ती भी। यह बहुत आवश्यक है। फिर किसी समय बतलाऊँगी। अभी अवसर नहीं है।'

इतने में कुछ और स्त्रियाँ पास आने को हुई परन्तु कुछ दूर ठिठक गईं। मनू ने उनको उस समय अपने पास बुला लेने की जरूरत नहीं समझी।

मनू कहती गई, 'पुरुषों को पुरुषार्थ सिखलाने के लिये स्त्रियों को मलखंब, कुश्ती, इत्यादि सीखना ही चाहिये। खूब तेज दौड़ना भी। नाचने-गाने से भी स्त्रियों का स्वास्थ्य सुधरता है, परन्तु अपने को मोहक बना लेना ही तो स्त्री का समस्त कर्तव्य नहीं है।'

चौदह वर्ष की मनू अपने से अधिक वय वाली लड़कियों से जो कह गई, वह पास ठिठकी हुई उन स्त्रियों ने भी सुन लिया।

सुन्दर, मुन्दर और काशी यह सब सुनकर जरा झेंपी। उनकी मुस्कराहट चली गई। परन्तु मनू अब भी मुस्करा रही थी। वह मुस्कराहट उन लड़कियों को, उन स्त्रियों को जीवन के कोष में से कुछ दे सा रही थी। उन लड़कियों का सहमा हुआ जी शीघ्र ही लहलहा गया। अन्य लड़कियों तथा स्त्रियों को भी मनू ने अपने निकट बुला लिया। ये स्त्रियाँ उन तीन लड़कियों की अपेक्षा अधिक सहमी हुई थीं।

मनू ने उनको अपना मन खोलने के लिये उत्साहित किया। स्त्रियों की ओर से प्रस्ताव, गायन इत्यादि द्वारा अपने हर्ष को प्रदर्शित करने का हुआ। उसने बिना किसी विशेष उत्साह के स्वीकर किया।

जो और लड़कियाँ उन स्त्रियों के साथ थीं, उनके विषय में मनू ने प्रश्न किये। वे सब दासियों के रूप में मनू के पास रहने के लिये नियुक्त कर दी गई थीं, क्योंकि विवाह का मुहूर्त आ रहा था। उसके बाद भी उनको मनू के पास ही रहना था।

ये लड़कियां अब्राह्मण जातियों में से रूप, रस इत्यादि के पैमाने से तौल कर चुनी जाती थीं और उनको आजन्म अपनी रानी के साथ कुमारी होकर रहना पड़ता था। यदि वे विवाह कर लेतीं तो उनको महल की नौकरी छोड़नी पड़ती थी। दहेज में दासियों और दासों का देना महाराष्ट्र में नहीं था, शायद राजपूताने के कुछ रजवाड़ों से वहाँ पहुंचा हो ! शायद इसका प्रारम्भ, भिक्षुणी और देवदासी प्रथा से निसृत हुआ हो। इन दासियों के जीवन कितने कुतूहलों और कितने कोलाहलों से भरे रहते होंगे और इनके जीवन कितने दुखांत होते होंगे उसकी कल्पना की जा सकती है। इनको जन्म देने वाले लगभग इसी प्रकार के माता-पिता, केवल धन-लोभ से इनको महलों के सुपुर्द कर देते थे। फिर, या तो वे अपने सौन्दर्य के जमाने में राजा के विलास की सामग्री बनी रहती थीं या जीवन के स्वाभाविक मार्ग पर जाकर महल से अलग हो जाती थीं।

मनू ने दासियों के इस चित्र की कुछ कल्पना की।

उसने अपनी उसी सहज मुस्कराहट से कहा, 'मैं तुमको दासियां बना कर नहीं रक्खूंगी। तुम मेरी सखी-सहेली बनोगी। केवल एक शर्त है।'

मनू ने अपने विशाल नेत्रों की दृष्टि को उन पर विखेरा। बोली, 'जानती हो क्या ?'

उन सबों ने 'नाहीं' के सिर हिलाये।

मनू ने कहा, 'मेरे साथ जो रहना चाहे—उसको घोड़े की सवारी अच्छी तरह आनी चाहिये। तलवार, बन्दूक, बर्छी, छुरी-कटार, तीर-तमञ्चा इत्यादि का चलाना—अच्छी तरह चलाना—सीखना पड़ेगा। दोनों हाथों से हथियार एक से चलाना सीख जावें तो और भी अच्छा।'

पुरुषों जैसे काम सीखने की बात सुनते ही स्त्रियों के चेहरों पर लाज की हल्की लाली दौड़ गई। परन्तु मन के हर्ष और उत्साह ने लाज को दबा लिया।

काशी ने स्थिर दृष्टि और स्थिर स्वर में कहा, 'हम लोगों को जो कुछ सिखलाया गया है उतना ही हम जानती हैं। अब जो कुछ सरकार की आज्ञा होगी उसको हम लोग जी लगाकर और दृढ़ता के साथ सीखेंगे। परन्तु कुश्ती और मलखम्ब कौन सिखलावेगा ?'

मनू ने तुरन्त बतलाया, 'जितना मैं जानती हूं, मैं सिखलाऊंगी। बाकी बिठूर के प्रसिद्ध आचार्य बाला गुरू। उनको यहाँ बुला दूंगी।'

बाला गुरू का नाम सुनते ही लड़कियाँ शरमा गईं और उनसे बड़ी उम्र की स्त्रियाँ हँस पड़ीं। उस हँसी पर मनू के मन में क्षोभ उठा परन्तु मनू ने उसको नियन्त्रित कर लिया।

फिर उसी मुस्कराहट के साथ बोली, 'बाला गुरू देवता हैं, और न भी हों तो तुमको क्या डर ? स्त्रियाँ दृढ़ता का कवच पहिनें तो फिर संसार में ऐसा पुरुष कोई हो ही नहीं सकता जो उनको लूट ले। बाला गुरू के साथ लड़कर कुश्ती सीखने की जरूरत नहीं पड़ेगी। वह बतलाया भर करेंगे। अखाड़े में उतर कर सिखलाऊंगी मैं।'

गणेश मन्दिर पास ही था। वाद्य बज रहे थे। उनमें होकर कभी कभी मीठी शहनाई की चहक भी सुनाई पड़ जाती थी। स्त्रियाँ मनू से शृङ्गार-रस की बात करने आई थीं। अपने आदर के झरोखे में होकर। मनू के मन की धारा, गङ्गाधरराव की सवारी, बाजों-गाजों और झाँसी निवासियों के हर्षोन्माद से संघर्ष पाकर दूसरी ओर चली गई थी।

सब स्त्रियाँ-लड़कियाँ भी अपने अच्छे से अच्छे वस्त्र और आभरण पहिने हुये थीं। केश खूब सँवारे गये थे और उसमें रङ्ग-बिरङ्गे और सुगन्धित फूल गूंथे गये थे। मनू के केशों में भी फूल थे। मनू ने हंसकर कहा, 'तुम लोग यदि कुश्ती सीखने के लिये इसी समय अखाड़े में उतरो तो क्या हो ?'

सुन्दर मुस्कराकर बोली, 'तो इन फूलों से सारा अखाड़ा भर जावेगा।'

मनू ने हँसकर कहा, 'और तुम्हारे बालों में अखाड़े की मिट्टी भर जावेगी।'

वे सब खिलखिला पड़ीं।

मनू बोली, 'परन्तु वह मिट्टी तुम्हारे केशों पर इन फूलों से कहीं अधिक सुहावनी लगेगी।'

मुन्दर बोली, 'सरकार, बालों की शोभा मिट्टी से?'

मनू ने मुन्दर का कन्धा हिलाकर कहा, 'ये फूल कहाँ से आये? कहाँ जायेंगे? ये क्या मिट्टी से बढ़कर हैं?'

मनू की बात में, अपनी दादियों से सुनी हुई संसार की अस्थिरता की झाईं सुनकर वे सब सहम गईं।

मनू समझ गई। बोली, 'नहीं फूलों से नाता बनाये रक्खो परन्तु मिट्टी से सम्बन्ध तोड़कर नहीं।'

स्त्रियों के मन पर एक दार्शनिक झकोर ठोकर दे गई। उन्होंने ऊँचे स्वर में 'हाँ हाँ' कही परन्तु आंखों से ऐसा जान पड़ता था, मानो उनका आनन्द कहीं भाग गया, उन्हें अपनी असंगत अवस्था में क्लेश होने लगा, मानो मनू ने उनके फूलों की भर्त्सना की हो और उनके आदर का अपमान।

मनू ने उन सब स्त्रियों से कहा, 'तुम गणेश मन्दिर में जाकर देखो क्या होता है। मैं तब तक इन तीनों से बात करती हूँ। परन्तु एक बात सुनती जाओ। मुझको तुम्हारे फूल बहुत अच्छे लगे इनको फेक मत देना।'

इस बात पर प्रसन्न होकर वे सब चली गईं। केवल सुन्दर, मुन्दर और काशी रह गईं।

मनू बोली, 'मैं सुनती हूँ झाँसी के लोग फूलों को बहुत प्यार करते हैं। अच्छा है। मुझको भी पसन्द हैं, परन्तु क्या दुबले-पतले घोड़े पर सोने-चाँदी का जीन अच्छा लगता है?'

सुन्दर ने उमंग के साथ तुरन्त कहा, 'सरकार मैं आपकी बात अब समझी।'

[१५]

सीमन्ती इत्यादि की प्रथायें पूरी होने के उपरान्त गणेश मन्दिर में गायन-वादन और नृत्य हुये और एक दिन विवाह का भी मुहूर्त आया।

विवाह के उत्सव पर आसपास के राजा भी आये। उनमें दतिया के राजा विजयबहादुरसिंह खासतौर से उत्साह प्रदर्शन कर रहे थे।

कोठी कुआँ वाले भवन में भाँवर पड़ने को थी। बाहर गायन-वादन और नृत्य हो रहा था। सामने वाले मकान में मोतीबाई, जूहीबाई, इत्यादि अभिनेत्रियाँ झरपों के पीछे वास्त्राभूषणों और पुष्पों से लदी बैठी थीं। बाहर दुर्गाबाई का नृत्य और उस काल के प्रसिद्ध धुरपदिये मुगलखां का गायन अभ्यन्तर के साथ हो रहा था। मुगलखाँ के ध्रुवपद-अलाप इत्यादि पर अनेक लोग वाह वाह कर रहे थे परन्तु जनता दुर्गाबाई के नृत्य के लिये बार-बार अकुला उठती थी। इसलिये मुग़लखाँ ने अपना तम्बूरा रख दिया और दुर्गाबाई को खड़े होने का इशारा किया। राजा विजयबहादुर महफिल में मसनद पर बैठे थे। उन्हें ऊंचे दर्जे के गायन और नृत्य दोनों का व्यसन था। दुर्गाबाई नृत्य करने को खड़ी होने को ही थी कि भीतर से इत्रदान का सामान आया। सोने के वर्कों से लिपटे पान और बढ़िया इत्र। पान लाने वाले एक सरदार थे। उन्होंने कहा कि भाँवर शुरू हो गई। उसी समय भीतर एक घटना हुई।

पुरोहित ने मनूबाई की गाँठ गङ्गाधरराव से जोड़ने के लिये वर की चादर और वधू की साड़ी के छोर हाथ में पकड़े। वृद्धावस्था के कारण हाथ काँप रहा था। गांठ लगाने में जरा-सा विलम्ब हुआ गाँठ अच्छी तरह नहीं लग पा रही थी। बार-बार हाथ काँप जाता था।

मनू ने सोचा, 'मैं ही क्यों न इसको बाँध दूं ?'

परन्तु उसने विचार को नियन्त्रित कर लिया। गाँठ तो पुरोहित ने बाँध ली लेकिन वह कांपते हुये हाथों से गाँठ का फन्दा कसने में कुछ

क्षणों का विलम्ब कर रहे थे। मनू से न रहा गया। बिन मुस्कराहट के और दृढ़ स्वर में बोली, 'ऐसी बांधिये कि कभी छूटे नहीं।'

गङ्गाधरराव सिकुड़ गये। मोरोपन्त मन ही मन क्षुब्ध हुये। होठ सिकोड़ लिया। परन्तु पुरोहित खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसके पास खड़े सब स्त्री-पुरुष हँस पड़े। कहकहे लग गये। मनू पुलिकित हो गई। आंखें नीची करके उसने थोड़ा-सा मुस्करा भर दिया। इस कहकहे की आवाज बाहर पहुँची और मनू की कही हुई बात भी। वहाँ भी कहकहे लगे। चारों ओर उस वाक्य की चर्चा हो उठी।

सामने वाले मकान में भी समाचार पहुँचा। जूही ने, जो अब यौवनावस्था में लहराने को थी, कहा, में, 'मैं तो नाचना चाहती हूँ। ऐसे अवसर पर चुपचाप बैठे बैठे थक गई हूँ। इतनी खुशी के समय भी न नाचें तो कब नाचेंगे ?'

मोतीबाई में वाहरी गम्भीरता आ गई थी परन्तु मन आल्हाद में फुदक रहा था। बोली, 'नाचो कोई हर्ज नहीं। मैं भी नाचना चाहती हूँ परन्तु घुंघरू बाँधकर नहीं। बाहर बड़े बड़े राजे-महाराजे बैठे हैं। शोर-गुल सुनेंगे तो क्या कहेंगे ?'

जूही बोली, 'तबला-घुंघरू हमको कुछ नहीं चाहिये, शोर-गुल न होगा। इस पर भी महाराज अगर कुछ कहेंगे तो मैं भुगत लूंगी। आखिर नाटक होगा ही। हम लोग रङ्गशाला में नाचें और गावेंगे ही। राजे-महाराजे नाटकशाला में पास से सब कुछ देखेंगे ही। मैं नहीं मानूँगी।'

उन दोनों ने मनमाना नृत्य किया और नर्तकियों ने ताल दिया, परन्तु मीठी थपकी से।

बाहर मुगलखाँ खड़ा हो गया। बोला, 'वाह ! जैसा राज्य है, वैसी ही महारानी हमको मिली। दिल चाहता है कि मैं नाचूँ परन्तु कभी सीखा नहीं इसलिये मजबूर हूँ।' और उसकी आँख में आँसू आ गये। बैठ गया।

दुर्गाबाई खड़ी हो गई। बोली, 'उस्ताद, यह काम मेरा है। मैं दिल और पैर दोनों से नाचूंगी। आप अकेले दिल से, खेलिये या नाचिये।' और उसने सिर नीचा कर लिया।

विजयबहादुर प्रसन्न हुये। स्वभाव से ही जरा सनकी थे। इस समय सनक कुछ तीव्रतर हो गई। बोले, 'दुर्गा खूब अच्छी तरह नाचो, इनाम मिलेगा।'

'बहुत अच्छा सरकार।' कहकर दुर्गा पूरे उत्साह के साथ गाने और नाचने लगी। मुगल खाँ को इसका गाना खटक रहा था। परन्तु उसके मन की इस चोट को दुर्गा का नृत्य सम्भाल ले गया।

थोड़ी देर में भाँवर की रस्म पूरी हो गई। अन्य रस्मों के पूरा होने पर गङ्गाधरराव वर की सजधज में पाँवड़ों पर, फूलों और चावलों की बरसा में, बाहर आये। सबने ताजीम दी। गाना बजाना थोड़ी देर के लिये बन्द हो गया। गङ्गाधरराव एक ऊँची मसनद पर जा बैठे और इधर-उधर बारीकी के साथ देखने लगे कि मनू के उस वाक्य का असर भद्देपन की किस हद तक हुआ है। उनकी आँख कहीं जम नहीं रही थी आँखों के लाल डोरों में, रौब की जगह संकोच ने पकड़ लिया था।

वहाँ के उपस्थित लोगों के जी में वही वाक्य बार-बार और जोर के साथ चक्कर काट रहा था। आँखें सब की गङ्गाधरराव के दूल्हा वेश पर जा रही थीं और मन के मना करने पर भी आँखें उसी वाक्य को दुहरा रही थीं।

उस मकान की झरप के भीतर का नृत्य बन्द हो गया था। उन अभिनेत्रियों की आँखों पर भी वही वाक्य सवार था।

जूही ने धीरे से मोतीबाई से कहा, 'असली राजा तो झाँसी को अब मिला, बाई जी।'

मोतीबाई ने आँख तरेर कर जूही का हाथ दबाया, 'राजा सुनेंगे तो गर्दन काटकर फिकवा देंगे। खबरदार।'

'मैंने तो आपसे कहा', जूही बोली, 'आपके हाथ जोड़ती हूँ किसी को मेरी बात मालूम न होने पावे।'

फिर ये सब झरपों के पास खड़ी होकर जो कुछ दूसरी ओर हो रहा था देखने-सुनने लगीं।

गंगाधरराव विजयबहादुर से बोले, 'आपने मुगलखाँ का ध्रुवपद सुना ?'

विजयबहादुर ने कहा, 'पहले भी सुना है। इनकी होरी भी सुनी है। परन्तु दुर्गा का नाच मुझको बहुत भाया।'

मुगलखाँ की आँख बदल पड़ी परन्तु उसने सिर नीचा कर लिया। गंगाधरराव ने देख लिया। वे बोले, 'मुगलखाँ ताव खाने पर बहुत अच्छा गाता है। अब सुनियेगा। इसके ध्रुवपद का मुकाबला कहीं है ही नहीं। नृत्य अपनी जगह अच्छा है परन्तु मुगलखाँ का ध्रुवपद राजा है और दुर्गा का नाच उसका चाकर।'

मुगलखाँ हर्ष के मारे फूल गया। आँखों में आँसू छलक आये। उनको जल्दी पोंछकर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। बोला, 'श्रीमन्त सरकार का हुकुम हो तो लखनऊ वाली बात सुना दूँ।'

मनू के उस वाक्य से गङ्गाधरराव को छुटकारा नहीं मिल रहा था। उनको विश्वास था कि उपस्थित लोग भी उसमें उसी प्रकार उलझे होंगे प्रतिघात से उमङ्ग की एक लहर उठी और उन्होंने मुगलखाँ से कहा, 'महाराजा साहब को जरूर सुनाओ और फिर गाओ। बैठकर सुनाओ।'

मुगलखाँ की बात सुनने के लिये वहाँ सन्नाटा छा गया।

मुगलखाँ ने कहा, 'सरकार मैं गाने के लिये लखनऊ गया। वहाँ के गवैयों ने सलाह कर ली कि मैं नवाब साहब के सामने पहुंच ही न पाऊँ। इसलिये उन्होंने कहा, 'पहले हमको सुनाओ। समझेंगे कि उस्ताद हो, तो नवाब साहब के सामने पेश कर देंगे, वरना अपने वनखंड को वापिस जाना। मैं अपने देश के कपड़े पहिने था। पहले तो उनका मजाक उड़ाया गया; बुन्देलखण्डी है। क्या ऊल-जलूल साफा बाँधे है ! जूते आपके माशेअल्लाह ! दाढ़ी बुन्देलखण्ड के रीछों जैसी ! बातचीत जङ्गलियों-सी ! वर्ताव ठीक भेड़ियों का ! इत्यादि सुनते सुनते कलेजा

पक गया। फिर मैंने गाया। जो कुछ गाने के बाद हुआ उसको मैं कह नहीं सकता।'

गङ्गाधरराव उत्साह के साथ बोले, 'मैं बतलाता हूं महाराज साहब। जब उस्ताद ने आठों अंग सहित ध्रुपद सुनाया तब सच्चे स्वरों की वर्षा हो उठी, निन्दा करने वाले उसमें बह गये। उस्ताद के उन लोगों ने पैर छुये और इनको नवाब साहब के सामने पेश किया। नवाब साहब स्वयं संगीत के बड़े जानकार हैं। उस्ताद को काफी इनाम दिया। बुन्देलखण्ड को उन्होंने जी खोलकर सराहा।'

फिर मुगलखाँ ने तल्लीन होकर गाया। लगभग सारी जनता मुग्ध हो गई। राजा विजयबहादुर इस अवसर पर पुरस्कार बाँटने के लिये अपने साथ काफी रुपया लाये थे। सनक तो सवार थी ही, अपने बख्शी से बोले, 'मुगलखाँ के साफे में जितने रुपये आवें दे दो, तबले वाले के तबलों में चाहे फोड़कर चाहे वैसे ही भर दो। सारंगी वालों की सारंगी में रुपये ठूंस दो। दुर्गा जितना बोझ बाँध ले उतना बाँध लेने दो।'

इस आज्ञा के सुनते ही अनेक वाद्य वाले खड़े हो गये। इनमें से एक शहनाई वाला भी था। उसकी शहनाई में बहुत थोड़े रुपये जा सकते थे। इसलिये गुस्से में आकर उसने शहनाई तोड़ डाली। बोला, 'सरकार, ऐसा बाजा किस काम का जो रुपये का मेल न खा सके।'

राजा विजयबहादुर ने उसकी शहनाई को सोने से भरने का आदेश किया।

उस युग की प्रथा के अनुसार उस दिन सब को कुछ न कुछ दिया गया। रात को नाटक हुआ। बहुत अच्छा। विजयबहादुर ने नाटकशाला से सम्बन्ध रखने वाले सब लोगों को काफी इनाम दिया।

विवाह की समाप्ति पर दरबार हुआ। नजर-न्योछावरें हुईं। पुरस्कार बांटे। बड़े बड़े सरदारों की नजर-न्योछावरों के उपरान्त छोटे जागीरदारों की बारी आई। एक मऊ का जागीरदार अपने को

आनन्दराय कहते हुये आगे बढ़ा। राजा थकावट के मारे खीझ उठे थे। आनन्दराय ने अपने कुटुम्ब और अपनी सेवा का बखान करते हुये रामचन्द्रराव वाली घटना का वर्णन भी शुरू कर दिया।

राजा खिसिया उठे। बोले, 'मैं भी स्मरण किये हूँ। तुम्हारी दास्तान पर यहाँ कोई काव्य या रायसा नहीं लिखा जाने वाला है। नजर करने के बाद अपनी जगह जा बैठो। तुमको जो मिलना होगा मिल जावेगा।'

आनन्दराय नजर-न्योछावर करके एक कोने में सिमट गया। अवस्था अधेड़ हो गई थी परन्तु शरीर अब भी बलिष्ठ था। अपने को अपमानित हुआ समझ कर बार-बार उसांस ले रहा था—और छाती फुला रहा था। वह एक निश्चय पर पहुँचा। जैसे ही राजा के सामने जरा भीड़-भाड़ देखी वहाँ से खिसक गया।

राजा के कर्मचारी नजर-न्योछावरों का ब्योरा भेंट करने वालों के नाम पते सहित लिखते जा रहे थे। भेंट करने वालों को पलटे में पुरस्कार भी बाँटने थे, इसलिये; और, हिसाब रखने के लिये भी।

जब पुरस्कार बांटते-बांटते आनन्दराय की बारी आई तब वह गैरहाजिर था। दरबार के निकट ही रनवास के लिये झरपें लगी थीं। रानी भी वहां बैठी थीं।

'कहां चला गया आनन्दराय ?' राजा ने पूछा।

थोड़ी-सी तलाश करने के बाद वह नहीं मिला। फिर और लोगों की हाजिरी होती रही।

इस रस्म की समाप्ति पर वहां के सब लोगों ने जय-जयकार किया।

'महाराजा गङ्गाधरराव की जय।'

'महारानी लक्ष्मीबाई की जय।'

विवाह के उपरान्त ससुराल में आने पर मनू का नाम उसी दिन महाराष्ट्र और बुन्देलखण्ड की प्रथा के अनुसार लक्ष्मीबाई रक्खा गया था।

दरबार की समाप्ति के कुछ समय उपरांत रानी लक्ष्मीबाई—अब मनू नहीं कहा जावेगा - किले के महल के अपने कक्ष में सुन्दर, मुन्दर और काशी के साथ थीं। उनको अपनी सब सचहरियों में ये तीन सबसे अधिक प्यारी लग उठी थीं।

रानी ने कहा, 'आज एक बात अच्छी नहीं हुई। आनन्दराय नाम के उस जागीरदार की अवहेलना की गई।'

मुन्दर बोली, 'सरकार को कैसे नाम याद रह गया? और इतने हल्ले गुल्ले और भीड़भाड़ की ध्वनियों में यह घटना कैसे स्मरण रही?'

रानी ने कहा, 'मैंने देख लिया है कि बुन्देलखण्ड पानीदार देश है। इस पानी को बनाये रखने की हमको जरूरत है। उस आदमी का पानी उतारा गया – यह बुरा हुआ।'

काशी बोली, 'छोटे छोटे से आदमियों का महाराज कहां तक लिहाज करें? थक भी तो बहुत गये आज। सुना है नाटकशाला भी नहीं जायेंगे।'

रानी ने कहा, 'जिन्हें तुम छोटा आदमी कहती हो, आधार तो हमारे वे ही हैं।'

[१६]

विवाह होने के पहले गङ्गाधरराव को, शासन का अधिकार न था। उन दिनों झांसी का नायब पोलिटिकल एजेन्ट कप्तान डनलप था। वह राजा के पास आया-जाया करता था। लोग कहते थे कि दोनों में मैत्री है।

गङ्गाधरराव अधिकार प्राप्त करने का प्रयत्न पहले से कर रहे थे। विवाह के उपराँत उनको अधिकार मिल गया। परन्तु अधिकार मिलने के पहले कम्पनी सरकार के साथ फिर एक अहदनामा हुआ। पुरानी बातें पुष्ट की गईं।

केवल एक बात नई हुई – झांसी में एक अंगरेजी फ़ौज रक्खी जावेगी अंगरेजी हुकूमत में, पर खर्चा झाँसी का राज्य देगा। गंगाधरराव को मानना पड़ा। मनको खटका। उन्होने नगद खर्चा न देकर कम्पनी सरकार का आग्रह निभाने के लिये झाँसी के राज्य से २ लाख २७ हजार चार सौ अट्ठावन रुपये वार्षिक आय का एक इलाका इन राज्य-लोलुपों को दे दिया। जब यह सब हो गया तब गंगाधरराव को शासन का अधिकार मिल पाया। इसके बाद दरबार हुआ। खुशियां मनाई गईं। खेल-कूद, नाटक इत्यादि हुये, परन्तु अनेक झांसी निवासियों को उनमें खोखलापन ही दिखलाई पड़ा। उनको अपने प्रदेश का खण्डित होना कसका।

स्वयं राजा को नाटकशाला में यथेष्ट मनोरंजन नहीं मिल सका। वे शीघ्र वहाँ से चले आये और रंगमहल में रानी के पास पहुँचे।

रानी किले वाले महल ही में प्रायः रहती थीं। बाहर बहुत कम निकल पाती थीं। जब निकलतीं तब पर्दे की कैद में। इसलिये सवारी, व्यायाम इत्यादि किले वाले महल के इर्दगिर्द आड़-ओट से कर पाती थी। तो भी वे काफी समय इन बातों में लगाती थीं और अपनी समग्र सहेलियों तथा किले के भीतर रहने वाली स्त्रियों को सवारी, शस्त्र-प्रयोग, मलखंभ, कुश्ती का अभ्यास कराती थीं। बचे हुये समय में धार्मिक ग्रन्थों का थोड़ा-सा परन्तु नियमपूर्वक अध्ययन करतीं। भगवद्गीता पर उनकी

परम श्रद्धा थी। बाल्यावस्था को पार कर यौवन में पदार्पण करने को थीं परन्तु नये नये वस्त्र, कीमती आभूषण का शौक न करके उनकी धुन ऊपर लिखी बातों की ओर अधिक रहती थी।

झाँसी आने के बाद चपल, सुखी मनू में एक परिवर्तन धीरे धीरे घर करता जा रहा था—वे अब उतना नहीं बोलती थीं। रानी लक्ष्मीबाई में गम्भीरता जगह करती जा रही थी और क्रुद्ध हो जाने की वृत्ति तो और भी अधिक शीघ्रता के साथ घुलती चली जा रही थी। व्यङ्ग करने की इच्छा जरूर कुछ बढ़ती पर थी परन्तु वह सहज, सरल, भव्य, दिव्य मुस्कान सदा साथ रही। और चित्त की दृढ़ता तो पूर्व जन्मों से संचित होकर मानो छठी के दिन ही ब्रह्मा ने पूरी समूची उनके हिस्से में रख दी थी।

रङ्गमहल में आने पर रानी ने गङ्गाधरराव का सत्कार जैसा कि हिन्दू नारी—और रानी—कर सकती है, किया।

राजा अपने भावों को छिपा पाने में असमर्थ थे। उनको इसका अभ्यास न था। चेहरे पर रुखाई थी और आँखों में उदासी।

रानी ने कहा, 'आज आप नाटकशाला से जल्दी लौट आये। खेल अच्छा नहीं हुआ क्या ?'

राजा बोले, 'खेल तो सदा अच्छा होता है। मन नहीं लगा। एक नये खेल की तैयारी के लिये कह आया हूं।'

रानी—'कौन सा ?'

राजा—'मृच्छकटिक।'

रानी—'यह क्या है ?'

राजा—'शूद्रक कवि ने संस्कृत में लिखा है। मैंने हिन्दी में उल्था करवाया है। चारुदत्त ब्राह्मण और वसन्तसेना के प्रेम की अद्भुत कहानी है। आप देखने चलोगी ?'

रानी 'न।'

राजा—'घोड़े की सवारी, कुश्ती, मलखम्भ के सिवाय आपको और भी कुछ पसन्द है या नहीं ?'

रानी—'अवश्य। सहेलियों को अपना सा बनाना। उनको अवसर कुअवसर पड़े पुरुषों की सहायता करने में पीछे पैर न देने की सीख देना, घर की सफाई, स्वच्छता इत्यादि बनाये रखना, काफी काम है।'

राजा—'इन सबों को मोटा-तगड़ा बनाकर आप क्या करने जा रही हैं ?'

रानी—'अभी तो मुझको भी नहीं मालूम। पर देह और मन को सबल बना लेना क्या कोई कम महत्व का काम है ?'

राजा—'व्यर्थ है। घर का ही इतना काफी काम स्त्रियों के लिये संसार में है कि उनको घुड़सवारी इत्यादि की ओर खींच ले जाना फूहड़ बनाना है।'

रानी—'और नाचना गाना ?'

राजा—'अकेले में सभी स्त्रियाँ नाचती-गाती हैं। परन्तु यदि वे इन विद्याओं को ढङ्ग से सीखें तो शरीर और मन दोनों के लिये काफी कसरत पा सकती हैं।'

रानी—'हाँ स्वराज्य स्थापित है। अब सिवाय हँसने-खेलने के नर नारियों के लिये और काम ही क्या बचा है। देखिये न किस आराम के साथ झाँसी-राज्य का पञ्चमांस से अधिक अङ्गरेजों के हाथ में दे दिया गया आपका वह मित्र गार्डन भी नाटकशाला में आता होगा ?'

राजा—'अङ्गरेज लोग खूब हँसते-खेलते और नाचते-गाते हैं...'

रानी—'और नाचते-गाते ही पूरे हिन्दुस्तान को रोंदते चले जाते हैं। खेल तो बढ़िया है।'

राजा—'हमारे यहां फूट है। गांव-गांव में उपद्रवी, डाकू और बटमार भरे हुये हैं। अङ्गरेजों के पास हथियार अच्छे हैं। इसलिये उन्होंने राज्य कायम कर लिया।'

रानी—'नाटकशाला में जो हथियार बनते हैं, उनसे क्या अङ्गरेज नहीं हराये जा सकते हैं ?'

राजा को यह व्यंग अखर गया। पर जिस मुस्कान के साथ वह निसृत हुआ था वह आकर्षक थी। साथ ही मोतीबाई, जूही इत्यादि कल्पना में बिजली की तरह कौंध गईं और आगे आने वाले मृच्छकटिक नाटक के अभिनय ने एक उमंग पैदा की, रानी की मुस्कान का आकर्षण उसी क्षण तिरोहित हो गया और उसके साथ ही उठता हुआ क्षोभ। बोले, 'आप कभी कभी बहुत कड़ी चोट कर बैठती हैं।'

रानी ने अदम्य भाव से कहा, 'आपके यहाँ भाट क्या केवल प्रशंसा और यशगान ही करते हैं या कभी कभी कड़खा भी सुनाते हैं ?'

राजा का क्षोभ उभड़ा परन्तु उन्होंने उसको वहाँ का वहीं दबाने का प्रयत्न किया और विषयान्तर करते हुये बोले, 'हमारे यहाँ कवि, चित्रकार इत्यादि अनेक कलाकार हैं।'

रानी ने भी बात न बढ़ाते हुये पूछा, 'कवि कौन हैं और क्या करते हैं ?'

राजा ने उत्तर दिया, 'एक हृदयेश है। अच्छा कवि है। एक पजनेश है। रंगीन है। कहता अच्छे ढंग से है ?'

'ये लोग क्या लिखते हैं ?'

'राधागोबिन्द का प्रेम वर्णन, नखशिख नायिका भेद।'

'नखशिख, नायिकाभेद क्या ?'

'राधा या गोपियों की चोटी से लेकर एड़ी तक का कोमल वर्णन। यह नखशिख हुआ। नाना प्रकार की सुन्दर स्त्रियों की वृत्तियों का विविध वर्णन, यह नायिकाभेद है।'

'अर्थात स्त्रियों के पूरे शरीर की सूक्ष्म जांच-पड़ताल, और इस काम के लिये इन लोगों को इनाम-पुरस्कार भी दिये जाते होंगे ?'

राजा ज़रा झेंपे, परन्तु सहमे नहीं। बोले, 'इस प्रकार की कविता करने में बहुत विद्वत्ता और मेहनत खर्च करनी पड़ती है। इसलिये उनको पुरस्कार दिया जाता है। वे लोग राजदरबारों की शोभा हैं।'

रानी ने फिर उसी मुस्कराहट के साथ पूछा, 'भूषण को छत्रपति शिवाजी क्या इसी तरह की कविता के लिये बढ़ावा दिया करते थे ? भूषण तो दरबार की शोभा रहे न होंगे ?'

राजा इस व्यंग से कुढ़ गये और क्षोभ को दबा न सके।

बोले, 'आप हमेशा छत्रपति और पन्तप्रधान बाजीराव और न जाने किन-किन का नाम दिन रात रटा करती हैं। मैंने कई बार कहा कि इन बातों की छेड़छाड़ में अब कोई सार नहीं।'

रानी ने कहा, 'मैं भी तो विनती किया करती हूं कि उन बातों को बतलाइये जिनमें सार हो।'

राजा—'आप राज्य का प्रबन्ध करना सीखिये। मैं भी इस ओर ध्यान देता हूं। अच्छी व्यवस्था बनी रहेगी तो राज्य बचा रहेगा अन्यथा अङ्गरेज फिर इसको अपनी देख-रेख में ले लेंगे—या शायद राज्य को खत्म करके अपना अधिकार बर्तने लग जावें।'

रानी—'उस समय क्या नाटकशाला वाले किसी काम न आवेंगे ?'

राजा के हृदय में आग सी लग गई। कुछ कहना चाहते थे कुछ कह गये, 'आपके मन में हठ, नगर-कोट बाहर घोड़े पर घूमने का है और सखी सहेलियां भी जंगल-टौरियों पर साथ में घोड़े कुदायें तो इससे बढ़कर न राज्य है, न राज्य प्रबन्ध और न बिचारी नाटकशाला। ठीक है न ?'

रानी के ऊपर उनके क्रोध का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। बोली, 'मेरे आपके दोनों के—लिये यह विशाल महल क्या कम है ?'

राजा पर इस व्यंग की चोट पड़ गई पर वे गुस्से को पीने लगे।

कुछ सोचकर पूछा, 'क्या सचमुच आपको नाटकशाला का मेरा मनोरंजन नापसन्द है ?'

रानी ने तुरन्त उत्तर दिया, 'इन दिनों अब इससे अधिक और हो ही क्या सकता है ? राज्य का काम चलाने के लिये दीवान हैं। डाकुओं का दमन करने और प्रजा को ठीक पथ पर चालू रखने के लिए अंग्रेजी सेना है ही। इस पर यदि कोई गलती हो गई तो कम्पनी के एजेण्ट की खुशामद करली। बस सब काम ज्यों का त्यों मनमाना चलता रहा।'

रानी मुस्कराने लगी।

इस बात में रानी की विलक्षण बुद्धि का आभास पाकर राजा को जरा विस्मय हुआ। उनके होठों पर बरबस हँसी आई।

[१७]

राजा गङ्गाधरराव और रानी लक्ष्मीबाई का कुछ समय लगभग इसी प्रकार कटता गया। १८५० में (माघ सुदी सप्तमी सं० १९०७) वे सजधज के साथ कम्पनी सरकार की इजाजत लेकर !) प्रयाग, काशी, गया इत्यादि की यात्रा के लिये गये। लक्ष्मीबाई साथ थीं। उनको किले में बन्द रहना पड़ता था; इस यात्रा में भी तामझाम इत्यादि बन्द सवारियों में चलना पड़ा, परन्तु नये-नये स्थान देखने के अवसर मिले। इस कारण बन्धनों का क्लेश न अखरा। काशी यात्रा में उनको देव-दर्शन जन्म-गृह दर्शन प्राप्त हुये।

गङ्गाधरराव का क्रोध समय-कुसमय न देखता था। एक दिन काशी नगर में सैर के लिये निकले। एक विचारा राजेन्द्र बाबू मार्ग में पड़ गया। उसने प्रणाम तो किया, परन्तु खड़े होकर ताजीम नहीं दी। शामत आ गई। गङ्गाधरराव ने उसको बेहद पिटवाया। उसने कम्पनी सरकार में फरियाद की।

जवाब मिला, 'गंगाधरराव एक बड़े राजा हैं। यदि तुमको खड़े होकर ताजीम देना पसन्द न था तो अपने घर बैठे रहते !'

रानी को यह सब देख सुनकर काफी क्लेश हुआ था।

तीर्थ यात्रा के लिये झाँसी छोड़ने के पहले जब गंगाधरराव को कम्पनी सरकार ने शासन के अधिकार वापिस किये तब पहले का जमा किया हुआ तीस लाख रुपया कम्पनी ने उसको लौटाया था। उसका उन्होंने अपव्यय किया। अपने अनेक हाथियों में उनको सिद्धबकस नामक हाथी बहुत प्यारा था। उसका सारा सामान सोने का बनवाया। और भी अनेक हाथी घोड़ों का सामान अम्बरी, हौदा, जीन, झूले इत्यादि सोने की बनवाई। काशी से एक तामझाम, जिस पर बढ़िया नक्कासी का काम था, बहुत कीमत देकर मंगवाया। और भी काफी राजसी-ठाठ इकट्ठा किया। राजा प्रदर्शन के बहुत प्रेमी थे। रानी को प्रदर्शन बहुत कम

पसन्द था। परन्तु उनको राजा की एक बात अच्छी लगी—उन्होंने पाँच हजार के लगभग सेना कर ली, लगभग दो सहस्त्र गोल पुलिस, पाँच सौ घोड़ों का रिसाला, सौ खास पायगा के सिपाही और चार तोपखाने।

झाँसी राज्य में और बुन्देलखण्ड में लगभग हर जगह आततायी और डाकू-बटमार बड़ा उपद्रव कर रहे थे। गङ्गधरराव ने अपने कठोर शासन से इनका दमन किया। इस कार्य में उनको अपने प्रधान-मन्त्री राघव रामचन्द्र पन्त, दरबार वकील नरसिंहराव और न्यायाधीश वृद्ध नाना भोपटकर से बहुत सहायता मिली। राजा के शासन से अङ्गरेज सन्तुष्ट थे, क्योंकि उपद्रवों का शान्त करना ही राजा का सबसे बड़ा कर्त्तव्य समझा जाता था।

राजा गङ्गाधरराव ने कई मौकों पर अङ्गरेजों की बहुत सहायता की। एक बार अपने विश्वस्त साथी और फौजी अफसर दीवान रघुनाथसिंह को कुछ सिपाहियों के साथ मुहिम पर भेज दिया। दीवान रघुनाथसिंह आज्ञाकारी योद्धा था। उसने बड़ी वीरता के साथ अपना कर्त्तव्य पालन किया। राजा गङ्गाधरराव को अंग्रेजों की मैत्री और भी बढ़ी हुई मात्रा में मिली और दीवान रघुनाथसिंह को इंगलैण्ड और कम्पनी सरकार की रानी विक्टोरिया की ओर से एक प्रशंसापत्र तथा खड्ग मिला।

परन्तु रानी लक्ष्मीबाई को अपने पति के इस यश पर हर्ष नहीं हुआ और न सन्तोष। अभी उनकी आयु लगभग १५ वर्ष की होगी, परन्तु उनका आचार-विचार आश्चर्य उत्पन्न करने वाली परिपक्वता का सा प्रतीत होता था। उस युग की लड़कियां जिस आयु में खेलना-खाना, पहिनना-ओढ़ना ही सब कुछ समझती होंगी, उस आयु में लक्ष्मीबाई गम्भीर और गम्भीरतर होती चली गई।

छुटपन की छबीली मनू, लक्ष्मीबाई के विशाल आदर्शों में विलीन हो गई।

[१८]

राजा गङ्गाधरराव पुरातन पन्थी थे। वे स्त्रियों की उस स्वाधीनता के हामी न थे जो उनको महाराष्ट्र में प्राप्त रही है। दिल्ली, लखनऊ के पर्दा के बन्देजों को वे जानते थे। उतने बन्धेज वे अपने रनवास में उत्पन्न नहीं कर सकते थे, यह भी उनको मालूम था। जनता की स्त्रियाँ मुंह उघाड़े फिरें, चाहे घूँघट डाले फिरें, इस विषय में उनको उपेक्षा थी। परन्तु अपने महल में काफी पर्दा बर्तने के वे दृढ़ पक्षपाती थे।

इसलिये लक्ष्मीबाई किले के बाहर घोड़े पर नहीं जा सकती थीं।

किले में भी उनकी स्वतन्त्रता पर काफी बन्धन था। तीर्थ यात्रा से लौटने पर किले-भीतर वाले महल के मैदान के चारों ओर ऊँची-ऊँची कनातें लगवा दी गई, जिससे उनको घोड़े की सवारी इत्यादि में बहुत अड़चन होने लगी। मलखंब और कुश्ती का प्रबन्ध उनको अपने कक्ष के भीतर ही मोटे और नरम कालीनों की पर्तों पर करना पड़ा। उन्होंने अभ्यास छोड़ा नहीं। गङ्गाधरराव ने उनकी सहेलयों को बदलने का प्रयत्न किया, परन्तु सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई को वे नहीं हटा सके।

अन्तर्द्वन्द के कारण गङ्गाधरराव के मन में क्रोध की मात्रा बढ़ गई। और अपराधियों को दण्ड देने के लिये वे बिलकुल नये-नये साधन काम में लाने लगे।

मृच्छकटिक नाटक के खेल का दिन आया। मोतीबाई ने वसन्तसेना का अभिनय किया और जूही ने उसकी सखी का। राजा ने उस दिन नाटकशाला को खूब सजवाया। कप्तान-गार्डन भी निमन्त्रित हुआ। खेल अच्छा हुआ। नृत्य, गायन, अभिनय सभी की गार्डन ने प्रशंसा की।

खेल की समाप्ति पर गार्डन के मुंह से निकल पड़ा, 'महाराजासाहब एक बात समझ में नहीं आती। आपकी संस्कृति में वेश्याओं को इतने आदर का स्थान क्यों दिया गया है?'

राजा ने हँसकर उत्तर दिया, 'क्योंकि हमारे पुरखे बहुत समझदार थे।'

गार्डन को अपने देश के क्रामवैल के समय का कठमुल्लावाद (Puritanism) और उसके तुरन्त ही बाद का चार्ल्स द्वितीय के समय का मनमौज-वाद याद आ गया। बोला, 'नहीं महाराज, कुछ और बात है। असल में हिन्दुस्थान कई बातों में बहुत गिरा हुआ है।'

गङ्गाधरराव ने कहा, 'फिर कभी बात करूँगा।'

गार्डन चलने को हुआ कि राजा ने एक कोने में खुदाबख्श को देख लिया। तुरन्त अपने अंगरक्षक से पूछा, 'यह कौन है?'

उसने उत्तर दिया, 'खुदाबख्श।'

'यहां कैसे आया?' राजा ने प्रश्न किया।

अंगरक्षक उत्तर नहीं दे पाया। खुदाबख्श ने समझ लिया। और वह तुरन्त भीड़ में विलीन होकर निकल गया।

गार्डन ने पूछा, 'क्या बात है महाराज साहब?'

राजा ने कहा, 'कुछ नहीं, यों ही। एक आदमी को आज बहुत दिनों के बाद नाटकशाला में देखा है।'

गार्डन चला गया। राजा ने नाटकशाला के प्रहरी को कैद में डलवा दिया और सवेरे पेश किये जाने की आज्ञा दी।

खुदाबख्श को बहुतेरा ढुंढ़वाया, परन्तु पता नहीं लगा।

दूसरे दिन मोतीबाई नाटकशाला से बरखास्त कर दी गई। नाटकशाला के पात्रों को कोई कारण समझ में नहीं आ रहा था। वे लोग आशा कर रहे थे कि इतना अच्छा अभिनय इत्यादि करने के उपलक्ष में बधाई और पुरस्कार मिलेंगे, परन्तु हुआ उल्टा। उनकी सबसे अच्छी अभिनेत्री निकाल दी गई। झाँसी में जिन लोगों ने मोतीबाई के नृत्य को देखा था अथवा उसका गायन सुना था, सब क्षुब्ध थे।

सवेरे नाटकशाला के प्रहरी की पेशी हुई। राजा ने स्वयं मुकद्दमा सुना।

राजा ने खिसियाकर पूछा, 'क्यों रे नमकहराम यह खुदाबख्श नाटकशाला में कैसे आ गया?'

उसने घिघियाकर उत्तर दिया, 'श्रीमन्त सरकार मैं भूल गया। मुझको याद नहीं रहा।'

'तू यह भूल गया कि मैं उसको देश-निकाला दे चुका हूँ?' राजा ने कड़क कर कहा।

प्रहरी अत्यन्त विनीत भाव से बोला, 'इस बात को श्रीमन्त सरकार बहुत दिन हो गये इसलिये मुझको सुध नहीं रही। और सरकार ने उस दिन तीर्थ-यात्रा से लौटने की खुशी में बहुत लोगों को माफी बख्शी सो मैंने सोचा कि खुदाबख्श को भी माफी मिल गई होगी।'

इस उत्तर से राजा का क्रोध घटा नहीं, जरा और बढ़ गया। रोते हुये प्रहरी को सजा दी गई बिच्छू से डसवाने की।

गङ्गाधरराव ने एक विशेष वर्ग के अपराधों के लिये बिच्छू से कटवाने का विधान कर रक्खा था। कट्ठे में पैरों का डालना भांजना एक साधारण बात थी। गहन अपराधों में हाथ पाँव कटवा डालने की जनसम्मत प्रथा जारी थी। परन्तु दबे दबे और थोड़ी थोड़ी। दहकते अङ्गारों से डाकुओं के अङ्ग जलवाना इस विधान में शामिल था, परन्तु बिच्छुओं से कटवाना जन-वृत्ति की सहन-शक्ति से बाहर हो गया था।

बिच्छू से कई जगह काटे जाने के कारण प्रहरी बेहद सन्तप्त हुआ अन्त में बेहोश हो गया। राजा समझे मर गया तब उनका क्रोध ठण्डा पड़ा। प्रहरी वहाँ से हटवा दिया गया।

[१९]

कप्तान गार्डन झाँसी-स्थित अङ्गरेजी सेना का एक अफसर था। हिन्दी खूब सीख ली थी। राजा गङ्गाधरराव के पास कभी-कभी आया करता था। राजा उसको अपना मित्र समझते थे। वह पूरा अंगरेज़ था। साहित्यिक, व्यापार-कुशल; स्वदेश-प्रेमी और भारतवर्ष को घृणा या अवहेलना की वृत्ति से देखने वाला! परन्तु भारतवर्ष के राजाओं के सहलाने-फुसलाने की क्रिया का अभ्यासी—अपने कर्तव्य-पालन में दृढ़।

राजा से मिलने, गार्डन कभी घोड़े पर और कभी तामझाम में बैठ कर आता था। नवाबों को दबाते-दबाते थोड़ी नवाबी भी अङ्गरेजों में आ गई थी। हुक्का, सुरा, रंडियों का नाच, होली-फाग, दशहरा, दिवाली, ईद उत्सव इत्यादि नवाबों, राजाओं और जनता में हेलमेल बनाये रखने के लिये वर्ते जाते थे। परन्तु वे उनमें दूध-पानी नहीं हुये थे—उनकी सतर्क दृष्टि इङ्गलैंड की ओर बराबर मुड़ी रहती थी।

राजा ने और मनोरञ्जन समक्ष न देखकर, एक दिन गार्डन को बुलावाया। वह तामझाम में नगर वाले महल पर आया। वहाँ से राजा उत्तरी फाटक से जाना चाहते थे। बड़ी हथसार के नीचे से मार्ग था।* एक हाथी पागल हो गया। इन तामझामों की ओर दौड़ा। वाहकों ने तामझाम कन्धों पर से उतार दिये। परन्तु भागे नहीं। उनकी कमर में तलवारें थीं। म्यानों से बाहर निकाल लीं। गार्डन के पास कोई हथियार न था। वह हक्का-बक्का सा इन मजदूरों के पास आ गया। राजा के पास तलवार थी। उन्होंने नहीं छुई। तामझाम से बाहर निकल कर, दौड़ते हुये प्रमत्त हाथी को, अपनी ओर आती हुई गति को देखने लगे।

गार्डन ने कहा, 'बचो।'

मजदूरों ने कहा, बचो।'

---

*इसी हथसार की जगह अब सदर अस्पताल है।

राजा के मुँह से भी निकला, 'बचो।'

परन्तु तलवारें उस मस्त हाथी की गति का निरोध नहीं कर सकती थीं।

इतने में एक ओर से बर्छा लिये एक सिपाही हाथी पर दौड़ पड़ा और उसने बर्छे के प्रहार से हाथी की प्रगति को लौटा दिया।

राजा को उस सिपाही ने प्रणाम किया।

राजा ने नाम पूछा।

उसने बतलाया, इमामअली। काजी हूँ सरकार, और साँटमारी भी करता हूं।'

राजा ने कहा, 'शाबाश काजी। इनाम मिलेगा।'

इमामअली बोला, 'सरकार के चरणों में बना रहूं और बाल-बच्चों का पालन-पोषण होता जावे यही सेवक के लिये गनीमत है।'

राजा ने पारितोषक में कुछ जमीन लगाने की घोषणा की और वह गार्डन के साथ किले के महल में चले गये।

जब दोनों दीवानखाने में बैठ गये तब भी गार्डन के मन में वह हाथी वाली घटना झूल रही थी।

वह बोला, 'सरकार, इनाम रुपये की शकल में दिया जाना चाहिये। इस तरह भूमि लगाते चले जाने से राज्य में चप्पा भर भी न बचेगी!'

राजा ने कहा, 'तब झाँसी राज्य में बहादुर ही बहादुर नजर आवेंगे।'

गार्डन को इस असङ्गत उत्तर से सन्तोष नहीं हुआ। बोला, 'इस देश में जो कुछ देखता हूँ सब अति के दर्जे पर। थोड़े से बहुत धनवान और बहुत से निर्धन। बिरला ही अत्यन्त धर्मनिष्ठ, और बहुत से कीड़ों-मकोड़ों से ज्यादा सड़ी जिन्दगी बिताने वाले! किसी को जमीनें और जागीरें, छोटे-बड़े सब तरह के कामों के लिये और बहुतेरों के हलके से हलके अपराधों के लिये अङ्गहीन करने की सजा! बिच्छुओं से कटवाने का दण्ड!'

राजा का चेहरा तमतमा गया। परन्तु उन्होंने अपने को संयत करके कहा, 'जब जैसा अपराध और अपराधी सामने आवे, वैसा उसको दण्ड देना चाहिये।'

गार्डन ने भांप लिया कि राजा ने अपने उठे हुये क्रोध को भीतर का भीतर ही धसा दिया है।

बोला, 'सरकार को शायद मालूम होगा हमारे यहाँ के एक बहुत बड़े विद्वान ने हिन्दुस्थान भर के लिए एक ही दण्डविधान* प्रस्तुत कर दिया है। वह बहुत विशद और न्यायपूर्ण है। जितने दण्ड रक्खे गये हैं कोई भी अमानुषिक नहीं।'

'क्या रियासतों में भी उस विधान को जारी किया जावेगा ?'

गार्डन ने तत्काल उत्तर दिया, 'नहीं सरकार। रियासतों को अपना निज का प्रबन्ध अपनी व्यवस्था के अनुसार करने का अधिकार है।'

राजा एक क्षण सोचकर बोले, 'हमारी सन्धियों में यह अधिकार सुरक्षित है।'

सन्धि के शब्द पर गार्डन के मन में तुरन्त खटपटी उठी, परन्तु उसने खुशामद के ढङ्ग को अधिक अच्छा समझकर कहा, 'परन्तु सरकार हमारे सम्राट और भारत के गवर्नर-जनरल को उस दिन बहुत अच्छा लगेगा, जब सब रियासतों में एक ही प्रकार का न्याय, एक ही कानून और एक ही तरह की अदालतों की स्थापना हो जाय। इसमें सरकार का कोई हर्ज भी नहीं है। नरेशों का बोझ भी बहुत हलका हो जावेगा और जनता ज्यादा चैन की सांस लेने लग जावेगी।'

राजा ने प्रश्न किया, 'आपके राजाधिराज को भी बहुत अधिकार होंगे ?'

गार्डन असमंजस में पड़ गया। परन्तु उससे अपने को उबार कर बोला, 'हमारे राजाधिराज ने अपना अधिकार पंचायत को दे दिया है। वह पञ्चायत कानून बनाती है। शासन करती है।'

---

*लार्ड मैकाले का इण्डियन पीनल कोड (भारतीय दण्ड विधान)।

राजा—'पंचायतें तो हमारे यहाँ गांव-गाँव में हैं। इन पंचायतों के फैसले को रद्द करने की कोई भी राजा बात नहीं सोचता। ये पंचायतें अपने-अपने गाँव का सभी तरह का प्रबन्ध भी करती हैं। हमारे कर्मचारी उसमें कोई दखल नहीं देते। केवल बड़े-बड़े मामले मुकद्दमे मेरे सामने आते हैं। उनको नाना-भोपटकर शास्त्री की सलाह से निबटाता हूं।'

गार्डन—'इसमें, सरकार; सहूलियत होने पर भी तरतीब, नियम-संयम जाब्ते-कायदे की कमी है और अन्याय होने की ज्यादा गुञ्जायश है।'

राजा—'आपके देश में क्या पञ्चायत नहीं है?'

गार्डन—'युग बीत गये, जब थी। उनका रूप बदल गया है। न्यायाधीश को सम्मति देने और मामले का निर्धार न्याय कराने में पञ्चायत सहयोग देती हैं। इस पञ्चायत के सहयोग के बिना मुकद्दमा नहीं होता।'

राजा—'हमारे देश की पञ्चायतें तो इससे भी बढ़कर समर्थ हैं। राज्य लौट-पौट जाते हैं परन्तु पञ्चायतें अमर रहती हैं।'

गार्डन को हिन्दुस्थानी पञ्चायतों का यह वर्णन बहुत खटका।

अपने क्षोभ को थोड़ा-बहुत दबाकर उसने कहा, 'अपढ़-कुपढ़ लोगों की पञ्चायतों के ढङ्ग मैले कुचैले ही हो सकते हैं, सरकार। अदालतों की सफाई और निखार को पञ्चायतें कैसे पा सकती हैं?'

'बङ्गाल, मदरास में आपकी अदालतें पञ्चायतों के सहयोग से न्याय निर्णय करती हैं या यों ही?' राजा ने प्रश्न किया।

गार्डन का मन जरा सिटपिटाया। परन्तु उसने बेधड़की के हठ के साथ उत्तर दिया, 'पञ्चायतों की मदद तो नहीं ली जाती है, परन्तु हिन्दू मुसलमानों के दीवानी झगड़ों को सुलझाने के लिये पण्डितों और मौलवियों की सलाह ली जाती है। अपराधों के मामले अदालत के अफसर स्वयं ही निर्धार करते हैं।'

'स्वयं!' राजा ने आश्चर्य के साथ कहा, 'स्वयं! सो कैसे?'

गार्डन ने जवाब दिया, 'गवाही और वकीलों की मदद से।'

राजा ने पूछा, 'हर अदालत में एक-एक वकील रहता होगा?'

गार्डन को राजा की सिधाई पर मन में हँसी आई। उत्तर दिया, 'नहीं तो सरकार। वादी-प्रतिवादी अपने-अपने गवाह वकीलों द्वारा पेश करते हैं। वकील लोग कानून जानते हैं। वे अपने कानूनी ज्ञान द्वारा अदालत की सहायता, ठीक निर्णय पर पहुँचने में, करते हैं। यह हमारे देश की संस्था है।'

राजा को हँसी आ रही थी। होठों तक आई परन्तु उन्होंने उसको प्रकट नहीं होने दिया। बोले, 'वकील क्या गवाहों को पेश करने का काम मुफ्त में करते हैं?'

गार्डन ने अभिमान के साथ कहा, 'हमारे देश में पहले वकील लोग मुफ्त में यह काम करते थे, परन्तु अब पारिश्रमिक लेने लगे हैं। और इस देश में तो वे लोग करारी रकमें लेते हैं।'

'तब कहीं लोग न्याय प्राप्त करने की आशा कर पाते हैं', राजा खूब हँसकर बोले, 'भाड़े के लोगों को बढ़ाने की यह संस्था आप लोग इस देश में किस प्रयोजन से ले आये?'

हिन्दुस्थान के प्रति गार्डन के भीतरी मन में दबी हुई घृणा उभर पड़ी। बोला, 'आपके देश की न्याय-प्रणाली की विषमता मुझको भी मालूम है। उसी अपराध के लिये ब्राह्मण पर एक रुपया दण्ड, ठाकुर पर पचास, बनिये पर पाँच सौ और गरीब शूद्र का हाथ-पैर कट! सरकार, कानून सब के लिये एक-सा होना चाहिये।'

राजा को इस तर्क ने जरा जेर किया। परन्तु उनको एक व्यंग सूझा। बोले, 'इस कानून जाब्ते के द्वारा आपके इलाकों में जनता को न्याब कितने समय में मिल जाता है?'

गार्डन ने शीघ्र उत्तर दिया, 'अपराध वाले मामलों में दो-एक महीने लग जाते हैं और दीवनी मामलों में एकाध साल।'

राजा फिर हँसे। कहा, 'हमारे यहाँ तो तुरन्त ध्यान होता है। मैं तो दो-एक दिन से ज्यादा नहीं लगता। दीवानी और अपराधी मामलों का कोई भेद नहीं करता। पंचायतों के निर्णय को सर्वमान्य मानता हूं।

आपके इलाकों में यदि पुलिस की गफलत या लापरवाही से चोरी इत्यादि हो जावे तो आप पुलिस को कोई दण्ड देते हैं ?'

'हा सरकार', गार्डन ने उत्तर दिया, 'बरखास्त कर देते हैं, तनज्जुल कर देते हैं।'

राजा ने उत्तेजित होकर कहा, 'इससे जनता का क्या लाभ होता होगा ? मैं तो ऐसे मामलों में गफलत करने वाली पुलिस से चोरी का नुकसान भरवाता हूं।'

गार्डन बोला, 'तब जनता पर पुलिस की धाक नहीं रह सकती। लोग उसकी बिलकुल परवाह नहीं करते होंगे। ऐसा शासन बहुत दिनों नहीं टिक सकता, सरकार।'

राजा और भी उत्तेजित हुये। उन्होंने कहा, 'साहब, जनता पर मेरी धाक होनी चाहिये, न कि मेरे अफसरों की। वह राज्य भी बहुत समय तक नहीं टिक सकता जो कर्मचारियों और पुलिस की धाक पर आश्रित हो। मैं तो अपने अपराधी कर्मचारियों को लोहे की मछली के क़ोड़े से ठोकता हूँ।'

गार्डन खिसिया गया। बोला, 'सरकार अनियमित सत्ता बहुत बुरी चीज है। इस परिपाटी के मानने वाले चाहे जो कुछ मनमाना कर बैठते हैं। आपने बनारस में एक बिचारे राजेन्द्र बाबू को अकारण पिटवा दिया। हमारे पोलिटिकल विभाग को जवाब देते देते मुसीबत आई।'

राजा को बनारस वाली घटना की स्मृति के साथ-साथ यह भी याद आ गया कि इसी पोलिटिकल विभाग की इजाजत मिलने पर झाँसी राज्य के बाहर कदम रख पाया था।

'अशिष्टता को दण्डित करने में मैं कभी नहीं चूकता', राजा ने कहा, 'फिर चाहे मैं कहीं होऊं—अपने राज्य में होऊँ चाहे राज्य के बाहर।' उसी समय उनको खुदाबख्श और उसके सम्बन्ध वाला प्रसङ्ग याद आ गया।

गार्डन को भी वही प्रसंग याद आया। बोला, 'यह नहीं हो सकता चाहे कोई भी राजा या नवाब हों गवर्नर जनरल साहब किसी को इस तरह का उद्दण्ड व्यवहार नहीं करने देंगे। आपका गौरव रखने के लिये ही बनारस वाले उस पीड़ित को वैसा जवाब दिया गया था, आगे ऐसा न हो सकेगा।'

गंगाधररावध के हृदय में शिवराव भाऊ का खून खलबला उठा। कुछ क्षण चुप रहे। बिजली की कोंध के समाने—दो-एक उत्तर मन में उठे, परन्तु उनको वे क्रोध के कारण प्रकट न कर सके।

अन्त में वे केवल यह कह पाये, 'साहब, मैं तो एक छोटा सा संस्थापक हूँ। तो भी चाहूँ तो बहुत कुछ कर सकता हूं। लेकिन सभी राजाओं ने चूड़ियां पहिन रक्खी हैं। क्या यह आश्चय की बात नहीं कि अपने ही देश में हम कैद हैं। सवासौ वर्ष पहले की बात याद कीजिये। आप लोगों की क्या शान थी, जब दिल्ली के बादशाह और पूना के पन्तप्रधान के दरबार में साष्टांग प्रणाम कर करके अर्जियाँ पेश करते थे।'

राजा थर्राहट के मारे काँप उठे। गार्डन की व्यापार—कुशल, बुद्धि तुरन्त सजग हुई।

उसने मिन्नत सी करते हुये कहा, 'सरकार बुरा न मानें। मैंने अपनी ओर से कुछ नहीं कहा मैंने जो कुछ निवेदन किया वह गवर्नर जनरल और कम्पनी सरकार की नीति का आभास मात्र है। पञ्चायतों के बनाये रखने के ही विषय को लीजिये। अनेक अंगरेज अफसर उनको सुरक्षित रखना चाहते हैं, परन्तु अधिकाँश मत कानून और जाब्ते के बेलन द्वारा हिन्दुस्थान की सारी समतल और ऊबड़-खाबड़ संस्थाओं को चौरस कर डालने के पक्ष में है। मेरे ऊपर सरकार की वही कृपा बनी रहे जो सदा से चली आई है।'

गार्डन को यह भी ख्याल था कि यदि राजा ने इस विवाद की सूचना कुछ बढ़ाकर गवर्नर जनरल के पास भेज दी तो अवश्य और नाहक डाट-फटकार पड़ेगी।

राजा ठण्डे पड़ गये। गार्डन के तामझाम से उसका हुक्का मँगवाया गया। उसने पिया। फिर राजा ने उसको पान दिया वह खाकर चला गया।

रानी के पास इस विवाद का सारांश पहुंच गया।

बड़ी प्रसन्न हुईं।

अपनी सब सहेलियों के सामने कहा, 'आज मैं जितनी सुखी हुई उतनी कदाचित् ही कभी हुई होऊँ। मुझको शिवराव भाऊ की बहू होने का बहुत घमण्ड है। मुझको अपने राजा का, अपनी झाँसी का, अभिमान है। मन को केवल एक कसर खटक रही है—मुझ से और उस गार्डन से बात हुई होती तो मैं ऐसी करकरीं सुनाती कि उसको अपने पुरखे याद आ जाते। मुझको दादा पेशवा ने बतलाया है कि सौ-सवा सौ वर्ष पहले इस अङ्गरेज कौम ने हमारे देश में किन-किन उपायों से क्या-क्या किया। मेरा बस चले तो······'

रानी ने दांत पीसे और विशाल नेत्र तरेरे।

काशीबाई ने धीरे से कहा, 'सरकार ने कहा था कि बिठूर से बालागुरू को कुश्ती सीखने के लिये बुलाया जावेगा।'

रानी ने तत्क्षण अपनी सहज मुस्कराट पा ली। बोलीं, 'हां री उनको शीघ्र बुलवाऊंगी।'

[२०]

बसन्त आ गया। प्रकृति ने पुष्पाँञ्जलियां चढ़ाईं। महकें बसराईं। लोगों को अपनी श्वास तक में परिमल का आभास हुआ। किले के महल में रानी ने चैत की नवरात्र में गौर की प्रतिमा की स्थापना की। पूजन होने लगा। गौर की प्रतिमा आभूषणों और फूलों के शृंगार से लद गई और धूप-दीप तथा नैवेद्य ने कोलाहल सा मचा दिया। हरदी कूंकु (हल्दी कुँकुम) के उत्सव में सारे नगर की नारियाँ व्यग्र, व्यस्त हो गईं।

परन्तु उनमें से बहुत थोड़ी गले में सुमन—मलायें डाले थीं, उनके पास हृदयेश की कविता और उसका फल दूसरे रूप में पहुँचा था-उनको भ्रम था कि राजा–रानी हम लोगों के शृंगार को पसन्द नहीं करते। इसलिये जब वे स्त्रियां, जो पूजन के लिये रनवास में आईं—चढ़ाने के लिये तो अवश्य फूल ले आईं परन्तु गले में माला डाले कुछेक ही आईं।

किले में जाने की सब जातियों को आजादी थी। किले के उस भाग में जहाँ महादेव और गणेश का मन्दिर है और जिसको शंकर किला कहते थे, सब कोई जा सकते थे। अछूत कहलाने वाले चमार, बसोर और भङ्गी भी। जहाँ अपने कक्ष में रानी ने गौर को स्थापित किया था, वहां इन जातियों की स्त्रियां नहीं जा सकती थीं, परन्तु कोरियों और कुम्हारों की स्त्रियाँ जा सकती थीं। कोरी और कुम्हार कभी अछूत नहीं समझे गये थे।

सुन्दर ललनाओं को आभूषणों से सजा हुआ देखकर रानी को हर्ष हुआ, परन्तु अधिकांश के गलों में पुष्पमालाओं की त्रुटि उनको खटकी। उन्होंने स्त्रियों से कहा, 'तुम लोग हार पहिन कर क्यों नहीं आईं? गौर माता को क्या अधूरे शृंगार से प्रसन्न करोगी?'

स्त्रियों के मन में एक लहर उद्वेलित हुई।

लाला भाऊ बख्शी की पत्नी उन स्त्रियों की अगुआ बन कर आगे आई। वह यौवन की पूर्णता को पहुंच चुकी थी। सौन्दर्य मुखमण्डल पर

छिटका हुआ था। बख्शिनजू कहलाती थी। हाथ जोड़ कर बोली, 'जब सरकार के गले में माला नहीं है तब हम लोग कैसे पहिनें ?'

रानी को असली कारण मालूम था। बख्शिनजू के बहाने पर उनको हँसी आई। पास आकर उसके कंधे पर हाथ रक्खा और सबको सुनाकर कहने लगीं, 'बाहर मालिनें नाना प्रकार के हार गूँथे बैठी हुई हैं। एक मेरे लिये लाओ। मैं भी पहिनूंगी। तुम सब पहिनो और खूब गा-गाकर गौर माता को रिझाओ। जो लोग नाचना जानती हों, नाचें। इसके उपरान्त दूसरी रीति का कार्य होगा।'

स्त्रियाँ होड़ाहींसीं में मालिनों के पास दौड़ीं, परन्तु मुन्दर पहले माला ले आई। बख्शिन जरा पीछे आई। मुन्दर माला पहिनाने वाली थी कि रानी ने उसको मुस्कराकर बरज दिया। मुन्दर सिकुड़-सी-गई।

रानी ने कहा, 'मुन्दर एक तो तू अभी कुमारी है, दूसरे तेरे हाथ के फूल तो नित्य ही मिल जाते हैं। बख्शिनजू के फूलों का आशीर्वाद लेना चाहती हूं।'

बख्शिनजू हर्षोत्फुल्ल हो गई। मुन्दर को अपने दासीवर्ग की प्रथा का स्मरण हो आया—विवाह होते ही महल और किला छोड़ना पड़ेगा, उदास हो गई। रानी समझ गई। बख्शिन ने पुष्पमाला उनके गले में डालकर पैर छुये। रानी ने उठाकर अङ्क में भर लिया। फिर मुन्दर का सिर पकड़ कर अपने कन्धे से चिपटा कर उसके कान में कहा, 'पगली, क्यों मन गिरा दिया ? मेरे पास से कभी अलग न होगी।'

मुन्दर उसी स्थिति में हाथ जोड़कर धीरे से बोली, 'सरकार, मैं सदा ऐसी ही रहूँगी और चरणों में अपनी देह को इसी दशा में छोड़ूंगी।'

फिर अन्य स्त्रियों ने भी रानी को हार पहिनाये, इतने कि वे ढँक गईं और उनको साँस लेना दूभर हो गया। सहेलियाँ उनके हार उतार उतार कर रख देती थीं और वह पुनः पुनः ढँक दी जाती थीं।

अन्त में कोने में खड़ी हुई एक नववधू माला लिये बढ़ी। उसके कपड़े बहुत रङ्ग-बिरंगे थे। चाँदी के जेवर पहिने थी। सोने का एकाध

ही था। सब ठाठ सोलहआना बुन्देलखण्डी। पैर के पैजनों से लेकर सिर की दाउनी (दामिनी) तक सब आभूषण स्थानिक। रंग जरा साँवला। बाकी चेहरा रानी की आकृति, आँख-नाक से बहुत मिलता-जुलता! रानी को आश्चर्य हुआ। और स्त्रियों के मन में काफी कुतूहल। वह डरते-डरते रानी के पास आई।

रानी ने मुस्कराकर पूछा, 'कौन हो?'

उत्तर मिला, 'सरकार हों तो कोरिन।'

'नाम?'

'सरकार झलकारी दुलैया।'

'निसन्देह जैसा नाम है वैसे ही लक्षण हैं पहिना दे अपनी माला।'

झलकारी ने माला पहिना दी और रानी के पैर पकड़ लिये।

रानी के हठ करने पर झलकारी ने पैर छोड़े।

रानी ने उससे पूछा, 'क्या बात है झलकारी? कुछ कहना चाहती है क्या?'

झलकारी ने सिर नीचा किये हुये कहा, 'मोय जा विनती करनें—मोय माफी मिल जाय तो कओं।'

रानी ने मुस्कराकर अभयदान दिया।

झलकारी बोली, 'महाराज मोरे घर में पुरिया पूरबे को और कपड़ा बुनबे को काम होत आओ है। पै उननें अब कम कर दओ है'। मलखंब कुश्ती और जाने का का करन लगे। अब सरकार घर कैसें चलै?'

रानी ने पूछा, 'तुम्हारी जाति में और कितने लोग मलखम्ब और कुश्ती में ध्यान देने लगे हैं?'

'काये मैं का घर घर देखत फिरत?' झलकारी ने बड़ी बड़ी कजरारी आँखें घुमाकर, मुस्कराकर तीक्ष्ण उत्तर दिया।

रानी हँस पड़ीं, 'यह तो तुम्हारे पति बहुत अच्छा काम करते हैं। तुम भी मलखम्ब, कुश्ती सीखो। इनाम दूँगी। घोड़े की सवारी भी सीखो।'

झलकारी लम्बा घूँघट खींचकर नव गई। घूँघट में ही बेतरह हँसी। रानी भी हँसी और अन्य स्त्रियों में भी हँसी का स्रोत फूट पड़ा।

लगभग सभी उपस्थित स्त्रियों ने जरा चिन्ता के साथ सोचा, 'हम लोगों से भी मलखंब, कुश्ती के लिये कहा जावेगा। बड़ी मुश्किल आई।'

उन लोगों ने फूलों के ढेरों और आभूषणों में होकर अखाड़ों और कुश्तियों को झाँका तथा परम्परा की लज्जा और सङ्कोच में वे ठिठुर सी गईं। उनकी हँसी को एक जकड़ सी लग गई।

झलकारी बोली, 'महाराज, मैं चकिया पीसत हों, दो-दो तीन-तीन मटकन में पानी भर-भर ले आउत, राँटा*कातत .....'

रानी ने कहा, 'तुम्हारे पति का क्या नाम है ?'

झलकारी सिकुड़ गई।

बख्शिन ने तड़ाक से कहा, 'आज हम लोग आपस में कुंकुम रोरी लगाते समय एक दूसरे से पति का नाम पूछेंगे ही। झलकारी को भी बतलाना पड़ेगा उस समय। परन्तु ....' वह नखरे के साथ दूसरी स्त्रियों की ओर देखने लगी।

रानी ने हँसकर पूछा, 'परन्तु क्या बख्शिन जू ?'

बख्शिन ने उतर दिया, 'सरकार बड़े काम पहले राजा से आरम्भ होते हैं। आज के उत्सव की परिपाटी में रिवाज के अनुसार सबको अपने अपने पति का नाम लेना पड़ेगा, परन्तु प्रारम्भ कौन करेगा ? यह भी हम लोगों को बतलाना पड़ेगा ?'

कुछ स्त्रियां हँस पड़ीं। कुछ ताली पीट कर थिरक गईं। रानी की सहेलियाँ मुस्करा-मुस्करा कर उनका मुंह देखने लगीं। रानी के गौर मुख पर ऊषा की अरुण-स्वर्ण रेखायें सी खिच गईं। वह मुस्कराई जैसे एक क्षण के लिये ज्योत्सना छिटक गई हो। जरा सिर हिलाया मानो मुक्त-पवन ने फूलों से लदी फुलवारियों को लहरा दिया हो।

---

*चरखा। चरखा चलाने की प्रथा बुन्देलखण्ड में, ऊँचे घरानों तक में, घर घर थी।

रानी ने बख्शिन से कहा, 'तुम मुझसे बड़ी हो, तुमको पहले बतलाना होगा।'

'सरकार हमारी महारानी हैं। पहले सरकार बतलावेंगी। पीछे हम लोग आज्ञा का पालन करेंगी।' बख्शिन ने घूंघट का एक भाग होठों के पास दबाकर कहा।

हरदी-कूंकूं के उत्सव पर सधवा स्त्रियाँ एक-दूसरे को रोरी का टीका लगाती हैं और उनको किसी न किसी बहाने अपने पति का नाम लेना पड़ता है।

रानी ने कहा, 'बख्शिनजू अपनी बात पर दृढ़ रहना। आज्ञा पालन में आगा-पीछा नहीं देखा जाता।'

'परन्तु धर्म की आज्ञा सबसे ऊपर होती है, सरकार।' बख्शिन हठपूर्वक बोली।

रानी के गोरे मुख-मण्डल पर फिर एक क्षण के लिये रक्तिम आभा झाईं-सी दे गई। बोलीं, 'बख्शिनजू याद रखना मैं भी बहुत हैरान करूंगी। मेरी बारी आयगी तब मैं तुम्हें देखूंगी।'

बख्शिन ने प्रश्न किया, 'अभी तो मेरी बारी है, सरकार बतलाइये, महादेव जी के कितने नाम हैं?'

रानी ने अपने विशाल नेत्र जरा झुकाये। गला साफ किया। बोलीं, शिव, शंकर, भोलानाथ, शम्भू, गिरिजापति··'

'सरकार को तो पूरा कोष याद है। अब यह बतलाइये कि महादेव जी के जटा-जूट में से क्या निकला है?'

'सर्प, रुद्राक्ष···'

'जी नहीं सरकार—'किसकी तपस्या करने पर, किसको महादेव बाबा ने अपनी जटाओं में छिपाया और कौन वहाँ से निकल कर, हिमाचल से बहकर इस देश को पवित्र करने के लिये आया? ब्रह्मावर्त के नीचे किसका महान सुहावनापन है?'

'गङ्गा का', यकायक लक्ष्मीबाई के मुंह से निकल पड़ा।

उपस्थित स्त्रियाँ हर्ष के मारे उन्मत्त हो उठीं। नाचने लगीं, गाने लगीं। झलकारी ने तो अपने बुन्देलखण्डी नृत्य में अपने को बिसरा सा दिया। रानी उस प्रमोद में गौर की प्रतिमा की ओर विनीत कृतज्ञता की दृष्टि से देखने लगीं। प्रमोद की उस थिरकन का वातावरण जब कुछ स्थिर हुआ, रानी ने आनन्द-विभोर बख्शिन का हाथ पकड़ा।

कहा, 'बख्शिन जू सावधान हो जाओ। अब तुम्हारी बारी आई।'

बख्शिन के मुँह पर गुलाल सा बिखर गया।

नत मस्तक होकर बोली, 'सरकार अभी यहाँ बड़े-बड़े मन्त्रियों और दीवानों की स्त्रियाँ और बहुयें हैं। हम लोग तो सरकार की सेना के केवल बख्शी ही हैं।'

रानी ने मुस्कराते-मुस्कराते दाँत पीसकर विशाल नेत्रों को तरेर कर जिसमें होकर मुस्कराहट विवश झरी पड़ रही थी—कहा, 'बख्शी सेना का आधार, तोपों का मालिक, प्रधान सेनापति के सिवाय और किसी से नीचे नहीं। राजा के दाहिने हाथ की पहली उँगली, और तुम यहाँ उपस्थित स्त्रियों में सबसे अधिक शरारतिन! मेरे सवालों का जवाब दो।'

बख्शिन ने अपनी मुख मुद्रा पर गम्भीरता क्षोभ और अनमनेपन की छाप बिठलानी चाही। परन्तु लाज से बिखेरी हुई चेहरे की गुलाली में से हँसी बरबस फूटी पड़ रही थी।

बख्शिन बोली, 'सरकार की कलाही इतनी प्रबल है कि मेरा हाथ टूटा जा रहा है।'

रानी ने कहा, 'तुम्हारी कलाही भी इतनी ही मजबूत बनवाऊँगी, बात न बनाओ। मेरे सवाल का जवाब दो। बोलो मेरे पुरखों के नाम याद हैं?'

बख्शिन सम्भल गई। उसने सोचा मारके का प्रश्न अभी दूर है।

बोली, 'हाँ सरकार। जिनकी सेवा में युग बीत गये उनके नाम हम लोग कैसे भूल सकते हैं?'

'बतलाओ मेरे ससुर का नाम।' रानी ने मुस्कराते हुये दृढ़तापूर्वक कहा।

चतुर बख्शिन गड़बड़ा गई। उसके मुँह से निकल गया—'भाऊ साहब।'*

बख्शिन के पति का नाम लाला भाऊ था।

रानी ने हँसकर बख्शिन का हाथ छोड़ दिया।

उपस्थित स्त्रियां खिल-खिलाकर हँस पड़ीं। बख्शिन को अपने पति का नाम बतलाना तो जरूर था, परन्तु वह रानी को थोड़ा परेशान कर के ही बतलाना चाहती थी, लेकिन रानी ने अनायास ही बख्शिन को परास्त कर दिया।

इसके उपरांत रानी ने चुलबुली झलकारी को बुलाया। उसके पति का वहां किसी को नाम नहीं मालूम था। इसलिये बहानों की गुञ्जायश न थी।

रानी ने सीधे ही पूछा, 'तुम्हारे पति का नाम ?'

झलकारी के पति का नाम पूरन था। पति का नाम बतलाने के लिये व्यग्र थी परन्तु उत्सव की रङ्गत बढ़ाने के लिये उसने जरा सोच विचार कर एक ढंग निकाला।

बोली, 'सरकार, चन्दा पूरनमासी को ही पूरौ पूरौ दिखात है न ?'

रानी ने हँसकर कहा, 'ओ हो ? पहले ही अरसट्टे में फिसल गई ! पूरन नाम है ?'

झलकारी झेंप गई। चतुराई विफल हुई। हँस पड़ी।

इसी प्रकार हँसते-खेलते और नाचते-गाते स्त्रियों का वह उत्सव अपने समय पर समाप्त हुआ।

अन्त में रानी ने स्त्रियों से एक भीख सी माँगी, 'तुम में से कोई बहिनों के बराबर हो, कोई काकी हो, कोई माई हो, कोई फूफी। फूल सदा नहीं खिलते। उनमें सुगन्धि भी सदा नहीं रहती। उनकी स्मृति मन में बसती है। नृत्य गान की भी स्मृति ही सुखदायक होती है। परंतु

---

*शिवराव भाऊ गंगाधरराव के पिता थे।

इन सब स्मृतियों का पोषक यह शरीर और उसके भीतर आत्मा है। उनको पुष्ट करो और प्रबल बनाओ। क्या मुझे ऐसा करने का वचन दोगी?'

उन स्त्रियों ने इस बात को समझा हो या न समझा हो परन्तु उन्होंने हां हां की। इन लोगों को डर लगा कि वहीं और तत्काल, कहीं मलखम्भ और कुश्ती न शुरू कर देनी पड़े! इत्र पान के उपरान्त चली गईं।

एक बात लेकिन स्पष्ट थी—जब वे चली गईं तब वे किसी एक अदृष्ट, अवर्ण्य तेज से ओत प्रोत थीं।

उसके उपरान्त फिर झाँसी नगर की स्त्रियां सन्ध्या समय थालों में दीपक सजा-सजाकर और गले में बेला, मोतिया, जाही, जुही इत्यादि की फूल-मालायें डाल-डालकर मन्दिरों में जाने लगीं। स्त्रियों को ऐसा भान होने लगा जैसे उनका कोई सतत संरक्षण कर रहा हो, जैसे कोई संरक्षक सदा साथ ही रहता हो, जैसे वे अत्याचार का मुकाबिला करने की शक्ति का अपने रक्त में संचार पा रही हों।

[२१]

नाटकशाला की ओर से गङ्गाधरराव की रुचि कम हो गई। वे महलों में अधिक रहने लगे। परन्तु कचहरी–दरबार करना बन्द नहीं किया। न्याय वे तत्काल करते थे—उल्टा सीधा जैसा समझ में आया, मनमाना। दण्ड उनके कठोर और अत्याचारपूर्ण होते थे, लेकिन स्त्रियों को कभी नहीं सताते थे। और न किसी की–सम्पत्ति लूटते थे।

झांसी की जनता उनसे भयभीत थी परन्तु अपनी रानी पर मुग्ध थी। रानी शासन में कोई प्रत्यक्ष भाग नहीं लेती थीं, किन्तु राजा के कठोर शासन, में जहाँ कहीं दया दिखलाई पड़ती थी, उसमें जनता रानी के प्रभाव के आभास की कल्पना करती थी।

कम्पनी का झांसी प्रवासी असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेन्ट राजा के कठोर शासन, अत्याचार इत्यादि के समाचार गवर्नर जनरल के पास बराबर भेजता रहता था। उनके किसी भी सत्कार्य का समावेश उन समाचारों में न किया जाता था। और राज्यों के साथ कलकत्ते में झाँसी राज्य की भी मिसिल तैयार होती चली जा रही थी।

अङ्गरेजों का चौरस करने वाला बेलन बेतहाशा, लगातार और जोर के साथ चल रहा था। अङ्गरेज लोग अपनी दूकान में हिन्दुस्थान को अधूरी या अधकचरी सौदा का रूप लिये नहीं देख सकते थे। एक कानून, एक जाब्ता, एक मालिक, एक नजर; इसमें अनैक्य को तिल भर भी स्थान देने की गुञ्जायश न थी। मौका मिलते ही छोटे-मोटे रजवाड़े साफ, हजम ! भारतीय जनता के सुख के लिये !!

ऊँचे पदों पर भारतीय पहुँच नहीं पावें। भारतीय संस्कृति हेच और नाचीज है इसलिये पनपने न पावे। भारत में बहुत फालतू सोना-चाँदी है। इसलिये अङ्गरेजी दूकान की रोकड़ बढ़ती चली जावे। जनता स्वाधीनता का नाम ले तो उसको बड़ी रियासतों के अन्धेरों का संकेत करके चुप कर दिया जावे। बड़ी रियासत वाले जरा–सा भी सिर उठावें तो

छोटी रियासतों को किसी न किसी बहाने घोंट-घाँटकर बड़ी रियासतों को चुप रहने का सबक सिखाया जावे।

सबसे बड़ा काम जो अङ्गरेजों ने हिन्दुस्थानी जनता की भलाई (!) के लिये किया, वह था पञ्चायतों का सर्वनाश। अंगरेजों को इस बात के परखने में बिलकुल विलम्ब नहीं हुआ कि उनके कानून के सामने हिन्दुस्थान की आत्मा का सिर तभी झुकेगा जब यहां की पंचायतें विलीन हो जायँगी, और हिन्दुस्थानी, अर्जियां लिये उनको बनाई हुई साहबी अदालतों के सामने मुँह बाये भटकते फिरेंगे।

यह सब उन्नीसवीं शताब्दि के वैज्ञानिक ढंग से हुआ। जो परिस्थिति कठोर से कठोर पठान या मुगल नरेश अपने प्रकट अत्याचारों से उत्पन्न नहीं कर पाये थे, वह अंगरेजों ने अपनी वैज्ञानिक हिकमत से उत्पन्न कर दी। बड़े-बड़े राजा-महाराजा और नवाब अपनी जनता का दामन छोड़कर अंगरेजों का मुँह ताकने लगे। पुरुषार्थ की जरूरत न थी, इसलिये सिर डुबोकर विलासिता के पोखरों में घुस पड़े। अंगरेजी बन्दूक और संगीन उनकी पीठ पर थी, जनता की परवाह ही क्या की जाती?

अंगरेजों को केवल एक बात का खुटका था—उनके इलाकों के हिन्दू और मुसलमान धर्म के इतने ढकोसले क्यों मानते हैं? किसी दिन इन ढकोसलों की श्रद्धा में होकर हमें नफरत की निगाह से न देखने लगें? इस धर्म से लिपटी हुई आत्मा का कैसे उद्धार करके अपना भक्त बनाया जावे? बस इनकी रूहानी भक्ति मिली कि हिन्दुस्थान में अपना राज्य अमर और अक्षय हो गया।

इसलिये सरकारी पाठशालाओं में बाइबिल की शिक्षा अनिवार्य कर दी गई। अमेरिका हाथ से निकल गया तो क्या हुआ? सोने की चिड़िया, सोने के अण्डे देने वाली मुर्गी-भारत भूमि-तो हाथ में आई! यह न जाने पावे किसी तरह भी हाथ से! मन्दिरों की मूर्तियाँ मत तोड़ो, मसजिदों को अपवित्र मत करो—परन्तु धर्म पर से श्रद्धा को हटा दो, फल उससे भी कहीं बढ़कर होगा। और कोने कोने में डौंडी पीट दो कि हम धर्मों के

विषय में बिलकुल तटस्थ हैं—हमारा एकमात्र आदर्श हिन्दुस्थान के लुटेरों और डाकुओं का दमन करके शान्ति स्थापित करने का है, जिससे खेती-किसानी आबाद हो सके और व्यापार वे रोक-टोक चल सके। किसका व्यापार ? किसके लिये खेती-किसानी ? उसी अङ्गरेज दूकानदार के लिये !

गङ्गाधरराव यह सब अच्छी तरह नहीं समझते थे परन्तु उनके पहले पूना में एक दुबला-पतला व्यक्ति नाना फड़नीस हुआ था। वह खूब समझता था, एक एक नस, एक एक रग, राई-रत्ती ! उसने हिन्दुस्थान के तत्कालीन नेताओं को बहुत समझाया, बहुत सावधान किया परन्तु वे मूर्ख कुछ न समझे ! अपनी महत्वाकाँक्षाओं की प्रेरणा में परस्पर कट मरे।

अंगरेजों ने पंजाब को परास्त करके हाल ही में अपने हाथ में किया था। बिहार और बंगाल में राज्य था ही। मध्यदेश बपौती का रूप धारण करता चला जाता था। इन सब के बीच में दो बड़े-बड़े रोड़े थे—एक अवध की मुसलमानी नवाबी और दूसरी झाँसी की बड़ी हिन्दू रियासत। ये दोनों किसी प्रकार खतम हो जायँ तो पाँचों घी में और फिर हो चौरस करने वाले अंगरेजी बेलन की जय।

गङ्गाधरराव के पास गार्डन और कुछ अन्य अंगरेज आया करते थे परन्तु गार्डन और वे, केवल दोस्ती निभाने नहीं आया करते थे। राज्य की भीतरी बातों का पता लगाकर गवर्नर जनरल को सूचना देना उनका प्रधान कर्तव्य था।

गङ्गाधरराव के कोई सन्तान उस समय तक नहीं हुई थी। दूसरा विवाह सन्तान की आकांक्षा से किया था। रानी गर्भवती भी थीं परन्तु यह अनिवार्य नहीं था कि उनके पुत्र ही उत्पन्न हो। यदि वह निस्संतान मर गये तो झाँसी को तुरन्त अंगरेजी राज्य में मिला लिया जावेगा। अंगरेजों के अन्तर्मन में यह निहित था। इसीलिये गार्डन इत्यादि गंगाधरराव की खरी-खोटी भी सुन लेते थे। एक दिन शायद आवे जब

झाँसी निवासी हमारी खरी-खोटी चक्रवृद्धि ब्याज के साथ सुनेंगे। भीतर-भीतर यह लालसा घर किये बैठी थी।

ठण्ड पड़ने लगी थी। तारे अधिक चमक-दमक के साथ चन्द्रिका को अपनी विस्तृत झीनी चादर उढ़ाकर आकाश में उपस्थित हुये। गार्डन और राजा गङ्गाधरराव महल के दीवानखाने में बातचीत कर रहे थे।

गङ्गाधरराव—'बाजीराव पन्तप्रधान के देहान्त का समाचार मुझको मिल गया था, परन्तु यह हाल में मालूम हुआ कि उसकी पेंशन जब्त कर ली गई है। यह अच्छा नहीं किया गया।'

गार्डन—'सोचिये सरकार, आठ लाख रुपया साल कितना होता है और फिर बिठूर जागीर मुफ्त में! उस पर खर्च कुछ नहीं।'

गङ्गाधरराव—'मुझको याद है—मुझको विश्वसनीय लोगों ने बतलाया है कि कम्पनी ने सन् १८०२ में* उक्त पन्तप्रधान के साथ जो सन्धि की थी, उसमें गवर्नर जनरल ने अपने हाथ से लिखा था 'यावच्चन्द्रदिवाकरौ' कायम रहेगी। परन्तु चन्द्रमा और सूर्य सब जहाँ के तहाँ हैं। सन्धि-पत्र पर दस्तखत किये अभी ५० वर्ष भी नहीं हुये और सारा मैदान सफाचट कर दिया!'

गार्डन—'सरकार, सन्धि-पत्र मेरे सामने नहीं है, इसलिये ठीक-ठीक नहीं कह सकता कि उसमें क्या लिखा है, परन्तु सुनता हूँ उनको जब १५, १६ वर्ष पीछे पेंशन दी गई तब यह लिखा था कि पेंशन को वह और उनका कुटुम्ब ही भोग सकेगा।'

गङ्गाधरराव—'नाना धोंडूपन्त जो अब जवान है, पन्तप्रधान का दत्तक पुत्र है। क्या वह कुटुम्बी न माना जायेगा?'

गार्डन—'हमारे देश के कानून में गोद नहीं मानी जाती।'

गङ्गाधरराव—'पर हिन्दुस्तान तो आपका देश नहीं है।'

*सन् १८०२ ई० की संधि। परिशिष्ठ में देखिये।

गार्डन—'अङ्गरेज कम्पनी का राज्य तो है। राजा अपना कानून बर्तता है न कि प्रजा का। सरकार अपने राज्य में अपना ही कानून तो बर्तते हैं न ?'

गङ्गाधरराव—'हमारा और हमारी प्रजा का कानून तो एक ही है।'

गार्डन—'यह बिलकुल ठीक है सरकार। और, दीवानी मामलों में हमारे इलाकों में भी प्रजा का ही कानून माना और चलाया जाता है परन्तु रियासतों के सम्बन्ध में यह बात लागू नहीं की जाती।'

गङ्गाधरराव—'क्यों, रियासतें और उनके रईस क्या साधारण प्रजा से भी गये-बीते हैं ?'

गार्डन—'सो सरकार मैं नहीं जानता। कम्पनी सरकार इङ्गलैण्ड में कानून बना देती है। कुछ कानून गवर्नर जनरल भी बनाते हैं। हमको उन्हीं के अनुसार चलना पड़ता है।'

गङ्गाधरराव—'हमारे धर्म में विधान है कि यदि औरस पुत्र पिंडदान देने के लिये न हो तो दत्तक पुत्र ठीक औरस पुत्र की तरह पिंडदान दे सकता है। आप लोग क्या राजाओं को इससे वंचित करना चाहते हैं ?'

गार्डन—'नहीं सरकार। बड़ी रियासतों को यह अधिकार दे दिया गया है। परन्तु जो रियासतें कम्पनी सरकार की आश्रित हैं, उनमें गोदी गर्वनर जनरल की स्वकृति के बिना नहीं ली जा सकती। यदि ली जावे तो गोद लिये लड़के को राज्य गद्दी का अधिकारी नहीं माना जा सकता। वह राजा की निजी सम्पत्ति अवश्य पा सकता है और पिंडदान मजे में दे सकता है। सरकार ने हमारे धर्म की पुस्तक पढ़ी ? उसका हिन्दी में अनुवाद हो गया है। छप गई है।'

गङ्गाधरराव—'छप गई है अर्थात् ?'

गार्डन—'छापाखाना में छपती है। उसमें यन्त्र होते हैं। वर्णमाला के अक्षर ढले हुये होते हैं। उनको मिला-मिलाकर स्याही से कागज पर छाप लेते हैं। हजारों की संख्या में पुस्तकें छप जाती हैं।'

गङ्गाधरराव—'एं ! यह तो विलक्षण यन्त्र है । मैं ग्रन्थों की नकल करवा-करवाकर हैरानी में पड़ा रहता हूँ और न जाने कितना रुपया व्यय किया करता हूं । एक यन्त्र हमारे लिये भी मँगवा दीजिये ।'

गार्डन को डर लगा ; ऐसा भयंकर विषधर झाँसी में दाखिल किया जावे ! पुस्तकें छपेंगी, समाचार-पत्र निकलेंगे । जनता सजग हो जावेगी । अङ्गरेजों का रोब धूल में मिल जावेगा । जिस आतङ्क के बल-भरोसे कम्पनी-सरकार राज्य चला रही है, वह हवा में मिल जावेगा । गार्डन ने सोचा था कि राजा को इस कड़वे प्रसङ्ग से हटाकर किसी मनोरञ्जक प्रसङ्ग में ले जाऊँ परन्तु यह प्रसङ्ग तो और भी अधिक कटु निकला ।

लेकिन गार्डन ने चतुराई से अपने को बचा लेने का प्रयत्न किया । बोला, 'सरकार, गवर्नर-जनरल की आज्ञा बिना कोई भी उस यन्त्र को नहीं रख सकता ।'

गङ्गाधरराव को रोष हुआ । आश्चर्य भी । बोले, 'इसमें भी गवर्नर जनरल की आज्ञा, अनुमति । आप लोग थोड़े दिन में शायद यह भी कहने लगें कि हमारी आज्ञा बिना पानी भी मत पियो ।'

गार्डन हँसने लगा । राजा भी हँसे ।

बात टालने की नियत से उसने कहा, 'सरकार, बड़ी देर से हुक्का नहीं मिला । आज क्या पान भी न मिलेगा ?'

राजा ने हुक्का दिया ।

उसी समय एक हरकारे ने आकर खुशी खुशी कहा, 'महाराज की जय हो ! झाँसी राज्य की जय हो ।' राजा को मालूम था कि रानी प्रसव-गृह में हैं । जय का शब्द सुनते ही समझ गये । भीतर का हर्ष भीतर ही दबाकर गम्भीरता के साथ पूछा, 'क्या बात है ?'

हरकारा हर्ष के मारे उछला पड़ता था । उसने हर्षोन्मत्त होकर उत्तर दिया, 'श्रीमन्त सरकार झाँसी को राजकुमार मिले हैं ।'

और उसने नीचा सिर करके अपनी कलाहियों पर उँगलियों से कड़ों के वृत्त बनाये ।

राजा ने हँसकर कहा, 'सोने के कड़े मिलेंगे और सिरोपाव भी । जा तोपों की सलामी छुटवा । पर देख, बड़ी तोपें न छूटें । हल्ला बहुत करती हैं । और बस्ती के पञ्चों और भले आदमियों को सूचना दे ।'

गार्डन भी बहस से छुटकारा पाकर अपने घर चला गया ।

गवर्नर जनरल को सूचना दे दी गई । झाँसी राज्य को अंग्रेजी इलाके में मिला लेने की घड़ी टल गई ।

[२२]

जिस दिन गङ्गाधरराव के पुत्र हुआ उस दिन सम्वत १९०८ (सन् १८५१) की अगहन सुदी एकादशी थी। यों ही एकादशी के रोज मन्दिरों में काफी चहल-पहल रहती थी, उस एकादशी को तो आमोद-प्रमोद ने उन्माद का रूप धारण कर लिया। अपनी प्यारी रानी के गर्भ से पुत्र की उत्पत्ति का समाचार सुनकर झाँसी थोड़े समय के लिये इन्द्रपुरी बन गई।

राजा ने बहुत खर्च किया; इतना कि खजाना करीब-करीब खाली कर दिया। दरिद्रों को जितना सम्मान उस अवसर पर झाँसी में मिला, उतना शायद ही कभी मिला हो।

दरबार हुआ। गवैये आये। मुगलखाँ का ध्रुवपद सिरे का रहा। उसको हाथी बख्शा गया। नर्तकियों में दुर्गाबाई खूब पुरस्कृत हुई। नाटक हुआ। परन्तु उसमें मोतीबाई न थी। राजा के मन में आया कि उसको फिर से रङ्गशाला में बुलवा लिया जावे परन्तु न किसी ने सिफारिश की और न राजा अपने हठ को छोड़ कर स्वयं प्रवृत्त हुये।

दरबार में सभी जागीरदारों को कुछ न कुछ मिला।

उस दरबार में केवल एक व्यक्ति अपनी इच्छा की पूर्ति न कर सका। वे थे नवाब अलीबहादुर—राजा रघुनाथराव के पुत्र। जब अंग्रेजों ने रघुनाथराव के कुशासन काल में झाँसी का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया था, तभी उनकी जागीर जब्त कर ली गई थी और उनको पाँच सौ रुपया मासिक पैन्शन दी जाने लगी थी। जब गङ्गाधरराव को राज्याधिकार मिला तब उन्होंने यह पैन्शन जारी रक्खी। अलीबहादुर चाहते थे कि यथा सम्भव उनको वही जागीर फिर मिल जावे। जागीर न मिल सके तो पेंशन में काफी वृद्धि कर दी जावे। जागीर मिलती न देखकर अलीबहादुर ने पैन्शन बढ़ाने के लिये विनय की। राजा ने पोलिटिकल एजेण्ट से बात करने की बात कहकर नवाब को उस समय टाला। नवाब का मन मसोस खा गया। परन्तु उन्होंने आशा नहीं

छोड़ी। अनेक अङ्गरेज अफसरों से उनका मेलजोल था, परस्पर आना जाना था इसलिये उस आश्रय को दृढ़तापूर्वक पकड़ने की उन्होंने अपने जी में ठानी।

दरबार में पगड़ी बँधवाने की प्रथा बहुत समय से चली आ रही थी। श्याम चौधरी नाम के एक सेठ के घराने वाले ही ऐसे मौकों पर पगड़ी बांधते थे। श्याम चौधरी लखपती था। कहते हैं कि उस समय झाँसी में ५२ लखपती थे। ये ५२ घर बावन बसने कहलाते थे। श्याम चौधरी पाग बाँधने के पहले अपना नेग दस्तूर लेने के लिये बहुत मचला। राजा ने जब मोती जड़े सोने के कड़े देने का वचन दिया तब उसने राजा को पगड़ी बाँधी। नवाब अलीबहादुर का जी इससे और भी अधिक जल गया।

वह किसी भी तरह इस भावना को नहीं दबा पा रहे थे—मैं राजा का लड़का हूं, मैं ही झाँसी का राजा होता, मेरे पास जागीर तक नहीं! छोटे छोटे से लोगों का इतना आदर सत्कार और मेरी पेन्शन बढ़ाने तक के लिये पोलिटिकल एजेण्ट की सलाह की जरूरत!

नवाब साहब ऊपर से प्रसन्न और भीतर से बहुत उदास अपनी हवेली को लौट आये। वे रघुनाथराव के नईबस्ती वाले महल में रहते थे। महल में तीन चौक थे। एक रङ्गमहल, दूसरा सैनिकों, हाथियों इत्यादि के लिये तीसरा घोड़ों और गायों के लिये। महल का सदर दरवाजा चाँद दरवाजा कहलाता था। इस पर चढ़कर वे और उनके मुसलमान अफसर ईद के चाँद को देखते थे, इसलिये दरवाजे का नाम चाँद दरवाजा पड़ गया था बिलकुल अगले सहन के आगे एक और विस्तृत सहन था। जिसके एक ओर इनका प्रिय हाथी मोती गज बँधता था और दूसरी ओर राजा रघुनाथराव के जीवन-काल में इनकी माता लच्छोबाई के रहने के लिये हवेली थी। इस समय नवाब अलीबहादुर के अधिकार में यह हवेली और सारा महल था।

बाहर वाली हवेली में उनके मेहमान या आश्रित ठहराये जाते थे। दरबार से लौटकर अलीबहादुर पहले इसी हवेली में गये।

हवेली बड़ी थी। उसमें कई कक्ष थे। परन्तु उजाला केवल दो कक्षों में था। बाकी सूनी और अंधेरी थी। बाहर पहरेदार थे।

उजाला दीपकों का था। शमादानों में जल रहे थे। दो कमरों में अलग अलग। दोनों कमरे एक दूसरे से काफी दूर।

जिस पहले कमरे में नवाब अलीबहादुर गये उसमें सिवाय खुदाबख्श के और कोई न था। अभिवादन के बाद उनमें बातचीत होने लगी।

खुदाबख्श ने आशामयी आँखों से कहा, 'हुजूर ने मेरी विनती तो पेश की ही होगी?'

अलीबहादुर ने उत्तर दिया, 'नहीं भाई मौका नहीं मिला। जानते हो महाराज अब्वल दर्जे के जिद्दी हैं। एकाध दिन मौका हाथ आने दो, तब कहूंगा।'

खुदाबख्श—'उस कमरे में बिचारी मोतीबाई उम्मेदें बाँधे बैठी है। उसका तो कोई कसूर ही नहीं है। उसके लिये आप कुछ कह सके?'

अलीबहादुर—'क्या कहता? वहाँ तो बनियों और छोटे-छोटे लोगों की बन पड़ी। मेरे लिये ही कुछ नहीं हुआ।'

खुदाबख्श—'ऐं!'

अलीबहादुर—'जी हाँ। जागीर चूल्हे में गई—पेन्शन बढ़ाने के लिये अर्ज की तो कह दिया कि बड़े साहब से सलाह करेंगे। मैं सोचता हूं कि हमीं लोग बड़े साहब से क्यों न मिलें? आपके साथ काफी जुल्म हुआ है। आप मुद्दत्त से छिपे-छिपे फिर रहे हैं। जिस मोतीबाई के लिये राजा पलक-पाँवड़े बिछाते थे, वह विचारी दर-दर फिर रही है। एक दिन मुझको यह और राजा के अनेक अत्याचार बड़े साहब के सामने साफ बयान करने हैं। आप भी चलना।'

खुदाबख्श—'मैं तो आज तक किसी गोरे से नहीं मिला। आपकी उनसे दोस्ती है। आप जैसा ठीक समझें करें।'

अलीबहादुर—'मोतीबाई से अर्जी न दिलाई जावे? आपसे कुछ बात चीत हुई?'

खुदाबख्श—'क्या कहूँ, वे तो मुझसे पर्दा करती हैं। आप ही पूछियेगा।'

अलीबहादुर—'नाटकशाला वाली भी पर्दा करती है। रङ्गमञ्च पर तो पर्दे का नाम-निशान नहीं रहता, बल्कि उससे बिलकुल उल्टा व्योहार नजर आता है।'

अलीबहादुर की अवस्था ४२, ४३ वर्ष की थी। स्वस्थ थे। रंगीन तबियत के। उन्होंने बातचीत का सिलसिला जारी रक्खा—'रंगमंच पर उनका नाचना-गाना, हावभाव सभी पहले सिरे के देखे। यहाँ पर्दा कैसा ? वे पीरअली के सामने तो निकलती हैं।'

पीरअली अलीबहादुर का खास नौकर और सिपाही था। बर्ताव एकान्त में मित्रों सदृश।

उसको बुलवाया गया।

पीरअली की मार्फत मोतीबाई से बातचीत होने लगी।

'बड़े साहब' को अर्जी देने के प्रस्ताव पर मोतीबाई ने कहलवाया, 'मैं अर्जी नहीं देना चाहती हूं। किसी अंग्रेज के सामने नहीं जाऊँगी। आप लोग बड़े आदमी हैं। आप लोगों के रहते मैं अंग्रेजों के बंगलों पर नहीं भटकना चाहती।'

अलीबहादुर ने कहा, 'आपको कहीं जाना नहीं पड़ेगा। आपकी अर्जी मैं पेश कर आऊंगा।'

मोतीबाई ने उत्तर दिलवाया, 'साहब से सब कुछ जबानी कह दीजिये। लिखी अर्जी नहीं दूंगी।'

खुदाबख्श ने समर्थन किया।

बोला, 'लिखा हुआ कुछ नहीं देना चाहिये। यदि कहीं अर्जी को साहब ने महाराज के पास फैसले के लिये भेज दिया तो हम सब विपद में पड़ जावेंगे।'

अलीबहादुर दूसरे के हाथ से अंगारे डलवाना चाहते थे इसलिये उन्होंने खुदाबख्श को समझाया, 'आपका इससे बढ़कर तो अब और

कुछ नुकसान हो नहीं सकता। बिना किसी अपराध के देश निकाला दे दिया गया। घर-द्वार छूटा। जागीर गई। परदेश की खाक छानते फिर रहे हो। मेरी राय में आपको लिखी अर्जी जरूर देनी चाहिये। मैं साहब से सिफारिश करूँगा। वे राजा के पास न भेजकर सीधी लाट साहब गवर्नर-जनरल बहादुर के पास भेज देंगे। कम्पनी सरकार रियासतों के नुक्स तलाश करने में दिन-रात व्यस्त रहती है।'

खुदाबख्श ने कहा, 'जरा सोच लूँ। फिर किसी दिन अर्ज करूँगा। आप तो मेरे शुभचिन्तक हैं। आप अकेले का तो मुझको आधार ही है। अहसानों के बोझ से दबा हूँ।'

अलीबहादुर ने सोचा जल्दी न करनी चाहिये। पीरअली ने छिपे सकेत में हामीं भरी। खुदाबख्श के खाने-पीने की व्यवस्था करके अलीबहादुर चले गये।

अकेले रह जाने पर मोतीबाई भी अपने घर गई। जाते समय उसने एक बार खुदाबख्श की ओर देखा। खुदाबख्श को ऐसा जान पड़ा जैसे कमलों का परिमल छुटकाती गई हो।

[२३]

लक्ष्मीबाई का बच्चा लगभग दो महीने का हो गया। परन्तु वे सिवाय किले के उद्यान में टहलने के और कोई व्यायाम नहीं कर पाती थी। शरीर अभी पूरी तौर पर स्वस्थ नहीं हुआ था। मन उनका सुखी था। लगभग सारा समय बच्चे के प्यार में जाता था। राजा भी उस बच्चे पर प्यार बरसाने में काफी समय उनके पास बिताते थे। राजा की प्रकृति में अद्भुत अन्तर आ गया था। शासन की कठोरता में उन्होंने कमी कर दी। जनता उनको प्रजावत्सल कहने लगी।

उन्हीं दिनों तात्या टोपे झांसी में आया। राजा का एक फौजी अफसर कर्नल मुहम्मद जमाखाँ था। उसी की हवेली के एक हिस्से में तात्या को डेरा मिला। पास ही जूही रहती थी।

तात्या को रानी से एकान्त में बातचीत करने का अवसर मिला। उसने रानी से कहा, 'आपको दादा के देहान्त का हाल तो मालूम हो गया था परन्तु पैन्शन छीने जाने की बात किसी ने नहीं बतलाई ! आश्चर्य है !

लक्ष्मीबाई दुखी स्वर में बोली, 'मैं अस्वस्थ थी, इसलिये यह समाचार मुझ तक नहीं आने दिया गया। अङ्गरेजों ने बड़ी बेईमानी की।'

तात्या—'यह उन लोगों की न तो पहली बेईमानी है और न आखरी। उन लोंगों की नीति सारे देश को डसती चली जा रही है। गायकवाड़, होलकर, सिंधिया, अवध के नवाब ये सब अफीम ही खाये बैठे हैं।'

रानी—'पैन्शन छीनने के विरुद्ध क्या उपाय किया ?'

तात्या—'अर्जी फरियाद की। बड़े लाट ने कोई सुनवाई नहीं की। विलायत को भी लिखा-पढ़ा, एक होशियार आदमी भेजा परन्तु सबने कानों में तेल डाल लिया है।'

रानी—'फिर क्या सोचा है ?'

तात्या—'कुछ नहीं। नाना साहब और रावसाहब ने आपके पास मुझको भेजा है। उनको आपके विवेक और तेज का भरोसा है।'

रानी—'नवाब साहब के पास लखनऊ गये ?'

तात्या—'गया था। परन्तु नवाब साहब के चारों तरफ गायिकाओं नर्तकियों और भांड़ों का पहरा लगा रहता है। उन लोगों ने कहा कि अगले साल मुलाकात का मुहूर्त निकलेगा।'

रानी हँस पड़ीं। जैसे सन्ध्या के पीले बादलों में दामिनी दमक गई हो। रानी ने अभी अपनी स्वाभाविक अरुणता पुनः प्राप्त न कर पाई थी।

तात्या ने कहा, 'मैं नवाब के प्रधान मन्त्री से मिला वह हिन्दू है। परन्तु बिचारा क्या करता। उसने अपनी असमर्थता प्रकट की। फिर कई बड़े जमींदारों से मिला। उन्होंने कहा, कि कुछ पुरुषार्थ करो, हम साथ देंगे।'

रानी कुछ सोचने लगी। सोचती रहीं।

तात्या बोला, 'आप बिठूर में छत्रपति और बाजीराव और छत्रसाल न जाने कितने नाम लिया करती थीं।'

'रानी ने कहा ये नाम मैं कभी नहीं भूलूँगी। छत्रसाल का नाम इधर के लोगों में अब भी मन्त्र का काम करता है।'

तात्या—'यह और वे सब मन्त्र कब काम आवेंगे ?'

रानी जरा मुस्कराईं। तात्या उस मुस्कराहट को पहिचानता था। उसके परिवेष्टन में छुटपन की मनू के छोटे-छोटे निश्चय बड़ी दृढ़ता के साथ निकला करते थे। तात्या ने आशा से कान लगाये।

रानी ने कहा, 'टोपे अभी समय नहीं आया है। घड़ा अपूर्ण है—अभी भरा नहीं है। हम लोगों के आपसी उपद्रवों ने जनता को त्रस्त कर दिया है। उसको थोड़ा सांस लेने योग्य बन जाने दो। समर्थ रामदास का दिया हुआ स्वराज्य सन्देश, छत्रपति शिवाजी का पाला हुआ वह आदर्श, छत्रसाल का वह अनुशीलन अमर और अक्षय है।'

तात्या जरा अधीर होकर बोला, 'महारानी साहब, ये बातें कान और हृदय को अच्छी मालूम होती हैं, पर हिन्दू और मुसलमान जनता तो अचेत सी जान पड़ती है……'

रानी ने टोककर दृढ़ स्वर में कहा, 'तात्या भाई, जनता कभी अचेत नहीं होती, उसके नायक अचेत या भ्रममय हो जाते हैं।'

तात्या—'तब नाना साहब से क्या जाकर कहूँ ?'

रानी—'यही कि कान और आंख खोलकर समय की प्रतीक्षा करें। मुझे अभी तो पूर्ण स्वस्थ होने में ही कुछ समय लगेगा, स्वस्थ होते ही अपने आदर्श के पालन में सचेष्ट होऊँगी। अपने आदर्श को कभी न भूलना—प्रयत्न की पहली और पक्की सीढ़ी है।'

तात्या चलने को हुआ।

रानी ने प्रश्न किया, 'दिल्ली का क्या हाल है ?'

तात्या ने उत्तर दिया, 'बादशाह का ? उन बिचारों को नब्बे हजार रुपया साल पेन्शन मिलती है। कविता करते हैं और कवि सम्मेलन में उलझे रहते हैं। कम्पनी ने उनकी नजर भेंट बन्द कर दी है और उनसे कह रही है कि अपने को बादशाह कहना छोड़ो नहीं तो पेन्शन बन्द कर देंगे।'

रानी ने कहा, 'मुसलमान नवाब और जन क्या इस चुनौती को यों ही पी जायेंगे ?'

'कह नहीं सकता', तात्या ने कहा। कुछ समय बाद तात्या चला गया।

तात्या झाँसी में और ठहरना चाहता था, परन्तु बिठूर जल्दी जाना था और गङ्गाधरराव की नाटकशाला बन्द थी। यद्यपि अभिनय करने वालों का वेतन बन्द नहीं किया गया था।

[१३]

गङ्गाधरराव का यह बच्चा तीन महीने की आयु पाकर मर गया। इसका सभी के लिये दुःखद परिणाम हुआ। राजा के मन और तन पर इस दुर्घटना का स्थायी कुप्रभाव पड़ा। वे बराबर अस्वस्थ रहने लगे।

लगभग दो वर्ष राजा और रानी के काफी कष्ट में बीते।

राजा की खीझ बढ़ गई। उन्होंने सनकों में काम करना शुरू कर दिया।

एक दिन उनको मालूम हुआ कि खुदाबख्श नवाब अलीबहादुर के यहाँ कभी कभी आता है। इस जरा से अपराध पर उन्होंने नवाब साहब का महल जब्त कर लिया। केवल बाहर वाली हवेली उनके रहने के लिये छोड़ी।

सन् १८५३ के शारदीय नवरात का महोत्सव हुआ। उस दिन उनका स्वास्थ्य अच्छा जान पड़ता था, केवल कुछ कमजोरी थी। राजवैद्य प्रतापसाह मिश्र का उपचार था। राजा वैद्य पर बहुत खुश थे। वैद्य उदण्ड प्रकृति का था परन्तु राजा उसको बहुत निभाते थे।

दशहरे के भरे दरबार में वैद्य ने अपने एक पड़ौसी का उलाहना दिया। 'सरकार मैं हवेली बनाना चाहता हूं। मेरे मकान में जगह थोड़ी है। पड़ौसी को मुँह-माँगा दाम देने को तैयार हूं। वह पाजी है। बिलकुल नट गया है। मकान नहीं छोड़ता। मेरी हवेली नहीं बन पा रही है। वह मकान मुझको दिलवा दिया जाय।'

राजा ने इस प्रार्थना को स्वीकार करने से इनकार कर दिया।

वैद्य ने हठ पूर्वक कहा, 'तब मैं कोट बाहर एक अलग छोटी सी झाँसी बसाऊँगा। सरकार की अनुमति भर चाहिये। या तो नगर में हवेली बनाकर रहूँगा या कोट बाहर एक बस्ती बसाऊँगा और एक दृढ़ कोट उसके चारों ओर खिचवा दूँगा।'

तीन साल पहले के गङ्गाधरराव होते तो वह इस प्रस्ताव पर वैद्यराज की खाल खिछवा डालते। परन्तु उनका स्वभाव सनकों से भर गया था। बल के साथ तेज भी उनका ठण्डा पड़ गया था।

राजा ने वैद्य को अनुमति दे दी। वैद्य का ध्यान उपचार से हटकर नया नगर बसाने और कोट खिचवाने की विशाल मूर्खता पर दृढ़ता के साथ जा अटका। नईबस्ती तो वैद्य ने नहीं बसा पाई परन्तु उसने कोट खिचवा लिया, जो अपने अखण्ड रूप में अब भी प्रतापसाह मिश्र के हठ का स्मारक बना बड़ेगाँव फाटक बाहर खड़ा है।

विजयादशमी के उपरान्त गङ्गाधरराव को संग्रहणी रोग ने ग्रस लिया। बहुत दवा-दारू की गई कुछ न हुआ। मर्ज बढ़ता ही चला गया।

उस समय झाँसी का असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेन्ट मेजर मालकम था। उसको सूचना दी गई। उसने डाक्टरी उपचार का अनुरोध किया परन्तु वैद्यों और हकीमों ने प्रयत्न को अभी आशा रहित नहीं समझा था इसलिये उस अनुरोध पर विचार करने की भी नौबत नहीं आई।

महालक्ष्मी के मन्दिर में, जो लक्ष्मी-फाटक बाहर है और जहाँ सदा ही धूमधाम रहती थी, पाठ बिठलाया गया। झाँसी का कोई भी मन्दिर न था जहाँ राजा के रोग निवारण के लिये पूजा-अर्चा न कराई गई हो और जनता ने अपनी प्रार्थनायें भेंट न की हों।

नवम्बर के तीसरे सप्ताह में राजा का स्वास्थ्य और भी बहुत बिगड़ गया। प्रतापसाह मिश्र ने बड़े दम्भ के साथ 'प्रतापलंकेश्वर रस' बनाया परन्तु किसी भी रस का कोई प्रभाव न पड़ा।

राजा ने क्षीण मुस्कराहट के साथ इनता जरूर कहा, 'कोट खिचवाने से कैसे अवकाश मिल गया।'

उसके बाद राजा यकायक वेहोश हो गये। रानी के पिता मोरोपन्त और दीवान नरसिंहराव घबराये हुये आये।

राजा को पुनः चेत हो आया था।

नरसिंहराव ने कहा, 'सरकार स्वस्थ हो जावेंगे। कोई चिन्ता की बात नहीं है। हम लोगों को आज्ञा दी जावे।'

राजा समझ गये। कुछ पहले से मन में जो बात उठी थी, उसको उन्होंने कहा, 'मैं अभी जिऊँगा। प्रताप मिश्र का नया नगर देखने जाऊँगा परन्तु मैंने निश्चय किया है कि दत्तक ले लूँ।'

मोरोपन्त और नरसिंहराव राजा के मुँह की ओर देखने लगे।

राजा कहते गये, 'हमारे कुटुम्बी वासुदेवराव नेवालकर का एक पुत्र आनन्दराव है। पांच वर्ष का है। सुन्दर और होनहार है। उसको मैं गोद लेना चाहता हूं। यदि रानी साहब स्वीकार करें तो मैं आज ही शास्त्रानुसार गोद ले लूँ।'

मोरोपन्त पूछ आये। रानी ने स्वीकार किया।

तुरन्त दत्तक विधान की तैयारी की गई। नगर की जनता के मुखिया निमन्त्रित किये गये। मेजर मालकम की जगह मेजर एलिस असिस्टेण्ट पोलिटिकल एजेण्ट होकर आ गया था और मालकम पोलिटिकल एजेण्ट होकर चला गया था, उसको तथा अङ्गरेजी सेना के अफसर कप्तान मार्टिन को भी बुलाया गया। इन सबके सामने राजा ने आनन्दराव को विधिवत् गोद लिया।

आनन्दराव का नाम बदलकर दामोदरराव रक्खा गया।

[२५]

झांसी की जनता के पञ्चों, सरदारों और सेठ साहूकारों को जो इस उत्सव पर निमन्त्रित किये गये थे, इत्र पान भेंट इत्यादि से सम्मानित करके बिदा किया गया। केवल मेजर एलिस, कप्तान मार्टिन, मोरोपन्त और—प्रधान मंत्री नरसिंहराव वहाँ रह गये। निकट ही पर्दे के पीछे रानी लक्ष्मीबाई बैठी हुई थीं। राजा ने एक खरीता कम्पनी सरकार के नाम लिखवाया। उसका सार यह है:—

'बुन्देलखण्ड में कम्पनी सरकार का राज्य स्थापित होने के पहले से हमारे पूर्वज उनकी हर तरह की सहायता करते आये हैं और मैंने स्वयं जीवन भर उनकी सहायता की है। मेरे घराने के साथ कम्पनी सरकार की जो संधियाँ समय-समय पर हुई हैं उनसे हमारा हक—बराबर पुष्ट होता चला आया है। मैं इस समय रोग-ग्रस्त हूं। अच्छे होने की आशा है और यह भी आशा है कि स्वस्थ होने पर मेरे सन्तान हो, परन्तु यह सोच कर कि कदाचित् मेरा देहान्त हो जाय और बिना उत्तराधिकारी के यह राज्य नष्ट हो जाय, अपने कुटुम्ब के एक पञ्चवर्षीय बालक आनन्दराव को हिन्दू—धर्म शास्त्र के अनुसार गोद लिया है। वह नाते में मेरा पौत्र लगता है। यदि मैं स्वस्थ न हो सका और मेरा देहांत हो गया तो यही बालक, जिसका नाम गोद के उपरांत दामोदरराव रक्खा गया है, झांसी राज्य का उत्तराधिकारी होगा। जब तक मेरी पत्नी जीवित रहे, तब तक इस राज्य की स्वामिनी और इस बालक की माता समझी जावे और राज्य की व्यवस्था उसी के आधीन रहे। मैं चाहता हूँ कि उसको किसी प्रकार का कष्ट न हो।'

राजा ने खरीता अपने हाथ से एलिस के हाथ में दिया। राजा का गला रुद्ध हो गया और आंखों में आँसू भर आये। पर्दे के पीछे रानी की सिसक सुनाई पड़ी मानो उस खरीते पर इस सिसक की मुहर लगी हो।

गले को किसी तरह काबू में करके राजा ने एलिस से कहा, 'आपको मैं अपना मित्र मानता हूं। बड़े साहब मालकम भी मेरे मित्र हैं। गार्डन जैसे मेरा छोटा भाई हो······'

राजा के हृदय में पीड़ा हुई। वे रुक गये। एलिस ध्यानपूर्वक उनकी बात सुनने लगा।

राजा बोले, 'इस समय गार्डन मेरे पास होता तो मुझको बड़ी खुशी होती।' और मुस्कराये।

पीड़ा-कम्पित होठों पर वह अर्द्धस्मित किसी असह्य कष्ट को जोर के साथ दबा गया।

'गार्डन का हुक्का दीवान खास में रक्खा हुआ है पियो तो मंगवाऊं।'

'नहीं सरकार।'

'देखो मेजर साहब, दामोदरराव कितना सुन्दर है। यह बड़ा होनहार है। मेरी रानी-सी माता को पाकर झाँसी को चमका देगा। मेरी झाँसी को ये दोनों बड़ा भारी नाम देंगे···'

पर्दे के पीछे फिर सिसकी सुनाई दी। एलिस ने आँख के एक कोने से उस ओर देखकर मुँह फेर लिया।

राजा ने पर्दे की ओर मुँह फेरकर रुद्ध स्वर में मुश्किल से कहा, 'यह क्या है ? रोती हो ? मैं अच्छा हो रहा हूँ। पर मुझे अपनी बात तो कह लेने दो।'

रानी ने धीरे से खाँसकर अपना कण्ठ संयत किया।

राजा स्थिर होकर बोले, 'मेजर साहब हमारी रानी स्त्री जरूर है परन्तु इसमें ऐसे गुण हैं कि संसार के बड़े-बड़े मर्द इसके पैरों की धूल अपने माथे पर चढ़ावेंगे।'

बहुत प्रयत्न करने पर भी राजा अपने आँसुओं को न रोक सके।

एलिस ने कहा, 'महाराज थोड़ी बात करें, नहीं तो तबियत देर में अच्छी हो पावेगी।'

रानी ने जरा जोर से खाँसा, मानो राजा को निवारण कर रही हों।

दुर्बल हाथों से राजा ने आँसू पोंछे। गले को नियन्त्रित किया।

बोले, 'रानी बहुत अच्छी व्यवस्था करेगी। आप लोग दामोदरराव की नाबालिगी के कारण परेशान मत होना।'

राजा के हृदय में पीड़ा बढ़ी।

किसी प्रकार उसको काबू में करके उन्होंने कहा, 'मुझे झाँसी के लोग बहुत प्यारे हैं। मैं चाहता हूँ मेरी जनता सुखी रहे। मैंने जिसको जो कुछ दिया है, वह सब उसके पास बना रहना चाहिये। मुगलखाँ बहुत बड़ा गवैया है, मेजर साहब।'

एलिस ने सोचा, 'गङ्गाधरराव का दिमाग फिरने को है।' जरा चिन्तित हुआ।

राजा बोले, 'उसको मैंने इनाम में हाथी दिया है। वह उसी के पास रहेगा। और हाथी के व्यय के लिये मैंने जो कुछ लगा दिया है वह भी उसके पास रहना चाहिये।'

इसके उपरान्त राजा को खाँसी आई और साथ ही रक्त। प्रतापसाह वैद्य बाहर मौजूद था। बुला लिया गया। दवा दी गई। राजा को कुछ चैन मिला। पर वे जान गये कि यह क्षणिक है।

बोले, 'एलिस साहब, ये हमारे वैद्य जी बड़े हठी हैं। अपना एक अलग नगर बसा रहे हैं। मैंने अनुमति दे दी है। इनके हठ को कोई तोड़े नहीं।'

वैद्य की आँख में भी एक आँसू आ गया। उसको वैद्य ने किसी बहाने से जल्दी पोंछ डाला। वैद्य बाहर चला गया।

राजा के होठों पर एक क्षीण मुस्कराहट फिर आई।

'मैं चाहता हूँ कि मेरी नाटकशाला में चाहे खेल हों या न हों परन्तु पात्रों के लिये जो वेतन खजाने से दिया जाता है वह उनको मिलता रहे।'

राजा फिर खाँसे। अबकी बार ज्यादा खून आया। वैद्य फिर भीतर आया। उसने आज्ञा के स्वर में प्रतिवाद किया, 'महाराज, अब बिलकुल न बोलें...'

राजा ने तुरन्त कहा, 'थोड़ा-सा और फिर बस। तुम्हारी और तुम्हारी दवा की कोई जरूरत न रहेगी।'

राजा की आकृति बिगड़ी। सब लोग चिन्तित और भयभीत हुये। बहुत कष्ट के साथ बोले, 'मेजर साहब एक अन्तिम प्रार्थना—बस एक—झाँसी अनाथ न होने पावे…।'

कराहने लगे। आंखें फिरने लगीं।

कप्तान मार्टिन एक ओर चुप बैठा हुआ था। उसने एलिस को चल देने का संकेत किया। एलिस उठना ही चाहता था कि राजा बोले, 'चित्रशाला सुखलाल, हृदयेश कवि…'

एलिस उठा। उसने प्रणाम करके राजा से कहा, 'सरकार, हम लोग जाते हैं। समाचार मिलते ही तुरन्त हाजिर होंगे।'

राजा ने आंखें स्थिर कीं। कहा, 'मेजर साहब भूलना मत। हमको आपका भरोसा है। हमारी प्रार्थना को ध्यान में रखना। लाट साहब को मेरी विनती…'

इसके बाद वे नहीं बोल सके और बेसुध हो गये।

एलिस और मार्टिन चले गये।

लक्ष्मीबाई तुरन्त पर्दे से बाहर निकल आईं। पति की उस दशा को देखकर चीत्कार कर उठीं। मोरोपन्त ने दामोदरराव को बुलवा लिया। नाना भोपटकर लेकर आये। रानी को कुछ सान्त्वना मिली

[२६]

जिस इमारत में आजकल डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का दफ्तर है, वह उस समय डाक बङ्गले के काम आता था। पास ही झाँसी प्रवासी अंगरेजों का क्लब घर था। एलिस और मार्टिन राजा के पास से आकर सीधे क्लब गये। वहाँ और कई अङ्गरेज आमोद-प्रमोद में मग्न थे। यहाँ इन दोनों का जी हलका हुआ।

उन अंगरेजों ने महल का हाल पूछा।

'राजा बीमार है। बच नहीं सकता।'

'इलाज वही दकियानूसी होगा ?'

'एक मूर्ख वैद्य कुछ पीस-पास कर मधु के साथ खिला रहा है।'

'कैप्टिन एलन का इलाज करवाओ।'

'खुशी से परन्तु ये लोग ऐसे कट्टर-धर्मी हैं शायद राजा एलन के हाथ की छुई हुई दवा न खायगा।'

'शायद अच्छा हो जाय। न हुआ तो क्या होगा ?'

'राजा ने एक लड़के को गोद लिया है।'

'कब ?'

'आज हम लोगों के सामने।'

'गोद ! यानी झाँसी में वही मनमानी और कानूनहीन व्यवस्था जारी रहने दी जावेगी ?'

एलिस ने इस प्रसंग को आगे नहीं बढ़ने दिया। तब वार्तालाप की धारा दूसरी ओर मुड़ गई और बातचीत में सभी शरीक हो गये।

'सुनते हैं रानी बहुत सुन्दर है। अच्छी घुड़सवार है। यदि नाचना सीखे तो उसका नृत्य अजीब होगा।' एक अङ्गरेज ने कहा।

'चुप मूर्ख', एलिस बोला, 'अभी उसी के राज्य में बैठे हो। हिन्दुस्तानी लोग अपने राजा-रानी के बारे में ऐसी बात सुनना बिलकुल पसन्द नहीं करते।'

'हिश ! (डैमइट) वह तो गधों का झुण्ड है। फिर भी मैं तुम्हारी बात मानता हूँ। इसलिये नहीं कि रानी-वानी से डरता हूं किन्तु इसलिये कि प्याले के ऊपर मीठा-मीठा पवन बहना चाहिये न कि बहस-मुबाहिसे की गरम आँधी। वरना मैं अपने पूरे महीने की तनख्वाह को होड़ लगाता। तो भी मेजर, मैं सुनता हूं राजा नाचता अच्छा था। किसी जमाने में और उसकी नाटकशाला में बड़ी सुन्दर शकलें थीं। बहुत बढ़िया नाच।'

हम सब जानते हैं, पर देखा नहीं है। वैसे और हिन्दुस्थानी नर्तकियों का नाच बहुत देखा। मगर मजा नहीं आता। इस देश के नाच तक में कोई ढङ्ग नहीं, कोई मोहकता नहीं।'

'पर नर्तकियाँ हैं हसीन। मैं शर्त लगाता हूं, नाच-गान चाहे उनका उतना खूबसूरत न हो।'

'ये लोग हमारे नाचने-गाने को भद्दा समझते हैं। मैंने हिन्दुस्थानियों का अपने नृत्यगृह में आना बन्द कर दिया है। केवल नवाब अलीबहादुर आता है। वह समझदार है।'

'सिर तो जरूर बहुत हिलाता है।'

'ओह ! बहुत काम का आदमी है। तुम जानते हो।'

'वह अपने दो-एक दोस्तों को साथ लाना चाहता है।'

'बेकार है। मैं पसन्द नहीं करता।'

'यहां से ले क्या जावेगा ?'

'हम लोगों की स्त्रियों के बारे में बुरा ख्याल फैलावेगा।'

'कोई परवाह नहीं। बुरा ख्याल फौज और पुलिस में नहीं फैलना चाहिये।'

'एक से एक बढ़कर बेदिमाग हैं। उन कारतूसों को मुँह से खोलने से इन्कार किया तो हमने रगड़ दिया। रह गये। जितना वेतन हम इन लोगों को देते हैं, उतना इनको दुनियाँ में कहीं भी नहीं मिल सकता।'

'और तुम्हारे रिसाले में जो कुछ ब्राह्मण माथा रङ्ग-रङ्गकर परेड में आते थे उनका तो अनुशासन कर दिया ?'

'हां। पहले उन्होंने कहा हमारा टीका है। धर्म की बात। फिर हमने पुछवा दिया। डैमइट ऑल। भई कितनी जहालत भरा मुल्क है !'

'जरूर। परेड से छुट्टी पाकर बारक में न सिर्फ माथे पर बल्कि माथे से लेकर पैर की उँगली तक टीकों से देह को रङ्ग लो, हमको फिकर नहीं। इस धर्म से हमको महान कष्ट होता है।'

'अभी यह कौम बिलकुल नादान और जाहिल है। अङ्गरेजी पढ़ने से अकल कुछ सुधरेगी। बाईबिल का पढ़ाना मदरसों में इसीलिए जरूरी रक्खा गया है। जब अङ्गरेजी का प्रचार हो जावेगा और बाईबिल की संस्कृति इनके खून में बैठ जायगी तब धरातल कुछ ऊँचा होगा।'

'हाँ, और कदाचित् तब इस देश के लोग हमारे शेक्सपियर, वाल्टर स्काट, बायरन की पूजा कर उठें। यहाँ के लोग पूजा, नमाज बहुत जल्दी कर उठते हैं।'

'गङ्गाधरराव की नाटकशाला में जो नाटक खेले जाते थे वे कौनसी बला होते हैं ?'

'महज कूड़ा-कर्कट तो नहीं है। शकुन्तला नाटक तो मैंने भी पढ़ा है। मोनियर विलियम्स का अनुवाद। खूबसूरत चीज है। यद्यपि टैम्पैस्ट की मिराण्डा को शकुन्तला नहीं पहुँचती, फिर भी एक चीज है...'

'ऐसी कितनी पुस्तकें हिन्दू-मुसलमानों के पास होंगी ?'

'हिन्दुओं की गाँठ में शकुन्तला, कुछ वेद और कुछ ऐसा ही साहित्य है। मुसलमानों के पास कुरान, गुलिस्ताँ, बोस्तां और उमरखैयाम की रुबाइयाँ। बस खतम। बाकी सब कूड़ा, महज रद्दी।'

'तुम तो लार्ड मैकाले की भाषा में बोल रहे हो पट्ठे।'

'मैकाले क्या गलत कहता है ? उसने तो हिन्दू-मुसलमानों को बहुत बड़ा गौरव दिया जो यह कह दिया कि इनकी सारी अच्छी पुस्तकें एक छोटी-सी अलमारी में बन्द की जा सकती हैं।'

'मैं कसम खाता हूँ मैकाले ने 'छोटी-सी' अलमारी नहीं कहा है। मैं कहता हूँ कि इनकी अच्छी पुस्तकें अलमारी के एक ही कोने में आ सकती हैं।'

'जाने दो, इनकी नर्तकियाँ अवश्य कभी-कभी परियों-सी जान पड़ती हैं।'

'जब वे ढेरों जेवर लादकर सामने आती हैं तब जान पड़ता है मानो फूलों में जुगनू जड़ दी हों।'

'कभी-कभी नाच के कुछ कदम भले लगते हैं।'

'लेकिन गाना बिलकुल चीख-चिल्लाहट। हाँ सारंगी का बाजा मीठा लगता है और जब तबला धीमी लय में बजता है तब नाच उठने को जी चाहने लगता है।'

'हिन्दुस्थान का जलवायु, प्रकृति, अनाज, दूध सब अच्छा, लेकिन देश कुसंस्कारों से भरा हुआ है! किसान बहुत मेहनती नहीं हैं।'

'और चोर-डाकुओं के मारे चैन नहीं ले पाते हैं।'

'हम लोग हिन्दुस्थान में उन्हीं का नाश करने के लिये तो मौजूद हैं।'

'रियासतों में बड़ा अन्धेर, बड़ा अत्याचार होता है।'

'सुनता हूँ, किसी रियासत में एक इत्रफरोस गया। एक सरदार ने छत्तीस हजार रुपये का इत्र खरीद डाला। जब इत्रफरोस ने कहा कि अभी मेरे पास बेचे हुये इत्र से भी बढ़िया और मौजूद है; तब उस सरदार ने वह सब खरीदा हुआ इत्र अपनी घुड़साल के घोड़ों की पूँछों पर उड़ेल दिया और कहा यह इत्र तो हमारे लायक नहीं। घोड़ों की पूंछ की बू जरूर इससे दूर हो जावेगी और तुम्हारा जो इससे बढ़िया इत्र है, वह यदि बेचो तो गधेरों के गधों की पूंछ पर छिड़कवा दूंगा। जब राजा के पास यह समाचार पहुँचा तब उसने सरदार को शाबाशी दी और खजाने से छत्तीस के दुगने बहत्तर हजार रुपया सरदार के पास भेज दिये!'

'यह झाँसी के राजा का ही किस्सा है।'

'मैंने सुना है कि इस कहानी का सम्बन्ध दिल्ली के बुड्ढे बादशाह बहादुरशाह से है।'

'वह तो कविता करने में मस्त रहता है।'

'उसको बादशाह कौन कहता है ?

'शिष्टाचार। केवल शिष्टाचार।'

'ऐसा कैसा शिष्टाचार ! बादशाह सिर्फ एक है। एक के सिवाय दूसरा किसी प्रकार नहीं हो सकता। वह है इङ्गलैंड का बादशाह। थ्री चियर्स। हुर्रे !'

'हुर्रे ! इन सब कठपुतलियों को ख़ाक करो। कहां के राजा और कहां के बादशाह ! कमबख्त क़िलों और महलों में बैठे-बठे गुलछर्रे उड़ाते हैं। गरीबों की औरतों को सताते हैं और डाके डलवाते हैं। डैम दैम ऑल।'

'चुप चुप अभी नहीं। जरा ठहर कर सब होगा। सब मुकुट और ताज हमारे पैरों पर गिरेंगे। पर होगा सब धीरे धीरे। कुछ दिनों में सारा हिन्दुस्थान ईसाई हो जावेगा। और इग्लैण्ड का राज्य अमर।'

'धीरे धीरे बेवकूफ, अभी कसर है। इस समय चोर, डाकुओं और फसादियों को ठण्डा करके व्योपार और खेती को बढ़ाना है। जनता हमको श्रद्धा की दृष्टि से देखेगी। जो हिन्दुस्थानी अंग्रेजी पढ़-लिख जाय उनको छोटी-मोटी नौकरियां देकर अंग्रेजों का अदब करना सिखलाया जायगा। वे उस अदब को जनता में फैला देंगे। जनता हमेशा कृतज्ञ रहेगी और हमारे हाथ जोड़ते नहीं अघावेगी। हमारे छोकरे सदा-सर्वदा हमारा आतङ्क बनाये रक्खेंगे। वही आतङ्क हमारा सब कुछ होगा।'

'ओह डियर मी ! तुम तो बिलकुल अरस्तू और सुकरात हो गये।'

'हिश ! हमारे मन को केवल एक बात दिक करती है ये राजा और नवाब।'

'फिर वही हिमाकत। कह दिया कि धीरज धरो। इंग्लैण्ड के राजनीतिज्ञ काफी होशियार और कुशल हैं और हिन्दुस्थान में गवर्नर

जनरल को अब अपनी काउन्सिल की सम्मति को रद्द करने का पूरा अधिकार है। यहाँ की जनता को मुट्ठी में रखने के लिए कुछ राजा-नवाबों का बनाये रखना बहुत जरूरी है। और यह भी बहुत जरूरी है कि ऐसे बड़े-बड़े राजों और नवाबों की रियासतों में अत्याचार होते रहें, जिसमें अंग्रेजी इलाके की प्रजा अपनी बेहतर हालत को, रियासती प्रजा की अवतर हालत से सदा मुकाबिला करती रहे, तौलती रहे। और पुकार-पुकार कर कहती रहे, कि हिन्दुस्थानी हुकूमत से अंग्रेजी हुकूमत बहुत अच्छी। समझे !'

'जनता में ऊंची-नीची श्रेणियाँ कायम रखने की जरूरत है।'

'तुम्हारा सिर। उनमें जात-पांत, ऊँच-नीच बहुत संख्या में जमानों से है। केवल जिमींदारी, ताल्लुकेदारी प्रथा को मजबूती के साथ दाखिल करना रह गया है। बंगाल में हो गया है। सब जगह कर दिया जावेगा। सिर उठाने वाली जनता को ये जिमींदार, ताल्लुकेदार ही कुचल दिया करेंगे। हमको हाथ जमाने की परवाह ही न करनी पड़ेगी। सब बन्दोबस्त आराम से होता चला जावेगा।'

'मुझको यह शब्द 'बन्दोबस्त', बहुत प्यारा लगता है। हर जगह कोने-कोने में, बन्दोबस्त होना चाहिये।'

'तुमने अभी-अभी कहा, 'तुम्हारा सिर' वापिस लो इसको। तुम क्या मुझसे होड़ लगा सकते हो कि हिन्दुओं की जात-पांत और मुसलमानों का ऊंच-नीच हमारे सहायक नहीं हैं ?'

'बेशक होड़ लगा सकता हूं। यह सब होते हुये भी इन लोगों में बड़े बड़े राजा और बादशाह हुये हैं। फिर भी हो सकते हैं। इसलिये इस देश को अनन्त-काल तक अपने हाथ में बनाये रखने के लिये—हिंदुस्थानियों के लाभ और अपने रोजगार के हेतु—वही दूसरी तरकीब बेहतर है। हम-तुमसे कहीं ज्यादा चतुर राजनीतिज्ञों ने इस सम्पूर्ण समस्या पर यों ही माथापच्ची नहीं की है।'

प्यालों का दौरा और अखण्ड साम्राज्य की कल्पना, अनेक अवसरों की तरह क्लब में लगभग उफान पर आ रही थी कि क्लब के बाहर तेजी से दौड़ कर आने वाली घुड़-सवारों की आहट सुनाई पड़ी।

पहरे वाले ने सलाम किया और कहा, हुजूर राजा के यहाँ से खबर आई है कि वे बेहोश पड़े हैं।'

सबने अपने-अपने प्याले रख दिये। सतर्क हो गये। एक दूसरे की ओर देखने लगे।

एलिस ने कहा, 'सूचना दो कि मैं थोड़ी देर में आता हूं।'

पहरे वाला चला गया।

मार्टिन ने एलिस से पूछा, 'राजा मरने वाला है या शायद मर भी गया हो। हिन्दुस्थानी लोग असल बात को देर तक छुपाये रखने के अभ्यासी होते हैं। यदि राजा मर भी गया हो तो क्या वह गोद स्वीकार करली जावेगी? मेरे ख्याल में लार्ड डलहौजी झांसी को अङ्गरेजी इलाके में मिला लेंगे।'

'हिश!' एलिश ने उँगली से वर्जित करके कहा, कुछ ज्यादा पी गये हो मालूम होता है।'

उसी क्षण और घुड़सवार आये। पहरे वाला भीतर आया। बोला, हुजूर अब महल से दूसरा समाचार यह आया है कि महाराज अच्छे हैं और हुजूर को तुरन्त बुलाया है।'

'डैम इट।' धीरे से मार्टिन के मुंह से निकल पड़ा। पहरेदार ने सुन लिया। सिर नवाकर बाहर चला गया। उसके कलेजे में कुछ कसक गया।

एलिस ने आँखें तरेरीं। मार्टिन ने अँगूठा दिखाकर उपेक्षा की।

कहा, 'हमारा नौकर है। राजा का नौकर नहीं।'

एलिस डाक्टर एनल को साथ लेकर राजमहल चला गया।

गङ्गाधरराव को रनवास के कक्ष में पहुँचा दिया गया था। जब एलिस और एनल पहुँचे राजा होश में थे। एलिस को देखकर वे प्रसन्न हुये। बोलने की चेष्टा की। टूटे-टूटे बोले।

उसी दिन जो खरीता राजा ने एलिस के हाथ में दिया था उसका स्मरण दिलाया और उसको सूचित किया कि पोलिटिकल एजेन्ट मेजर मालकम के पास भी एक खरीता भेज दिया है—केवल एक बात उसमें विशेष है कि सन् १८१७ में रामचन्द्रराव के साथ जो सन्धि कम्पनी सरकार की हुई थी उसमें झाँसी राज्य दवाम के लिये, चिरकाल के लिये शिवराव भाऊ के वशंजों के अधिकार में रहने की बात लिख दी गई थी उस लिखे हुये वचन का पालन किया जाना चाहिये ।

एलिस राजा की हालत को देखकर उनको बातचीत करने से रोकता रहा । वे बोलने का प्रयत्न करते करते फिर अचेत हो गये । उन्हें बात चीत करते करते बीच में बेहोशी आ आ जाती थी ।

एलिस ने डाक्टर एलन को औषधि खाने के लिये अनुरोध किया । वह उनके पास गया । परन्तु क्लब में शराब पी थी । मुँह से गन्ध आ रही थी । राजा को बहुत अवहेलना हुई ।

उसने सोचा अहिन्दू की छुई दवा न खायेंगे । प्रस्ताव किया, 'सरकार इसमें गङ्गाजल मिला दिया जावेगा । दवा पवित्र हो जायगी, आप पियें । शीघ्र आराम मिलेगा ।'

राजा की आकृति से ऐसा जान पड़ा मानो उन्होंने स्वीकार कर लिया हो । वे शायद शराब की बू से छुटकारा पाना चाहते थे । कैसा भी कुसंस्कृत हिन्दू हो मरने के समय कैसे भी सुसंस्कृत हिन्दू या अहिन्दू को शराब की बू फैलाते हुये पसन्द न करेगा ।

एलिस ने तुरन्त एक ब्राह्मण के हाथ दवा भेजी । राजा ने छूने तक से इनकार कर दिया ।

एक दिन और पीड़ा में कटने को था । उस दिन (२० नवम्बर को) दुपहरी में कुछ नींद आई । ४ बजे आँख खुली । महल के सामने झाँसी की जनता कुशल-समाचार के लिये व्याकुल खड़ी थी ।

राजा गङ्गाधरराव को पल-पल पर बेहोशी आ रही थी ।

ज्यों त्यों करके वह दिन कटा ।

दूसरे दिन उनकी अवस्था असाध्य हो गई। अन्त में मुँह से केवल यह निकला, 'गङ्गाजल।'

उनको तुरन्त गङ्गाजल दिया गया।

एक क्षण के लिये उनको ऐसा जान पड़ा मानो रोगमुक्त हो गये हों।

तत्क्षण सचेत होकर बोले, 'मैंने बहुत अपराध किये हैं...बहुतों को सताया है...सब क्षमा करेंॐहरि...'

कुछ क्षण उपरांत राजा का देहांत हो गया।

महल में हाहाकार मच गया। जिस रानी को कभी किसी ने विह्वल नहीं देखा था, वह करुणा के बांध तोड़े जा रही थी। मोरोपन्त और नाना भोपटकर ने क्रन्दन करते हुये दामोदरराव को रानी की ओली में रख दिया।

लक्ष्मी दरवाज़े बाहर, लक्ष्मी ताल के किनारे गङ्गाधरराव के शव का दाह धूमधाम के साथ किया गया। स्मशान भूमि पर एलिस और मार्टिन भी उपस्थित थे। दूर रेग्यूलर केवलरी के सिपाही भी। सब काले बिल्ले बांधे हुये। एलिस और मार्टिन कुतूहल के साथ अन्तिम क्रिया-कर्म देख रहे थे और हिन्दुस्थानी सिपाही, रुदन करती हुई झांसी की जनता के साथ, रुद्ध-कण्ठ थे।

एलिस ने २० नवम्बर सन् १८५३ को राजागङ्गाधरराव का एक दिन पहले का दिया हुआ खरीता पोलिटिकल एजेंट कैथा* के पास भेज दिया था। २१ नवम्बर को राजा गङ्गाधरराव का देहांत हुआ। यह समाचार भी उसने अविलम्ब पहुँचा दिया।

---

*उस समय बुन्देलखण्ड और रीवाँ का पोलिटिकल एजेण्ट कैथा जिला हमीरपुर में रहता था।

[२७]

एलिस का भेजा हुआ राजा गङ्गाधरराव का १९ नवम्बर का खरीता और उनके देहान्त का समाचार मालकम के पास जैसे ही कैथा पहुँचा उसने गवर्नर जनरल को अपनी चिट्ठी अविलम्ब (२५ नवम्बर के दिन) भेज दी। चिट्ठी के साथ एलिस का भेजा हुआ खरीता और गङ्गाधरराव का वह खरीता भी, जो उन्होंने सीधा मालकम के पास पहुँचवाया था, भेज दिया। मालकम की चिट्ठी का सार यह था:—

'झाँसी के राजा को बिना कम्पनी सरकार की अनुमति लिये, गोद लेने का अधिकार नहीं है। रानी योग्य और लोकप्रिय हैं परन्तु कम्पनी का शासन जन-हित की दृष्टि से ज्यादा अच्छा होगा। ऐसी परिस्थिति में रानी को पाँच सहस्र मासिक वृत्ति, निजी सम्पत्ति और नगर का महल दे दिया जावे।'

इस प्रकार की चिट्ठी भेजने के उपरान्त ही मालकम ने झाँसी के बन्दोबस्त का प्रयास शुरू कर दिया। और अपना फौज-फांटा बढ़ा दिया।

इधर झाँसी दरबार के लोगों का विश्वास था कि दत्तक पुत्र के नाम पर राज्य चलेगा। और वे दामोदरराव के नाम पर शासन प्रबन्ध करने भी लगे।

उन्नीसवीं शताब्दि के आरम्भ काल में जब कम्पनी का राज्य जल्दी-जल्दी बढ़ा तब वह अपनी नीति और हथियार की विजय के बोझ से लदी-सी जा रही थी और समय समय पर कम्पनी के साझीदारों ने विचार प्रकट किया था कि विजय और इलाके की सीमा बढ़ाने की योजनायें घृणास्पद हैं और ब्रिटिश जाति की इच्छा, प्रतिष्ठा और नीति के प्रतिकूल हैं। असल बात यह थी कि कहीं ऐसा न हो कि मुफ्त में आया हुआ इतना माल किसी अदृश्य गड्ढे में चला जावे।

इन योजनाओं का सही रूप डलहौजी था, उसकी नीति में कुछ भी लगा-लिपटा हुआ न था। उसका वक्तव्य स्पष्ट था।

'हम किसी भी मौके को चूकने नहीं देना चाहते । हमारे इलाकों के बीच बीच में ये जो छोटी छोटी रियासतें हैं, काफी खिझलाहट का कारण है । इनको अपने हाथ में कर लेने से खजाने में रुपया बढ़ेगा और हमारी शासन प्रणाली से इन रजवाड़ों की जनता को लाभ ही लाभ प्राप्त होगा !'

जिस समय खरीतों सहित मालकम की चिट्ठी कलकत्ता पहुँची डलहौजी अवध की ओर दौरे पर गया हुआ था । चार-पांच महीने तक कोई उत्तर नहीं आया ।

[१८]

जिस दिन गङ्गाधरराव का देहान्त हुआ, लक्ष्मीबाई १८ वर्ष की थीं। इस दुर्घटना का उनके मन और तन पर जो आघात हुआ वह ऐसा था, जैसे कमल को तुषार मार गया हो। परन्तु रानी के मन में एक भावना थी, एक लगन थी जो उनको जीवित रक्खे थी। वह छुटपन के खिलवाड़ में प्रकट हो हो जाती थी। इस अवस्था में वह उनके मन के किस कोने में पड़ी हुई थी, इसको बहुत ही कम लोग जानते थे। जो जानते थे, उनमें से एक तात्या टोपे था। दूसरा नाना धोंडूपन्त।

राजा गङ्गाधरराव के फेरे के लिये बिठूर से नाना धोंडूपन्त, अपने दोनों भाइयों सहित आया। तात्या भी साथ था। वे सब जवान हो गये थे। पैन्शन के जब्त हो जाने के कारण संतप्त थे और रोष भरे। गङ्गाधरराव के देहान्त के कारण उनको बड़ी ठेस लगी। जालौन का राज्य समाप्त हो चुका था। एक महाराष्ट्र की गद्दी झाँसी की बची थी। उनको भय था कि यह भी विलीन होने जा रही है। अतः बाजीराव द्वितीय बिठूर में बैठे बैठे शुरू जमाने में जिस स्वराज्य-स्वप्न की कल्पनायें उपस्थित किया करते थे और जिनसे इनका तथा लक्ष्मीबाई का बाल्यकाल पाला गया था, वह केवल दुःस्वप्न सा अवगत होने लगा था।

रानी किले वाले महल में ही रहती थीं। वहीं उनकी सहेलियां और सिपाही प्यादे भी। नीचे का महल, हाथीखाना, सेना, घोड़े, हथियार इत्यादि सब हाथ में थे।

नगर का शासनसूत्र भी अधिकार में था। राज्य की माल दीवानी भी उनके मन्त्रियों के हाथ में थी, परन्तु कम्पनी सरकार झाँसी की छावनी में अपनी सेना और तोपें बढ़ाने में व्यस्त थी। इससे मन में कुछ खुटका उत्पन्न होता था।

शोक समवेदना के उपरान्त नाना के दोनों भाई बिठूर चले गये। नाना और तात्या रह गये।

विकट ठण्ड थी। ठिठुरा देने वाली। दीन-दरिद्रों के दांत से दाँत बजाने वाली। उस पर सन्ध्या से ही बादल घिर आये। आँधी चल उठी और पानी बरस पड़ा। नाना और तात्या रानी से बातचीत करने संध्या के पहले ही किले के महल में गये। भोजन के उपरान्त बातचीत होना थी और फिर डेरे को लौटना था। परन्तु ऋतु की कठोरता के कारण उनके विश्राम का वहीं प्रबन्ध करवा दिया गया।

दीवान खास में बैठक हुई। सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई भी रानी के साथ थीं।

रानी का मुख दुर्बल हो जाने के कारण जरा लम्बा जान पड़ता था। तो भी उस सतेज सौन्दर्य के आतङ्क में वही आदर उत्पन्न करने वाला ओज था। विशाल आँखों की ज्योति और भी ज्वलन्त थी। रानी कोई आभूषण नहीं पहिने थीं—केवल गले में मोतियों की एक माला और हाथ में हीरे की एक अँगूठी। श्वेत साड़ी पर एक मोटा श्वेत दुशाला ओढ़े थीं। सहेलियां भी जेवरों का त्याग करना चाहती थीं, परन्तु रानी के आग्रह से उन्होंने ऐसा नहीं कर पाया था।

रानी—'बुन्देलखण्ड के रजवाड़े बुझे हुये दीपक हैं! उनमें तेल है, परन्तु लौ नहीं।'

नाना—'क्या उनमें लौ पैदा नहीं की जा सकती?'

रानी—'कह नहीं सकती। तुमने ढूंढ़-खोज की? मैं तो बाहर आने-जाने से विवश रही हूं, और हूं।'

तात्या—'मैं यों ही घूमा-फिरा हूं। विशेष तौर पर यहाँ के किसी राजा से प्रसङ्ग नहीं छेड़ा। परन्तु वातावरण बिलकुल ठस जान पड़ा। राजाओं को अपने सरदारों और प्रजा से प्रणाम लेने में सुख की इति अनुभव होती है। हास-विलास और सुरापान में मस्त रहते हैं।'

रानी—'वीरसिंहदेव, छत्रसाल और दलपति के बुन्देलखण्ड का हाल कुछ और होना चाहिये था।'

नाना—'लखनऊ और दिल्ली का हाल कुछ अच्छा है।'

तात्या –'बहुत दिन हुये, जब मैं रानी साहब को लखनऊ, दिल्ली की परिस्थिति सुना गया था।'

रानी—'तुम लोग मुझसे रानी साहब मत कहा करो। अच्छा नहीं लगता।'

तात्या—'बाईसाहब कहूंगा।'

नाना—'दिल्ली का हाल मैं सुनाता हूं। बादशाह वृद्ध है। अपनी स्थिति से बहुत दुःखी है। मनके महाकष्ट को कविता में होकर घटाता रहता है। उसके राजकुमार कुछ होनहार जान पड़ते हैं, परन्तु दिल्ली के राजकुमारों में जिस आयु में प्रायः घुन लग जाता है कदाचित इनको भी लग जावेगा।'

'रानी – ग्वालियर ?'

नाना—'राजा का अभी लड़कपन है। अङ्गरेज प्रबन्ध कर रहे हैं।'

रानी—'इन्दौर ?'

तात्या—'इन्दौर मैं गया था। वहाँ का तो कचूमर ही निकल गया है।'

रानी—'हैदराबाद ?'

तात्या वहाँ नहीं गया। परन्तु इतना निर्विवाद समझिये कि हैदराबाद अङ्गरेजों का परम भक्त है। जनता अपने साथ है।'

रानी—'पंजाब की सिक्ख रियासतें ?'

नाना—'वहां मैं कहीं कहीं गया। सिक्खों में अङ्गरेजों को पछाड़ने की शक्ति होते हुये भी फूट इतनी बिकट है और राजा इतने स्वार्थान्ध है कि अङ्गरेज उस ओर बिलकुल निश्चिन्त रह सकते हैं।'

रानी—'झांसी में तो अब कुछ है ही नहीं। जो कुछ है भी सम्भव है कि, हाथ में न रहे।'

नाना—'झाँसी में ही तो हम लोगों का सब कुछ है। मनू—बाई साहब, झांसी ही तो हम लोगों की एक आशा है।'

लक्ष्मीवाई के फीके होठों पर वही विलक्षण मुस्कराहट क्षीण रूप में आई।

बोलीं, 'क्या आशा है ?'

तात्या ने कहा, 'दामोदरराव की गोद स्वीकार की जावेगी, ऐसा विश्वास है। एलिस ने गोलमोल अवश्य लिखा है, परन्तु कलकत्ते में अपने कुछ मित्र हैं वे लोग कुछ सहायता करेंगे।'

रानी ने कहा, एलिस, मालकम सब एक ही थैली के चट्टे बट्टे हैं। ये लोग अपने लाट की नेत्रकोर के संकेत पर चलते हैं। मैंने यहाँ से पूरनचन्द्र बङ्गाली बाबू को कलकत्ते भेजा है। वह बहुत अङ्गरेजी पढ़ा है। लाट से स्वयं मिलेगा और हमारी बात को समझायेगा। क्या कम्पनी सरकार का लाट हमारे इतने बड़े सन्धि-पत्र को समूचा निगल जाजगा ?'

तात्या ने सहेलियों की ओर देखा।

रानी समझ गईं। बोलीं, 'ये तीनों मेरी अत्यन्त विश्नवासपात्र हैं। विना किसी हिचक के बात किये जाओ।'

नाना ने कहा, मुझको मालूम है। ये मराठा हैं।'

'झांसी की लगभग सभी स्त्रियों का विश्वास किया जा सकता है।' रानी बोलीं, 'ये तीनों तो स्त्रियों की मानों पराग हैं।'

नाना ने कहा, 'बाईसाहब, यह लाट और इसके भाई-बन्द 'यावच्चन्द्र दिवाकरौ' वाली सन्धि को समूचा ही पचा गये हैं। झांसी वाली सन्धि में तो दिवाकर की सौगन्ध है और न चन्द्रमा की। ये लोग किसी चीज को पवित्र नहीं समझते। इनकी लिखतम का, इनकी बात का, कोई भरोसा नहीं। हमारी पैन्शन के छीनने के समय कहा था तीस-बत्तीस साल में आठ लाख रुपया साल के हिसाब से तीन करोड़ रुपया बैठता है। वह सब कहाँ डाला ? इनका विश्वास नहीं करना चाहिये।'

रानी ने वैसे ही मुस्कराकर पूछा, 'क्या ये लोग सीधे-सीधे गणित को भी धोखा देते हैं ?'

नाना जरा हँसा।

तात्या ने उत्तर दिया, 'बाईसाहब ये लोग अपने स्वार्थ पर अचलरूप से डटे रहते हैं। जब तक स्वार्थ पर ठोकर लगने का अन्देशा नहीं रहता तब तक हरिश्चन्द्र और युधिष्ठिर का सा बर्ताव करते हैं, परन्तु जहाँ देखते हैं कि स्वार्थ को धक्का लग जावेगा, तुरन्त पैंतरा बदल देते हैं। और इतने धूर्त हैं कि इनमें से कुछ न्याय करने करवाने का ढोंग बनाते हैं और दूसरे उसी ढोंग की ओट में स्वार्थ की सिद्धि करते हैं। जैसे, हेस्टिङ्गस ने अवध की वेगमों को लूटा। कुछ अङ्गरेजों ने उस पर मुकद्दमा चलाया। बाकी ने इनाम देकर उसको छोड़ दिया। इधर बिचारा नन्दकुमार बङ्गाली फाँसी पर चढ़ा दिया गया।'

रानी ने प्रश्न किया, 'लखनऊ का अब क्या हाल है ?'

नाना ने उत्तर दिया, ' पहले का हाल तात्या बतला गया था। अब तो वहां शून्य है। जनता निस्सन्देह जीवट वाली है।'

रानी ने जरा सोचकर कहा, 'मैं इन सब बातों को सुनकर इस निष्कर्ष पर पहुँची हूं, कि जनता के चित्त का पता अभी पूरा नहीं लगाया गया है। जनता असली शक्ति है। मुझको विश्वास है कि वह अक्षय है। छत्रपति ने जनता के भरोसे ही इतने बड़े दिल्ली सम्राट को ललकरा था। राजाओं के भरोसे नहीं। मावले, कुणभी किसान थे और अब भी हैं। उनके हलों की मूठ में स्वराज्य और स्वतन्त्रता की लालसा बँधी रहती है। यहां की जनता को भी मैं ऐसा ही समझती हूँ। उसको छत्रपति ने नेतृत्व दिया था। यहां की जनता को तुम दो।'

वे दोनों सिर नीचा करके कुछ सोचने लगे।

रानी ने अपनी सहेलियों की ओर देखकर कहा, 'तुम लोग क्या कहती हो ?'

सुन्दर ने तुरन्त उत्तर दिया, 'मैं सरकार कुणभी हूँ। और क्या कहूं ? आपकी आज्ञा का पालन करते हुये मरने के समय आगा पीछा नहीं सोचूंगी।'

नाना ने कहा, 'तुम ठीक कहती हो बाई साहब, अभी हम लोग जनता के पास नहीं पहुँचे। आशा है जनता शीघ्र जाग्रत हो जावेगी परन्तु वह बिना नेता के कुछ नहीं कर सकती।'

'नेता को नेता नहीं ढूंढ़ना पड़ता', रानी बोली, 'समर्थ रामदास का आशीर्वाद नेता को तो विना विलम्ब उत्पन्न कर देता है।'

नाना—'मैं समझ गया। निराशा का कोई कारण नहीं।'

रानी—'हाँ, जो साधन, जहां मिले उसका उपयोग करना चाहिये। जनता मुख्य साधन है। राजा और नवाब की पीढ़ी, दो पीढ़ी ही योग्य होती है। परन्तु जनता की पीढ़ियों की योग्यता कभी नहीं छीजती।'

नाना—'अब एक प्रश्न और है यदि तुम्हारा अधिकार लाट के यहां से मान्य रहा तो हमको स्वराज्य प्राप्ति के उपायों के जुटाने में सुविधा रहेगी परन्तु यदि लाट ने न माना, जैसी कि मुझको आशंका है, तब किस प्रकार कार्य साधन होगा?'

रानी—'मैं ऐसा क्षण भर भी नहीं सोचती कि लाट नहीं मानेगा। नहीं मानेगा तो मैं मनवाऊँगी। झांसी राज्य की जनता सोलहआना मेरे साथ है। और यहाँ की जन-संख्या महाराष्ट्र के मावलों से अधिक ही है, कम नहीं है। बुन्देलखंड में ब्राह्मण से लेकर भङ्गी तक हथियार चलाना जानते हैं और हथियार चलाने की हौंस रखते हैं।'

जिस समय रानी ने यह बात कही उनका चेहरा तेज से दीप्त हो गया। उन दोनों पुरुषों के मन में हर्ष की लहर दौड़ गई।

तात्या ने कहा, 'अङ्गरेजी सेना के हिन्दू मुसलमान सिपाहियों को भी टटोलूँगा।'

रानी बोली, 'अभी नहीं। पहले उनके घरों को टटोलो, जहाँ उन्होंने जननी से जन्म पाया और उसकी गोद में खेले हैं।'

नाना ने पूछा, 'यदि लाट का उत्तर तुम्हारे विरुद्ध आया तो क्या तुम तुरन्त युद्ध छेड़ दोगी ?'

रानी ने जवाब दिया, 'बिठूर से झाँसी आकर इतने दिनों में बहुत कुछ सीखा है। समय उत्तर देगा।'

वे दोनों समझ गये कि रानी का कार्यक्रम इस समय ढूँढ़-खोज करने का और अवसर की प्रतीक्षा का है।

[१७]

सवेरे की उस कपकपाती ठण्ड में जब सूर्य भी बदली में मुंह छिपाये था, नवाब अलीबहादुर अपने नौकर पीरअली को साथ लिये हाथी पर सवार एलिस की कोठी पर पहुँचे। जिस भवन में आजकल डिस्ट्रिक्ट जज की कचहरी है, उसी में एलिस रहता था।

एलिस अलीबहादुर की कोठी पर जाया करता था। अलीबहादुर एलिस को अपना मित्र मानते हुये भी, उसकी खुशामद करने से नहीं हिचकते थे।

जैसे ही वे हाथी से उतरे, एलिस का नौकर पास दौड़ता हुआ आया। उन्नीसवीं शताब्दि के अन्त में साहब के नौकरों और खानसामों का जो पद गौरव चरम सीमा को पहुंच गया था, उस समय उसका आरम्भ था।

नौकर ने झुककर सलाम किया। अलीबहादुर ने मिठास के साथ पूछा, 'साहब क्या कर रहे हैं ? बहुत उलझन में तो नहीं हैं ? मिलना चाहता हूं।'

नौकर ने जवाब दिया, 'नहीं हुज़ूर। दफ्तर में अभी-अभी आकर बैठे हैं। हुक्का पी रहे हैं। फौरन इत्तिला करता हूं।'

कुछ क्षण पश्चात् ही नौकर अलीबहादुर को भीतर पहुंचा आया।

अभिवादन और कुशल-क्षेम प्रश्नोत्तरी के उपरान्त उन दोनों में बातचीत होने लगी।

अलीबहादुर ने कहा, 'रानी साहब की अर्जी का कुछ जवाब नहीं आया। शायद खारिज हो जावेगी।'

एलिस विचार की मुद्रा बनाकर बोला, 'कह नहीं सकता। आपका ऐसा ख्याल क्यों है ?'

अलीबहादुर ने कहा, 'रियासतों के बुरे इन्तजाम को देखकर और जनता की भलाई की नजर से, सरकार ने कई रजवाड़ों में अपना अदल,

अमन और इन्साफ चालू किया है। इसलिये शायद झाँसी में भी सरकारी वन्दोवस्त किया जावे।'

भोलेपन के साथ एलिस बोला, 'मुझको मालूम नहीं नवाब साहब, पर अगर ऐसा हो तो यहाँ की जनता सरकारी हुकूमत और कानून पसन्द करेगी।'

अलीबहादुर ने बड़े मीठे स्वर में जवाब दिया, 'दोनों हाथों से जनाब। स्वर्गीय राजा साहब के जमाने में जो जुल्म हुये हैं उनको आसानी से नहीं भुलाया जा सकता।'

एलिस सचाई का ढोंग करते हुए बोला, 'मैंने भी कुछ सुने हैं जैसे साधारण से अपराधों पर लोगों को बिच्छुओं से कटवाना। लेकिन, मरने के करीब के जमाने की कोई शिकायत मेरे कान तक नहीं आई।'

एलिस नवाब साहब जैसे हिन्दुस्थानियों की आंतों तले से बात को निकालने का केंड़ा जानता था। उनकी ओर देखने लगा।

नवाब ने कहा, 'छोटी-छोटी-सी बातों का आपके सामने बयान करना आपकी शान के खिलाफ होगा। पहले के किये हुये कुछ अन्धेर इतने गजब के हैं कि सताये हुये लोग अब तक तड़प रहे हैं।'

'मुझको ऐसे लोगों के नाम और उन पर बीती हुई याद नहीं नवाब साहब।' उत्सुकता प्रकट न करते हुए एलिस बोला।

'कम से कम एक ही की बीती सुनें जनाब', नवाब ने कहा, 'नाम बिचारे का खुदाबख्श है पहले उसको राजा साहब बहुत अङ्ग लगाये रहते थे। नाटकशाला में बराबरी से बिठलाते थे। छोटी-सी जागीर भी दिये रहते थे। एक दिन सनक जो सवार हुई तो गरीब को देश निकाले की सजा दे दी। जागीर जब्त कर ली। उसने अर्ज मारूज पेश करने की बरसों कोशिश की, मगर उसको मौका तक नहीं दिया गया।'

'उसने कम्पनी सरकार में कोई अर्जी दी ?' एलिस ने पूछा।

नवाब ने माथा टटोल कर उत्तर दिया, 'याद नहीं पड़ता। शायद नहीं दी।'

अंग्रेज ऐसे मौकों पर अपनी धाक जमाते हैं ।

एलिस बोला, 'खुदाबख्श अर्जी देता तो एजेन्ट साहब बहादुर सुनवाई करते ।'

खुशामदी हिन्दुस्तानी ऐसे ही मौके पर स्वार्थ-साधन का जरिया निकाला करते थे ।

नवाब ने कहा, 'जनाब की सेवा में खुदाबख्श अर्जी पेश कर दे ?'

एलिस जरा सङ्कट में पड़ा । परन्तु उसकी व्यापार कुशल बुद्धि ने सहायता की ।

बोला, 'अर्जी जरूर दे । परन्तु बड़े साहब के पास कैथा भेजे । जब मेरे पास आवेगी, मैं उचित कारवाई करूँगा ।'

इतने से शायद नवाब साहब का मन भर गया । उन्होंने चिन्ह कम से कम ऐसे ही प्रकट किये ।

फिर बहुत मुस्कराकर, बड़े मिठास के साथ अलीबहादुर ने कहा, 'एक मेरी जाती विनती है ।'

एलिस ने प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा, 'जरूर कहिये नवाब साहब ।'

अलीबहादुर वास्तव में जिस प्रयोजन से एलिस से भेंट करने आये थे उन्होंने प्रकट किया ।

'जनाब को मालूम है, मिसलों में लिखा पड़ा है, मेरे स्वर्गीय पिता राजा रघुनाथराव साहब ने मुझको ८५ गाँव जागीर में लगाये थे । सरकारी बन्दोबस्त होने पर वह जागीर मेरे पास से निकाल ली गई और पाँच सौ रुपया माहवारी बसीला लगा दिया गया । बड़ा कुटुम्ब है । सफेद पोशी साथ लगी है । गुजर नहीं होती । राजा साहब गङ्गाधरराव से प्रार्थना की थी । उन्होंने कहा था एजेन्ट साहब से सलाह करके जवाब देंगे । फिर उनका लड़का मर गया और वे बीमार पड़ गये । बात अधूरी रह गई । अब शासन बदला है । शायद सरकारी बन्दोबस्त हो जाय । इसलिये मेरी उचित विनती पर ध्यान दिया जाना चाहिये ।'

एलिस सोचने लगा ।

नवाब ने समझा कि पानी बिलमा।

एलिस ने समझ लिया कि खुदाबख्श वाली शिकायत केवल भूमिका और पेशबन्दी थी। असल में नवाब साहब खुदाबख्श की ओट में अपनी विनती लेकर आये हैं। परन्तु वह कुढ़ा नहीं। उसको एक छोटा-सा अध्ययन मिला और अपना काम निकालने का अवसर तथा साधन।

बोला, 'नवाब साहब आप मेरे मित्र हैं। मुझसे जो कुछ सहायता बनेगी करूँगा। आप अर्जी दीजिये। उसमें सब हाल ब्योरेवार लिखिये। अर्जी चाहे एजेण्ट साहब बहादुर के पास बाला-बाला भेज दीजिये, चाहे मेरी मार्फत।' 'बहादुर' शब्द पर उसने जरा ज्यादा जोर लगाया।

इस समय खुदाबख्श की कोई चिन्ता अलीबहादुर को न थी।

खुश होकर बोले, 'मैं बहुत धन्यवाद देता हूं। परमात्मा आपको लाट साहब करे।' फिर मिठास में घुलकर कहा, 'जनाब को मालूम है कि महाराजा रघुनाथराव वाला महल मेरे कब्जे में रहा है। मुझको महाराज साहब दे गये थे। उसको गङ्गाधरराव ने यों ही छीन लिया। किसी काम में नहीं आ रहा है। ताले पड़े हैं।'

एलिस ने कहा, 'मुझको मालूम है। वह जगह आपकी है आपको मिलेगी, जरा सा इन्तजार करिये।'

नवाब साहब ने सलाम करके धन्यवाद दिया। चलने की आज्ञा माँगने लगे।

एलिस ने हँसकर कहा, 'थोड़ा-सा और बैठिये नवाब साहब।'

नवाब साहब को घर पर काम ही क्या था? सट से जम गये।

एलिस ने फुसलाहट के ढङ्ग पर पूछा, 'आपके पास तो बस्ती के बहुत लोग आते-जाते हैं। क्या हाल है?'

'बहुत अच्छा हाल तो नहीं है। लोग परेशान हैं। सच पूछिये तो वे लोग चाहते हैं कि कम्पनी सरकार का बन्दोबस्त हो जाय।'

'लोगों से जरा और ज्यादा मिलते रहिये और जनता के सुख दुख की बातें मुझको बतलाते रहिये।'

'ऐसा ही करूँगा। लगभग दूसरे-तीसरे दिन हाजिरी दिया करूँगा।'

'रानी साहब का क्या ख्याल है? उनका स्वाभाव किस तरह का है?'

'रानी साहब रञ्ज में रहती हैं। चाल-चलन अव्वल दर्जे का खरा है। अपने धर्म की पसन्द हैं। घुड़सवारी, हथियार चलाना, लिखने-पढ़ने की योग्यता……'

'यह सब मुझको मालूम है नवाब साहब। मैं उनकी बहुत इज्जत करता हूं। मैं केवल यह जानना चाहूँगा कि कोई इधर—उधर के लोग उनको बरगलाते तो नहीं हैं।'

'अभी तो उनके नाते-गोते के लोग फेरे के लिये आ जा रहे हैं। हाल में बिठूर के कुछ लोग आये थे। वे चले गये।'

'कृपा होगी यदि आप इन आने-जाने वालों का भी पता देते रहें।'

'बहुत अच्छा जनाब। पीरअली मेरा बहुत भरोसे का नौकर है। उसको इस काम पर तैनात कर दूंगा। मेरे साथ ही हाथी पर आया है। आप फरमाएँ तो सामने पेश करदूं।'

'नहीं नवाब साहब, जरूरत नहीं। आपको यकीन है तो मुझको भी है।'

इसके बाद अलीबहादुर चले गये। घर जाते समय मार्ग में ही पीरअली को उन्होंने उसका कर्तव्य सुझा दिया।

खुदाबख्श हवेली पर मिला। उससे अर्जी देने को कहा। बोले, 'साहब जरा मुश्किल में माने। वह तुम्हारी अर्जी पर विचार करेंगे।'

खुदाबख्श ने कहा, 'मैंने रानी साहब से अर्ज करवाई थी। उन्होंने झाँसी में रहने की आज्ञा दे दी है। जागीर के बारे में उन्होंने हुक्म दिया है कि लाट साहब के यहां से अधिकार मिलने पर, खुलासी कर दी जावेगी। इसलिये सोचता हूं अभी बड़े साहब या छोटे साहब, किसी को भी अर्जी न दूं।'

'अच्छी बात है', नवाब ने कहा। मन में कुढ़ गये।

एक क्षण उपरान्त पूछा, 'किसकी मार्फत अर्ज की थी ?'

'मोतीबाई अपनी तनख्वाह की फरियाद करने गई थीं। अपनी बात के सिलसिले में उन्होंने मेरी विनती भी कर दी।'

'कब ?'

'कल। और आज सवेरे रानी साहब का जवाब आ गया। बहुत नेक हैं।'

'मोतीबाई आई हैं ?'

'नहीं, उन्होंने खबर भेजी है।'

'मुझको खुशी हुई। मेरे लायक तुम्हारा जो काम होगा, करूँगा।'

'आपकी कृपा है।'

अलीबहादुर ने सोचा, एलिस साहब के कान में इस बात के डालने की जरूरत नहीं है।

खुदाबख्श शहर में रहने लगा।

[३०]

हाट का दिन था। झाँसी के निकटवर्ती गांवों से बहुत लोग आये थे। बाजार में झांसी के भविष्य की क्या चर्चा है, उसके जानने के लिये वे उत्सुक थे। हलवाई-पुरा झांसी का सबसे बड़ा बाजार था। ग्रामीण इसको 'मिठियाई' कहते थे। हलवाइयों की दूकानें एक सिरे पर थीं। दूसरे सिरे पर एक दिशा में 'मुरली मनोहर' का मन्दिर और सामने मन्दिर का नक्कारखाना। मन्दिर में मूर्ति राधाकृष्ण की थी—और है। मन्दिर कहलाता लक्ष्मीबाई का है, इसमें दर्शन करने के लिये लक्ष्मीबाई नियम से जाया करती थीं।

हलवाइयों की दूकानों और मुरली मनोहर के मन्दिर के बीच के सिलसिले में, अनेक प्रकार की दूकानें थीं। बीच में मार्ग काफी चौड़ा। पश्चिम की ओर मार्ग दो फन्सों में फूटा है, एक हवेली और किले की ओर, और दूसरा दतिया फाटक को।

हाट के दिन इस सम्पूर्ण मार्ग पर बहुत चहल-पहल रहती थी। स्त्रियां और पुरुष आजादी के साथ अपना सौदा खरीद रहे थे और बातचीत कर रहे थे। खुदाबख्श और पीरअली बाजार में साथ थे।

कपड़े की दूकान से कुछ कपड़ा मोल लेकर एक देहाती ने दूकानदार से पूछा, 'काये जू अब झांसी में का होने ?'

'जो होत आओ है सो हुइये', उत्तर मिला।

'हम गाँव बारे इतनई में समझ जात होते तो का न हती। तनक उलथा करकें बताओ।'

तीन चार देहाती वहाँ और आ गये। बिक्री की आशा से दूकानदार का मत बढ़ा। बात चीत का सिलसिला चला।

'महाराज ने स्वर्गवास के पैलें कुँवर गोदी लएते सो सबरो संसार जानत। वा गोद के मनवावे के लाने उनने अपने सामने अर्जी लाट साव लों पोंचा दईती। अबै उत्तर नई आओ।'

'गोद के मनवावै के लानें अर्जी ! जो कैसो अन्धेर राम ! हम अपने गाँवन में रोजई गोद लेत देत, पै ईके लानें अर्जी-पुर्जी तो कोऊ नई देत ।'

'अङ्गरेजन ने नये-नये कानून निकारे हैं ।'

'तौ का ऐसे कानून चल जै हैं ?'

'बेतौ बात-बात पै कानून बरसाउत । अर्जी दो, टिकट लगाओ, पञ्चायतन खौं चूल्हे में डारौ । गोरन के बङ्गलन पै मारे-मारे फिरौ, हाजिरी देओ…'

'इतनों खाओ और इतनों सोचो—अबका ईके लानें सोऊ अङ्गरेज कानून बनायें ?'

'अक्कल चेंथरी* में चढ़ गई सो अब उनें कछू सूझत नइयाँ ।'

'तौका ऐसी आँखें फूट गईं कै धरम-करम कछू नहीं लेखत ?'

'वे धरम-करम का चीन्हें ? बौ तौ हिन्दू मुसलमान केई बाँटे परो है ।'

इस आत्मश्लाघा के बाद दूकानदार ने ग्राहकों को चलाया । भीड़ बढ़ गई थी । सौदा मजे में चल रहा था । दूकानदार बात करना चाहता था और देहाती सुनना और गुनना चाहते थे ।

'ऐहो सो अङ्गरेज की जा अन्दाधुन्धी चल जै है । हम तुम का मानसई नइयाँ ?'

'अङ्गरेजन की छांउनियन में गउयें कट रईं हैं । कानून को ऐसौ डण्डा घलरओ कै सब जनै साँस लैवे में उकतान लगे ।'

'कितै जू ?'

'सब जांगां । ग्वालियर रियासत तो है, पै उतै अङ्गरेजन कौ चालौ चल रओ । उतै कौ बड़ौ साब जब बजार में होकें निकरत तब सब बजार बारन खों उठ-उठ कैं झुक-झुक कैं राम सलाम करने परत ।'

'जौ बड़ौ साब को आय ? ऐसैं राम-राम तौ राजन खौं करी जात ।'

'बड़ौ साब लाट साब कौ नौकर है ।'

---

*चेंथरी—मस्तक का सबसे ऊपरी भाग ।

'औरं लाट साब कीकौ नौकर है ? का बौ राजा है ?'

'राजा नइयाँ ; बिलाँत के राजा को नौकर ।'

'ओ राम ! नौकरन के नौकरन खों झुक झुक कैं परनाम ! ई देस के ऐसे दिन आ गये ! और जो कोऊ राम राम न करैं तौ ?'

'ऊखों बँगला पैं पकर बुलाउत औ कष्ट देत ।'

देहातियों ने दाँत पीसे ।

एक बोला, 'हम तौ कौनऊ अङ्गरेज खों राम राम न करें और न सलाम । बौ न हिन्दू न मुसलमान । और पकर कैं बुलाय तौ खुपरिया खोल देओं ।'

इतने में कुछ दूर से 'हटो बचो' की आवाज आई ।

एलिस बाजार घूमने घोड़ों पर आया था, साथ में एक सवार था । वही 'हटो बचो' कह रहा था ।

कुछ—बहुत थोड़े दूकानदार—प्रणाम करने को उठे । बाकी अपना काम करते रहे ।

किसी देहाती ने प्रणाम नहीं किया ।

वह कपड़े वाला प्रणाम करने को उठना चाहता था कि देहातियों ने मना कर दिया ।

एक ने कहा; 'बैठे जो रओ, कौन बौ बसाता बांट रओ ।'

दूकानदार ने प्रणाम बैठे बैठे ही किया । देहाती एलिस की वेशभूषा देखते रहे । एलिस आगे निकल गया । मार्ग में चाँदी के जेबरों से लदी, माथे पर सिन्दूर की बिन्दी लगाये, जरा लमछेरे शरीर की एक सुन्दर स्त्री उसने देखी । कुतूहलवश उसने उस स्त्री पर आँख जमाई । स्त्री जरा भी नहीं सहमीं । बल्कि उसने एलिस पर आँख तरेरी ।

उस स्त्री के साथ एक स्त्री और थी । उस सुन्दरी ने अपनी संगिन से तुरन्त कहा, 'जौ नठिया मोरी ओर का देखत तो ? ई कैं का मताई बैनें न हुईएं ।'

'झलकारी, इन अङ्गरेजन में चलन दूसरी तरां को सुनत।'

'हुइये आगलगन कें। मोरे मन में तो आउत कै पनैयाँ उतार कें मूछनबरे के मोंपे चटाचट दैश्रों।'

'कायरी ऊनै तोरो का लै लग्रो ?'

'हमाश्रो कछू लैवे खों आय तब पसुरियां टोर कें धर दैश्रों, पै बैना का इन गोरन खों जानती नइँया ? झाँसी खों गुटकन चाउत।'

'हमाई रानी न गुटकन दे है।'

'ए, रानी का है छाच्छार*दुर्गा है। ऐसी प्यारी लगत। मोये तो ऊदिना हरदी कूँकू में गरे से लगा लग्रो तो। मैं तो ऊपै अपने प्रान दै सकत।'

'और तोरो मुन्स का कर है ?'

'काये अब गारियन पै आ गई ? मैं ठूँसा दैश्रों, सो सबरौ बुकलयाबो बिसर जै। जब रानी पै कौनउ आफत आजै, तब का लुगाई और का मानस, सब अपने खों हौम दैयें।'

पीरअली और खुदाबख्श ने पान वाले की दुकान पर सुना:—

'यह छोटा साहब कैसी अकड़ के साथ बाजार में होकर निकलता है !'

'इस समय इन लोगों का सितारा चमका है। कभी डूबेगा भी।'

'इनकी तकदीर तो देखो। जो सामने आया समेट लिया गया। हैं हिम्मत वाले।'

'जी हाँ ! हिम्मत के सब हरफ खुदा ने इन्हीं के खोपड़े पर लिख दिये हैं। हमारी फूट ने हमें खा लिया। नहीं तो क्या मुगल, पठान, राजपूत, मराठा वगैरह के होते ये एक घड़ी भी हिन्दुस्थान में ठहर सकते थे ?'

'बनिये बनकर आये और ठाकुर बनकर जम रहे हैं।'

'इन राजों-नवाबों ने चौपट किया।'

'प्रजा को कष्ट दिये। सिपाही लड़ाई में हारे, और राज्य गया।'

'अजी सब जनाने हो गये हैं।'

---

*छाच्छार = साक्षात।

'यहीं के राजा को न देखो। नाटक चेटक और नाचने गाने में सब समाप्त कर दिया।'

खुदाबख्श के कान खड़े हुये। क्षोभ आया।

उसी आदमी से पूछा, 'यहाँ के राजा ने रैयत को तो कोई दुःख दिया नहीं?'

'दुख न देना और बात है, सुख पहुँचाना दूसरी बात।'

'अङ्गरेज का राज हो गया, तो याद आवेगी।'

'अङ्गरेज कौन कच्चा खाये जाते हैं।'

'जनाब यह ऐसी कौम है कि बिना खाये ही पचा जावेगी।'

'ऐसा नहीं हो सकता। यहाँ का राज अगरेजों के हाथ नहीं जावेगा।'

'कुछ नहीं कहा जा सकता। यदि चला गया तो?'

तम्बोली ने पान बनाते-बनाते कहा, 'ठट्टा है जो चला जावेगा। रानी हमारी बनी रहे, हम अपने सिर कटवा देंगे।'

पीरअली ने हँसकर कहा, 'तुमतो पान काटते कतरते जाओ भाई। सिर काटना, कटवाना हम सिपाहियों का काम है।'

तम्बोली ने ध्यान पूर्वक पीरअली को देखा।

बोला, 'आप झाँसी के रहने वाले नहीं जान पड़ते। परदेशी हैं?'

'क्यों? क्या फर्क पड़ गया।'

'धरती आकाश का।'

'कैसे?'

'अभी कुछ नहीं कह सकता। समय आने पर देखना।'

'समय आने पर तेली तम्बोली भी तलवार बन्दूक चलावेंगे, यह देखना बाकी है।'

'अभी न देख लो। ले आओ अपनी ढाल-तलवार। मैं अपनी लाता हूं। फिर देखलो झाँसी का पानी।

पीरअली हँसा। खुदाबख्श उसको वहाँ से ले गया।

दूकान के पास झम्मीसिंह और भग्गी दाउजू सुनार खड़े थे।

झम्मीसिंह ने कहा, 'खूब कई साब तुमने, स्याबास। अङ्गरेजन कौ जासूस सौ का हतो ?'

तम्बोली बोला, 'हुइये। का करनैं कक्का।'

भग्गी दाउजू ने कहा, 'जो झाँसी की लटी तकै तिहिं खाएँ कालका माई।'*

'वा दाउजू वा,' तम्बोली बोला, 'कविराजई तो ठैरे।'

झांसी में उस समय अनेक लावनी बाज थे। उनकी कवितायें पिंगल के नियमों से परे होती थीं, लेकिन थीं वे बहुत लोक प्रिय। भग्गी दाउजू उन्हीं में से एक था।

पीरअली ने बाजार का सारा समाचार अलीबहादुर को दिया।'

अलीबहादुर ने दूसरे दिन एलिस को सुनाया।

एलिस ने नवाब साहब को धन्यवाद दिया और मन में कहा, 'आल बाजार गौसिप' (सब बाजार की गपशप)।

---

*भग्गी दाउजू का रायसा - परिशिष्ट में देखिये।

[३१]

जब महीने भर से ऊपर हो गया और कलकत्ते से कोई जवाब न आया तो एलिस, मालकम इत्यादि को चिन्ता हुई। शायद गवर्नर जनरल रानी के पक्ष में फैसला कर दें और झाँसी सरकारी 'बन्दोबस्त' की हुकूमत से वञ्चित रह जाय।

एलिस के सामने सदाशिवराव नेवाल्कर नाम का एक व्यक्ति दावेदार बनकर आया। खूब रहा—प्यादे से प्यादा कट जावेगा। सदाशिवराव को एलिस ने प्रोत्साहित किया। सदाशिवराव ने एक लम्बे खर्रे की अर्जी पेश की। गङ्गाधरराव के वंश का कुर्सीनामा अर्जी में दर्ज किया—ठीक पाँचवीं पीढ़ी पर। और रानी बिचारी तो किसी भी पीढ़ी में न थी! गत राजा की धर्मपत्नी! तो भी क्या हुआ? स्त्री तो थी। स्त्री राज्य करने लायक! लेकिन इङ्गलैण्ड की रानी विक्टोरिया तो पुरुष नहीं। मगर हिन्दुस्थान इङ्गलैंड नहीं है!

सदाशिवराव की अर्जी को रानी की अर्जी से लड़वा ही तो दिया। डलहौजी रानी के लिये अब क्या खाक करेगा? और न इस मूर्ख के लिये ही कुछ।

मालकम ने ३१ दिसम्बर सन् १८५३ को सदाशिवराव की सिफारिश करते हुये लिखा, 'यदि मृत राजा के पुरखों के मिसी मर्द वारिस का ही हक़ कबूल किया जाना है, तो यह व्यक्ति वास्तव में गद्दी का सबसे अधिक निकट हक़दार है।'

सदाशिवराव के पास कहीं से कुछ धन भी आ गया और वह मजे में राजसी ठाठ से रहने लगा। राज्य मिलने में कितनी कसर रह गई थी? पोलिटिकल अफसरों ने सिफारिश कर ही दी थी। कोड़ा हाथ में आ गया। बस। कसर रही थोड़ी—जीन लगाम घोड़ी!

रानी गम्भीरतापूर्वक सारी स्थिति का अवलोकन कर रही थीं। वे झाँसी राज्य को अपने किसी उद्देश्य की पूर्ति का साधन-मात्र समझती

थीं। झाँसी का राज्य उनके लिये सुरपुर न था—किन्तु, जिस सुरपुर के पाने की उनके मन में लालसा थी, झांसी उसकी एक सीढ़ी मात्र थी।

पति के देहान्त के बाद से रानी की दिनचर्या इस प्रकार हो गई—

वह नित्य प्रातःकाल चार बजे स्नान करके आठ बजे तक महादेव का पूजन करतीं और उसी समय गवैये भजन-गायन सुनाते। फिर ग्यारह बजे तक महल के समीपवर्ती खुले आँगन में घोड़े की सवारी, तीरन्दाजी नेजा चलाना, दौड़ते हुये घोड़े पर चढ़े चढ़े, दाँतों से लगाम पकड़ कर दोनों हाथों से तलवार भांजना, बन्दूक से निशाना लगाना, मलखम्भ कुश्ती इत्यादि करती थीं और अपनी सहेलियों तथा नगर से आने वाली कुछ स्त्रियों को यह सब काम सिखलाती थीं। इनमें भाऊ बख्शी की पत्नी प्रमुख थी और बहुधा आने वालों में, झलकारी कोरिन।

ग्यारह बजे के उपरान्त रानी फिर स्नान करतीं और भूखों को खिलाकर तथा कुछ दान-धर्म करके तब भोजन करतीं। भोजन के उपरान्त थोड़ा-सा विश्राम। फिर तीन बजे तक ग्यारह सौ राम नाम लिखकर आटे की गोलियाँ मछलियों को खिलातीं। उस समय वे किसी से बातचीत नहीं करती थीं और न कोई उस समय उनके पास बैठ सकता या आ सकता था। वे किसी गूढ़ चिन्ता, किसी गूढ़ विचार में निमग्न रहती थीं। तीन बजे के उपरांत सन्ध्या तक फिर वे ही व्यायाम और कसरतें—शरीर को फौलाद बनाने की क्रियायें।

सन्ध्या के उपरांत आठ बजे तक कथावार्ता, पुराण भगवद्गीता का अठारहवां अध्याय और भजन सुनतीं। इसके बाद एक घण्टा आगन्तुकों को भेंट के लिये दिया जाता था। तीसरी बार स्नान करतीं। इसके बाद थोड़े समय तक इष्टदेव का एकान्त ध्यान। फिर ब्यालू भोजन। पश्चात् सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई के साथ थोड़ा-सा वार्तालाप और फिर ठीक दस बजे शयन। वे समय की बहुत पाबन्द थीं। शिथिलता तो छूकर नहीं निकली थी।

राज्य मिलेगा या न मिलेगा—इन दोनों के व्यवधान में वे महीने चले जा रहे थे। मोरोपन्त ताम्बे और अन्य कर्मचारी यथावत कार्य कर रहे थे। एलिस वर्ग अपना पाया मजबूत बनाने की तैयारी करता चला जा रहा था; बहुत सतर्कता, बड़ी सावधानी के साथ।

जब कई महीने हो गये और डलहौजी का उत्तर न आया तब मोरोपन्त, नाना भोपटकर इत्यादि की सम्मति से एलिस और मालकम के द्वारा एक खरीता और भेजा। उसमें पुरानी सन्धियों को दुहराया गया और जिनके सामने गोद ली गई थी उनके नाम प्रकट किये गये।

एलिस ने सिफारिश की। लिखा, 'ओर्छा राज्य को दत्तक की स्वीकृति दी गई। जैसा ओर्छा राज्य वैसा झाँसी राज्य। एक को अनुमति देना और दूसरे को न देना अनुचित मालूम होता है।'

यह बात नहीं कि एलिस रानी की अर्जी का स्वीकृत किया जाना पसन्द करता हो। वह ओर्छा राज्य को दत्तक की स्वीकृति मिलने पर कुढ़ गया था—एक अच्छा खासा ग्रास कम्पनी सरकार के मुंह से छुटका दिया गया!

कई महीने उपरान्त डलहौजी अवध के दौरे से कलकत्ता लौटा। झाँसी की मिसिल पेश हुई। जगह जगह ऐसे उद्‌गार जो नाक तक नफरत पैदा करें।

बुन्देलखण्ड में कम्पनी के राज्य की स्थापना हमारे पुरखों की सहायता से हुई है! हमारी राजभक्ति की कदर की जानी चाहिये। जरूर! अब किस साधना के लिये राजभक्ति की अटक है? सन्धियाँ पवित्र होती हैं। बेशक! तुम पेशवा के नौकर थे। पेशवा हमसे हारा और उसने अपना स्वामित्व हमारे हवाले किया। अब तुम हमारे नौकर हुये। मर्जी हमारी, मानें हम तुम्हारी गोद-वोद को या न मानें।

डलहौजी सोचता सोचता जिस निष्कर्ष पर पहुँचा, उसकी काउन्सिल भी उससे सहमत हो गई।

डलहौजी ने झाँसी की मिसिल पर २७ फरवरी सन् १८५४ को हुकुम चढ़ाया—

'झाँसी राज्य पेशवा का आश्रित राज्य था। १८०४ की संधि में शिवराव भाऊ ने इस बात को कबूल किया था। हमको ऐसे आश्रित राज्यों में गोद मानने न मानने का अधिकार है। रामचन्द्रराव ने १८३५ में, जिसको हमने सन् १८३२ में राजा की उपाधि दी थी, मरने से एक दिन पहले किसी को गोद लिया था। वह गोद ब्रिटिश सरकार ने नहीं मानी थी। हम दामोदरराव की गोद को मानने के लिए बाध्य नहीं हैं। इसलिए झाँसी राज्य खालसा किया जाता है, और अङ्गरेजी राज्य में मिलाया जाता है। पोलिटिकल एजेण्ट की सिफारिश के अनुसार रानी को मासिक वृत्ति दी जायगी।'

इस हुकुम को कानूनी लिवास ७ मार्च सन् १८५४ को मिल गया।

मालकम के पास डलहौजी की आज्ञा आ गई और उसने बिना विलम्ब नीचे लिखा हुआ इश्तिहार एलिस के पास भेज दिया—

'दत्तक को गवर्नर जनरल ने नामन्जूर किया है। इसलिए भारत सरकार की ७ मार्च सन् १८५४ की आज्ञा के अनुसार झाँसी का राज्य ब्रिटिश इलाके में मिलाया जाता है। इश्तिहार के जरिये सब लोगों को सूचना दी जाती है कि सम्प्रति झाँसी प्रदेश का शासन मेजर एलिस के आधीन किया जाता है। इस प्रदेश की सब प्रजा अपने को ब्रिटिश सरकार के आधीन समझे और मेजर एलिस को कर दिया करे और सुख तथा सन्तोष के साथ जीवन निर्वाह करे। १३-३-१८५४ ह० मालकम।'

प्रजा का सुख-सन्तोष! उसका कल्याण!! राजनीति के पाखण्ड को कैसे बढ़िया मुहाबिरे मिले!!!

[३२]

मालकम ने इस घोषणा को बहुत छिपा--लुका कर एलिस के पास भेजा और उसको हिदायत की कि बहुत सावधानी के साथ काम किया जावे, क्योंकि उसे मालूम था कि रानी जन-प्रिय हैं, कहीं झाँसी की जनता दंगा--फसाद न कर बैठे। इसलिये एलिस ने सेना द्वारा झाँसी का कठोर प्रबन्ध किया।

एलिस ने होशियारी के साथ उस घोषणा को एक जेब में रक्खा और दूसरी में पिस्तौल। सशस्त्र अङ्गरक्षकों को साथ लेकर रानी के पास किले वाले महल में पहुँचा। रानी को सूचना दे दी गई थी कि छोटे साहब के पास बड़े लाट की आज्ञा आ गई है, उसी को सुनाने आ रहे हैं। मोरोपन्त इत्यादि बहुत दिन से आशा लगाये बैठे थे। दीवान खास में नियुक्त समय पर आ गये। रानी पर्दे के पीछे बैठी। दीवान खास में एक ऊँची कुर्सी पर दामोदरराव।

एलिस दृढ़ पद और अदृढ़ हृदय के साथ दीवान खास में प्रविष्ट हुआ। मोरोपन्त इत्यादि ने बहुत विनीत भाव के साथ अभिवादन किया। दीवान खास में इत्र-पान इत्यादि सजे सजाये रक्खे थे। बुर्जों पर तोपों में सलामी दागने के लिये बारूद डाल दी गई थी। एलिस होठ से होठ सटाये आया और अपने माथे की शिकनों को समेटकर अभिवादन का उत्तर देता हुआ बैठ गया।

मोरोपन्त ने विनीत भाव के साथ कहा, 'साहब, आपको यहाँ तक आने में बहुत कष्ट हुआ होगा।'

मुश्किल से एलिस का कण्ठ मुखरित हुआ, 'मेरा कर्तव्य है। दुःखदायक कर्तव्य है।'

सब लोग सन्नाटे में आ गये।

एलिस ने कहा, 'महारानी साहब आ गई हैं ?'

दीवान ने उत्तर दिया, 'जी साहब। पर्दे के पीछे विराजमान हैं।'

एलिस ने जेब से मालकम वाली घोषणा निकाली। दरबारियों के कलेजे धक धक करने लगे।

कलेजा थामकर उन लोगों ने घोषणा को सुन लिया। गुलाम गौसखाँ तोपची अनुकूल घोषणा की आशा से दीवान खास के एक दर के पीछे की तरफ कान लगाये खड़ा था। प्रतिकूल घोषणा को सुन मुंह लटकाये चुपचाप चला गया।

जब घोषणा पढ़ी जा चुकी—मोरोपन्त के मुँह से निकला, 'ओफ !'

दीवान के मुंह से, 'हाय !'

और दरबारियों के मुँह से—'अनहोनी हुई।'

दामोदरराव समझने की कोशिश कर रहा था, उसको आभास मिल गया कि कुछ बुरा हुआ है।

यकायक ऊंचे, परन्तु मधुर स्वर में रानी ने पर्दे के पीछे से कहा, 'मैं अपनी झाँसी नहीं दूंगी।'*

इन शब्दों से दीवानखास गूँज गया। वायुमण्डल ने उनको अपने भीतर निहित कर लिया।

भारत के इतिहास में वे शब्द पिरो दिये गये। झाँसी की कलगी में वे शब्द मणि-मुक्ता बन कर चिपक गये।

अब एलिस का धड़कता हुआ हृदय कुछ स्थिर हुआ।

बोला, 'मुझको गवर्नर जनरल साहब की जो आज्ञा मालकम साहब के द्वारा मिली उसको मैंने पेश कर दिया। जो कुछ मेरे सामर्थ्य में था मैंने किया। हम सब गवर्नर जनरल साहब की आज्ञा में बंधे हुये हैं। परन्तु मैं समझता हूँ कि असन्तोष का कोई कारण नहीं है। पाँच हजार रुपया मासिक वृत्ति महारानी साहब और उनके कुटुम्ब के लिये काफी है। यह मानना पड़ेगा कि गवर्नर जनरल साहब ने बहुत उदारता का बर्ताव किया है।'

---

*परिशिष्ट में देखिये।

एलिस का वाक्य समाप्त नहीं हुआ था कि पर्दे के पीछे से रानी ने उसी ऊँचे मधुर स्वर में कहा, 'मुझको यह वृत्ति नहीं चाहिये, मैं न लूंगी।'

एलिस ने अधिक ठहरना उचित नहीं समझा। दीवान से कहता गया, 'आप तुरन्त मेरे पास आइये।'

दीवान ने पान खाने का आग्रह किया। वह पान खाकर चला गया।

मुन्दर रानी के पास पर्दे में बैठी थी। जब घोषणा सुनाई गई वह मूर्छित हो गई थी। एलिस के जाने पर वह होश में आई।

रानी ने कहा, 'क्यों री मूर्छित होना किससे सीखा? क्या इस छोटे से राज्य के लिये ही हम लोग जीवित हैं?'

मुन्दर रोने लगी। रानी ने पुचकारा। मोरोपन्त इत्यादि ने समझाया।

दीवान ने रानी से पूछा, 'मैं एलिस साहब के पास जाऊँ? वह बुला गये हैं।'

रानी अनुमति देकर रनवास में चली गईं।

कुछ क्षणों में ही समाचार सारे नगर में फैल गया। उस समय झाँसी निवासियों के क्षोभ का ठिकाना न था। रानी की सेना तुरन्त युद्ध छेड़ देना चाहती थी, परन्तु रानी ने निवारण किया। कहलाया, 'अभी समय नहीं आया है।'

झलकारी ने जब सुना अपने पति पूरन से कहा, छाती बर जाय इन अङ्गरेजन की, गुटक लई झाँसी।'

[३३]

एलिस ने झांसी का 'अङ्गरेजी बन्दोबस्त' आरम्भ कर दिया।

दीवान से दफ्तरों की चाभियां लीं। थाने पर अधिकार किया और शहर में अङ्गरेजी राज्य और अपने अधिकार की ड़ोंड़ी पिटवा दी। तहसीलों में तुरन्त समाचार भेजा और वहाँ भी कड़े प्रबन्ध की व्यवस्था करदी।

दीवान रानी को सब बातों की सूचना देकर अपने घर उदास चला गया। रानी के नित्य नियम में कोई अन्तर नहीं आया। अपने कार्यक्रम के अनुसार जब वे विश्राम के लिये बैठीं तब मुन्दर, सुन्दर और काशीबाई उनके पास आ गईं। वे अपने आभूषण उतार आई थीं।

रानी ने कहा, 'आभूषण क्यों उतार आई हो ? क्या इसी समय रणभूमि में चलना है ?'

मुन्दर सिसकने लगी। सुन्दर और काशी के नेत्र तरल हो गये।

रानी बोलीं, 'ये चिन्ह तो असमर्थता और अशक्ति के हैं। अपने सब आभूषण पहिनो और इस प्रकार रहो मानो कुछ हुआ ही नहीं है।'

मुन्दर ने रानी के पैर पकड़ लिये उसकी हिलकी नहीं समाती थी।

रानी का कण्ठ भी थोड़ा रुद्ध हुआ। उन्होंने भौंहें सिकोड़ीं। एक ओर देखने लगीं।

काशीबाई रुदन करती हुई बोली, 'बाईसाहब, बाईसाहब !'

सुन्दर ने करुण स्वर में कहा, 'सरकार अब क्या होगा ?'

रानी ने अपने को सहज ही संयत कर लिया। मुन्दर के सिर पर हाथ फेरा। उसकी आँखें आँसूओं से भरी हुई थीं। सुन्दर और काशी की भी। चंचल आँसुओं में होकर उन तीनों ने रानी के तेजस्वी रूप को देखा कई लक्ष्मीबाइयाँ, कई सतेज नेत्र दिखलाई पड़े। उन्होंने अपनी आँखें पोंछी।

रानी ने कहा, 'ये आँसू बल का क्षय करेंगे। अभी तो अपने कार्य का आरम्भ भी नहीं हुआ है। सोचा, जब छत्रपति के उपरान्त शम्भू जी

मारे गये, शाहू समाप्त, राजाराम गत, तब ताराबाई की गाँठ में क्या रह गया था ? इतने बड़े मुगल सम्राट को ताराबाई कैसे परास्त कर सकी ? उसने स्वराज्य की बागडोर को कैसे बढ़ाया ? रो-रोकर ? कपड़े और गहने फेंक-फेंककर ? भूखों मर-मरकर ? और सोचो, जीजाबाई को पति का सुख नहीं मिला। उन्होंने छत्रपति को पाला। काहे के लिये ? किस आशा से ? गद्दी पर बिठलाने के लिये ! उन्होंने इतना तप, इतना त्याग अपने पुत्र को केवल हाथी की सवारी और नरम-नरम गद्दी पर विराजमान कराने के लिये किया था ?'

वे सहेलियाँ सचेत हुईं।

रानी कहती गईं, 'हमको जो कुछ करना है उसकी दिशा निश्चित है। मार्ग में विघ्न-बाधायें तो आती ही हैं। खरीते का स्वीकृत न होना केवल एक बाधा ही है। स्वीकृत हो जाता तो क्या हम लोग केवल सो जाने के लिये ही जीवित रहतीं ? भगवान कृष्ण की आज्ञा को याद रक्खो कि हमको केवल कर्म करने का अधिकार है। कर्म के फल का नहीं। देखो, छत्रपति के उपरान्त जिन लोगों ने स्वराज्य के आदर्श को आगे बढ़ाया और उसकी जड़ें प्रबल बनाईं, वे बाधाओं का डटकर प्रतिरोध करते रहते थे। जिन लोगों की लालसा अपने लिये फलों की ओर गई, वे गिर गये और स्वराज्य की धारा धीमी पड़ गई। परन्तु वह सूखी कभी नहीं। दादा बाजीराव पेशवा हतप्रभ होकर बिठूर चले आये। परन्तु हम लोगों को वे स्वराज्य की शिक्षा देने से कभी नहीं चूके। यदि हिन्दुस्थान में कोई भी उस पवित्र काम को अपने हाथ में न ले, तो भी, मैंने अपने कृष्ण के सामने, अपनी आत्मा के भीतर उसका बीड़ा उठाया है। करूँगी और फिर करूँगी। चाहे मेरे पास खड़े होने के लिये हाथ भर भूमि ही क्यों न रह जाय। मान लो कि मैं सफल न हो पाई, तो भी जिस स्वराज्य-धारा को आगे बढ़ा जाऊँगी, वह अक्षय रहेगी। उसी महावाक्य को याद रक्खो—हमको केवल कर्म करने का अधिकार है, फल का कभी नहीं। हमको एक बड़ा सन्तोष है। जनता हमारे

साथ है। जनता सब कुछ है। जनता अमर है। इसको स्वराज्य के सूत्र में बांधना चाहिये। राजाओं को अङ्गरेज भले ही मिटादें परन्तु जनता को नहीं मिटा सकते। एक दिन आवेगा जब इसी जनता के आगे होकर मैं स्वराज्य की पताका फहराऊंगी।'

सहेलियों की आँखों में भी चमत्कार उत्पन्न हो गया।

रानी बोली—'मुझ से आज एक भूल हो गई है। मुझको एलिस के सामने कुछ नहीं कहना चाहिये था। मेरे उस वाक्य से वह अपने सङ्गी अङ्गरेजों सहित चौकन्ना हो जायगा। वृत्ति भी अस्वीकृत नहीं करना चाहिये थी।'

काशी ने स्थिर स्वर में प्रश्न किया, 'अब क्या करना है ?'

रानी ने कहा, 'अंग्रेज जाति बहुत धूर्त है। उसका सामना चाणक्य नीति ही से हो सकता है। मैं वृत्ति को स्वीकृत करूंगी और आगे सावधानी के साथ काम करूंगी। मैं दामोदरराव की ओर से विनय प्रार्थना की लिखा पढ़ी जारी रक्खूंगी विलायत में अपील भिजवाऊँगी। जिससे एलिस इत्यादि मेरी झाँसी न देने वाली बात की यथार्थता को अपनी समझ से दूर करदें। और, जनता अपनी स्मृति में इस बात को पकड़े रहे कि मैं और झाँसी अभी बनी हैं।'

इतने में वहाँ दामोदरराव आया।

रानी ने अपनी गोद में बिठला लिया।

दामोदरराव ने पूछा, 'माता, क्या यह राज्य चला जावेगा ?'

रानी—'यह राज्य चला जावेगा तो चला जाने दो। स्वराज्य आवेगा।'

दामोदरराव—'स्वराज्य क्या ?'

रानी मुस्कराई।

बोलीं, 'अभी भोजन करने चलो। फिर कभी बतलाऊँगी।'

रानी ने पेंशन लेने की स्वीकृति लिखवा भेजी।

[३४]

झाँसी की जनता के क्षोभ का समाचार, एलिस को मिल गया। उसने अपने मन में एक सामंजस्य स्थिर किया और उसके अनुसार मालकम को लिखा। मालकम ने गवर्नर जनरल को सिफारिश की—

'रानी लक्ष्मीबाई को आजीवन पाँच हजार रुपये दिये जावें, और नगर वाला राजमहल उनकी सम्पत्ति समझी जाकर उन्हीं को दे दिया जाय। रानी या उनके नौकरों पर ब्रिटिश अदालतों की सत्ता न रहे। अपने नौकरों के अपराधों का वे स्वयं न्याय करें। राजा का निज का धन, रियासत के लेन-देन का हिसाब करके जो बाकी बचे वह, और राज्य के सब जवाहिरात, रानी को दे दिये जावें। राजा और रानी के नातेदारों की एक सूची बनाई जाय और उन लोगों के निर्वाह की व्यवस्था कर दी जाय।'

डलहौजी ने ये सिफारिशें स्वीकार कीं, केवल एक बात नहीं मानी। वह यह कि राजा की निज की सम्पत्ति और रियासत, जवाहिरात रानी के हों। उसने तै किया कि दामोदरराव के होंगे, क्योंकि यद्यपि वह राज्य का अधिकारी नहीं है, मगर हिन्दू शास्त्र के अनुसार गङ्गाधरराव की निजी सम्पत्ति का अधिकारी अवश्य है।

डलहौजी ने यह आज्ञा २५ मार्च सन् १८५४ को दी और तदनुसार पोलिटिकल एजेण्ट ने झाँसी के खजाने से छः लाख रुपये निकाल कर दामोदरराव के नाम से अङ्गरेजी खजाने में जमा कर दिये और निश्चय किया कि दामोदरराव को बालिग होने पर ब्याज समेत लौटा दिये जावेंगे। रियासत के सब जवाहिरात और सोने-चाँदी के आभूषण इत्यादि 'दामोदरराव हेतु' रानी के अधीन कर दिये।

ईमान और राजनीति दोनों की परस्पर निभा दी।

सब अङ्गरेजी बेलन अपरिहार्य और अनवरत गति से चला।

सबसे पहले जो हुआ, वह रानी से किले का खाली कराना था। किले से एक बड़ी सुरंग हाथीखाने को और वहाँ से शहर वाले महल को

गई थी। रानी ने इसके द्वार को मुंदवा दिया और वह किले से शहर वाले महल में सहेलियों सहित चली आई।

अङ्गरेजी पल्टन ने किले पर कब्जा कर लिया। उसके अङ्गरेज अफसरों ने रात को कवाब-शराब से जशन मनाया। पल्टन के बहुत से हिन्दुस्थानी सिपाही आँसू बहाते हुये सोये।

दूसरे दिन बहुत-सा रियासती फौजी सामान नष्ट किया गया और बड़ी-बड़ी तोपों को निरुपयोगी कर डाला गया। झाँसी राज्य की संपूर्ण सेना एक कलम बरखास्त कर दी गई—उनको छः छः महीने का वेतन देने की उदारता जरूर की गई। सिपाही वेतन लेकर महल के सामने से निकले। व रानी का एक अन्तिम दर्शन लेना चाहते थे। रानी झरोखे पर पर्दे के पीछे आ गई। सिपाही आंसू बहाते जाते थे और 'रानी माता, रानी माता' करते हुये उनको प्रणाम करते चले जाते थे। रानी पर्दे के बाहर केवल अपने जुड़े हुये हाथों नमस्कार करती जाती थीं। रानी ने सिपाहियों के आँसू देखकर भी अपने आँसू किसी आश्चर्यपूर्ण क्रिया से रोके।

छः छ; मास वाले वेतन की उदारता केवल सिपाहियों तक सीमित रही, बाकी सब रियासती नौकर खाली जेब घर चले गये। जिसको पटवारगिरी और कानूनगोई से पेट भरना था उनकी अर्जियां जल्दी-जल्दी मन्जूर करली गईं। एक बख्शिशअली झाँसी नगर के सब फाटकों का फाटकदार था और रियासती कर्मचारियों में उसका बहुत ऊँचा स्थान था। उसको झाँसी के जेल की दरोगाई मिल गई।

लगभग सब जागीरदार खत्म कर दिये गये। केवल गुरसराय, कटेरा और गुसाइयों की जागीरें बच गईं। वे इसलिये कि बेलन के नीचे कुछ कड़े-कंकड़ बच ही जाते हैं। छोटे जागीरदारों में आनन्दराय भी था। उसके पास ताम्र-पत्र थे। छीन लिये गये और बदले में कागज पर नकलें दे दी गईं।

औरों की तरह आनन्दराय से भी पूछा गया,—'नौकरी करोगे ?'

'कौन-सी ?'

'पटवारगिरी।'

'नहीं कर सकूँगा। खेती से पेट पालूंगा।'

'नायब थानेदारी करोगे ?'

'कर लूंगा।'

जहां सैकड़ों और सहस्त्रों की तादाद में जनता के पढ़े-लिखे लोग रियासत में थोड़ा वेतन पाकर भी अपनी गुजर करते थे, वहाँ रियासत के लोग केवल थोड़े से ऊंचे कर्मचारी और छोटे-छोटे जागीरदार अँग्रेजी राज्य में छोटे-छोटे पदों पर कुछ अधिक वेतन देकर नियुक्त कर दिये गये। बाकी बड़े-बड़े पदों पर मोटा वेतन पाने वाले थोड़े-से अङ्गरेज मुकर्रर हो गये। ठीक तो है—राजा की जगह अङ्गरेज कमिश्नर, एक दर्जन दीवानों की जगह एक डिप्टी कमिश्नर और दो-तीन अङ्गरेज परगना-हाकिम। सहस्त्रों सिपाहियों की जगह दो-तीन सौ अंग्रेज सैनिक। दरबार समाप्त—कवि, चित्रकार, धुरपदिये, सितारिये, नर्तकियाँ-नर्तक, साँटमार, कारीगर सब की बिदा!

उनकी जगह क्लब, डाक बङ्गला और ऊंचे-नीचे, छोटे-बड़े सब हिन्दुस्थानियों का अनिवार्य माथा टेकू सलाम। वह भी अर्दली को हक-दस्तूर दो जूते उतार कर साहब की विलायती प्रतिमा के समाने नतमस्तक जाओ, तब नसीब। कोरी, करघे, कपड़े सब गायब—केवल एक अत्यन्त महत्वपूर्ण क्रिया जारी—गङ्गाजी के किनारों से चाँदी-सोने का शोषण करना और टेम्स जी के किनारों पर निचोड़ देना।

हिन्दुस्थान उस ओर चलाया जाने लगा जिसको आजकल की भाषा में कह सकते हैं—

'महफिल उनकी साकी उनका
आँखें अपनी बाकी उनका।'*

---

*अकबर इलाहाबादी।

झांसी प्रदेश के अनेक लोग रानी के पास प्रणाम करने जाते थे और पूछते थे—

'सरकार की आज्ञा हो तो अङ्गरेजों की नौकरी करलें ?'

रानी उत्तर दिलवाया करती थीं, 'करलो, परन्तु इस बात को मत भूलना कि कभी झाँसी राज्य में तुम्हारा कोई स्थान था !'

सेठ-साहूकारों के उलहनों के मारे रानी हैरान थीं। कोई कुछ कह जाता, कोई कुछ।

'आप कुछ उपाय क्यों नहीं करतीं ?'

'विलायत खरीता भेजिये। झाँसी को यों ही तो अङ्गरेजों के हाथ में नहीं चला जाने देना चाहिये।'

'हम लोगों से जितना रुपया चाहिये हो लीजिये और मुकद्दमा लड़िये।'

'हम लोग साहबों के बङ्गलों पर सलाम करने नहीं जाना चाहते इसलिये कम से कम शहर तो अपने अधिकार में लीजिये।'

'हमारा सारा व्यापार ठप हो गया है। राजदरबार, सरकार कोई नहीं रहे—अब हमको कोई नहीं पूछता।'

किसानों के ऊपर जो लगान रियासत में कायम था, वह पूरा कभी वसूल नहीं हो पाता था—कभी आधा कभी पर्धा। और वह भी प्रायः अन्न के रूप में। अब कागजों में लगान कम हुआ; परन्तु जितना लिखा गया उसमें से वसूली कौड़ी कम की नहीं की गई—और सब सिक्कों में। भूमि का स्वामी राजा पुस्तकों में अवश्य था परन्तु नित्य के जीवन में किसान को अपनी भूमि किसी को भी देने का अधिकार न था। अङ्गरेजी राज्य में वसूली करने के लिये पहले-पहल हर गाँव में ठेकेदार नियुक्त किये गये। फिर इन्हीं को जमीदारियां 'अता' कर दी गईं। इस श्रेणी के खड़े कर देने से किसान नीचे धसक गये। भूमि के ऊपर उनका जो अधिकार था वह थोड़े से जमींदारों के हाथ में पहुँच गया। इन दोनों श्रेणियों के बीच के व्यवधान को सन्तुलित रखने के लिये—अथवा

जमींदार किसान संघर्ष में किसान कभी सिर न उठा पावें इसके लिये साहब, साहब की कचहरी और साहब का बङ्गला उद्‌भूत हुये।

रह गई ग्राम पंचायतें सो उनके हाथ के केवल जात-पांत के झगड़े निबटाने का हथकण्डा रह गया। बाकी सारी शक्ति सौतिया-डाह रखने वाली अङ्गरेजी अदालत के 'इजलास' में चली गई।

इङ्गलैण्ड के कुछ आत्मनिष्ठ पुरुषों ने प्रतिवाद किये परन्तु इन प्रतिवादों का कोई प्रभाव नहीं हुआ।

इङ्गलैंड सामान्त युग को लांघकर, मध्यम वर्ग के नेतृत्व में आ चुका था। फ्राँस की क्राँति से घृणा करते हुए भी, इङ्गलैंड के मध्यम वर्ग ने फ्रांस-क्राँति के तीन मोहक शब्द 'न्याय' 'समता' और 'भाईचारा' अपने साहित्य में सोख लिये। इङ्गलैंड की तत्कालीन राजनीति भी प्रभावित हुई। मध्यम वर्ग के एडमन्ड बर्क, शेरीडीन इत्यादि ने सिंहनाद किया। राजनीति के अमर सिद्धान्त प्रकट हुये। मध्यम वर्ग दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ा और इङ्गलैंड का अधिकार क्षेत्र उसने अपने हाथ में कर लिया। अधिकार हाथ में आते ही दायित्व ने उदारता को पीस डाला, क्योंकि निम्न वर्ग की असंख्य जनता उस अधिकार संसर्ग से दूर थी। जो मध्यम वर्ग उदार स्वरों में ऊँची राजनीति के राग अलापा करता था वह हर कदम पर हाँ—नाँ के सिर हिलाने लगा। मध्यम वर्ग के उदार वृत्ति वाले जो लोग अधिकार क्षेत्र से बाहर थे, और प्रयत्न करने पर भी जो उस क्षेत्र में नहीं घुस पाते थे, उनकी कौन सुनता था ?

रानी ने विलायत को अपील भेजी। उसका कभी जवाब ही नहीं मिला।

पार्लियामेंट में भी थोड़ी सी बहस हुई। एक मेम्बर ने कम्पनी के डायरेक्टरों का पुराना मत उद्धृत किया।

'अपने इलाके को और अधिक बढ़ाना बुद्धिमानी का काम नहीं है। राज्य-विस्तार की नीति सङ्कटपूर्ण है और ब्रिटिश जाति की भावना प्रतिष्ठा और नीति के प्रतिकूल है।'

उस मेम्बर ने अन्तरराष्ट्रीय कानून न्याय की भी दुहाई दी। उस मेम्बर के वाक्चातुर्य की तारीफ हुई और बुद्धि की निन्दा।

दूसरी अगस्त सन् १८५४ को अपनी सब पूर्व प्रतिज्ञाओं का विस्मरण करके ब्रिटिश सरकार ने झाँसी राज्य को 'अङ्गरेजी इलाके' में मिला लेने की मुहर लगा दी। गवर्नर जनरल की, की हुई कार्रवाई मंजूर कर ली गई।

चुक्खी चौधरी, मगन गन्धी, लाला श्याम, झम्मी और भग्गी दाउजू, पूरन कोरी और छन्दी चमार इत्यादि सब अपनी विगत स्वतन्त्रता की ओर हसरत भरी निगाहों से देखते रह गये। झलकारी कोरिन के वस्त्राभूषणों की चटक चली गई।

[३५]

अङ्गरेजी क्लब-घर के सामने वाले मैदान की दूवा साफ कराई जा रही थी। धूप में मजदूर हांफ-हांफकर काम कर रहे थे। मजदूरों का मुखिया खड़े खड़े काम का ढङ्ग बतला रहा था।

एलिस चाहता था काम ज्यादा जल्दी हो। सन्ध्या के पहले ही कमिश्नर स्कीन, डिप्टी-कमिश्नर गार्डन और फौजी अफसर कप्तान डनलप इत्यादि की बैठक होनी थी। कुछ फल-फलारी की भी योजना थी।

झाँसी को कमिश्नरी शासन का गौरव प्राप्त हुआ। इसमें कई जिले शामिल कर दिये गये। झाँसी का एक अलग जिला बना। इस झांसी जिले का पहला डिप्टी-कमिश्नर कप्तान गार्डन हुआ, जो गङ्गाधरराव की चिरौरी किया करता था।

मैदान की सफाई करने वाले मजदूर जरा ढीले पड़-पड़ जा रहे थे। एलिस को क्षोभ हुआ। उसने मजदूरों के मुखिया को डाटा।

मुखिया ने कहा, 'ये मुफ्तखोर हैं हुजूर। डर के मारे मैंने अभी तक इनकी मारपीट नहीं की। अब हड्डी-पसली तोड़ता हूं।'

एलिस बोला, 'मैं इस समय हड्डी-पसली तोड़ना पसन्द नहीं करता, मगर इन से काम लो। काफी पैसा दिया जाता है। जब रियासत थी तब तो इनको मुफ्त में काम करना पड़ता था।'

एलिस बङ्गले में चला गया। मुखिया ने सोचा, रियासत में काम मुफ्त में करते थे तो रियायतें भी बहुत पाये हुये थे। लड़की-लड़के के ब्याह के समय, देखें, अब कौन इनकी मदद करता है।'

चिल्लाकर मजदूरों को काम करने के लिये सम्बोधन करने लगा। पास जाकर उनसे कहा, 'अब रियासत नहीं है। अङ्गरेजी करकरा उठी है। ठिकाने से काम करो, नहीं तो खाल टूटती फिरेगी।'

मजदूरों ने कुड़कुड़ाते हुये कहा—

'न हमें रियासत जागीर लगाये थी और न अङ्गरेज लगा देंगे।'

'जितना खोदेंगे उतना पी पायेंगे।'

'पर यह जरूर है कि अपना-अपना ही है।'

'अपने की मार खाते थे तो उनसे लड़ भी जाते थे। इन लोगों से तो कुछ कह भी नहीं सकते।'

मुखिया ने मना किया, 'झंझट की बात मत करो। साहब अपनी भाषा खूब समझता है। सुन लेगा तो तुम्हारी और हमारी जान ले लेगा।'

मजदूर सन्ध्या के पहले ही काम समाप्त करके अपनी मजदूरी लेकर चले गये। ठीक समय पर अङ्गरेज अफसरों की बैठक हुई।

खान-पान के साथ ही काम-काज की बात जारी रही।

एलिस—'मुझको अन्देशा था कि कहीं झाँसी की जनता हटाये हुये रियासती सिपाहियों को भड़काकर, दङ्गा न करवा दे।'

डनलप—'हमारी पल्टनें तैयार थीं।'

स्कीन—'बन्दोबस्त अच्छा था।'

गार्डन—'मैंने सुना है, वे सब रानी के पास गये थे।'

एलिस—'स्वाभाविक है।'

गार्डन—'परन्तु रानी ने उनको कोई प्रोत्साहन नहीं दिया। समझदार स्त्री है।'

स्कीन—'मुझको उस स्त्री पर अचरज होता है। सुनता हूँ ऐसी घुड़सवार है कि पुरुष दाँतों तले उँगली दबाते हैं।'

गार्डन—'हिन्दुस्थानी कसरतें खूबी के साथ करती है।'

एलिस—'मुझे शंका थी कि कहीं सती होने की कोशिश न करे। मैं गंगाधरराव के दाह के समय कप्तान मार्टिन को ससैन्य ले गया था।'

गार्डन—'मैं उन दिनों यहाँ न था।

स्कीन—'इस प्रदेश के लोग शाँति-प्रिय और कानून-भक्त हैं। यहाँ पहले दो बार सरकारी अमल रह चुका है, इसलिये हमारा शासन पसन्द करते हैं। न मालूम इस रियासत के सड़े और गन्दे वातावरण में यहाँ की जनता कैसे साँस लेती रही?'

एलिस—'ओ यह पूर्व है। जनता में मानो जान ही नहीं। मध्यम वर्ग यहां नाम मात्र को भी नहीं हैं। राजा जनता के भेड़िया-धसान को डण्डे के सिरे से हांकते रहते हैं।'

डनलप—'हमारा शासन उनको कानून और न्याय देगा। व्यवस्थित शासन में ये लोग समृद्ध और सुखी होंगे।'

स्कीन—'यहां के बड़े लोगों को अपने पास बुलाते रहना चाहिये। वे लोग जन-समाज के मुखिया हैं। इनको हाथ में रखने से शासन में विघ्न-बाधा उपस्थित न होगी और जिन लोगों के मन में रियासत की भावनाओं का पक्षपात होगा, वे भी बिलकुल ढल जावेंगे।'

गार्डन—'ठीक है। हम लोग उनको जगीरें नहीं दे सकते। लेकिन उपाधियाँ दे सकते हैं। वे उपाधियों को काफी बड़ा पुरस्कार समझेंगे।'

स्कीन—'अलीबहादुर नवाब यहाँ का बड़ा आदमी है। विश्वसनीय है। मुझसे मिला है। बहुत शिष्ट है। उसको बराबर मुलाकात देना चाहिये।'

एलिस—'मैंने चार्ज हवाला करते समय गार्डन को समझा दिया है। नवाब अलीबहादुर अपनी पैन्शन बढ़वाना चाहता है। यह नहीं हो सकता। उससे साफ कहना होगा, मगर उसको नवाब की उपाधि आजीवन दी जा सकती है।'

गार्डन—'मैंने उसकी हवेली वापिस करदी है। वह बहुत कृतज्ञ है।'

स्कीन—'ठीक किया। अगर उसके कोई लड़का हो तो तहसीलदार बना दिया जावे।'

एलिस—'लड़का तो है किन्तु वह उससे नौकरी नहीं कराना चाहता।'

स्कीन—'क्यों ? हमारे तहसीलदारों को बहुत अख्तियार हैं। हम तहसीलदारों को कुर्सी देते हैं। उनको जूता पहिने दफ्तर में आने देते हैं।'

गार्डन—'हाँ उस बात में काले आदमी बड़ा गौरव देखते हैं।'

स्कीन—'बनियों महाजनों को भी बुलाना चाहिये। इन लोगों के व्याज का जनता पर बहुत असर चलता है। व्योपार और रोजगार का

अब बहुत अच्छा सुभीता हो गया है। यहाँ से लेकर बम्बई तक बेखटके माल आ-जा सकता है। उनको विलायत का माल शहर और देहातों में बेचने से बहुत मुनाफा मिल सकता है। थोड़े दिन में मालामाल हो जावेंगे।'

एलिस—'आज मैंने उनमें से खास खास को बुलवाया है। नवाब अलीबहादुर को इशारा कर दिया था।'

स्कीन—'मुझको मालूम है। गार्डन ने बतलाया था। उनसे कहना चाहिये कि झाँसी में रेल भी किसी दिन आ जावेगी और महीनों की यात्रा दिनों में हो जाया करेगी। रेल के जरिये वे लोग सहज ही अपने तीर्थों को दर्शन के लिये जा सकते हैं।'

एलिस—'कुछ स्कूल खोलना पड़ेंगे।'

स्कीन—'वह पीछे देखा जायगा। फिलहाल अस्पतालों और अच्छी सड़कों की चिन्ता करनी होगी।'

गार्डन—'लेकिन मनचाहे सरकारी नौकर, हिन्दुस्थानियों में तभी इस जिले में मिल सकेंगे, जब उन्हें हमारी शिक्षा मिल जाय।'

स्कीन—'हाँ कुछ दिनों बाद बाबुओं की जरूरत पड़ेगी।'

गार्डन—'परन्तु केवल बाबू वर्ग उत्पन्न करने के लायक शिक्षा देने की नीति को पूरा पूरा स्वीकृत नहीं किया गया है।'

स्कीन—'हाँ वह बात कलकत्ता, मद्रास, आगरा इत्यादि के लिये है। झांसी सरीखी पिछड़ी हुई जगह और बुन्देलखण्ड-से वनखण्ड के लिये नहीं है। यहाँ तो स्कूल खोला जाय, उसे मिडिल से आगे मत ले जाओ। मैं नहीं चाहता कि हिन्दुस्थानी छोकरे, एडमण्ड वर्क की मदिरा पीकर मतवाले हो जायँ।'

एलिस—'तजुर्बा गार्डन को सब सिखला देगा।'

सोने की मोटी सांकल से टंगी हुई घड़ी को स्कीन ने जेब से निकाला। समय देखकर बोला, 'एलिस, तुम्हारे मुलाकाती अभी नहीं आये हैं। समय हो गया है।'

एलिस ने कहा, 'इन लोगों के धर्म में कुछ अनन्त है, इसलिये समय की पाबन्दी को महत्व नहीं देते।' उठकर एक तरफ गया। लौटकर आकर बोला।

'आ गये हैं। मैंने झाँककर देखा। पूरा पूर्वी ठाठ है। पगड़ी, पग्गड़, फेंटे, दुपट्टे। हाथों, गलों और पैरों तक में जेवर!'

गार्डन ने राजसी मुस्कराहट के साथ कहा, 'मैंने दरबारों में यह सब ठाठ देखा है।'

स्कीन—'यह भी दरबार है, गार्डन डिप्टी कमिश्नर साहब बहादुर का दरबार!' स्कीन हँसा। सब अंगरेज हँसे।

स्कीन बोला, 'हम लोग जाते हैं। एलिस और डनलप के सिवाय और किसी की जरूरत नहीं।'

स्कीन इत्यादि गये। एलिस वाली कोठी में एक कमरा लम्बा-चौड़ा था। उसी में 'दरबार' की योजना की गई थी। एक ऊँचे चबूतरे पर भी एक और छोटा-सा चबूतरा था। उस पर दो कुर्सियाँ थीं। उन पर एलिस और गार्डन जा बैठे। नीचे वाले चबूतरे पर आमने-सामने दो कुर्सियाँ पड़ी हुई थीं। एक पर डनलप बैठ गया। दूसरी खाली थी। चबूतरे के नीचे एलिस का पेशकार खड़ा था।

थोड़ी देर में बस्ती के आदमी, सेठ, साहूकार इत्यादि आये और प्रणाम कर-करके खड़े हो गये। उनमें नवाब अलीबहादुर भी थे।

एलिस ने पेशकार को इशारा किया। वह नवाब अलीबहादुर को चबूतरे के पास लिवा लाया। उन्होंने फिर झुककर प्रणाम किया। एलिस ने उनको नीचे वाले चबूतरे की खाली कुर्सी पर बिठला लिया।

नवाब साहब की बाँछें खिल गईं।

पेशकार ने बस्ती के सब लोगों को फर्श पर लगी हुई कुर्सियों पर बिठलाया।

सन्नाटा छा गया।

एलिस खड़े होकर बोला, 'हमने अपना काम कप्तान गार्डन साहब बहादुर को सौंप दिया है। कमिश्नर साहब बहादुर अभी हम लोगों को हुक्म दे गये हैं कि आप लोगों की और प्रजा की भलाई पर खूब ध्यान दिया जाय। आप लोगों की कुशल-क्षेम हम लोगों की चिन्ता का दिन-रात कारण रहेगा। खूब बेखटके रोजगार करिये। यहाँ से बम्बई तक अमन-चैन कायम है। चोर-उचक्कों को कुचलने के लिये हमारे हाथ में बहुत बड़ी ताकत है। आप अपने-अपने धर्म का पालन, दूसरों को नुकसान पहुँचाये वगैर, चाहे जैसा करिये। हमको उससे कोई सरोकार नहीं। हालाँकि हम समझते हैं कि हमारा ईसाई धर्म सर्वश्रेष्ठ है। बहुत जल्दी मदरसे खोले जायेंगे। आपकी भाषा के साथ-साथ अंङ्गरेजी भी पढ़ाई जावेगी, जिससे आप लोगों की सन्तान विलायत की अच्छी बातों को भी जान सके। अच्छे पढ़े-लिखे हिन्दुस्थानियों को, बड़ी-बड़ी नौकरियां भी दी जावेंगी, जिससे आप लोग शासन में हाथ बटा सकें। अदालतें कायम कर दी गई हैं। सब लोग बिना संकोच के इन अदालतों में अपनी फरियाद पेश कर सकते हैं। न्याय किया जावेगा। किसी के साथ रियायत न की जावेगी। अपराधियों को दण्ड दिये जावेंगे। वे कठोर होते हुये भी अमानुषिक नहीं होंगे—किसी का भी हाथ-पैर नहीं कटवाया जा सकेगा, किसी को भी बिच्छुओं से नहीं कटवाया जा सकेगा। आप लोग सुखी हों, हम अंगरेज केवल यही चाहते हैं। आप लोगों में से किसी को कुछ कहना हो, तो कह सकते हैं।'

एलिस बैठ गया। झाँसी के उपस्थित लोग एक दूसरे का मुंह ताकने लगे।

एक साहूकार मगन गन्धी बोला, 'हुज़ूर से हमको केवल एक विनती करनी है। हमारे देश में पहले कभी गाय नहीं काटी गई। मुसलमान बादशाहों ने कभी इस बात को नहीं होने दिया। आपकी अमलदारी होते ही इसका आरम्भ हो गया। इसको बन्द कर देना चाहिये, आप शक्तिशाली हैं।'

एलिस ने बैठे-बैठे ही कहा, 'आपकी बस्ती में तो यह जानवर नहीं काटा जाता—सिर्फ छावनी में खाने वालों के लिये विवश होकर ऐसा किया जाता है।'

मगन गन्धी बैठ गया। उसने अपनी आँख का एक आँसू पोंछा।'

एलिस ने धीरे से गार्डन से कहा, 'ए सैन्टीमैन्टल फूल' (एक भावुक मूर्ख।)

अलीबहादुर ने एलिस और गार्डन की ओर ताका, जैसे कुछ कहना चाहते हों। उन्होंने अनुमति दी।

अलीबहादुर बोले, 'हम लोग परमात्मा को धन्यवाद देते हैं कि महान कम्पनी सरकार का राज्य हो गया है। हमारे हाकिम बहुत नेक हैं! वे शहर और इलाके का बहुत अच्छा, बेमिसाल बन्दोबस्त कर रहे हैं। सब लोग चैन से अपने घर सोते हैं। चोर, उठाईगीरे लापता हो गये हैं। किसी को कोई कष्ट नहीं। अब मदरसे और पाठशालायें खुलेंगी। सारा देश झकाझक हो जावेगा। आप लोगों का व्योपार बढ़ेगा और आप मालामाल हो जावेंगे।

अलीबहादुर बैठ गये।

पीछे की कुर्सी पर बैठा हुआ एक सेठ हँसना चाहता था परन्तु उसकी हँसी मुस्कराहट में परिवर्तित हो गई। एलिस और गार्डन ने देख लिया। गार्डन ने दरबार को समाप्त करने के लिये धीरे से अनुरोध किया। एलिस ने दरबार समाप्त किया।

वह 'पूर्वीय दरबार' इत्रपान की अनुपस्थिति से विशिष्ठ था। सेठ साहूकार कोरे कोरे, फीके घर लौट आये।

सब लोगों के चले जाने पर एलिस ने गार्डन से कहा, 'स्कीन की मार्फत आज की कार्रवाई की सूचना लैफ्टिनेन्ट गवर्नर के पास आगरा भेज देना।'

'अलीबहादुर चतुर और प्रभावशाली आदमी है। इसको हाथ में रखना। ठाकुर मुश्किल में दबेंगे परन्तु उनको दबाना है अवश्य। यदि

इनकी जाति के कुछ लोगों को पुलिस का थानेदार बना सको, तो अच्छा होगा। रानी अगर बुलावे तो चले जाना परन्तु उसको कोई वचन न देना क्योंकि उसके मामले में अब और कुछ नहीं हो सकता। मदरसों के खोलने की जल्दी मत करना। नौकरियाँ देने में हिन्दू-मुसलमानों का लाभकारी समीकरण रखना और यथाशक्ति दोनों को उनके अलग-अलग हक समझाते रहना।'

गार्डन बोला, 'मैं मूर्ख नहीं हूं। मैंने शिक्षा-नीति के सम्बन्ध में जो बात कही थी वह केवल देखने को कि स्कीन कितने गहरे पानी में है।'

एलिस—'स्कीन खुर्राट है रे।'

[३६]

कप्तान गार्डन डिप्टी-कमिनश्र 'बहादुर' का 'बन्दोबस्त' 'बहादुरी' के साथ चला। जागीरें जब्त हुईं, जमींदारियाँ कायम हुईं। मन्दिरों को सेवा पूजा के लिये जो जायदादें लगी थीं वे खत्म हुईं। पुजारियों को, पूजकों को यह बहुत अखरा। अर्जी-पुर्जियाँ कीं। बङ्गलों पर माथे रगड़े—एक न चली। गार्डन की दृढ़ता ने चोर डाकुओं से लेकर पुजारियों तक के होश ठिकाने लगा दिये। हर बात में अर्जी और अर्जीनवीस का दौर-दौरा बढ़ गया। कानून की प्रतिष्ठा के लिए वकीलों को आदर मिला। पहले कोई परीक्षा इस पेशे के लिए जारी नहीं की गई थी। वकालात की सनद डिप्टी-कमिश्नर 'अता' किया करता था—ठीक उसी तरह जैसे जमींदारी या नौकरियाँ 'अता' होती थीं। होशियार लोगों ने झटपट अङ्गरेजी कानून, अदब, ढङ्ग सीखा और आगे चलकर बिना उसके अदालत का पत्ता भी न हिला। इस वर्ग ने उस युग में सब प्रकार की निष्ठाओं के ऊपर कानून की निष्ठा को बिठलाने में जाने-अनजाने सहायता की। केवल यह एक ऐसा अङ्गरेजी संस्कार है जिसके प्रति हिन्दुस्थानियों की आत्मागत भावनाओं में श्रद्धा होनी चाहिये थी, परन्तु जिस प्रेरणा और जिस वातावरण में होकर और जिन उपकरणों के साथ न्याय का यह साधन आया था, वे सब हिन्दुस्थानियों को कतई अच्छे नहीं लगे। और इसलिये कानून भी अखरा।

परोपकार की वृत्ति से प्रेरित होकर अङ्गरेजों ने कानून की प्राण-प्रतिष्ठा हिन्दुस्थान के न्याय मन्दिर में की हो सो बात नहीं थी।

देश में पूर्ण शांति हो, अंग्रेजों का अधिकार सदा-सर्वदा इस देश में बना रहे और अंग्रेजी व्यापार, व्यवसाय निर्बाध चलते रहें, बस इसी वृत्ति से प्रेरित होकर कानून बनाये गये और चलाये गये। गवर्नर जनरल से लेकर पटवारी और चौकीदार तक कायदा-कानून में बँधकर अपना-अपना काम करते चले जायें, अनुशासन में शिथिलता न आने

पावे। तभी तो अङ्गरेजी राज्य निर्विघ्न चल सकता था। उन लोगों ने हिन्दू नरेशों और मुसलमान बादशाहों के उत्थान-पतन के इतिहास पढ़े-गुने थे, इसलिये वे अपने शासन को उन सब गड्ढों से बचाना चाहते थे, जिनमें नरेशों और बादशाहों के सूबेदार और अन्य कर्मचारी मौका पाते ही उसको ढकेल दिया करते थे।

समय समय पर गार्डन शहर के बड़े आदमियों को मुलाकात के आकर्षण देता रहा। चिरौरी करना तो वे जानते ही थे, इसको भी करते थे; परन्तु जब वे इसके सामने झुकते थे उनकी रीढ़ में दर्द हो उठता था और माथे पर बल पड़ जाते थे। घर आकर लाभ हानि को आँकने के साथ वे साहब की हेकड़ी पर जलते थे और अपनी चिरौरी पर हँसते थे।

रानी को भी समाचार दे आते थे। वे चुपचाप सुन लेती थीं और उनके बाल-बच्चों के समाचार विस्तृत ब्योरे के साथ पूछ लेती थीं। अन्य कोई बात न कहने का उन्होंने अपने मन पर बन्वेज कर रक्खा था।

शहर वाले महल के ठीक सामने राजकीय पुस्तकालय था। वह उन्हीं के हाथ में था। पुस्तकालय के पीछे एक ढाल था और ढाल के नीचे उनका सुन्दर बड़ा बाग।* इस बाग में वह घुड़सवारी इत्यादि व्यायाम किया करती थीं। नगर की जो स्त्रियाँ उनके पास आती थीं, उनको वह बड़ी निष्ठा के साथ इसी बाग में कसरतें सिखलाती थीं। अब तो सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई इतना सीख गई थीं कि दूसरों को सिखाने में रानी को इनसे बड़ी सहायता मिलने लगी। फिर भी रानी सोचती थीं कि अश्वारोहण और शस्त्र-चालन में मैं सर्वश्रेष्ठ नहीं हुई हूँ।

पुरानी लड़ाइयों के नक्शे उनके महल में थे। वे उनका बारीकी के साथ अध्ययन करती थीं। बनावटी लड़ाइयों के नक्शे कागज पर बनातीं और बिगाड़तीं। अपनी सहेलियों के साथ भिन्न-भिन्न प्रकार की अनेक युद्ध-परिस्थितियों पर वाद-विवाद करतीं। उनको पहाड़ियों पर अश्वारोहण

---

*यह बाग अब हार्डीगञ्ज हो गया है।

का शौक हुआ। झाँसी के आस-पास पहाड़ियाँ हैं ही, उस समय जङ्गल और विषम स्थल भी थे। रानी तेजी के साथ सहेलियों सहित इन पर अश्वारोहण करतीं। झाँसी के आस-पास की भूमि का उनको राई-रत्ती परिचय प्राप्त हो गया। इस भौगोलिक परिचय के क्षेत्र को वे निरन्तर, अनवरत बढ़ाती रहती थीं। जो स्त्री-पुरुष उनके पास भेंट के लिये आते उन सबसे कहतीं—

'शरीर को इतना कमाओ कि फौलाद हो जावे, तभी मन दृढ़ता पूर्वक भगवान की ओर जायगा।'

उनका कसरतों का शौक शीघ्र विख्यात हो गया। अमीर खाँ, वजीर खाँ दो नामी उस्ताद उनको मिले। बाला गुरू भी बिठूर से आये और मल्लविद्या के सूक्ष्मतम दाँव-पेच बतला कर चले गये। नरसिंहराव टौरिया के नीचे दक्षिणियों के मुहल्ले में, वे एक अखाड़ा जारी कर गये। रानी कुश्ती का अभ्यास अपनी सहेलियों के साथ करती थीं। तीर, बन्दूक, छुरी, बिछुआ, रैकला इत्यादि चलाने में पहले दर्जे की श्रेष्ठता, उन्होंने अमीरखाँ वजीरखाँ के निर्देशन से प्राप्त की—ऐसी और इतनी कि उनकी कुशाग्रबुद्धि, शक्ति और हस्त-कुशलता पर वे दोनों नामी उस्ताद विस्मय में डूब जाते थे। वे जानते कि रानी उदण्ड प्रकृति की हैं, इसलिये कभी-कभी लगता था कि हथियार चलाने या परीक्षा के लिये, ललकार न बैठें। यह उनका भ्रम था। रानी का वाह्य रूप प्रचण्ड तेज पूर्ण था, परन्तु अन्तर बहुत कोमल और उदार।

इस प्रकार महीनों पर महीने बीत गये।

एक दिन तात्या टोपे आया। रानी की सेना बहुत दिन पहले समाप्त कर दी गई थी, परन्तु सैनिक और उनके नायक, अपने कौशल को न भूले थे। और न उसका स्वभिमान गारत हुआ था।

मुहम्मद जमांखाँ अपने को कर्नल अब भी कहता था, अठवारे पखवारे रानी को वह प्रणाम कर आया करता था। उसी की हवेली के एक भाग में तात्या पूर्ववत ठहरा। रात के आठ बजे के बाद तात्या रानी के पास

पहुँचा। वे तीनों सहेलियाँ उनके साथ थीं। अबकी बार तात्या ने जो रानी को देखा, तो बहुत सतेज पाया।

कुशल वार्ता के बाद बातचीत हुई।

'अबकी बार राजस्थान, पञ्जाब इत्यादि भी घूमे?' रानी ने पूछा।

तात्या ने उत्तर दिया, 'अबकी बार बहुत घूमा हूं और एकाध जगह तो पकड़े जाने की ही नौबत आ गई।'

वे सब सतर्क होकर सुनने लगीं।

तात्या कहता गया, 'मैं अपना हाल राजपूताने से आरम्भ करता हूं। बड़े बड़े राज्य जैसे जयपूर, जोधपूर, बीकानेर इत्यादि किसी विशेष पक्ष में नहीं है। तटस्थ से हैं परन्तु हम सब कहते हैं कि झाँसी के साथ अंग्रेजों ने बेईमानी की। हम लोगों के प्रति उनका भाव उदासीन है। इसके लिये हमारा, उनका दोनों में से किसी का भी दोष नहीं है। हम लोग एकछत्र स्वराज्य स्थापित करना चाहते थे और वे लोग अपनी अपनी अलग स्वतन्त्रता की धुन में थे। राजपूताने में एकाध ठिकाना ऐसा भी है जो महाराष्ट्र नाम से ही अप्रसन्न है, परन्तु हिन्दुस्थान की स्वाधीनता के लिये उपयुक्त अवसर आने पर सर्वस्व होमने के लिये तैयार हैं। लेकिन वहाँ के अधिकांश राजा अपने को, अंगरेजों की सहायता के कारण ही, निरापद समझते हैं, इसलिये न अपने जागीरदारों की परवाह करते हैं, और न प्रजा की। जैसा ढर्रा चला आया है, मजे में उसको चालू रखने के पक्षपाती हैं। अच्छे नेतृत्व की हीनता में जनता जीवन के साधारण उद्देश्यों में ही लिप्त है। ऐसी अवस्था में वहाँ से कोई आशा नहीं करना चाहिये। परन्तु यह विश्वास है कि वहां की सेना अपनी सेना का साथ देगी। पञ्जाब का हाल कम आशाजनक है। रणजीतसिंह का पञ्जाब, अंगरेजी इलाके और पांच रियासतों में विभक्त हो गया है। इन रियासतों के राजा, हाथ आई रोटी को किसी प्रकार भी फेकने को तैयार नहीं। जनता नेता-विहीन है, इसलिये विवश-सी है। दिल्ली का बादशाह बहादुरशाह वृद्ध है। परन्तु उसकी बेगम तेजस्वी है। मुसलमान लोग

बादशाह के नाम पर बलिदान होने को तैयार हो सकते। मैं कई प्रभावशाली मुसलमानों से मिला; वे कहते हैं कि हिन्दुस्थान में फिर बादशाहत कायम करो। मैंने कहा, 'स्वराज्य' और बादशाहत का सामंजज्य हो सकता है। जब उन्होंने पूछा कैसे होगा तब मैंने उसको बतलाया कि अपने-अपने प्रांतों और प्रदेशों में सब लोग स्वराज्य नियुक्त करेंगे बादशाहत को उनमें दखल देने का अधिकार तो रहेगा परन्तु अन्तरप्रांतीय बड़े कार्यों से सम्बन्ध रखने वाले हुकुमों पर मुहर बादशाह के नाम की रहेगी। सिर्फ दिल्ली के आसपास का प्रदेश बादशाह का खालसा रहेगा। बाहर के शत्रुओं से सब प्रान्त और प्रदेश सम्मिलित होकर स्वराज्य और बादशाह के नाम पर लड़ेंगे और इस तरह मिलकर हिदुस्थान का शासन चलावेंगे। पर हर हालत में पहले सब मिलकर इस बला को इस देश से टालें। बहुत लोग इस योजना से सहमत हुये, क्योंकि इस समय यही व्यवहारिक जान पड़ती है; परन्तु यहीं पर मैं पकड़े जाने से बाल-बाल बच गया। एक नायब डिप्टी कमिश्नर ने, जो हिन्दुस्थानी था, कैद कर लिया परन्तु सिपाहियों की आँख मिचौनी में से भाग निकला। इसके बाद मैं दक्षिण गया।'

रानी ने कहा, 'तात्या तुम बहुत चतुर हो। अपनी वार्ता सुनाते जाओ। मैं ध्यान दिये हूँ।'

तात्या मुस्कराकर बोला, 'मराठा रियासतों के राजाओं का जो हाल पहले देखा था, वही अब भी है केवल एक अन्तर है। जनता सजग है और सिपाही स्वाभिमानी हैं। महाराष्ट्र की जनता अब भी स्वराज्य-मत्त है दरिद्र और धनाढ्य, किसान, मजदूर और जागीरदार लगभग सब एक संकेत पर खड़े हो सकते हैं।'

'और एक बार फिर', रानी ने सहसा कहा, 'वे पर्वतमालायें और मैदान, वे घाटियां और उपत्यकायें 'हर हर महादेव' से गूंज उठेंगी, काँप उठेंगी।'

रानी का सतेज-मुख और भी तेजमय हो गया। परन्तु वे तुरन्त मुस्कराकर उठीं।

बोलीं, 'तात्या, मुझको तुम्हारे सामने तक नियंत्रण के साथ बोलना चाहिये। कभी कभी वाक्यसंयम की कमी के कारण अपने ऊपर खीझ उठती हूं।'

तात्या ने दृढ़ स्वर में कहा, 'बाईसाहब, मेरे हृदय में, इनके हृदय में और सब जनता के हृदय में, जो बात गड़ी हुई है, वही आपके मुंह से निकल पड़ी।'

रानी बोलीं, 'अभी उसका समय नहीं आया। समय पर ही निकलनी चाहिये। तुम आगे की वार्ता कहो।'

तात्या ने कहा, 'मैं हैदराबाद गया। नवाब, अन्य रईसों की तरह अङ्गरेजों के आतंक से दबा हुआ है। सेना जिस ओर पाँसा पड़े उस ओर जायगी। जनता हमारे साथ होगी। मैं मैसूर और तंजोर भी गया था। यही हाल वहाँ का भी है।'

रानी के होठों पर वही मुस्कान आई, जिसके मृदुल मधुर आवरण में फौलादी आदर्श निहित थे।

बोलीं, 'तात्या, अभी कुछ विलम्ब और है। तब तक महत्वपूर्ण स्थानों के भूगोल का बारीकी के साथ अध्ययन करलो। कहाँ किस प्रकार सेनाओं को ले जाना पड़ेगा, कहाँ आसानी के साथ युद्ध किया जा सकता है और अपने अभीष्ट स्थान पर किस प्रकार शत्रु को एकत्र करके लड़ाई के लिये विवश किया जा सकता है। इन विषयों पर काफी समय और परिश्रम खर्च करने की आवश्यकता है। इसके सिवाय बारबरदारी के जानवरों और अच्छे घोड़ों की इकट्ठा करने की योजना पर विचार करते रहने को भी मन में बहुत स्थान मिलना चाहिये। तोपें, बन्दूकें, बारूद, गोला, गोली इत्यादि युद्ध-सामग्री के बनाने वाले कारीगरों को भी, हाथ में ले लो। अङ्गरेजी कारखानों में अपने आदमी नौकर रखवाओ।

वे लगन के साथ सब क्रियायें सीखें। अपनी पुरानी बारगी–युद्ध परिपाटी* को तो गाँठ ही में बाँध लो। हमारा देश उस परिपाटी को छोड़कर अङ्गरेजों से लड़ा, इसलिये भी हारा।'

तात्या—मैंने नाना साहब और रावसाहब के प्रोत्साहन और आज्ञा से इन सब बातों का ध्यान रक्खा है और आपकी भी आज्ञा मिली। पूरा ब्यान दूँगा। मैं इतने महीनों पैदल अधिक फिरा हूँ इसलिये मुझको देश का भूगोल बहुत अच्छी तरह याद हो गया है। किसी न किसी तरह बहुत से आदमी, सामान और जानवर लेकर कहीं का कहीं पहुँच सकता हूँ।'

रानी—'लड़ाइयों के नकशों का अध्ययन किया ?'

तात्या—'अच्छी तरह। पंजाब में जो लड़ाइयाँ अङ्गरेजों से सिक्ख लड़े हैं उनका भी मैंने अध्ययन किया। व्यर्थ ही सिक्खों ने इतनी वीरता खर्च की। इतनी युद्ध-सामग्री, ऐसी अच्छी सीखी-सिखाई फौज यदि अच्छे नायकों के हाथ में होती तो अङ्गरेज सिक्खों को कभी न हरा पाते। परन्तु कदाचित उनकी हार देश-द्रोहियों के कारण हुई है।'

तात्या—'निस्सन्देह यही कहते हैं।'

रानी—'पंजाब में स्त्रियों को कुछ स्वाधीनता है ?'

तात्या—'हिन्दू और सिक्ख स्त्रियों को।'

रानी—'तब पंजाब किसी दिन फिर खड़ा होगा।

तात्या—'परन्तु मुसलमान स्त्रियों में कम है।'

रानी—'यह खेद की बात है, किन्तु वे भी किसी दिन अपनी बहिनों के प्रभाव में आवेंगी।'

तात्या—'मैं पंजाब को भी अपनी योजना में ले रहा हूं। जिस समय इस ओर की बाढ़ पंजाब से चोट करावेगी, उस समय पंजाब भी नीचे पड़ा न रह सकेगा।'

---

*Guirella warfare.

रानी—'मैं सिक्खों की लड़ाइयों के नक्शों का अध्ययन करना चाहती हूँ ।'

तात्या ने कागजों पर मानचित्र बनाकर समझाया । रानी ने और उनकी सहेलियों ने भी समझा ।

तात्या ने अनुरोध किया 'हमको अपने एक विश्वसनीय जासूसी विभाग की बड़ी आवश्यकता है ।'

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'मैंने स्थापना कर दी है ।'

तात्या ने उत्सुक होकर पूछा, 'कैसे ? कहाँ ?'

रानी ने उत्तर दिया, 'यहीं । मेरी ये तीनों सहेलियाँ काम सीख रही हैं और कर रही हैं । मैं और स्त्रियों को भी तैयार कर रही हूं, परन्तु काम सावधानी का है, इसलिये धीरे-धीरे कर रही हूँ ।'

तात्या प्रसन्न हुआ ।

बोला, 'झाँसी में एक विलक्षण बात देखी । जो यहां निवास करता है वह तो आपका भक्त है ही, किन्तु यहाँ का निवासी जो बाहर चला गया है, वह भी झाँसी के लिये अपना तन-मन बलिदान करने के लिये प्रस्तुत है ।'

रानी बोलीं, 'मुझको इसीलिये झाँसी का बहुत अभिमान है ।'

तात्या ने कहा, 'बाईसाहब, जब मैं ग्वालियर राज्य का हाल लेता हुआ हाल में दक्षिण की ओर गया, तब वहाँ बाजार में एक फटियल ब्राह्मण मिला । उसने मुझको पहिचान लिया । मैंने भी उसको चीन्ह लिया । वह झाँसी का रहने वाला नारायण शास्त्री निकला । उसको स्वर्गीय सरकार ने, एक अपराध में देश-निकाले की सजा दी थी ··'

रानी बोलीं, 'मैंने उस अपराध के विषय में सुना है ।'

तात्या ने कहा, 'नारायण शास्त्री आश्वासन देता था कि जो कुछ भी कार्य भार उसको दिया जायेगा, वह प्राणपण से करेगा ।'

रानी ने पूछा, 'वह जिस स्त्री को लेकर यहाँ से गया था, क्या उसको त्याग दिया ?'

तात्या ने उत्तर दिया, 'नहीं बाईसाहब। उसने मुझसे स्पष्ट कहा।'

रानी—'समाज ने उसको कैसे ग्रहण किया होगा ?'

तात्या—'वह समाज से बाहर है। मूँछ मुड़ाये, वैरागी वेश में रहता है। साथ में स्त्री रहती है।'

रानी—'उसको क्या काम दिया ?'

तात्या—'सेना के साथ सम्पर्क रखने का काम। नारायण शास्त्री ज्योतिष जानता है और कवितायें गाता है। उनके प्रयोग से वह सेना के सम्पर्क में रहेगा।'

रानी—'सेना के साथ घनिष्ठ सम्पर्क उत्पन्न करने को बहुत महत्व देना होगा।'

तात्या—'दे रहा हूं।'

रानी—'तुमको, जान पड़ता है, अकेले ही बहुत काम करना पड़ता है।'

तात्या—'नहीं बाईसाहब, नानासाहब रावसाहब इत्यादि बहुत लोग काम में जुटे हुए हैं। दिल्ली और मेरठ इत्यादि प्रदेशों के अनेक मुसलमान भी प्राणों की होड़ लगाकर निरत हैं।'

रानी—'मुझको ऐसा लगता है कि शीघ्र ही कुछ हो बैठे परन्तु मैं सोचती हूँ कि अधकचरी तैयारी में कुछ भी न किया जाना चाहिये। बहुत दिन हुये, मद्रास की ओर कुछ सिपाहियों ने अचानक उपद्रव कर डाला था वह व्यर्थ गया। फल यह हुआ कि मद्रासी अब सेना में कम भर्ती किये जाते हैं। और अङ्गरेजों ने अपनी सावधानी को कसकर बढ़ा लिया है।'

तात्या—'कैसी भी सावधानी, कुटिलता और बुद्धि से अङ्गरेज लोग काम लें, हमारी विशाल, असंख्य जनता, उनका राज्य नहीं चाहती। इसलिये राजाओं और नबावों का साथ न पाते हुये भी, हमको अपने उत्साह में कमी प्रतीत नहीं होती।'

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'मैं जानती हूं।'

तात्या बोला, 'बाईसाहब, अब आपके शयन का समय आने को है—भोजन तो अभी हुआ ही नहीं है। जाता हूं। यहाँ एकाध दिन रह कर चला जाऊँगा। शीघ्र ही फिर सेवा में उपस्थित होऊँगा अर्थात जैसे ही कोई महत्व की बात सामने आई मैं आऊँगा।'

रानी—'भोजन अब मैं नहीं करूँगी। केवल दूध पियूंगी नहीं तो कल के कार्यक्रम का व्यतिक्रम हो जावेगा। तुम दीवान रघुनाथसिंह और दीवान जवाहरसिंह से मिले हो?'

तात्या—'पिछली बार आया, तब मिला था। अबकी बार नहीं मिल पाया हूँ।'

रानी—'उनसे मिलना। रघुनाथसिंह नईबस्ती में गनपत खिड़की बाहर रहते हैं और जवाहरसिंह कटीली गाँव में होंगे।'

तात्या—'मैं इनसे मिलूंगा।'

तात्या चला गया।

[३७]

रानी के पास आठ बजे के लगभग तात्या, रघुनाथसिंह और जवाहरसिंह आये। रघुनाथसिंह पुष्ट देह का बड़ा बलशाली पुरुष था। जवाहरसिंह जरा छरेरे शरीर का परन्तु काफी बलवान।

प्रणाम करके तीनों बैठ गये।

रानी ने पूछा, 'दीवान जवाहरसिंह को क्या कटीली से ले आये तात्या?'

हाथ जोड़कर जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'दीवान रघुनाथसिंह को एक साँडिनी सावर लिवा लाया। उसने प्रातःकाल के बहुत पहले ही सोते से जगाया था।'

तात्या ने कहा, 'मैं स्वयं नहीं गया, दीवान साहब से प्रार्थना की और इन्होंने तुरन्त रात को ही, साँड़िनी सवार भेज दिया। घुड़सवार जाता तो दीवान साहब को भी घोड़े पर आना पड़ता। शायद कोई सन्देह करता, इसलिये ऊँट भेजा।'

जवाहरसिंह बोला, 'श्रीमन्त सरकार, मुझे किसी का भी डर नहीं है। उस दिन के लिये तरस रहा हूं, जब झाँसी और अपने स्वामी के लिये अपना शरीर त्याग दूं।'

रघुनाथसिंह झूमने लगा।

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'आप ही लोगों का बल भरोसा है। एक दिन आवेगा जब आप लोगों के जौहर का उपयोग होगा। तात्या ने कुछ बतलाया होगा?'

रघुनाथसिंह—'बतलाया है सरकार। थोड़े में समझ लिया। हम लोगों को ज्यादा सुनने समझने की दरकार ही नहीं है। अपनी माता के दर्शन करने थे, इसलिये चले आये।'

जवाहरसिंह—'हम लोगों को सरकार के हाथों अपनी तलवार पर गङ्गाजल छिटकवाना है।'

रघुनाथसिंह—'और अपनी माता का आशीर्वाद प्राप्त करना है।'

रानी मुस्कराईं। बोलीं, 'आप लोगों को मैं अच्छी तरह जानती हूँ। आप लोग सहज ही प्राणों की होड़ लगा सकते हैं। परन्तु मैं चाहती हूँ कि प्राणों को सहज ही न खोया जाय। अवसर आने पर ही तलवार म्यान से बाहर निकले। छोटी छोटी बात पर न खिच जावे।'

तात्या—'इन लोगों को लाट की आज्ञा पर बहुत क्षोभ हुआ। और ये तुरन्त कुछ जवाब देना चाहते थे।'

रानी—'अङ्गरेजों के अन्याय बढ़ते जावें तो अच्छा ही है। फिर भगवान हमारी जल्दी सुनेंगे। असल में अभी इन छोटी बातों पर खीझ कसर का निकालना, अच्छा नहीं है।'

उन दोनों ठाकुरों ने स्वीकार किया।

फिर उन दोनों ने अपनी चमचमाती हुई तलवारें, रानी के पैरों के पास रखदीं और हाथ जोड़कर खड़े हो गये।

रानी ने मुन्दर से कहा, 'गङ्गाजल ला।'

मुन्दर गङ्गाजल ले आई। रानी ने पहले जवाहरसिंह की तलवार पर छींटे दिये और फिर रघुनाथसिंह की तलवार पर।

उन दोनों ने रानी के चरण स्पर्श करके तलवारें म्यान में डाल लीं। रानी पुलकित हुईं।

एक क्षण में अपने को संयत करके बोली, 'गङ्गाजल की पवित्रता को निभाना। आपस की कलह में इसका प्रयोग मत करना और न किसी कलुषित काम में।'

उन दोनों ने मस्तक नवाये।

रघुनाथसिंह ने कहा, 'सरकार अब आशीर्वाद मिलना चाहिये।'

रानी का गला भर आने को हुआ। उन्होंने नियंत्रण कर लिया।

बोली, 'तुम्हारे हाथों स्वराज के आदर्श का पालन हो। सुखी रहो और अपने पीछे ऐसा नाम छोड़ जाओ कि आने वाली अनन्त पीढ़ियाँ तुम्हारे स्मरण से अपने को शुद्ध करती रहें।'

जवाहरसिंह ने कहा, 'माता यह आशीर्वाद और वह पवित्र गंगाजल सदा हमारे साथ रहेगा।'

रघुनाथसिंह बोला, 'माँ, आज न जाने क्यों ऐसा भास रहा है मानो हम लोग अनेक युद्धों पर विजय प्राप्त कर चुके हों।'

रानी ने कहा, 'मुझको सन्देह नहीं है, युद्धों पर विजय प्राप्त करोगे।'

रघुनाथसिंह जरा मचलते हुये बोला, 'माता हमको आशीर्वाद तो मिल गया, अब प्रसाद और मिलना चाहिये।'

रानी ने तुरन्त मुन्दर से कहा, 'लड्डू ला मुन्दर। मैंने अपने हाथों आज ही बनाये हैं।'

मुन्दर थाल भर लड्डू ले आई।

'नहीं सरकार, इतने नहीं', जवाहरसिंह हँसकर बोला, 'हम लोग भोजन कर आये हैं।'

रानी उठीं। दोनों हाथों में एक एक लड्डू लिया।

'अपने हाथ के बनाये लड्डू अपने ही हाथों खिलाऊँगी। तात्या तुम भी खाओ।' रानी ने कहा।

उन लोगों ने मुंह खोले। रानी ने आग्रह के साथ खिलाया। बचे हुये लड्डू उन तीनों सहेलियों को खिला दिये।

हाथ-मुंह धोकर वे सब बैठ गये।

रानी ने कहा, 'आप लोग अभी केवल इतना करें—नातेदारियों में अपना मेल बढ़ायें और उनको अपनावें। सबके काम में पड़ें और छोटी से छोटी जाति के पुरुष या स्त्री को, गरीब से गरीब, मजदूर या किसान को, कदापि छोटा न समझें। सब जातियों और सब वर्गों को, बिना अपना उद्देश्य बतलाये, हथियार चलाना सिखलायें। इस काम के लिये काफी अवसर मिल सकते हैं, जैसे शिकार, उतसव, ब्याह-बारात इत्यादि।'

जवाहरसिंह ने कहा, 'बहुत अच्छा।'

रघुनाथसिंह ने कहा, 'ऐसा ही होगा।'

तात्या बोला, 'मैंने इनसे कहा है कि ऐसी कोशिश करो कि कोई नातेदार डाका न डाले। ये कहते हैं कि बड़ी मुश्किल पड़ेगी। मैंने कहा कि डाके डालने ही हैं तो खजानों पर डालो और थाने लूटो।'

रानी ने निवारण करते हुये कहा, 'नहीं तात्या, यह उचित नहीं है। अनाचार और अत्याचार को प्रोत्साहन एक बार मिला, कि वह बार-बार सिर उठाता है। जब स्वराज्य का युद्ध शुरू होगा तब खजाने और थाने सब अपने अधिकार में किये जावेंगे। अभी नहीं।'

जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह ने हामी भरी।

तात्या बोला, 'अभी तो गार्डन अपना प्रबन्ध पक्का किये जा रहा है। समझता होगा कि जनता को अपनाते चले जा रहे हैं।'

रानी ने कहा, 'जनता मूर्ख नहीं है।'

तात्या, दीवान जवाहरसिंह और दीवान रघुनाथसिंह प्रणाम करके चले गये।

रानी ने अपनी सहेलियों से पूछा, 'बतलाओ, इन दोनों में से, झाँसी की स्वराज्य-सेना का प्रधान सेनानायक बनाने योग्य कौन है?'

मुन्दर—'दीवान रघुनाथसिंह।'

सुन्दर—'मैं भी ऐसा ही सोचती हूँ।'

काशीबाई—'जवाहरसिंह।'

फिर वे तीनों रानी का मुँह ताकने लगीं।

मुन्दर बोली, 'हम दोनों की बात सही निकलेगी।'

सुन्दर ने कहा, 'बाईसाहब देखें क्या कहती हैं।'

काशीबाई हँसकर बोली, 'वे अभी बतला देवेंगी।'

रानी ने कहा, 'समय बतलावेगा।'

[३८]

ब्रिटिश सरकार के शासन की गति-विधि में अफसरों का जिले भर में दौरा करने, प्रत्येक दफ्तर के काम को बारीकी के साथ देखने-भालने, थानों, तहसीलों और जेलखानों का निरीक्षण करने का महत्वपूर्ण स्थान था। ग्राम्य पञ्चायतों का स्थान अङ्गरेजी अदालतें दौरे के साधन द्वारा आसानी के साथ ले सकती थीं। इसके सिवाय दौरे का जीवन शिकार देता था, नवीन नवीन प्राकृतिक दृश्यों के दर्शन कराता था और सम्पूर्ण देहात को इन लोगों के सम्पर्क में लाता था। शासन की जड़ें मजबूत बनती थीं।

गार्डन दौरा करता हुआ मऊ गया। निरीक्षण के लिये थाने पर पहुँचा। नायब थानेदार आनन्दराय रियासती पगड़ी बाँधे, लम्बी दाढ़ी, बीच में से कंघी करे, कानों पर चढ़ाये इन्सपेक्टर और थानेदार सहित स्वागत के लिये आगे बढ़ा। आनन्दराय की वह दाढ़ी गार्डन को खटक गई। उसी समय अपनी आलोचना और आज्ञा प्रकट करना चाहता था, परन्तु ठहर गया।

निरीक्षण करने के बाद उसने आनन्दराय को बुलाया। बोला, 'तुम डाकुओं की सी दाढ़ी क्यों रक्खे हो?'

आनन्दराय कोई उत्तर नहीं दे सका।

गार्डन ने कहा, 'इस थाने का तेरा कोई अफसर इस तरह की दाढ़ी नहीं रचाता। क्या अपने को इनसे बड़ा समझता है?'

आनन्दराय का कलेजा जल उठा, परन्तु मुंह से निकला, 'नहीं तो।'

'बातचीत करने का भी तमीज नहीं', गार्डन ने कहा।

आनन्दराय ने सिर नीचा कर लिया।

गार्डन ने हुक्म दिया, 'दाढ़ी रखनी ही है, तो सीधी रख। कानों पर कभी मत चढ़ा। जा सीधी करके आ।'

आनन्दराय गया और दाढ़ी को कानों पर से उतार कर सीधी करके आ गया। चेहरा बिलकुल पीला पड़ गया।

गार्डन के चेहरे पर सन्तोष की मुस्कराहट आ गई। बोला, 'अब ठीक है। जाओ।'

उसी समय झाँसी से एक हरकारा कमिश्नर स्कीन की चिट्ठी लेकर आया। स्कीन ने उसको समाचार दिया था कि सागरसिंह नामक डाकू पकड़ा गया है, जेल में बन्द है। जेल का निरीक्षण करना चाहता हूं। एक दिन के लिये जल्दी आ जाओ।

गार्डन ने घोड़ा गाड़ी से झाँसी की ओर कूच कर दिया। मार्ग में घोड़े बदलता हुआ दूसरे दिन झाँसी पहुंच गया।

उसके दूसरे दिन जेल का मुआइना किया। स्कीन और गार्डन साथ थे। बख्शिशअली जेल का दरोगा था बड़े विनम्र भाव से सलामें झुकाता हुआ, उन दोनों के सामने आया। दोनों प्रसन्न हुये। उनको इस प्रकार का शाही अदब कायदा पसन्द था।

जेल के भीतर जाकर सागरसिंह को देखा। तगड़ा फुर्तीला आदमी था। आंख तीक्ष्ण और चमकदार, दाढ़ी कानों तक चढ़ी हुई; हथकड़ी बेड़ी से जकड़ा हुआ।

स्कीन ने पूछा, 'क्या नाम है?'

'क्या आपको मालूम नहीं है?'

'तुम्हारे मुंह से सुनना चाहता हूं।'

'कुंवर सागरसिंह।'

'कहाँ के रहने वाले हो?'

'रावली के—बरुआसागर से कुछ दूर।'

'तुमने यह पेशा क्यों अपनाया?'

'क्योंकि इससे बढ़िया कुछ और मिला नहीं।'

'हमारी फौज में नौकरी क्यों नहीं की? अच्छा वेतन मिलता।'

'हमारे घराने में अफसरी होती आई है। हम कोरी सिपाहीगीरी कैसे करते?'

'तुम धीरे-धीरे नायक, हवलदार और फिर सूबेदार तक हो सकते थे।'

'हमारे पुरखों की मातहती में पांच पांच हजार सिपाहियों ने काम किया है। सेनापतियों के घराने के होकर हवलदारी, सूबेदारी करेंगे ?'

'ओ: जनरल बनना चाहता था ?'

'क्यों, जन्डैल बनना कोई बड़ी बात है ?'

'डाकू से जनरल ! हिन्दुस्थान में सब अजीब ही अजीब होता है। जनरल से डाकू हो जाता है तब डाकू से जनरली की तरक्की मामूली बात है। तुमको मालूम है सागरसिंह......'

'कुँवर कहिये—मुझको अकेले नाम से कोई नहीं पुकारता।'

'अच्छा कुंवर सागरसिंह, तुमको मालूम है कि इसी जेलखाने में फाँसीघर है और मुझको फाँसी देने का अधिकार है। और तुम्हारे जो कारनामे सुने गये हैं, वे साबित भी होंगे और साबित होने पर तुमको फाँसी की सजा दी जावेगी। मैं कल-परसों में तुम्हारा मुकद्दमा करके उसी दिन फाँसी दे दूंगा।'

'मुझे अकेले कुंवर सागरसिंह को !'

'तुम्हारे साथ और कौन कौन हैं ?'

'बहुत से हैं ?'

'नाम बतलाओगे ?'

'क्यों बतलाऊँ ? क्या पड़ी है ? मुझको कोई फायदा हो, तो नाम बतला दूंगा।'

'फायदा होगा। यदि सच सच कहोगे, तो सरकारी गवाह बना लिये जाओगे और छोड़ दिये जाओगे।'

'बतलाऊँगा परन्तु इन हथकड़ियों और बेड़ियों के बोझ के मारे और भूखों-प्यासों अकल बिगड़ गई। आज जरा आराम मिल जाय तो कल अवश्य बतला दूंगा, पर अपने वचन पर पक्के रहना।'

'हाँ।'

स्कीन ने जेल-दरोगा से सागरसिंह का बोझ हलका करने की आज्ञा दी और अच्छे भोज़न की व्यवस्था के लिये भी कह दिया।

बख्शिशअली ने उस का यह अर्थ समझा कि कैदी के साथ पूरी रियायत की जावे।

स्कीन और गार्डन उधर गये और इधर बख्शिशअली ने कुँवर सागरसिंह की हथकड़ी-बेड़ी खोल दी। केवल साधारण पहरा रहने दिया।

सागरसिंह ने कहा, 'दरोगा साहब, बहुत भूख लगी है। किसी ब्राह्मण के हाथ अच्छा खाना पकवा दीजिये।'

बख्शिशअली बोला, 'कुँवर साहब, मैं तो पूड़ी-मिठाई से आपका थाल भर देता परन्तु इन अफसरों के मारे मजबूर हूँ। अब लीजिये, कोई दिक्कत नहीं रही, हुकुम हो गया है।'

अच्छा खाना बनवाया गया। आदर के साथ परोसा गया। पहरेदारों के मन पर भी कुँवर साहब का आतङ्क छा गया।

शाम हुई। रात हुई। पहरे वाले जागते जागते, सो गये। बख्शिशअली को दिन भर के परिश्रम के मारे थकावट आई। वह भी चैन में सो गया।

कुँवर सागरसिंह को सुअवसर प्राप्त हुआ। चन्दवरदाई का दोहा याद आया—'फेर न जननी जन्म है, फेर न खेंच कमान' और चुपचाप दीवार लांघकर नौ दो-ग्यारह हुआ और सबेरा होते होते एसे जङ्गल में पहुंच गया, जहाँ उसके विश्वास के अनुसार, स्कीन और गार्डन के फरिश्ते भी नहीं पहुँच सकते थे।

प्रातःकाल जेल भर में गड़बड़ी फैल गई। बख्शिशअली का होश काफूर हो गया। कभी जेल हड़बड़ाकर पहुंचता और कभी घर में बीबी बच्चों के पास आकर सिर पीटता।

स्कीन और गार्डन के पास भी खबर पहुंची। वे दोनों तुरन्त आये। क्रोध में डूबते-उतराते।

बख्शिशअली ने अत्यन्त विनम्र प्रणाम किया। और अत्यन्त कातर स्वर में कहा, 'हुज़ूर हुकुम दे गये थे कि हथकड़ी-बेड़ी खोल दो और

अच्छा खाना दो। मैंने वैसा ही किया। उस पर पहरा रक्खा। फिर भी रात को वह मौका निकालकर भाग गया।'

'वेवकूफ, गधे, नालायक', स्कीन पागल सा होकर बोला, 'हमने यह हुकुम दिया था ?' और तड़ाक से बख्शिशअली को चढ़े जूते की ठोल दी। वह गिर पड़ा। वैसी हालत में भी स्कीन ने उसको कई ठोकरें और लगाईं।

तब कहीं उसका क्रोध शान्त हुआ।

गार्डन ने कहा, 'बख्शिशअली, गनीमत समझो कि तुमको साहब बहादुर ने इतने से ही छोड़ दिया। तुमको हम बरखास्त करना चाहते हैं।' बख्शिशअली, रोने लगा। स्कीन ने इशारा किया। बख्शिशअली ने नहीं देखा।

गार्डन बोला, 'अच्छा तुमको बरखास्त नहीं करता हूँ, मगर उस पहरे वाले को बरखास्त किया जावेगा, जिसके पहरे में से कैदी छूटकर भागा है।'

वह सिपाही बरखास्त कर दिया गया।

बख्शिशअली का अपमान पहरेदारों और कैदियों के सामने हुआ था। मारपीट से ज्यादा वह घोर अपमान उसको खला। सीधा घर गया और बहुत रोया। बीबी-बच्चे भी रोये।

बख्शिशअली ने कहा 'जी चाहता है कि तलवार से तुम सबको कतर कर डाल दूँ और गोली मारकर मैं भी मर जाऊँ। राजा गङ्गाधर-राव ने या रानी लक्ष्मीवाई ने कभी तू-तड़ाक तक नहीं किया। आज इन गोरों ने मेरे बुजुर्गों की इज्जत खाक में मिला दी।'

बीबी ने रो-रोकर समझाया। मुश्किल से अपने अपमान और क्षोभ को पीकर, बख्शिशअली ने वह दिन भूखों काटा।

'कैसे मुंह दिखलाऊँगा ?' वह बार-बार कहता था, 'कहाँ तो मैं आठों फाटकों का कोटपाल था और कहाँ आज यह हालत हुई !' बारबार मन में आत्मघात की, बीबी-बच्चों को मार डालने की प्रतिक्रिया

उठती थी परन्तु उनकी रोती हुई, बेबस सूरतों को देख-देखकर सहम जाता था।

अन्त में आत्मघात का निश्चय उसके मन के किसी कोने में जाकर लीन हो गया। बख्शिशअली फिर यथावत् काम करने लगा।

जब कभी स्कीन या गार्डन जेल-निरीक्षण के लिये आता, बख्शिशअली को ऐसा लगता मानो कोई जल्लाद आया हो।

[३९]

रानी को झाँसी की लगभग सब घटनायें, समय समय पर, विदित होती रहती थीं। स्मरण-शक्ति उनकी, इतनी विशाल थी कि लोगों को आश्चर्य होता था। बख्शिशअली वाली घटना का वर्णन उन्होंने सुना और आनन्दराव वाली का भी यद्यपि दाड़ी वाली घटना जेल-दरोगा की मारपीट वाली घटना के मुकाविले में कुछ नहीं थी, तो भी रानी को उन घटनाओं का मूल तत्व समझने में देर नहीं लगी। जिस स्रोत से गार्डन और स्कीन को प्रेरणा मिली थी वह मूल में एक ही था—हेकड़ी, अवहेलना, उपेक्षा। रानी का प्रशस्त गौर ललाट लाल हो गया। एक आह खींचकर रह गईं।

'पेट के लिये इन लोगों को यह सब सहन करना पड़ रहा है,' रानी ने सोचा।

इस तरह की अनेक घटनायें जब तब होती रहती थीं।

अङ्गरेज शासन को धाक (Bluff) की पुख्ता नीव पर खड़ा करते चले जाते थे। धाक रोब का रूप पकड़ती चली जा रही थी। यही रोब हिन्दुस्थानियों के मन में अङ्गरेजों के 'इकबाल' की सूरत में उत्पन्न होने को था।

परन्तु यह धाक या इकबाल हिन्दू-मुसलमानों के हृदय पर वह अधिकार नहीं कर पा रहे थे जो साधू और फकीरों ने जमाने से कर रक्खा था।

रानी इस प्रकार की सब घटनाओं को ध्यान और विविध भावों से सुनती रहती थीं।

गार्डन भी शहर और अपने किले का हाल लगन के साथ टटोला करता था परन्तु अहंमन्यता और स्वार्थ के कारण वह सही स्थिति नहीं समझ सकता था। और न अधिकाँश अङ्गरेज।

एक दिन गार्डन घोड़े पर सवार शहर की कोतवाली* के निरीक्षण के लिये आ रहा था। एक साधारण हिन्दू गृहस्थ की बारात सामने पड़

*यह अब पुरानी कोतवाली कहलाती है।

गई। दूल्हा घोड़े पर चढ़ा था। यह अङ्गरेजों के नये हिन्दुस्थानी तरीके के खिलाफ था। उसने दूल्हा को घोड़े पर से उतरने की आज्ञा दी। बारात वालों ने प्रतिवाद किया। उसने एक न सुनी। आखें लाल-पीली थीं।

दूल्हा के पिता ने विनय की, 'हमारे यहां राजा तक दूल्हा का मान रखता है।'

'चुप', गार्डन ने धमकाया।

दूल्हा को घोड़े पर से उतरना पड़ा।

नवाब अलीबहादुर गार्डन और स्कीन के पास आया-जाया करते थे। परन्तु गार्डन के पास बहुधा। पैन्शन बढ़ाने की आशा अभी जीर्ण नहीं हुई थी। उनको इधर-उधर की खबर पीरअली दिया करता था। वे इन खबरों को गार्डन के पास पहुँचा देते थे।

पीरअली ने दीवान जवाहरसिंह के आने का समाचार नवाब साहब को दिया। परन्तु वह और तात्या जब चले गये तब।

नवाब ने कहा, 'कुछ दाल में काला है। जवाहरसिंह कटीली वाले राजा की फौज के एक बड़े अफसर रहे हैं। बिठूर से उस आदमी का इन्हीं दिनों आना इल्लत से खाली नहीं है। क्या है। क्या कर्नल जमांखाँ भी इन लोगों से मिले ?'

पीरअली ने उत्तर दिया, 'कह नहीं सकता। अनुमान करता हूं कि जरूर मिले होंगे। कर्नल साहब की हवेली में ही तो वह बिठूर-वाला ठहरा था। उसको टोपे कहते हैं।'

'इन लोगों में क्या बात-चीत हुई या किस प्रसङ्ग की चर्चा हुई यह जानने की जरूरत है।'

'मैंने जानने की कोशिश की। लेकिन वे लोग दीवान रघुनाथसिंह के यहां ऐसी जगह बैठे थे कि वहाँ से सुनाई नहीं पड़ सकता था।'

'ये लोग रानी साहब के पास भी गये ?'

'जी हाँ गये। और हँसते, खुश होते हुये लौटे।'

'कर्नल साहब के यहाँ वह टोपी या टोपे क्या किया करता था ?'

'कर्नल साहब की हवेली के नजदीक नाटकशाला वाली जूही रहती है। मुझको मालूम होता है कि उस टोपे के लिये वह चुम्बक है।'

'हो सकता है। और इसीलिये शायद वह कर्नल साहब के यहाँ ठहरता है। मगर जवाहरसिंह का और इस टोपे का रघुनाथसिंह की भीतरी बैठक में देर तक बातचीत करना, किस मतलब से हुआ होगा ? खुदाबख्श कहां हैं ?'

'वह तो मोतीबाई के पीछे दीवाने हो रहे हैं।'

'मोतीबाई रानी साहब के पास कभी जाती है ?'

'जी हाँ, कभी-कभी।'

'उससे काम नहीं निकाला जा सकता ?'

'कोशिश करूँगा।'

नवाब साहब सोचने लगे, 'मोतीबाई को मेरे पास लिवा लाओ। गाने के बहाने से।'

पीरअली-- 'लेकिन वह कहीं भी नहीं गाती। बहुत कम बाहर निकलती है।'

नवाब---'मेरे यहाँ गायगी। लेकिन खुदाबख्श को खबर न हो। खुदाबख्श से बाद में बातचीत की जावेगी।'

पीरअली अपने घर गया। देखा तो मोतीबाई मौजूद। पीरअली ने सोचा बहुत अच्छा शकुन हुआ।

आवभगत के बाद उसने मोतीबाई से बातचीत की।

'मैं तो आपके यहां आने वाला था', प्रसन्न होकर पीरअली ने कहा।

मोतीबाई ने मधुर मुस्कान के फूल बरसाये। साड़ी का घूंघट खींचा। गर्दन मोड़ी। बोली, 'मैं खुद आ गई। आप किसलिये कष्ट कर रहे थे ?'

'नवाब साहब को गाने का शौक हुआ है। कहा अकेले में सुन लूँगा। महफिल न होगी।'

'और मैं भी यही सोचकर आई हूँ। अब पर्दे में गुजर नहीं हो सकती। खुलेआम तो नाचना-गाना मुझसे न होगा, चाहे भूखे भले ही मर जाऊँ। मगर नवाब साहब सरीखे बड़े आदमियों को सुना आने में मुझको कोई उज्र न होगा।'

'नवाब साहब भी यही फरमाते थे। वह महफिल नहीं जोड़ेंगे।'

'आप भी सुना करिये।'

'मैं तो फर्ज और शौक दोनों के लिये मौजूद रहूँगा। उस्ताद मुगलखाँ के धुरपद से जब जी भर जाये, तब आपका ख्याल और नाटक के गीत ही मौज पैदा कर सकते हैं। सच पूछिये तो न दिन भर का समय हो और न मुगलखाँ साहब को सुना जा सके।'

'तो मैं कितने बजे आऊँ?'

'मेरे ख्याल में शाम का वक्त अच्छा रहेगा।'

'जी हाँ। लेकिन मैं आठ बजे चली आऊँगी।'

'हाँ ठीक है। दो घण्टे क्या कम हैं।'

मोतीबाई समय नियुक्त करके चली गई।

पीरअली ने सोचा, उमर कुछ बढ़ गई है मगर अब भी झूमती फुलवारियों-सा मदमाता यौवन है।

पीरअली ने नवाब साहब को सूचना दी।

सन्ध्या के छः बजे मोतीबाई आ गई।

पर्दे की आड़ टूट गई। प्रारम्भ में जरा शरमाते-शरमाते। अलीबहादुर ने सोचा स्वाभाविक है। उनको आश्चर्य यही था कि रङ्गमञ्च पर बिना किसी शील-सङ्कोच के नृत्य-गान करने और हाव-भाव दिखलाने वाली अभिनेत्री इतने दिनों और ऐसा पर्दे का ढोंग क्यों किये रही।

नवाब ने रसीलेपन से कहा, 'मैंने रङ्गशाला में आपकी कला का कमाल देखा है। समझ में नहीं आता था कि इतना लाज-सङ्कोच और पर्दा मेरे घर आकर भी आप क्यों करती रही हैं।'

'हुजूर' मोतीबाई बोली, 'आदत पड़ गई थी। अब भी बिलकुल नहीं छूटी है। गुजर के लिये पर्दे को कम कर दिया है, लेकिन बिलकुल तो न छोड़ सकूँगी। बहुत लोगों ने अंग्रेज सरकार की नौकरी कर ली है। मुझे तो कोई नौकरी मिल नहीं सकती, इसलिये गाने-बजाने से पेट भरना तै कर लिया है। आप सरीखे कुछ रईसों को खुश करना ही मेरी गुजर के लिये काफी होगा।'

नवाब ने सोचा मोतीबाई शोख हो गई है। उसकी वह शोखी उनको भली मालूम हुई।

मोतीबाई ने लगभग एक घण्टा गाया-नाचा परन्तु इसके बाद न तो नवाब साहब का मन लगा और न मोतीबाई का।

नवाब साहब ने कहा, 'जरा सुस्ता लीजिये। फिर देखा जायगा। तब तक बात करें। पीरअली पान लाना।'

पीरअली ने पान दिये।

नवाब ने पूछा, 'कभी आप महलों में जाती है? काम ही क्या पड़ता होगा।'

'जाती हूँ', मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'रानी साहब भजन सुनती हैं। उनको मीरा के भजन बहुत पसन्द हैं। रोज तो नहीं जाती हूं कभी-कभी सुना आती हूँ। वहाँ थोड़ा बहुत मिल जाता है।'

'रानी साहब की पैंशन में से बहुत लोगों को सहारा मिलता है इसलिये बिचारी को मुश्किल का सामना करना पड़ता होगा।'

'जरूर, मगर वे बहुत उदार हैं। उनका निजी खर्च तो बहुत कम है। दान-पुण्य में बहुत दे डालती हैं।'

'बहुत नेक हैं। और फिर इधर-उधर के आने-जाने वाले नाते-रिश्ते के लोग पुराने मुलाजिम लगे हैं उनको भी कुछ न कुछ देना ही पड़ता होगा।'

मोतीबाई की एक आँख के कोने पर सजगता आई। दरवाजे से सटा हुआ पीरअली कान खड़े करके सुनने लगा।

मोतीबाई ने मुस्कराकर कहा, 'आते तो बहुत लोग हैं, पर उनको देते-लेते मैंने नहीं देखा।'

'यही क्या कम है कि रानी साहब उनको बातचीत ही के लिए काफी समय देती होंगी।'

अलीबहादुर ने सुझाव दिया, 'पूजा-पत्री और सवारी कसरत में भी कई घण्टे निकल जाते हैं।'

मोतीबाई ने तुरन्त कहा, 'न मालूम कहाँ से दुनियाँ भर के कामों के लिये वे समय निकाल लेती हैं। सवारी, कसरत कुश्ती करती हैं, औरतों को सिखलाती हैं—पूजा करती हैं, गीता जी को सुनती हैं और न जाने कितने स्त्री-पुरुषों से बातचीत करती हैं। इसी बीच में, कभी-कभी मेरा गाना भी सुन लेती हैं।

'तुम्हरा गाना तो, बाई जी देवताओं को भी लुभा लेगा', अली-बहादुर ने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुये कहा।

मोतीबाई मुस्कराई। झेंप का अभिनय किया। फिर भोलेपन के साथ बोली, 'उन्होंने एक काम जरूर बहुत कम कर दिया है। शायद छोड़ ही दिया हो। रामनामी गोलियों का बनाना और अकेले में बैठकर मछलियों को खिलाना। यह काम अब उनकी सहेलियाँ करती हैं।'

'दासियां, बाई जी ?'

'वह उनको दासियां नहीं कहती सहेलियाँ कहती हैं।'

'वह बड़ी नेक हैं, बाई जी। अब तो उन्होंने पर्दा छोड़ दिया है मैंने उनके दर्शन किये हैं। न मालूम पहाड़ों और नदियों के घूमने में उनको क्या मजा आता है।'

'मुझसे भी घोड़े की सवारी के लिये कहा था।'

'सचमुच ? आपने सीखी ?'

'पहले तो बहुत डर लगा, पर अब थोड़ा-थोड़ा सीख गई हूं। उनकी सहेली मुन्दर बड़ी अच्छी सवार है। वही सब औरतों को सिखलाती है।'

'क्या औरतों को हथियार चलाना भी सिखलाया जाता है ?'

'वह तो लाजमी है ।'

'आपने भी सीखा !'

'सीख रही हूँ ।'

'किस मतलब से ?'

'मैं तो, अपने हाथ पैर, अभी बरसों अच्छी हालत में रखना चाहती हूं । इसलिये सीखती हूं । केवल इसी मतलब से रानी साहब सवारी, कसरत इत्यादि करतीं हैं । और मतलब मुझको मालूम नहीं ।'

'आपको घोड़े पर सवार देखकर मुझको बड़ा अच्छा लगेगा । शायद फुरेरू आ जाय । आपकी तन्दुरुस्ती, रूप, रङ्ग सब पहले से बहुत अच्छे हैं । कारण यही कसरत, सवारी वगैरह है ।'

अलीबहादुर ने सोचा, स्त्री को पराजित करना हो तो उसकी प्रशंसा करो ।

मोतीबाई पराजित सी जान पड़ी । मुस्कराकर, झेंपकर, सिमटकर उसने आँखों से मादकता उड़ेली ।

बोली, 'हुजूर ने तो यों ही बहुत तारीफ कर डाली ।'

नवाब ने कहा, 'मैंने झूठ नहीं कहा ।'

फिर हँसने लगे । पान खाया और खिलाया ! सतर्कता के साथ पूछा, 'कौन कौन लोग रानी साहब के पास आते हैं, या आये हैं ?'

मोतीबाई ने अविलम्ब उत्तर दिया, 'हाल में बहुत लोग आये हैं । बिठूर से तात्या टोपे, काटीली से दीवान जवाहरसिंह, एक कोई दूल्हाजू कोई—क्या विनय करूँ बहुतों के नाम ही याद नहीं आ रहे हैं । आगे याद रक्खा करूँगी ।'

'जरूर और मुझको बतला दिया करो । रुपये पैसे की सकुच मत करना आप । जो कुछ थोड़ा सा मेरे पास है, वह अपना समझो ।'

'आपकी बहुत कृपा है । मैं अहसानों को कभी न भूलूँगी ।'

'और आने-जाने वाले लोग जो कुछ बात किया करें वह भी मुझको सुना जाया करिये । अभी हाल में कोई खास बात हुई हो तो……'

'हाँ कुछ बातें तो मुझको मालूम हैं।। निवेदन करूँ ?'

'अवश्य। मैं ध्यान से सुनूँगा।'

'रानीसाहब गोद लिये राजकुमार का जनेऊ करना चाहती हैं। उसी का मश्विरा हो रहा है।'

'दीवान जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह से ?'

'जी हाँ। वे सब पुराने नौकरों को और सब नातेदारों को तथा शहर और देहात के रईसों को उस मौके पर बुलावेंगी चूंकि रानी साहब को अपने पुराने आदमियों के सही पते नहीं मालूम इसलिये जो लोग आते हैं उनके साथ इसी प्रसङ्ग की चर्चा करती हैं। वे राजकुमार के जनेऊ पर बहुत रुपया खर्च करेंगी। हाँ एक बात भूल गई। उन्होंने अपनी अपील को विलायत भिजवाया है, उसके लिये लगभग सबसे कहती हैं। और जिद करती हैं कि सब छोटे-बड़े साहबों से मेरी सिफारिश करो।'

'आगे कोई और बात मालूम पड़े तो मुझको आप जरूर बतलाना।'

'अपना कर्तव्य और सौभाग्य समझूँगी,' कहकर मोतीबाई चलने को हुई। उसने मुस्कराकर एक कटाक्ष किया।

नवाब साहब ने पान दिया।

मोतीबाई ने कहा, 'मैं सीधी रानी साहब के महल जाऊँगी।' उनको एकाध भजन सुनाकर फिर घर पहुँचूँगी। यदि कोई खास बात मालूम पड़ी तो सेवा में आकर अर्ज करूँगी।'

पीरअली ने अनुरोध किया, 'मैं आपको महल तक पहुँचा आऊँ ?'

मोतीबाई ने इनकार नहीं किया।

मार्ग की चहल-पहल कम हो गई थी परन्तु बन्द नहीं हुई थी।

मोतीबाई ने अवसर पाकर पीरअली से कहा, 'नवाब साहब के सामने का पर्दा तोड़ दिया अब और लोगों के सामने भी निकलने लगूँगी।'

पीरअली समझ गया। बोला, 'खुदाबख्श साहब मेरे दोस्त हैं। उनसे कहूंगा तो वह मेरा मुँह मीठा कर देंगे।'

'जी नहीं। अभी नहीं। वे बहुत दिक करते हैं। आपका जैसा मिजाज और कायदा उन्होंने नहीं पाया है।'

पीरअली प्रसन्न भी हुआ और सहमा भी। 'कायदा' शब्द उसको खटका।

वह मोतीबाई को महल के फाटक तक पहुँचा कर लौट आया।

रानी कथा वार्ता का सुनना समाप्त कर चुकी थीं। मोतीबाई ने आकर प्रणाम किया। जब सब लोग चले गये रानी ने उससे पूछा,

'क्या हाल है मोती ?'

मोती ने अनुनय के साथ कहा, 'सरकार को मीरा का एक पद सुना दूँ तब कुछ निवेदन करूँगी।'

मोती ने तम्बूरे पर मीरा का एक पद सुनाया। फिर तम्बूरा जहां का तहाँ रखकर बोली,

'सरकार के विरुद्ध एक जासूस और पैदा हो गया है।'

रानी ने शान्त भाव से कहा, 'कौन है मोती ?'

'नवाब अलीबहादुर।'

'मुझको सन्देह तो नवाब साहब पर पहले से था। क्या बात हुई ?'

मोतीबाई ने ओर से छोर तक सब सुनाया।

जनेऊ के सम्बन्ध की बात को सुनकर रानी बोलीं, 'मुझको तेरी बुद्धि पर अचरज होता है मोती। मेरे मन में दामोदर का जनेऊ करने की और अपने लोगों को निमन्त्रित करके समारोह करने की बात कुछ दिन से उठ रही है। पर मैंने उसको प्रकट किसी पर नहीं किया। तूने कैसे जान लिया ?'

'सरकार' मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'एक दिन राजा भैया से आपने कहा था—तुम्हारा जनेऊ होगा, इतना याद था। उसी को मैं काम में ले आई।'

रानी ने मुस्कराकर प्रस्ताव किया, 'तुमको खुदाबख्श की भी जाँच करनी है।'

मोतीबाई ने जरा-सा सिर नवाया। फिर दृढ़ स्वर में बोली, 'सरकार मैं जांच करूँगी। यदि काम के निकले तो फर्द में नाम रहने दीजियेगा, नहीं तो—काट कर अलग कर दीजियेगा।'

'मुझको विश्वास है, मोती', रानी ने कहा, 'लोहा, लोहा ही सिद्ध होगा।'

रानी ने पूछा, 'जूही और दुर्गा कुछ कर रही हैं ?'

मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'हाँ सरकार। दुर्गा फौज के हिन्दुस्थानी अफसरों को नाचना-गाना प्रदर्शित करती है और उनसे भेद लेती है। जूही की परीक्षा बाकी है।'

'मेरा सम्बन्ध तो प्रकट नहीं होता ?' रानी ने प्रश्न किया।

'नहीं सरकार', मोती ने उत्तर दिया।

रानी ने कहा, 'मुझको तुम्हारी बुद्धि और अभिनय-कला का भरोसा है।'

मोती ने उत्साह के साथ आश्वासन दिया।

'यदि मेरा अभिनय श्री चरणों की कुछ भी सेवा कर सका, तो मैं अपने जन्म को सार्थक मानूंगी।'

मोतीबाई अपने घर चली आई।

[४०]

घर आते ही खुदाबख्श मिला। मोतीबाई ने आड़ करने का प्रयत्न किया।

खुदाबख्श ने कहा, 'मेरे सौभाग्य का सन्देशा अभी-अभी पीरअली ने दिया, इसलिये चला आया। बहुत दिनों से कान में मिठास नहीं पड़ा। एक बात सुनने को...'

'पधारिये', कहकर मोतीबाई बैठक में चली गई।

खुदाबख्श बैठक के कोने में बैठ गया। मोतीबाई ने शमादान में बत्ती जलाई और इठलाती-सी बैठ गई।

उसी ने बात शुरू की।

मोतीबाई—'मैं थकी-मांदी हूं। इसलिये बात जल्द समाप्त हो जाय तो मेहरबानी होगी।'

खुदाबख्श—'जितने के लिये आया था वह तो पा लिया। अब यह विनती है कि आप घर ही में रहें और मुझे सेवा करने की इजाजत दें।'

मोतीबाई मुस्कराई। आँख के कोने में एक मधुर कलोल हुई और बोली, 'अर्थात् मैं आपकी कैद में रहूँ?'

खुदाबख्श हर्षोन्मत्त हो गया।

'मैं आपका कैदी बनकर रहूंगा।'

'इस प्रकार की बात आपने कितनी स्त्रियों से की है?'

'खुदा जानता है। मुझको कहने की जरूरत नहीं।'

'मैं भी जानती हूँ। मगर एक वायदा करना होगा। ईमान को बीच में करके। मैं अस्मत इज्जत वाली औरत हूँ। मेरा भी खुदा जानता है।'

'मुझको मालूम है। इसलिये इतनी बरसों सहा और आँसुओं की नदियाँ बहाईं।'

'आँसुओं की नदी या नदियाँ बहाने वालों से मैं दूर रहना चाहती हूं।'

'मैं अपना खून बहाने को तैयार हूँ।'

'उसी का ईमान लेना है।'

'ईमान देता हूं। खुदा को बीच में करता हूँ।'

'बदलियेगा नहीं।'

'बदलने की बात मन में आते ही अपनी गर्दन छुरी से रेत डालूँगा।'

मोतीबाई मुस्कराई। अपनी आँखों में उसने जादू पैदा किया। बोली, 'नवाब अलीबहादुर की नौकरी कर सकेंगे?'

खुदाबख्श ने उत्तर दिया, 'कर सकूँगा। आपके हुकुम से सब कुछ कर सकूँगा। वैसे किसी की भी नौकरी न करने की, ठान रक्खी थी। अब प्रण तोड़ूँगा। काम क्या करना पड़ेगा? नवाब साहब या पीरअली ने आज तक नहीं कहा।'

'मैं कहती हूँ', मोतीबाई ने आदेश के ढङ्गपर कहा, 'आपको जासूसी का काम करना होगा!'

'जासूसी का काम! कैसी जासूसी?'

'रानी साहब के पास कौन-कौन आते हैं, किस मतलब से आते हैं, क्या बात करते हैं, कौन से ढङ्ग रचते हैं, अङ्गरेज सरकार के खिलाफ कहाँ क्या हो रहा है इन बातों का पता लगाना होगा। नवाब साहब इस सेवा के बदले में काफी देंगे और अङ्गरेज सरकार से दिलवायेंगे। बड़े-बड़े साहबों से हाथ मिलाने का और अपनी तरक्की करने का, आपको मौका मिलेगा।'

ख़ुदाबख्श तमतमा उठा। हिल गया। माथे की नसें फूल गईं। कण्ठ रुद्ध हो गया। मोतीबाई ने सन्तुष्ट होकर यह सब देखा।

खुदाबख्श मुश्किल से बोला, 'मुझको आपने बहुत कमीना समझा है। मैंने सिपाहीगिरी की है। अपने राजा की कृपाओं का मेरे ऊपर उतना ही बोझ है जितना उनकी ज्यादती का। मगर मैंने आपको ईमान हारा है। अब तक किसी उम्मेद पर जीवन को टिकाये था। अब कोई जरूरत नहीं। जाता हूँ। सवेरे खुदाबख्श का नाम भर बाकी रह जावेगा। अगर भूले-बिसरे कभी बन पड़े, तो मिट्टी की कब्र पर एकाध फूल डाल देना।'

खुदाबख्श खड़ा हो गया। मुँह फेरकर जाने को हुआ। मोतीबाई ने लपक कर हाथ पकड़ लिया। बोली, 'किवाड़ बन्द कर आइये। फिर सुनिये।'

उसने पूछा, 'कुछ बाकी रह गया है ?'

मोती ने जल्दी से उत्तर दिया, 'बहुत।'

खुदाबख्श कांपते हुये पैरों गया। किवाड़ बन्द करने के लिये सिर बाहर निकाला। कोई खड़ा था। भाग गया। खुदाबख्श ने नहीं पहिचाना। उसने पहिचानने की परवाह भी नहीं की। बैठक में आकर खड़ा हो गया। बोला, 'कहिये अब क्या है ?'

'बैठकर सुनिये।'

'न। इसके लिये ईमान नहीं दिया।'

मोतीबाई हँसी। मोतियों की लड़ियाँ-सी छुटक गईं। खुदाबख्श पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। मोतीबाई ने परख लिया। वह और हँसी। बोली, 'यदि मैं अनुरोध करूँ कि आप रानी लक्ष्मीबाई की नौकरी करें, तो आपके ईमान को कैसा लगेगा ?'

'आप क्या मजाक कर रही हैं ?'

'बिलकुल नहीं। मैं अपने ईमान की सौगन्ध खाती हूँ।'

'फिर वह बात कैसे कही ?'

'बतलाऊँगी। पहले मेरी इस बात का जवाब दीजिये।'

'रानी साहब की सेवा में तो अपना सिर चढ़ा दूँगा। मगर अब मौका ही क्या आना है ?'

'आयगा। मुझसे पक्की बात करिये।'

'पक्की ही कहता हूँ। कोई अङ्गरेज पूछे तो उससे भी कह दूँगा।'

'कदापि नहीं। किसी से मत कहियेगा। नवाब साहब से बिलकुल नहीं। पीरअली से भी नहीं।'

'हूँ ।

'हूं क्या ? पक्का वायदा रानी साहब की सेवा के लिये करिये ।'

'मेरी जबान ही क्या वायदा करेगी, मेरा रोम रोम वायदा करता है ।'

'अब मुझको भरोसा हो गया । मैंने अलीबहादुर साहब की नौकरी और जासूसी के सम्बन्ध में इसलिये पूछा था कि देखूं आप कितने पानी में हैं । परीक्षा ले ली । आप सफल हुये ।'

'कुछ करके दिखलाऊँगा तब कहियेगा ।'

'तभी और कुछ भी कहूँगी,' मोतीबाई मुस्कराई ।

खुदाबख्श की हशरत जागी ।

बोला, 'कभी तो कह सकूंगा कि अब मैं आपका कैदी हो गया ।'

मोतीबाई ने मुस्कराते हुये कहा, 'मगर अभी कैद की घड़ी नहीं आई है । जिस दिन रानी साहब स्वराज्य कायम करके उत्सव मनायेंगी मैं आखिरी बार नाचूंगी और उस दिन आपकी कैद में हो जाऊँगी । तब तक आपकी और मेरी अस्मत—दोनों की—उस देवी के हाथों रहेगी, जो झाँसी की रानी कहलाती है और कहलावेगी ।'

उस नर्तकी का मुखमण्डल उस समय दिव्यता से भर गया ।

खुदाबख्श सिपाही था । उसका खून जोश खा गया ।

मुट्ठी बाँधकर बोला, 'ऐसा ही होगा बाई जी । मुझको कभी चूकते पाओ, तो मुंह पर थूक देना । महारानी साहब से कह देना कि खुदाबख्श उनका पुराना नौकर—सिपाही है, जब उसकी जरूरत पड़े, वे कहला भर दें । अपने सीने पर गोली लेने के लिये तुरन्त आ खड़ा होगा । वेतन या भत्ते का नाम न लेना । दो वक्त खाने के लिये उन्हीं का दिया हुआ मेरे पास अभी काफी है ।'

'मुझको आज बहुत खुशी है', मोतीबाई ने संयत स्वर में कहा, 'मैं रानी साहब को कल ही सुनाऊँगी । मगर अर्ज है कि नवाब साहब और पीरअली से मत कहना ।'

खुदाबख्श बोला, 'मुझको किसी से कुछ नहीं कहना है। यकीन रखिये। परन्तु पीरअली के बावत अन्त में आप देखेंगी कि आपका भ्रम था।'

खुदाबख्श चला गया।

दूसरे दिन रानी को मोतीबाई ने सब समाचार दे दिया।

रानी जब से घुड़सवारी के लिये बाहर निकलने लगीं, तब से वह मर्दानी पोशाक करने लगीं थीं—सिर पर लोहे का कुला, ऊपर साफा, उसका एक खूँट पीछे फहराता हुआ। कंचुकी के ऊपर सटा हुआ अंगरखा, पैजामा, अङ्गरखे और पैजामे पर कसी हुई पेटी। दोनों बगलों में पिस्तौलें और दोनों ओर परतलों में तलवारें। कभी-कभी इतने सब हथियारों के अलावा नेजा भी हाथ में साध लेती थीं। इस पर भी घोड़े को बहुत तेज चलाने में कसर नहीं लगाती थीं उनको काठियावाड़ी घोड़े अधिक पसंद थे और सफेद रङ्ग के खास तौर पर। घोड़ों की उनको विलक्षण पहचान थी।

उन्हें कुला लगाकर साफा बाँधने में एक असुविधा अवगत होती थी—लम्बे केशों की। विधवा थीं इसलिये महाराष्ट्र की प्रथा के अनुसार, बाल मुड़वाने में कोई बाधा न थी। अपने केशों का कोई मोह था ही नहीं। सोचा काशी जाकर मुण्डन करा लें। पर्यटन हो जावेगा। और काशी में बैठकर उस ओर की राजनैतिक परिस्थिति का आभास मिल जावेगा। एक भावना और थी—जिस घर में माता ने जन्म दिया था उसके दर्शन भी मिल जायेंगे।

खोज करने पर मालूम हुआ कि बिना डिप्टी कमिश्नर की अनुमति के काशी यात्रा के लिये नहीं जा सकतीं!

अनुमति के लिये गार्डन को अर्जी दी गई। उसके पास दीवान जवाहरसिंह इत्यादि के रानी के पास आने–जाने की खबरें पहुंच चुकी थीं। वह चिढ़ा हुआ था। दूसरे अपने अधिकार को करारे रूप में लाने का अभ्यासी था। काशी यात्रा के लिए जो अर्जी दी गई थी वह उसने अस्वीकृत कर दी।

जिसने सुना उसी के जी को चोट लगी।

रानी ने प्रण किया, 'मैं केश मुंडन तभी कराऊंगी, जब हिन्दुस्तान को स्वराज्य मिल जावेगा, नहीं तो स्मशान में अग्निदेव मुण्डन करेंगे।'

उनकी यह भीषण प्रतिज्ञा उनकी सहेलियों को मालूम थी। वे सब इस प्रतिज्ञा पर प्रसन्न थीं–उनको पसन्द न था कि ऐसे सुन्दर बालों का कुसमय क्षय हो।

दामोदरराव रानी के प्रगाढ़ स्नेह में पल रहा था, बढ़ रहा था। कोई निज माता अपने गर्भ-प्रसून को इतना प्यार न करती होगी जितना वे दामोदरराव को चाहती थीं।

समय अपनी प्राकृतिक गति से चला जा रहा था। इसी में रानी की योजना भी संवृद्धि और पुष्ट होती जा रही थी। कहाँ क्या हो रहा है, इसके समाचार उनको निरन्तर मिलते रहते थे। वह युद्ध सामग्री तैयार करने वाले कारीगरों को एकत्र करने की योजना पर बहुत जोर देती थीं-और यह हो रहा था।

इस ओर रानी के जासूस और विश्वसनीय सहायक काम कर रहे थे। उस ओर नाना और राव के तथा बहादुरशाह और अवध के साथ सहानुभूति रखने वालों के लोग, अपने अपने काम में जुटे हुये थे। बिहार बङ्गाल में भी स्वाधीनता की आग सुलग रही थी। महाराष्ट्र, मध्यदेश बुन्देलखण्ड उत्तर हिन्द तो मानो उसके पलनें ही थे। यहाँ तो स्त्रियाँ भी काम कर रही थीं।

रानी ने देखा कि लोगों को इकट्ठा करने का समय आ गया है। वह जानती थीं कि ऐन मौके पर तुरन्त इकठ्ठा करना दुष्कर होगा, इसलिये वे सबको एक बार एकत्र करके तब योजना को आगे बढ़ाना चाहती थीं। हर काम की एक योजना वे पहले बना लेती थीं, तब व्यवस्था के साथ उसको व्यवहार का रूप देती थीं।

इसलिये उन्होंने दामोदरराव का जनेऊ करना निश्चित किया और उसके समारोह में जगह-जगह से प्रमुख लोगों का, जमाव करके, आगे के कदम की बावत परामर्श करना तै किया।

इस काम के लिये एक लाख रुपये की जरूरत थी। नकद रुपया उनकी गांठ में न था।

दामोदरराव छः वर्ष का हो चुका था। सातवीं लग गई। इस वर्ष में जनेऊ होना ही चाहिये। योजना भी इस स्थिति में आ गई थी कि इस वर्ष में एक महान सम्मेलन का किया जाना जरूरी था।

मोतीबाई इत्यादि ने समाचार दिया कि अङ्गरेजों की हिन्दुस्थानी सेना में, काफी असन्तोष फैल गया है।

रानी ने पुरोहित्र को बुलाकर मुहूर्त सुधवाया। मुहूर्त निकलने पर गार्डन को अर्जी दी कि दामोदरराव के नाम से जो छः लाख रुपया खजाने में जमा है, उसमें से उसके जनेऊ के लिये एक लाख रुपया दे दिया जावे।'

पहले तो गार्डन की इच्छा अर्जी को तुरन्त खारिज कर देने की हुई। फिर सोचा हिन्दुओं की यह कोई जरूरी रस्म है, इसलिये अन्तिम निर्णय को स्थगित कर दिया।

उसने लोगों से पूछ-तांछ शुरू कर दी। अलीबहादुर से खोजा। उन्होंने कहा, 'ब्राह्मणों में यह रस्म लाजमी है।'

सेठ साहूकारों से पूछा। उन्होंने कहा, 'अनिवार्य है।'

अन्त में फैसले को अपने पेशकार की सम्मति पर छोड़ा।

पूछने पर पेशकार ने कहा, 'हुजूर ऊँची जाति के हिन्दुओं में, विशेष कर ब्राह्मणों में यह रस्म किसी प्रकार भी नहीं टाली जा सकती।'

गार्डन ने कमिश्नर से, कमिश्नर ने लैफ्टिनेंट गवर्नर से पूछा। अन्त में गार्डन की मर्जी पर इस शर्त के साथ छोड़ा गया कि अगर झाँसी शहर के चार भले आदमी जमानत दें तो रुपया दे दिया जाय।

गार्डन ने रानी को सूचना दी, 'खजाने में जो रुपया जमा है वह दामोदरराव नाबालिग का है। यदि बालिग होने पर दामोदरराव ने सरकार पर दावा कर दिया तो सरकार को रुपया अपनी थैली में से देना पड़ेगा, इसलिये झाँसी शहर के ऐसे चार आदमियों की जमानत दीजिये, जिनमें मेरा मन भरे।'

रानी को इस अपमान पर जितना क्षोभ हुआ उसकी मात्रा का माप उस मानसिक बल से लग सकता है, जिसकी सहायता से रानी ने उस क्षोभ को दबाया। अपने ही रुपयों के लिये 'ऐसे चार भले आदमियों की जमानत जिनमें मेरा मन भरे !'

अङ्गरेजों के, केद्रीयकरण के, गार्डन के अहङ्कार की हद हो गई। झाँसी की प्रमुख जनता कुछ इसी तरह सोच रही थी।

झाँसी में चार क्या बावन बड़े बड़े आदमी थे। रानी की जमानत देने के लिये सब तैयार हो गये।

कुछ ने तो खुदाबख्श और दीवान रघुनाथसिंह से यहाँ तक कहा, 'अर्जी देने की क्या अटक पड़ी थी ? इतना रुपया तो हमीं लोग नजर कर सकते हैं।'

परन्तु रानी को अपने रुपये के लिये हठ था। उन्होंने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया।

जो 'भले आदमी' जमानत के लिये गार्डन के सामने हाजिर हुये, वे थे ;—लाला बीमावाले, मगन गन्धी, मोती खत्री और श्याम चौधरी।

गार्डन उनको हतोत्साहित करना चाहता था।

बोला, 'सोच समझ कर काम करना। बालिग होने से तीन बरस के भीतर तक दामोदरराव दावा कर सकेगा।'

उन लोगों ने विश्वास दिलाया कि यदि जरूरत हो तो हम लोग नकद जमानत दाखिल कर दें।

गार्डन को झेंप मालूम हुई, इसलिये उन लोगों की साधारण जमानत पर उसने रानी को एक लाख रुपया दे दिया।

नियुक्त समय पर समारोह हुआ। दूर-दूर के लोग इकट्ठे हुये। झाँसी की जनता ही बहुत बड़ी संख्या में थी। नवाब अलीबहादुर भी शरीक हुये।

शुभ मुहूर्त में दामोदरराव का जनेऊ हो गया। लोगों ने खुशी-खुशी नजर-भेंट की। काफी रुपया जमा हुआ।

दावत-पङ्गत हुई। गायन-वादन और दुर्गा का नृत्य। इसके बाद चुने हुये लोगों की बैठक। रानी लक्ष्मीबाई सफेद साड़ी पहिने एक जरा ऊँचे आसन पर बैठीं। आसपास उनकी खास सहेलियाँ। जरा फासले पर नाना साहब और उनके भाई, तात्या टोपे, जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह, खुदाबख्श इत्यादि।

रानी ने कहा, 'जिस सफलता के साथ आप लोगों के सहयोग से यह छोटा सा यज्ञ हुआ, उसी सफलता के साथ उस बड़े यज्ञ की पूर्ति होनी चाहिये।'

नाना बोला, 'अच्छे कारीगरों और बढ़िया सामान का प्रबन्ध हो गया है। यज्ञ की सामग्री ढोने वाले पशुओं और अश्वमेध के घोड़ों का भी इन्तजाम कर लिया गया है।'

तात्या—'मैं जरा सीधी भाषा में बात करना चाहता हूं।'

रानी—'कर सकते हो, सब अपने ही अपने हैं। बाहर स्त्रियों का कठोर पहरा है। काम की बात करके अधिवेशन को समाप्त कर दिया जावेगा।'

तात्या—'उत्तरी और पूर्वी हिन्दुस्थान में अथक काम हो रहा है। अङ्गरेजों ने जिन कारतूसों को आरम्भ में जारी किया था, प्रतिवाद को देखकर लगभग बन्द कर दिया है। परन्तु उनके कारण जो घृणा उत्पन्न हुई थी, वह बिलकुल कम नहीं हुई है। अब अंगरेज हिन्दू सिपाहियों को तिलक टीका लगाये हुये परेड में आने नहीं देते, इस कारण हिन्दू सिपाहियों में घोर खिन्नता फैल गई है।'

खुदाबख्श—'यहाँ की फौज के मुसलमान सिपाहियों में भी बहुत जोश है। उनके दीन को बर्बाद करने का जो काम चर्बी वाले कारतूसों ने जारी किया था, वह ऐसा नहीं है, कि कतई तौर पर बन्द हो गया हो।'

तात्या—'एक दिन था जब अङ्गरेजों के प्रतिनिधि अपने मस्तक को बादशाह के पैर रखने की जगह बतलाते थे।* अब हमारे सबके सिर उनके पायदान बनते जा रहे हैं। कलाकारों की कला, कारीगरों का शिल्प और अनेक लोगों की रोटी गई। अब धर्म ईमान की बारी आई है। देश और जनता की रक्षा का समय आगया है।'

रानी—'मेरी समझ में अभी थोड़ा काम और करने की आवश्यकता है।'

रघुनाथसिंह—'आपकी जो आज्ञा हो। वैसे हम लोग बुन्देलखण्ड से ही आरम्भ करने को तैयार हैं।'

रानी—'अभी नहीं। ओर्छा, अजयगढ़ और छत्रपुर के राजा बालक हैं। इन राज्यों के प्रबन्ध पर अङ्गरेजों की छाप है। इसके सिवाय क्रांति का लग्गा लगवाते ही डाकू और बटमार बढ़ जावेंगे। हमारी जनता ही इन उपद्रवों से पीड़ित होगी। जब तक हमारे पास मजबूत सेना नहीं हो गई है, तब तक हम लोगों को प्रारम्भ नहीं करना चाहिये। अङ्गरेजों को परास्त करने के साथ साथ इन जन-पीड़कों का भी तो दमन करना पड़ेगा, अन्यथा जनता का क्षोभ अङ्गरेजों के सिर से टलकर हम लोगों के सिर आवेगा। हिन्दुस्थानी सैनिकों को अपनाने का क्रम जारी रखना चाहिये जब मन भर जावे, तब हाँ कही जावेगी।'

रानी की इस सम्मति से लोग सहमत हुये।

---

* सन् १६१२ में जान रसल का भेजा हुआ पत्र। परिशिष्ठ देखिये।

[४३]

मऊ छावनी से लेकर मेरठ छावनी तक और मेरठ छावनी से लेकर दमदम बारकपुर की छावनियों तक, विविध प्रकार के लक्षण दिखलाई पड़ने लगे। मऊ, मेरठ, बारकपुर इत्यादि छावनियों में साधू और फकीर, विविध प्रकार वेष और रूपक धारण करके, क्रांति का कार्य करने लगे।

ग्वालियर की छावनी में नारायण शास्त्री उस मिहतरानी को गाना गवाने ले गया। सिपाही उसके नाचने-गाने पर रीझे। समाप्ति पर पैसे देने लगे।

नर्तकी ने पूछा, 'आप लोग सेंधिया सरकार के नौकर हैं या अंग्रेज के ?'

'अङ्गरेज के।'

'अङ्गरेजों का निमक खाने वालों का पैसा नहीं छूती।' और वह इठला कर चली गई।

उन लोगों ने नारायण से कहा, 'यह कौन है ? बड़ी घमण्डिन मालूम होती है।'

नारायण—'है तो बैरागिन परन्तु झांसी की बाईसाहब के राज्य की लड़की है।'

'उनका राज्य तो चला गया।'

'अङ्गरेजों ने बेईमानी से ले लिया फिर लौटेगा।'

छावनियों के सिपाही समय पर चुपचाप परेड पर जाते। चुपचाप ड्यूटी करते, परन्तु भन्नाये हुये।

अंगरेजों को ऊपर की तह चिकनी और समतल दिख रही थी। नीचे के कोलाहल का उनको पता न था। हिन्दुस्थान एक सपने में उनकी चुटकी में आया, सपने में ही चुटकी में बना रहेगा और यह सपना कभी न टूटेगा। वे लोग इस बात को नहीं जानते थे, उन्होंने कभी इस बात को नहीं जाना, कि हिन्दुस्थान जीता भले ही आसानी के साथ जावे, लेकिन बहुत समय तक इसको मुट्ठी में रक्खे रहना असम्भव है। बाहर से आये हुए शासकों को इस देश को पराजित करने में बहुत समय नहीं लगा। शान के साथ अपना अभिषेक करवा लिया। राजगद्दियां भी

तोड़ी-मरोड़ीं परन्तु शासक की हैसियत से उनका इस देश में रहना केवल छावनी का प्रवास मात्र रहा।

असल में, जनता को रुष्ट, असंतुष्ट और क्षुब्ध करके यहाँ तो क्या संसार के किसी कोने में कोई भी राज्य नहीं कर सकता। फिर इस देश की जनता व्यक्तित्व-मग्न और महासंस्कृतिमयी है। बहुत दिनों तक कदापि विदेशी शासन को सहन नहीं कर सकती।

इसीलिये उनकी अन्तरात्मा आसानी के साथ, उस समय के स्त्री-पुरुष नेताओं की बात सुन रही थी और मन में गाँठों पर गाँठें बाँधती चली जाती थी कि कब अवसर मिले और सिर के बोझ को उतार कर फेक दे।*

गार्डन और स्कीन इत्यादि अङ्गरेज सोचते थे कि यहाँ के लोग दब्बू हैं—जनता एक भेड़ियाधसान है; थोड़ा वेतन पाने वाले बहुसंख्यक हिन्दुस्थानी, मोटी रकमें समेटने वाले अल्पसंख्यक अङ्गरेजों को सदा अपना सहयोग देते रहेंगे।

अङ्गरेजों का सब स्वार्थ-कार्य शास्त्रीय और वैज्ञानिक ढंग पर चल रहा था। केवल चल नहीं रहा था किसी ढंग पर भी, तो वह था मानव प्रकृति का, भारतीय जन-प्रकृति का, अध्ययन और विश्लेषण।

रेल तार जारी हो गये। नहरें खुदीं, तालाब सुधारे गये। डाकुओं और बटमारों का दमन हुआ। किसान सुभीते से अपनी खेती काटने लगे। व्योपारी अपना रोजगार करने लगे। मन्दिरों, मसजिदों में लोग अपने विश्वास के अनुसार श्रद्धा भेंट कर उठे। कुछ पाठशालायें और मदरसे भी खुल गये। सड़कें बनी। उन पर पेड़ लगे। पञ्चायतें टूटीं। अदालतें खुलीं। कानून का बर्ताव हुआ परन्तु अंगरेजों ने यह न समझा कि हिन्दू मुसलमान मन ही मन मना रहे हैं कि हमारा खोया हुआ अधिकार फिर कब और कैसे हमारे हाथ में आवेगा।

---

*परिशिष्ट में सर जान मालकम का वक्तव्य देखिये।

मध्याह्न

[४८]

सं० १९१३ की दीवाली की गई। रीति निभाने के लिये लक्ष्मी जी का पूजन हुआ। दिये जलाये गये। नगर का बाहरी रूप जगमगा उठा। किले पर भी कुछ दिये हिन्दू-मुसलमान सिपाहियों ने जलाये। लक्ष्मीबाई के शहरी महल पर भी रोशनी हुई परन्तु हृदय सुनसान थे—वहाँ कोई जगमगाहट न थी।

अब की बार अंगरेजों के बङ्गलों पर दिये नहीं जलाये गये, क्योंकि अंगरेजों ने सोचा इस सम्पर्क से ईसाइयत को धब्बा लग जाने का अन्देशा है। इससे जनता की धारणा और पक्की हो गई—अंगरेज हमारे नहीं हैं, हमारे कभी हो ही नहीं सकते।

मकान के बाहर दिये धरने की रस्म के बाद जूही मोतीबाई के घर आई। जूही यौवन के बसन्त में थी। बड़ी आंखों में चमक। नीचे देखने के समय लम्बी बरौनियां लाज के पाँवड़े से डालने वाली। परन्तु कुछ उदास थी। मोती बाई ने नौकरानी को पौर में बिठला दिया और जूही के साथ एकान्त में बातचीत करने लगी।

पूछा, 'आज उदास क्यों हो ? क्या बात है ?'

जूही ने उत्तर दिया, 'वे आये हैं—बिठूर वाले सरदार।'

मोतीबाई—'तब तो तुम्हें प्रसन्न होना चाहिये था। देखती हूं बिलकुल उल्टा। मुंह लटका हुआ!'

जूही—'आज पहली बार ही बात हुई और रूखे बोले।'

मोतीबाई—'किस प्रसङ्ग पर।'

जूही—'उन्होंने अपने निवास स्थान पर बुलाया। पहले कभी ऐसा नहीं हुआ था। मुझे सङ्कोच हुआ। परन्तु हिम्मत करके चली गई। सामने पहुँचने पर मैं शरम में डूबने लगी। मुश्किल से मुस्कराकर हाथ जोड़े और चुपचाप खड़ी हो गई।'

मोतीबाई—'अभिनय तो बुरा नहीं था?'

जूही—'अभिनय ही तो नहीं था—अभिनय करना चाहा, नहीं कर सकी। मैं अपने को भूल गई। उन्होंने भोंह सिकोड़ कर कहा क्या सेना में जाकर ऐसी ही खड़ी हो जाती हो? मैंने तब कुछ निवेदन किया।'

मोतीबाई—'वे जल्दी में होंगे। उतावली कर गये......'

जूही—'मुझे तो अचरज हुआ। पहले कई बार देखा-देखी हुई थी।'

मोतीबाई—'आजकल में?'

जूही—'नहीं, कई महीने पहले जब वे कर्नल साहब के यहां आकर ठहरे थे।'

मोतीबाई—'तब क्या हुआ था, मैं समझी नहीं।'

जूही—'उनको देखकर न जाने मन में कैसी उथल-पुथल हो जाया करती थी। उन्होंने देखा क्षण भर। उसी क्षण के भीतर कुछ इस प्रकार हेरे कि मुझको ऐसा लगा मानों घंटों देखते रहे हों। मैंने तो शीघ्र आँख हटा ली थी। फिर मकान के पास से निकले। मैं आहट पाकर उनकी आँख के रास्ते में आ गई। उन्होंने बहुत कम देखा, परन्तु मैं बहुत देर, बार-बार देखती रही। वे चले गये। मुझे बहुत खला।'

मोतीबाई—'होता है। फिर क्या हुआ?'

जूही—'वे यहाँ दो-तीन दिन रहे। मैंने निरन्तर उनको अच्छी तरह देख भर लेने की कोशिश की। उन्होंने देखा। मैं अघा गई। मैंने फिर उनकी दृष्टि को पकड़ने का प्रयास किया, परन्तु वह किसी ख्याल में ऐसे मस्त थे, कि उनको जूही के मकान का भी स्मरण न रहा होगा। जिस दिन जाने लगे, मैंने खिड़की में से निर्लज्ज होकर उनको नमस्ते किया। उन्होंने बिना किसी लिहाज के मुस्कराकर मेरी नमस्ते का जवाब दिया।'

मोतीबाई—'तब और क्या होता?'

जूही—'उनको जाते-जाते कुछ समय मिल गया। घर पर आने की कृपा की।'

मोतीबाई—'यह तुमने बतलाया था।'

जूही—'मैं सहम गई। सिर नीचा किये खड़ी रह गई। बोले, यदि मुझको खुश करना चाहती हो, तो मोतीबाई जी जो कुछ काम बतलावें उसको बहुत होशियारी के साथ किया करो। मैंने हामी का सिर हिला दिया, परन्तु मुँह से बोल नहीं निकला। उन्होंने कहा, हृदय की बात जीभ को न मालूम होने पावे। मुझको तुम्हारा हाल मालूम होता रहेगा। ईश्वर तुम्हारी मदद करें और वे चले गये। मैंने बहुतेरा उनकी आँख के चमत्कार को देखने का प्रयत्न किया, पर वे नहीं मुड़े। मैंने उनकी पीठ को इस तरह निगाह गड़ाकर देखा जैसे वे देख ही रहे हों। चले गये। उसके बाद जो कुछ करती रही हूँ, आपको मालूम है।'

मोतीबाई—'मैं महारानी साहब को सुनाती रही हूँ। वे सरदार साहब को सूचना देती रहती हैं।'

जूही—'अभी बीच में एक दिन के लिये और आये थे।'

मोतीबाई—'हूं।'

जूही—'तब भी घर पर आये थे—बहुत थोड़ी देर के लिये। मैंने निश्चय कर लिया था—उनको जी भरकर देखूंगी। न देख पाया। उन्होंने कुछ बातें पूछीं। कुछ बतलाईं। मेरा सिर और आँखें इतनी भारी हो गई थीं, कि उठा न पाईं। उनकी सुनती गई और मंजूर करती

चली गई । नीचे नीचे जरा सा देख लेती थी, वे बात करते मुस्कराते थे और मुझको मनमें गुदगुदी सी झकझोरती थी, मैं खूब हँसकर कुछ कहना चाहती थी । हँस कतई नहीं पाई, बात भी कम कर पाई । जो कुछ बात हुई आपको सुना दी थी परन्तु और सब कहने का उस दिन मौका न आया था ।'

मोतीबाई—'अरी पगली, इसमें उदास होने की कौनसी बात हुई ?'

जूही—'नहीं बाई जी ! मैं जो कुछ कर रही हूँ आपके हुक्म से और अपने राजा-रानी के निमक से अदा होने के लिये । चाहे मैं मार भले ही डाली जाऊँ परन्तु क्या वे मेरे सिर पर एक बार हाथ भी नहीं फेर सकते थे ?'

मोतीबाई—'यह उनकी गलती है काम करने वालों का मन रखने के लिये बढ़ावा देने के लिये बहुत मिठास बरसाना चाहिये ।'

जूही—'वह तो आप से मुझको बहुत मिल जाता है ।'

मोतीबाई—'किसी दिन रानी साहब के सामने तुमको पेश करूंगी । वह बहुत देर बात करेंगी !'

जूही—'मेरा जिकर तो आता होगा ?'

मोतीबाई—'बहुत बार, परन्तु वे अभी बहुत लोगों से मिलना उचित नहीं समझतीं । एक दिन आवेगा, जब तुम उनकी सहेली-सेना में भर्ती हो जाओगी ।'

जूही—'मैं चाहती हूँ, उनके कदमों में मेरा सिर कट कर गिरे ।'

मोतीबाई—'सरकार साहब के पूछने पर तुमने क्या निवेदन किया ?'

जूही—'उनकी रुखाई से मन टूट सा गया था । इसलिये पहले तो मैं जिमीन को अंगूठे से खोदने लगी, फिर हिम्मत करके बतलाया कि फौज के हिन्दू मुसलमानों को ईसाई बनाने की कोशिश की जा रही है, उन्होंने ब्योरा माँगा । मैंने कहा कि सिपाहियों को लोभ दिया जा रहा है, कि यदि वे ईसाई हो जायें तो उनका वेतन भत्ता बढ़ा दिया जायेगा और जो सिपाही पहले ईसाई होगा उसको तुरन्त हवलदार का पद दे दिया

जावेगा। बाकी कुछ नहीं कह सकी, क्योंकि रो डालने को जी चाहता था। यह कहकर चली आई कि फिर सुनाऊँगी; अभी पूजा करनी है। मुश्किल से लक्ष्मी-पूजन करके दिये धर कर आपके पास चली आई हूँ।'

मोतीबाई ने जूही को लिपटा लिया। उसने जूही को रोने नहीं दिया। बोली, 'यों ही फुसफुसा नहीं जाना चाहिये। देखो वे कितना कठिन और कितना नाजुक काम कर रहे हैं। नाटकशाला में जो लोग तमाशा देखने आते थे, क्या वे घर से हँसते-हँसते आते थे? संसार के दर्द को बिसारने के लिये लोग नाटकशाला में बैठ जाते हैं। उनकी रुखाई या अवहेलना को देखकर यदि हम लोग रङ्गमञ्च पर उदास या उदासीन हो जायें, तो खेल बनेगा या बिगड़ेगा?'

जूही ने मोतीबाई के कन्धे पर अपनी आँखें छिपाकर कहा, 'रंगमंच पर हम अपने असली रूप में जाते ही कब हैं?'

मोतीबाई ने जूही की ठेस को समझ लिया। बोली, 'मैं उनका जवाब तलब करूँ?'

जूही ने तुरन्त आँखें गड़ाकर कहा, 'आपसे कैसे बनेगा?'

मोतीबाई – 'अपने को भूल जाऊँगी और अभिनेत्री बन जाऊँगी। तुम सिपाहियों के सामने क्या किसी प्रकार का भी लाज-संकोच करती हो?'

जूही—'बिलकुल नहीं। मुझको मालूम ही नहीं पड़ता कि मैं ऐरों-गैरों से बात कर रही हूँ और क्या खुराफात बके जा रही हूँ। आँखें मेरी कुछ नहीं देखतीं—कान अलबत्ता खूब खुले रहते हैं।'

मोतीबाई—'और उनके सामने?'

जूही ने भोलेपन के साथ कहा, 'उनके सामने तो रोमाञ्च हो हो आता है—पसीना-सा आ जाता है। सिट्टी-सी भूल जाती है। क्या आप उनसे कुछ कहोगी?'

मोतीबाई बोली, 'आज ही मिलूंगी और कहूँगी।'

जूही ने अनुनय के साथ कहा, 'नहीं मेरी ओर से कुछ न कहियेगा, कम से कम, मैंने जो कुछ कहा है, वह न बतलाइयेगा। शायद मेरा भ्रम

ही हो। बुरा मान जायेंगे। शायद रानी साहब बुरा मान जावें। मैं रानी साहब को अपना देवी-देवता समझती हूँ।'

'मैं मूर्ख नहीं हूँ। इस तरह न कहूंगी कि वे समझें तुमने कोई शिकायत की है। तुम्हारा काम ब्योरेवार बतलाऊँगी। खुश होंगे और तुमसे मिलेंगे।'

'कर्नल साहब की हवेली पर ?'

मोतीबाई—'फिर कहाँ ? तुम्हारे मकान पर ?'

जूही—'आपके मकान पर आ जाऊँगी।'

मोतीबाई—'देखूँगी, वे जहाँ उचित समझें।'

[४५]

उसी समय मोतीबाई चादर ओढ़कर महल गई। रानी पूजन में थीं। उनको लक्ष्मी जी का इष्ट था, इसलिये और लोगों की अपेक्षा इस पूजन को वे अधिक समय देती थीं।

ड्योढ़ी के एक भाग में तात्या और नाना साहब बैठे हुये थे। तात्या ने मोतीबाई को पहचान लिया और वह तुरन्त उसको एकान्त में ले जाकर बातचीत करने लगा।

तात्या ने प्रश्न किया, 'यहाँ का हाल अभी ठीक-ठीक मालूम नहीं हुआ। जूही थोड़ी देर पहले मिली थीं, परन्तु वह तो कुछ ऐसी गढ़ गई कि कुछ कह ही नहीं सकी। केवल यह आश्वासन दे गई कि फिर बताऊँगी।'

मोतीबाई ने निस्संकोच भाव के साथ उत्तर दिया, 'आप स्त्रियों की प्रकृति को नहीं जानते।'

तात्या ने कहा, 'सुना है कि इनकी प्रकृति टेढ़ी होती है। अभी तक इस विषय के अध्ययन करने का समय नहीं मिला। जब अवसर आवेगा तब समझने का प्रयत्न करूंगा।'

मोतीबाई मुस्कराई बोली, 'आप शायद ही कभी समझ सकें। परन्तु जरूरत न पड़े तो अच्छा ही है। अब काम की बात सुनिये।'

तात्या—'मैं ध्यान लगाये हूँ।'

मोतीबाई—'फौज के सिपाहियों को जबरदस्ती ईसाई बनाये जाने की कोशिश की जा रही है। रामचन्द्र जी और मुहम्मद साहब, दोनों को खुले आम गालियाँ दी जाती हैं। ईसाई बनने के लिए तरह-तरह के प्रलोभन दिये जाते हैं, एक अङ्गरेज अफसर तो यहां तक कहता था, कि कुछ दिनों में सारा हिन्दुस्थान ईसाई हो जावेगा। न एक मन्दिर बचेगा और न एक मस्जिद रहेगी।'

तात्या—'इस तरह के समाचार सब तरफ से आ रहे हैं।'

मोतीबाई—'क्या सचमुच ऐसा दिन आने वाला है।'

तात्या—'विश्वास रक्खो, वह दिन कभी नहीं आवेगा। मुझको यह बतलाओ कि यहाँ के सिपाही खुद क्या भावना रखते हैं ?'

मोतीबाई—'मुझको पक्का भरोसा है कि एक फी सदी भी हिन्दू या मुसलमान सिपाही किसी लालच में आकर अपने धर्म-ईमान को नहीं बिगाड़ेगा।'

तात्या—'यह तो हम सब लोग जानते हैं। मुझको यह बतलाओ कि गोरों की हरकत का यहाँ फौज पर असर क्या पड़ा है ?'

मोतीबाई—'उनमें से कुछ तुरन्त मारना-मरना चाहते थे; परन्तु धीरज धरकर रुक गये।'

तात्या—'अभी मारने-मरने का समय नहीं आया है। मैं चाहता हूं प्रत्येक पल्टन में से तीन अफसर, जो बिलकुल विश्वास के योग्य हों, चुन लिये जावें। उनको कब और क्या करना होगा, वह दो-एक महीने पीछे बतलाया जावेगा। उनसे कह दिया जाय कि वे ईसाई तो होंगे ही नहीं पर इस समय अपना सब्र न खो बैठें। क्रोध भरे रहें, परन्तु उसको निकलने किसी प्रकार न दें, नहीं तो सब किया-कराया मिट्टी में मिल जावेगा। अबकी बार आऊँगा तब जो कुछ करना है, उसकी तारीख और समय बतलाऊँगा। आप या जूही इस काम को कर सकेंगी ?'

मोतीबाई—'मेरे लिये मशहूर है कि मैं बाहर बहुत कम निकलती हूं। महलों में आती-जाती हूँ। फौज में नृत्य-गान के लिये, मेरा आना-जाना तुरन्त सन्देह उत्पन्न करेगा और बाईसाहब भी यह पसन्द न करेंगी। जूही को इसी कारण महल में नहीं बुलाया जाता। वह बहुत अच्छा नाचती-गाती है, ईश्वर ने उसको रूप भी दिया है और जबरदस्त संयम। वह आपको चाहती है।'

तात्य—'मुझको ? मोतीबाई, यह जमाना बुद्धि और तलवार को मांजने का है, न कि मन को रस में डुबोने का।'

मोतीबाई—'तब आप उसको अपने रस में डूबा रहने दीजिये। तभी तो मैंने कहा कि आप नारी-प्रकृति को नहीं जानते।'

तात्या--'क्या नारी-प्रकृति पुरुष-प्रकृति से बहुत भिन्न होती है ?'

मोतीबाई—'कह नहीं सकती । शायद किसी दिन आप इस विषय को समझें ।'

तात्या—'ऐसा नहीं है कि मैं नारी प्रकृति को बिलकुल ही नहीं जानता हूँ । परन्तु सामने इतने महत्व का बड़ा काम है कि और कुछ सूझता ही नहीं ।'

मोतीबाई—'आप कृपा करके जूही से जरा मीठा बोलिये । एक बार उसके सिर पर शाबाशी का हाथ फेर दीजिये । वह अपने काम का कमाल कर दिखलावेगी ।'

तात्या—'मैंने आपसे सबक लिया और गाँठ बाँध ली ।'

मोतीबाई ने हँसकर कहा, 'आपको औरतों से अभी बहुत सीखना है ।'

तात्या ने देखा मोतीबाई के प्रबल सौन्दर्य में विलक्षण शोखी है और शोखी में कोई दृढ़ सत्य ।

हँसकर बोला, 'मानता हूं । पर आपकी जूही को वह काम करते देखना है, जो मैंने बतलाया है ।'

मोतीबाई ने भी हँसकर कहा, 'मेरी नहीं आपकी—आप लोगों की जूही ।'

'बेशक । बेशक बतलाइये फौज के देशी अफसरों पर उसका प्रभाव हो गया है ?'

'हो गया है अनेक पर ।'

'इस प्रभाव को बढ़ाना है ।'

'बढ़ जायगा ।'

'और कोशिश यह करनी है कि अभी भड़क न उठें । जो तारीख और समय नियुक्त होगा, उसकी बाट जोहें ।'

'हो सकेगा ।'

'एक पल्टन के तीन अफसरों को खास तौर पर चुनना है ।'

'मुझको जूही की बुद्धि का भरोसा है ।'

'मैं उससे आज ही बात करूँगा। आप तो रानी साहब से बात करने के लिये ठहरेंगी?'

'फिर कभी मिल लूंगी। आप मेरी बात उनसे कह दीजियेगा। मैं जाती हूं।'

मोतीबाई समझ गई थी कि तात्या इत्यादि बिलकुल एकान्त में, रानी से बातचीत करना चाहते हैं, इसलिये वह नहीं ठहरी।

पूजन के उपरान्त नाना साहब और तात्या की भेंट रानी से हुई। रानी लक्ष्मीबाई आज बिलकुल लक्ष्मी सी भासित होती थीं।

नाना ने कहा, 'मैंने अपने एक विश्वस्त आदमी अजीमुल्लाखाँ को विलायत भेजा था। अर्जी, अपील स्वीकृत नहीं हुई। हो जाती तो कुछ रुपया मिल जाता। कम से कम दादा साहब के जमाने का जो छयासठ हजार रुपया बाकी है, वही मिल जाता। परन्तु अङ्गरेजी सरकार तो बेईमानी और अन्यायी है। उसने सब नामन्जूर कर दिया। इसका अब अधिक रञ्ज नहीं है। रुपये की कमी पूरी हो ही जावेगी। अजीमुल्ला देश विदेश घूमा है। वह इटली गया। तुर्की में रहा। रूस भी पहुंचा और ईरान होकर लौट आया। उसने तुर्की के साथ चिट्ठी पत्री की है। इटली में इस समय एक प्रबल पुरुष गेरीबाल्डी नाम का है। वह अंग्रेजी जहाजी बेड़े को अपने जहाजी बेड़े से नष्ट कर देगा। रूस से मदद मिलेगी। सब कहते हैं, कि अङ्गरेज हिन्दुस्थान में खुल्लमखुल्ला और आड़ें ओट लेकर बहुत निन्दनीय काम कर रहे हैं। बहादुरशाह बादशाह ने ईरान के शाह से लिखा पढ़ी की है। काबुल तो हतोत्साह है, परन्तु शायद ईरान बादशाह की कुछ सहायता करे।'

रानी—'ऊपर ऊपर इन बातों का प्रभाव अंग्रेजों पर अच्छा पड़ेगा, परन्तु वास्तव में कार्य बहुत दृढ़ता और प्रबलता के साथ, अपने देश ही में होना चाहिये। मुझको विश्वास है कि जनता अपने साथ है। वह बहुत बड़ा बल है। अङ्गरेजों के हाथ में सीखी सिखाई हिन्दुस्थानी फौज है। वह सम्पूर्ण रूप में अपने हाथ में आजानी चाहिये। तोप ढालने वाले

ग्रौर बारूद बनाने वाले कारीगर, हाथ में हो गये हैं, क्योंकि उपद्रव होते ही अङ्गरेज लोग अपना सामान नष्ट कर देंगे। ग्रौर फिर हम खाली तोपों से कोई काम नहीं कर सकेंगे।

तात्या—'प्रबन्ध कर लिया है।'

रानी—'हमको ऐसी तोपें चाहनी पड़ेंगी, जो चलते समय धक्का न दें ग्रौर जल्दी गरम न हो जावें।'

तात्या—'इस प्रकार के कारीगरों को बराबर खोजा है। कुछ मिले भी हैं। खबर लगी है कि झाँसी में इस चतुराई वाले कारीगर हैं।'

रानी—'हाँ हैं। मैंने कुछ इकट्ठे किये हैं। ऐसी; बारूद बनाने वाले भी मैंने ढूंढ़े हैं, जो धुँग्रा बहुत कम दे।'

नाना—'ग्रब ज्यादा विलम्ब नहीं किया जावेगा।'

रानी—'कितने दिन ग्रौर लगेंगे ?'

नाना—'कुछ महीनों से ग्रधिक नहीं।'

रानी—'मेरी सम्मति में, ग्रभी जरा ग्रौर समय ग्रौर ग्रनुशासन की ग्रावश्यकता है।'

तात्या—'मैं बिलकुल मानता हूं बाईसाहब ! परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि विस्फोट जल्दी होगा। ग्रङ्गरेज लोग हिन्दू-मुसलमान सिपाहियों को ईसाई बनाना चाहते हैं। फौज की सही हालत जानने के लिये, मैं ग्रनेक साधन काम में ला रहा हूं। उन सबसे एकसा ही समाचार मिल रहा है। ग्रङ्गरेज कर्नल ग्रौर कप्तान पादरी बने हुये हैं। ग्रपने छापे की कलों से सहस्त्रों लाखों की संख्या में, छोटी-बड़ी पुस्तकें छाप-छाप कर, फौज में बाँट रहे हैं। जिनमें हिन्दू ग्रौर मुसलमानों के धर्मों की, बेहद निन्दा की जाती है। इसके ऊपर सिपाहियों को भाँति-भाँति के प्रलोभन देकर, ईसाई बनाने की कोशिश की जा रही है। चर्बी वाले कार्तूस ग्रब भी बन रहे हैं। पहले मैं समझता था कि बन्द कर दिये गये हैं। ग्रौर चर्बी वाली बात बहुत बढ़ा-बढ़ा कर फैलाई गई है। पर ग्रब तो निश्चय हो गया है कि बात सच्ची है। सिपाहियों को यह सब बहुत ग्रधिक

खटक रहा है। वे धर्म के पीछे प्राण गंवाने को उठ-उठ पड़ते हैं। अब उनको बहुत अधिक रोका नहीं जा सकेगा।'

रानी—'जब शीघ्रता करने की अटक होगी, मैं कहूंगी कि अब काम करने में आँधी से होड़ लगाओ। तब वैसा करना। परन्तु अभी जैसे बने वैसे संयम से काम लो। नीति और युद्ध का समन्वय होना चाहिये।'

नाना—'प्रयत्न तो यही किया जा रहा है। हम लोग इधर-उधर घूमते-घामते दक्षिण के तीर्थों को जा रहे हैं। राजाओं से कम बात करेंगे, जन-नायकों से मिलेंगे। क्योंकि बहुत दिनों तक स्वराज्य-युद्ध को चलाते रहने के लिये, हम लोगों को प्राण बुन्देलखण्ड, अवध और महाराष्ट्र से प्राप्त होंगे।'

तात्या—'यहाँ की स्त्रियाँ तो ऐसा काम कर रही हैं कि मैं दङ्ग हो जाता हूं।'

रानी—'हाँ मोतीबाई और उसकी सङ्गिनें काम कर रही हैं।'

तात्या—'मोतीबाई अभी आई थी। आप पूजा में थीं। उसने बतलाया कि फौज में ईसाई मत फैलाने का किस रूप में प्रयत्न हो रहा है। हमारे और लोग भी काम कर रहे हैं। उनसे मैंने अलग खोज की थी। मोतीबाई की बातों से उनके समाचारों की पुष्टि होती है।'

रानी—'मोतीबाई को यह मालूम है कि हमारे कुछ और लोग भी काम कर रहे हैं?'

तात्या—'नहीं बाईसाहब।

नाना—'ऐसा प्रबन्ध रक्खा है कि एक विभाग वाले दूसरे विभाग वालों की बात न जान सकें।'

रानी—'एक-एक पल्टन में तीन-तीन अफसर क्यों चुन रहे हो? दो-दो काफी थे।'

नाना—'तीन इसलिये, कि दो-दो मार दिये या बदल लिये गये तो काम करने के लिये एक-एक तो बच ही जावेगा।'

रानी—'तो अब आग को भड़काने की आवश्यकता नहीं है। उसको ढांकने की आवश्यकता है।'

तात्या—'कहीं दोनों की अटक है।'

रानी—'अङ्गरेजों ने भी जासूस छोड़ रक्खे हैं।'

नाना—'अन्तर इतना ही है कि उनका जासूस विभाग, महज पैसे के लिये अपना ईमान और अपना देश बेचने को तैयार है और हम लोगों का जासूसी विभाग, कुछ भी न लेकर अपने धर्म, अपने देश और स्वराज्य के लिये, अपने तन, मन, धन को आग में झोंकने के लिये प्रस्तुत है। पुलिस, जो शासन का सबसे अधिक प्रचण्ड कुत्ता होता है, वह भी हमारे साथ होता चला जाता है।'

रानी—'इसलिये कि हम सबके धर्म का और रोटी का सवाल है।'

नाना—'मुसलमान और भी अधिक कुढ़े हुये हैं। बादशाह की जो नजर-न्योछावर ईद और नौरोज के दिन होती थी, वह तो बारह-चौदह साल से बन्द है। अब अङ्गरेज चाहते हैं कि बादशाह दिल्ली का लाल किला खाली करके, मुंगेर चला जावे और गोरे लोग किले में बैठकर हिन्दुस्थान भर को लाल आंखें आराम के साथ दिखलाते रहें। जो अपने को कभी 'फिदवी खास' कह कहकर बल खाते थे, वे अब अपने को तान कर, मालिक खास कहते हैं।'

रानी—'क्या वे लोग यह सब खुल्लमखुल्ला कर रहे हैं?'

नाना—'बिलकुल। उनको अब कोई डर नहीं रहा। जनता में, विविध उपायों से, हिन्दू-मुसलमानों को लड़ाने का सिलसिला जारी है।'

रानी सोचने लगीं।

बोलीं, 'बहुत सावधानी और संयम से काम लेने की आवश्यकता है। हम लोगों के अपने कार्य की प्रगति के समाचार, बराबर मिलते रहने चाहिये।'

रानी ने खिड़की के बाहर दृष्टि डाली। रात कुछ अधिक गई समझ कर, ये दोनों उठ खड़े हुये और रानी का चरण स्पर्श करके चले गये।

यह पहला दिन था जब नाना और तात्या ने सहसा लक्ष्मीबाई के पैर छुये—यद्यपि वे दोनों आयु में उनसे बड़े थे।

तात्या वहाँ से आकर सीधा अपने प्रवास स्थान को नहीं गया। पहले जूही के घर पहुँचा।

समय कुछ अधिक हो गया था, परन्तु जूही सोई न थी।

तात्या के भीतर आते ही जूही सहमी। लाज की अरुणिमा चेहरे पर बिखर गई।

तात्या ने बैठते ही मुस्कराकर कहा, 'तुमने उस समय कुछ नहीं बतला पाया था। मैं बहुत जल्दी में था, इसलिये उतावली में ठीक तौर से पूछ भी नहीं पाया।'

जूही ने नीची पलकों को ऊँचा किया। उसकी आँखों से मोहक, मादक मधु-सा छलक पड़ा।

जरा एक ओर देखते हुये उसने कहा, 'नहीं कोई बात नहीं। मुझे लक्ष्मी पूजन के लिये घर आना था, इसलिये चली आई थी। अब सब सुनाती हूं।'

वह खड़ी थी। तात्या के कहने पर एक ओर बैठ गई। नृत्य-गान द्वारा झाँसी स्थित अङ्गरेजी सेना में वह जो कुछ किया करती थी वह उसने ब्योरेबार सुनाया। जब वह बात कर रही थी, केशजूटों में बँधे हुये चमेली के फूल, हिल-हिल जाते।

बात की समाप्ति पर तात्या ने उठकर, जूही के सिर पर हाथ फेरा। हाथ फेरने में एक फूल टूटकर नीचे गिर पड़ा। तात्या ने फिर खोंसने की कोशिश की।

जूही ने पलकें नीची किये हुये कहा, 'जाने दीजिये।'

'वह तो मैंने खोंस दिया जूही', तात्या बोला, 'मैं लक्ष्मी से मनाता हूं एक दिन आवे, जब इस देश की मुक्ति और तुम्हारे फूलों की महक का सम्मेलन हो।'

जूही खड़ी हो गई। आँखें निश्चय रूप से खुल गईं। श्वेत भूमिका में काली पुतलियों से प्रकाश झर सा पड़ा।

'यदि उस काम के करने में, मैं या मेरी तरह की और स्त्रियाँ मर जायें, तो इस टूटे हुये फूल की महक और देश की मुक्ति के सम्मेलन के वचन को न भूलियेगा।' जूही ने कहा।

तात्या बोला, 'कभी नहीं जूही!'

जूही—'आप जा रहे हैं? कब? फिर कब आइयेगा?'

तात्या—'कल चला जाऊँगा। जल्दी ही आऊँगा। कब आऊंगा? यह ठीक ठीक अभी नहीं कह सकता।'

तात्या नमस्ते करके चला गया। उस दिन तात्या को मालूम हुआ कि वास्तव में जूही का वर्ग बोधक नाम मंगलामुखी सार्थक है।

[४६]

जूही का छावनी में आना जाना बढ़ गया। उसके नृत्य-गान की कला में और भी मोहकता आ गई। परन्तु किसी सिपाही या अफसर में उसने अपने को बाल बराबर भी नहीं खोया। वे समझते थे कि जूही हृदय-हीन है।

जूही को हर पल्टन में तीन-तीन उपयुक्त अफसर ढूंढ़ने में बहुत दिन नहीं लगे। उन अफसरों को यह भी मालूम हो गया कि हम लोगों को किसी एक दिन महान कार्य करना है, परन्तु उनको ठीक ठीक यह नहीं मालूम था कि कब। जूही स्वयं नहीं जानती थी। कुछ और लोग जो पल्टनों के लिये इसी कर्तव्य पर नियुक्त थे उनको भी मालूम न था, परन्तु वे यह जानते थे कि जूही का काम, उसी योजना का एक अङ्ग है, जिसका एक भाग उन लोगों का भी काम था। परन्तु वे एक दूसरे से मिलते न थे। निषेध था।

एक दिन जूही के नृत्य-गान का आनन्द लेने के लिये कप्तान डनलप भी आ गया। एक क्षण के लिये जूही सकपकाई। परन्तु उसने अपना नियंत्रण शीघ्र कर लिया और वह बहुत मजे में नृत्य-गान करती रही।

असल में डनलप को उसके जासूस ने खबर दी कि छावनी में नर्तकियाँ आती हैं और अफसरों से दीन-धर्म सम्बन्धी कुछ बातें भी किया करती हैं। इसलिये वह सहसा वहाँ आ गया था।

नृत्य-गान से उसका मन शीघ्र ऊब गया क्योंकि अधिकांश अंगरेजों की तरह उसको भारतीय कलाओं के प्रति उपेक्षा थी। परन्तु जूही बहुत सुन्दर थी। उसको सहज ही विश्वास न होता था कि ऐसा सौन्दर्य अपने परिधान में किसी छल कपट को छिपाये होगा। तो भी उसने सवाल किये—

डनलप—'तुम छावनी से कितना पैसा कमा ले जाती हो?'

जूही—'जब जो मिल जाय हुजूर?'

डनलप—'नाचने गाने के सिवाय कोई और पेशा करती हो?'

जूही—'नहीं तो। मैं अविवाहित हूँ। कुमारी।'

डनलप—'तुम लोगों में विवाह भी होते हैं?'

जूही—'जरूर। हम लोग तो केवल नाचने गाने का पेशा करती हैं।'

डनलप—'तुम रानी साहब के यहाँ भी नाचने गाने जाती हो? मैंने सुना है कि उनको गाना सुनने और नाच देखने का शौक है।'

जूही—'मैं वहाँ नहीं जाती। कभी नहीं गई। उनको भगवान के भजन सुनने का शौक है। नृत्य का कोई शौक नहीं।'

डनलप—'रानी साहब गाती हैं।'

जूही—'बिलकुल नहीं। मुझको क्या मालूम।'

डनलप—'रानी साहब ने तुमको घोड़े की सवारी नहीं सिखलाई?'

जूही—'मैं उनके पास कभी जाती ही नहीं। घोड़े की सवारी क्यों सिखलाती?'

डनलप—'और औरतों को तो सिखलाती हैं?'

जूही—'सुना है।'

डनलप—'मोतीबाई नाम की वैश्या को जानती हो?'

जूही—'वह वैश्या नहीं है। आपसे किसने कहा?'

डनलप—'मुझसे सवाल करती है! जानती है कि धक्के देकर निकलवा दूंगा।'

जूही—'मैंने आपका क्या बिगाड़ा है?'

डनलप—'अच्छा हटो। आगे कभी छावनी मत आना।'

जूही ने मुँह उदास बना लिया और वह चली गई। परन्तु डनलप के ओट होते ही उसके होठों पर, गालों पर, मुस्कराहट की छटा छा गई। उसको याद आ गया—'एक दिन आवेगा जब फूलों की महक और देश की मुक्ति का सम्मेलन होगा।'

वह चाहती थी कि धक्के देकर निकाली जाती तो अच्छा होता, उसके शरीर से, कहीं से, थोड़ा सा खून निकल पड़ता तो और भी अच्छा होता।

नर्तकी चली गई, परन्तु उसका सौन्दर्य डनलप के भीतर एक कोने में हलकी छाप, एक टीस, छोड़ गया। उस टीस ने सिपाहियों के प्रति क्षोभ का रूप पकड़ा।

डनलप बोला, 'तुम लोग इन टके वाली औरतों के मोह में अपना पैसा और समय नष्ट करते हो। इन औरतों का झूठा जादू ही तुमको ईसाई होने से रोक रहा है। इन शैतानों को छोड़कर सच्चे धर्म पर ईमान लाओ, तो मुक्ति भी मिलेगी और पैसा अलग।'

पैसा और मुक्ति का घनिष्ठ सम्बन्ध सिपाही लोग बहुत दिनों से सुन रहे थे। पहले तो इस सम्बन्ध की बात पर उनको हँसी आया करती थी, अब वे खीजने लगे, जलने लगे। परन्तु सिपाहियों ने चुपचाप सुन लिया।

डनलप ने सोचा, उसकी बात घर कर रही है।

डनलप कहता गया, 'तुम्हारे देवी-देवता सब बदसूरत और व्यर्थ हैं। उन पर विश्वास करने के कारण तुम मूर्ख बने हुये हो। इसलिये तुम्हारी तरक्की नहीं हो पाती। ईसाई होते ही तुमको एक ईश्वर और उसके एक पुत्र पर ही विश्वास लाने की जरूरत है। दुनिया भर की डाकिनी, पिशाचिनी और भूत-प्रेतों से पीछा छूट जावेगा। हिन्दू-मुसलमान सब बेवकूफ हो। इन्जील पढ़ो तो आँखें खुल जावेंगी।'

सिपाहियों ने इस पर भी कुछ नहीं कहा।

डनलप बोला, 'रिसालदार, तुमको खुद ईसाई धर्म कबूल करना चाहिये, वरना तुम्हारे हक में अच्छा नहीं होगा। जैसे ही कोई ईसाई अफसर मिला, तुम बरखास्त कर दिये जाओगे।'

रिसालदार ने कहा, 'जो हुकुम।'

डनलप समझा, रिसालदार ईसाई होने के लिये लगभग राजी हो गया है।

पूछा, 'कब तक ?'

रिसालदार ने उत्तर दिया, 'कुछ महीनों की ही कसर है हुजूर !'

डनलप इस वाक्य के भीतरी अर्थ को नहीं समझा।

डनलप के जाते ही सारा सिपाही समाज व्यङ्ग और क्षोभ में प्रमत्त हो गया। सुरीली और रूप वाली नर्तकी के अपमान का उनको रञ्ज था। अपने धर्म की अवहेलना पर उनको क्रोध था और अङ्गरेज के मुँह से रानी का नाम तक लेने पर, उनको क्षोभ था।

'उस बिचारी को धक्के देकर निकालने की धमकी दी! बड़ा हूश है।'

'अरे पाजी है। कहता है धर्म-ईमान छोड़ दो। ये शराबी-कवाबी धर्म-ईमान को क्या जानें।'

'मेरी तबियत में तो आ गया था कि पोंदों पर दुलत्ती कस दूं।'

'जरा ठहरो। समय आ रहा है। फिलहाल मनाई है। सहते जाओ। थोड़ी सी कसर रह गई है। हमारे मुखिया लोग इलाज सोच रहे हैं।'

'खाक सोच रहे हैं। जब धर्म न रहेगा, मन्दिर, मसजिद साफ हो जावेंगे, तब हकीमजी इलाज करने आवेंगे।'

'कारतूस फिर जारी किये गये हैं। सुनता हूँ, कलकत्ते के कारखाने में लाखों करोड़ों की तादाद में बनाये जा रहे हैं और एक एक अङ्गरेज या ईसाई को चार आना सेर के हिसाब से, गाय और सुअर की चर्बी इकट्ठी करके कारखाने में देने का ठेका भी दे दिया गया है।'

'आने दो, आने दो कारतूसों को। जीते जी तो उन कारतूसों को छुयेंगे नहीं। और यदि खोलने के लिये मजबूर किया, तो पहली गोली इस पाजी डनलप पर।'

'ईश्वर एक है सो तो बिलकुल ठीक है। न हिन्दू इसके खिलाफ कुछ मानते हैं और न मुसलमान। लेकिन ईश्वर के एक ही बेटा हुआ यह कुर्सीनामा इस डनलप को कहाँ से मालूम हुआ?'

'जिस कारखाने से भ्रष्ट कारतूस निकले, उसी से इस तरह का मजहब निकला होगा।'

'हमारे यहाँ ईसा को पैगम्बर माना गया है, लेकिन खुदा का बेटा नहीं माना गया।'

'उसके बेटे तो मियाँ हम सब लोग हैं।'

'यह डनलप असल में अपने और अपने अङ्गरेज भाइयों के सिवाय किसी को खुदा का बेटा नहीं मानता।'

'हाय वह दिन कब आवेगा!'

'बहुत दिनों अपने ही भाइयों से लड़े और इन लोगों के बहकाने से उनको तबाह किया।'

'कहते हैं हमारा नमक खाते हो, नमक की बजाना—हम कहते हैं नमक तुम्हारे बाप का है?',

'बेशक। ये लोग अगर कुर्सीनामे में से साबित करदें कि ये खुदा के नाती पोते पन्ती बन्ती कुछ हैं तो बेशक है।'

'यह तो हम लोग साबित कर सकते हैं क्योंकि हम उनकी पूजा करते हैं, उसके कदमों में नमाज कहते हैं, लेकिन ये लोग-मौका मिला और शराब गटकी, क्लब घर में पहुंचे और नाचे मटके। इतवार को गिरजा में सातवें दिन जाकर तोबा करली और फिर वही रफ्तार जारी।'

'कूड़ा हम साफ करें और मोटी-मोटी तनख्वाह ये मारें।'

'हम हिन्दुस्थानी सिपाहियों की बारक देखो और इनके बंगले। हमारी रोटी, चपाती और दाल देखो और इनके अण्डे, बिस्कुट। हमारी छोटी-सी तनख्वाह देखो और इनका मुहरों का ढेर, जो रोज-रोज विलायत चला जा रहा है।'

'और इस पर बदमाशों की 'डैमफूल'। तहजीब के साथ बात करना जानते ही नहीं। इनका मुल्क तो बिलकुल हब्शी है।'

'सबको तबाह कर दिया। झाँसी की देवी को देखो, किस मुसीबत में अपने दिन गुजार रही है।'

'मियाँ तुमने देवी सच कहा। एक दिन कामासिन टौरिया की तरफ घोड़ा दौड़ाये जा रही थी। मेरी आँखों में चकाचौंध लग गई। जी चाहता था कि पैर छू लूँ।'

'सच कहता हूँ डनलप सरीखे शेखीबाजों को तो वह एक तमाचे में ढीला कर दे।'

'न जाने वह दिन कब आवेगा कि फिर रानी का झण्डा किले पर फहरावे।'

'किले में गोरों की बसीगत देखकर मेरा तो खून जल उठता है।'

'लोगों को किले में जाने की मनाई है।'

'जब हमारा राज हो जावेगा, हम इन लोगों को किले की हवा के पास भी न फटकने देंगे।'

'महीना, तारीख, वक्त कुछ मुकर्रर हुआ ?'

'चुप, चुप, अभी नहीं। ठहरे रहने का हुक्म है। इतन्जार करने का।'

'अब तो सहा नहीं जाता। कब तक अपने धर्म और मजहब की तौहीन बरदास्त करते रहें ?'

[४७]

सन् १८५६ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कर्णधार, भारतवर्ष भर की ओर से लेकर छोर तक, ईसाई बनाने के स्वप्न देखने लगे थे। अस्पृश्य चर्बी वाले कारतूसों की वास्तविकता को, स्वयं कई जिम्मेदार अङ्गरेज लेखक स्वीकार करते हैं। यह ठीक है कि उनके बन्द करने का प्रयत्न किया गया, परन्तु वह था शिथिल।

कम्पनी के बोर्ड के चेयरमैन तो उस स्वर्ण-घड़ी की प्रतीक्षा में आँखें अटकाये हुये थे, जब सारा भारतवर्ष—हिन्दू और मुसलमान—अपने धर्म को छोड़कर कम्पनी के धर्म को कबूल करके उनकी शासन सत्ता को प्रलय पर्यन्त, अपने कन्धों पर धारण किये रहें।

परन्तु इङ्गलैण्ड के कुछ लोगों को भारत में आने वाली विपत्ति के बादल का एक छोटा-सा टुकड़ा दिखलाई पड़ने लगा था। उनके मुनीम डलहौजी ने दूकान को भारत में इतना काफी पसारा दे दिया था कि अब उनकी रोकड़–बाकी खींचने और बहीखाता सम्भालने के लिये भी उनको कुछ समय चाहिये था। इसलिये डलहौजी को बुलाकर कैनिंग को भेजा।

कैनिंग ने विपत्ति के बादल के उस टुकड़े को स्पष्ट देख लिया। परन्तु उसको आत्म-विश्वास था इसलिये वह भारत में आया और आने पर ईसाई मत प्रचार के लिये एक काफी रकम हिन्दुस्थान के खजाने से निकाल कर रख दी। पञ्जाब को कम्पनी-भक्त समझा जाता था। ईसाईयत के प्रचार वेग से वह भी न बचा।

इधर नाना साहब, तात्या, बहादुरशाह और उनकी बेगम जीनत-महल, अवध की बेगम हजरतमहल और रानी लक्ष्मीबाई का व्यापक और सूक्ष्म प्रचार जारी था। स्वाधीनता के युद्ध के लिये क्षेत्र तैयार हो रहा था, थोड़ी सी ही कसर थी जब नियत दिन और समय पर एक सम्पूर्ण हिन्दुस्थान में विस्फोट होना था। वह दिन और समय अभी नियुक्त नहीं हुआ था।

सन् १८५७ का जनवरी मास आ गया। दमदम की छावनी में एक घटना हो पड़ी।

एक मेहतर ने ब्राह्मण सिपाही से पानी पीने के लिये लोटा माँगा। ब्राह्मण सिपाही मेहतर को लोटा कैसे दे देता ! वह मेहतर हो या न हो प्रचार अवश्य था। वह भागा या हटा नहीं। दृढ़ता पूर्वक डटा रहा।

बोला, 'ओहो, जातपाँत का यह घमण्ड ! आरहे हैं कारतूस जिनको दाँत से खोलना पड़ेगा। उनमें सुअर और गाय की चर्बी लगी है। देखें तुम्हारी जात उन कारतूसों के प्रयोग के बाद रहती है या जाती है।'

कारतूसों की सनसनी चल तो बहुत दिनों से रही थी और अकेले दमदम में नहीं किन्तु लगभग सारी छावनियों के हिन्दुस्थानी सिपाहियों में। दमदम में कारतूसों के बनाने का कारखाना था और उन दिनों बहुत संख्या में कारतूस बनाये भी जा रहे थे। इसलिये ब्राह्मण सिपाही के मन में यह भर्त्सना खप गई। वह अपने बेड़े के अन्य सिपाहियों से कहता फिरा। क्षोभ फैलाता गया और बढ़ता गया। सिपाहियों की बात उनके अङ्गरेज अफसरों तक पहुँची। उन्होंने इसको महज गप बतलाया। सिपाहियों ने कारखाने के हिन्दुस्थानी मजदूरों से तलाश किया। उन्होंने बात को सच बतलाया। दमदम के उन सिपाहियों ने हजारों चिट्ठियाँ हिन्दुस्थान भर की छावनियों में भिजवाईं। सिपाही कुछ कर उठने के लिये बेचैन हो उठे।

झाँसी की छावनी में भी चिट्ठी आई। आश्चर्य होता है कि थोड़े दिनों में ये चिट्ठियाँ गुप्त रूप में कैसे सर्वत्र फैल गईं। जूही इत्यादि अब छावनी में नहीं आ-जा पाती थीं पर उनके पता देने वाले लोग छावनी के सम्पर्क में थे।

रानी को इस घटना का समाचार मिल गया। उनको चिन्ता हुई कहीं ऐसा न हो कि ये लोग कुसमय कुछ कर बैठें।

बसन्त पञ्चमी हो चुकी थी फरवरी का महीना था। चाँदनी डूब चुकी थी। रात बिल्कुल अंधेरी। हवा ठण्डी मन्द-मन्द। तारे दमक रहे थे। कुछ बड़े-बड़े असंख्य छोटे-छोटे। जैसे चाँदनी अपनी चादर छितरा

कर छोड़ गई हो। नीचे सघन अन्धकार। सब दिशाओं में गुलाई सी बांधे हुये। झींगुर झङ्कार रहे थे।

रानी को नींद नही आ रही थी। कठिन व्यायाम से तप्त देह को ठण्ड भली लग रही थी। खिड़की खुली हुई थी। उसमें से कई बड़े-बड़े तारे दिखलाई पड़ रहे थे। झींगुर की झनकार के ऊपर दूर से आनेवाला किसानों और चरवाहों के फाग-गीत का स्वर सुनाई पड़ जाता था।

रानी ने सोचा, 'क्या ये लोग ईसाई बना लिये जावेंगे ? ईसाई होने पर फिर क्या अपनी फागें गा सकेंगे ? इनके बच्चे किल्ली-डण्डा और कबड्डी छोड़कर फिर क्या खेलेंगे ? होली, दिवाली, दशहरा, ईद सब यहाँ से चल देंगे ? स्त्रियों का क्या होगा ? ऐसी सुन्दर वेश-भूषा को छोड़कर ये सब क्या किरानी पोशाक करेंगी ? ईसाई आवागमन नहीं मानते, फिर मुक्ति का क्या अर्थ ? और गीता, रामायण इत्यादि का क्या होगा ?'

रानी बिस्तरों में बैठ गईं। निविड़ अन्धकार में भी महल के सामने वाला ऊँचा पुस्तक-भवन, अपनी थोड़ीसी रूप-रेखा प्रकट कर रहा था।

'क्या वेद-शास्त्र, गीता, पुराण, दर्शन, काव्य ये सब व्यर्थ हो जायेंगे ? जला दिये जायेंगे या फेक दिये जायेंगे ?'

रानी ने होठ से होठ दबाया। नथनों से भभक निकली।

'कदापि नहीं। कभी नहीं। मैं लड़ूँगी। उन गरीबों के गीतों की रक्षा के लिये। इन पुस्तकों के लिये और जो कुछ इनके भीतर लिखा है उसके लिये। ऋषियों का रक्त ऐसा हीन और क्षीण नहीं हो गया है कि उनकी सन्तान तपस्या न कर सके। कीड़ों मकोड़ों की तरह यों ही विलीन हो जाय।'

'नहीं कृष्ण अमर हैं। गीता अक्षय है। हम लोग अमिट हैं। भगवान की दया से, शंकर के प्रताप से, मैं बतलाऊँगी कि अभी भारत में कितनी लौ शेष है। और यदि मैं इस प्रयत्न में मर गई तो क्या होगा। कोई दूसरा तपस्वी मुझसे अच्छा खड़ा हो जावेगा और इस भूमि का उद्धार करेगा। तपस्या का क्रम कभी खण्डित नहीं होगा।'

रानी फिर लेट गईं।

'नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः' सोचते हुये निद्रा लाने की चेष्टा करने लगीं। इतने में पहरे वाली स्त्री-सैनिक ने द्वार के पास आकर खाँसा। रानी ने अनसुनी कर दी। वह फिर खांसी। रानी बैठ गईं।

पूछा, 'क्या है ?'

पहरे वाली भीतर आई।

उसने कहा, 'श्रीमन्त सरकार, मोतीबाई दर्शन के लिये आई है। मैंने मना किया। नहीं मानी। हठ कर रही है। कहती है आधी घड़ी का तुरन्त समय दिया जाय। जैसी आज्ञा हो।'

रानी ने मोतीबाई को बुला लिया। पास काठ की एक चौकी पड़ी थी। मोतीबाई से उसी पर बैठने को कहा। वह नहीं बैठी।

बोली, 'सरकार इस चिट्ठी को पढ़ लें।'

मोतीबाई दीपक उठा लाई। चिट्ठी पर किसी के हस्ताक्षर नहीं थे। उसमें लिखा था:—

'अब और नहीं सहा जाता। कब तक कलेजे में छुरी चुभोये रहें। उठो और धर्म के लिये कट मरो। थोड़े से विदेशियों ने इस विशाल देश को घेर रक्खा है। निकाल दो। देश को स्वतन्त्र करो। धर्म की रक्षा करो।'

रानी—'यह चिट्ठी कहाँ मिली ?'

मोतीबाई—'इस प्रकार की कई चिट्ठियाँ छावनी में आई हैं। मुझको भरोसे के लोगों ने आज दिन में बतलाया था। इस चिट्ठी को सरदार तात्या साहब ने दिया है।'

रानी—'तात्या टोपे ! कहाँ हैं ? झाँसी कब आये ?'

मोतीबाई—'सन्ध्या के समय आये और प्रातःकाल के पहले चले जायेंगे। वह इसी समय दर्शन करना चाहते हैं। बाहर खड़े हैं।'

रानी 'बाहरी कमरे में बिठलाओ। मैं आती हूँ।'

रानी ने सफेद साड़ी पर एक मोटा सफेद दुशाला ओढ़ा और वह बाहरी कमरे में तात्या के पास पहुँची। मोतीबाई को रानी ने उसी कमरे में बिठला लिया।

रानी ने पूछा, 'इस चिट्ठी का क्या प्रयोजन है? मुझको तो असमय जान पड़ता है।'

'हाँ बाईसाहब', तात्या ने उत्तर दिया, 'इसीलिये ले आया हूं। मोतीबाई ने बतलाया कि इस प्रकार की चिट्ठियाँ यहां की छावनी में भी आई हैं। सिपाहियों में बेहद जोश फैला हुआ है, परन्तु न तो अभी कोई व्यवस्था हो पाई है और न काफी सङ्गठन हुआ है। समय के पहले यदि विस्फोट हो गया तो अनेक सिपाही व्यर्थ मारे जावेंगे। असफलता और निराशा देश को दबा लेगी और न जाने कितने समय के लिए यह देश विपद्ग्रस्त हो जावेगा।'

रानी—'इसको रोकना चाहिये और सङ्गठन शीघ्र कर लिया जाना चाहिये।'

तात्या—'रुपये-पैसे की कोई असुविधा नहीं रही। काफी समय तक लड़ाई चलाते रहने के लिये धन इकट्ठा हो गया है। बारूद का और शस्त्रों का बहुत अच्छा प्रबन्ध है। इसीलिये जल्दी से जल्दी की जो तारीख हो सकती थी नियुक्त कर ली गई है। दिल्ली, लखनऊ इत्यादि वाले सहमत हैं। आपकी सहमति लेकर सवेरे के पहले रवाना हो जाऊँगा।'

'कौनसी तारीख?' रानी ने प्रसन्न होकर पूछा।

'इकतीस मई रविवार, ११ बजे दिन', तात्या ने बतलाया।

रानी—'तीन-चार महीने हैं। मुझको यह तारीख पसन्द है। देश भर में सब जगह एक साथ?'

तात्या—'सब जगह एक साथ। तब तक हम लोग मनाते हैं कि सिपाही और जनता, आत्म-नियन्त्रण से काम लें।

रानी—'मोतीबाई, अब तुम लोगों को ऐसे साधन काम में लाने पड़ेंगे, जिसमें छावनी में कोई भी उपद्रव उस दिन और उस समय तक न होने पावे।'

तात्या—'हर पल्टन के तीन-तीन अफसरों को इस तारीख और समय की सूचना कर दी जावे और उनको समझा दिया जावे कि तब तक सब प्रकार के अपमान चुपचाप सहते चले जावें। त्राण की घड़ी वही है और उनसे कह देना कि जब तक कमल का फूल छावनी में न आवे, किसी को भी तारीख और समय न बतलाया जावे और सिपाहियों को उत्तेजित होने से बरकाया जावे। कमल का फूल बैशाख से खिलने लगता है। प्रत्येक तालाब में काफी मिलता है। वह ठीक समय छावनी से छावनी घुमाया जावेगा। उसका आना समग्र सिपाहियों को कर्तव्य के लिये जाग्रत करना है और तारीख तथा ११ बजे के समय की सूचना देना है।'

मोतीबाई—'मैं अच्छी तरह समझ गई।'

रानी—'अब कहाँ जाओगे ?'

तात्या—'ग्वालियर। वहाँ से राजपूताने की ओर। एक चक्कर चैत के उपरान्त और लगेगा। नाना साहब तीर्थ-यात्रा के लिये निकलेंगे। उसी की आड़ में सब कार्यक्रम हर जगह बतला आवेंगे।'

[४८]

फरवरी में एक दुर्घटना हो गई। बारकपूर की १९ नम्बर पल्टन को कारतूस प्रयोग करने के लिये दिये गये। सिपाहियों ने प्रयोग करने से दृढ़तापूर्वक इनकार कर दिया। बङ्गाल में उस समय कोई गोरी पल्टन न थी। इसलिये जनरल ने तुरन्त बर्मा से एक गोरी पल्टन मँगवाकर १९ नम्बर पल्टन से हथियार रखवा लेने और सिपाहियों को बरखास्त कर देने का निश्चय कर लिया। सिपाहियों को मालूम हो गया। उनमें से कुछ ने चुपचाप हथियार रख देने की अपेक्षा तुरन्त क्रांति कर डालने का संकल्प किया। उनके हिन्दुस्थानी अफसरों ने ३१ मई तक सब्र करने की सलाह दी। परन्तु उस पल्टन का एक सिपाही मङ्गल पांडे आपे से बाहर हो गया। उसने कुछ अफसर मार डाले। उसको फांसी दे दी गई।

इस घटना की सूचना बहुत शीघ्र उत्तर भारत में फैल गई।

नाना साहब और अलीमुल्ला मार्च के महिने में तीर्थ यात्रा के लिये निकल पड़े। दिल्ली में गुप्त मन्त्रणायें हुईं। फिर अम्बाला गये। इसके उपराँत मध्य अप्रैल में लखनऊ पहुँचे। यहाँ नाना साहब का समारोह के साथ जलूस निकला। नाना अङ्गरेजों से प्रत्येक स्थान पर मिलता था, जिसमें वे लोग निश्चिन्त बने रहें।

लखनऊ के बाद कालपी और झांसी आये। योजना का कार्य-क्रम निश्चित करके चले गये। उत्तर हिन्द की लगभग समस्त छावनियों में होते हुये नाना और अजीमुल्ला बिठूर आ गये। स्थान-स्थान और प्रदेश-प्रदेश में प्रभाव वाले व्यक्ति प्रचार के कार्य में जुट गये। अभी तक अङ्गरेजों को क्रांति के सामूहिक रूप का बिलकुल पता न था।

गर्मी आ गई। सरोवरों में कमल खिल उठे। फसल भी कटकर घरों में आने लगी। स्वाधीनता-युद्ध के दो चिन्ह प्रकट हुये। एक कमल दूसरा रोटी।

असंख्य कमल के फूल भारतवर्ष भर की छावनियों में फैल गये।

कमल फूलों का राजा है। सरस्वती की महानता, लक्ष्मी की विशालता उसके पराग और केसर में कहीं अदृष्ट रूप से निहित है। वह विष्णु की नाभि से निकला और अनन्त समय के उपराँत वहीं वापिस जायगा। वह हिन्दुस्थान की प्रकृति का, संस्कृति का, मृदुल, मंजुल, माँगलिक और पावन प्रतीक है। उसका रङ्ग हलका लाल है। वह बिलकुल रक्त नहीं है। हिन्दुस्थान में होने वाली क्राँति खूनी जरूर थी, परन्तु उस खूनी क्रांति के गर्भ में मंजुलता और पावनता गढ़ी हुई थी। इसीलिये सन् ५७ की क्राँति का यह प्रतिबिम्ब चुना गया। क्राँति करेंगे मानवीयता की रक्षा के लिये, क्राँति होगी—मानवीयता लिये हुये!

कमल के साथ रोटी भी चलती थी! एक गांव से दूसरे गांव एक रोटी भेजी जाती थी। दूसरे गांव में फिर ताजी रोटी बनी और तीसरे गाँव भेज दी गई। हिन्दुस्थान की वह क्रांति हिन्दुस्थानियों की रोटी की रक्षा के लिये हुई थी। रोटी उस रक्षा के प्रयत्न का प्रतीक थी।

जिसने सोचा उसने कल्पना का कमाल कर दिया! यह उपज हिन्दुओं और मुसलमानों, दोनों की थी।

कमल और रोटी का दौरा समाप्त नहीं हुआ था कि छः मई को मेरठ में विस्फोट हो गया।

मेरठ में बड़ी छावनी थी। कई हिन्दुस्थानी और अङ्गरेजी पल्टनें थीं। एक हिन्दुस्थानी पल्टन के नब्बे सिपाहियों को कारतूस दिये गये। सिपाहियों को विश्वास था कि कारतूस अस्पृश्य चर्बी वाले हैं। अङ्गरेजों ने उन्हें आश्वासन दिया, कि नहीं हैं। पचासी सिपाहियों ने कारतूसों को छूने से इनकार कर दिया। उनका कोर्टमार्शल हुआ। आज्ञा न मानने के अपराध में उनको दस-दस बरस का कठोर कारावास का दण्ड मिला। नौ मई के दिन इन सिपाहियों को गोरी फौज और तोपखाने के सामने लाकर खड़ा किया गया। वरदियां उतरवा ली गईं और हथकड़ी बेड़ियां डाल दी गईं। छावनी के बाकी हिन्दुस्थानी सिपाही भी इस दृश्य को देखने के लिये बुला लिये गये थे।

इसके बाद वे लोग जेलखाने भेज दिये गये ।

उनके साथी सिपाही क्षुब्ध हो गये, परन्तु उनको ३१ मई तक रुके रहने की आज्ञा थी, इसलिये वे गुस्सा पी गये । घटना सुबह की थी ।

सन्ध्या समय हिन्दुस्थानी सिपाही बाजार में गये । सबसे पहले कुछ वेश्याओं ने आवाजें कसीं ।

'आहा ! आपकी मूछें देखिये ! कैसी भांजी हैं !! भाइयों को जेलखाने भेजकर मुए किसी पोखरे में न डूब मरे !!!'

फिर गृहस्थ स्त्रियों ने । पुरुषों ने भी ताने कसे ।

सिपाही बारकों को लौट आये । धैर्य ने साथ छोड़ दिया । स्त्रियों के शब्द कलेजे में बिध गये । रात को गुप्त मन्त्रणा हुई । निश्चय हुआ कि ३१ मई तक नहीं ठहरेंगे । उसी रात उन लोगों ने दिल्ली खबर भेजी कि कल परसों तक दिल्ली पहुंचते हैं, सब लोग तैयार रहें ।

दस मई को मेरठ में तलवार बन्दूक चल गई अङ्गरेजों को मारमूर कर सिपाही दूसरे दिन दिल्ली पहुँच गये । वहाँ की हिन्दुस्थानी सेना उनसे मिल गई । दिल्ली निवासियों ने उनका साथ दिया ।

चारों ओर 'दीन दीन' 'अल्ला हो अकबर' और 'हर हर महादेव' की पुकारें एक दूसरे में होकर गूंज गईं । दिल्ली की अङ्गरेजी फौज मुहासिरे में पड़ गई ।

मेरठ और दिल्ली की सम्मिलित हिन्दुस्थानी फौज ने दिल्ली के किले पर अधिकार कर लिया । बादशाह बहादुरशाह को भारत का सम्राट घोषित किया और २१ तोपों की सलामी दी । बादशाह ने क्रांति का नेतृत्व स्वीकार किया और उसने सबसे पहला जो काम लिया वह था गौ-वध कतई बन्द कर देना ।

मई के महीने में लगभग सारे उत्तर हिन्द में क्रांति की आग भड़क उठी—किसी दिन कहीं, और किसी दिन कहीं ।

कानपूर में चौथी जून की रात को यकायक आधी रात के समय तीन फायर हुये। हिन्दुस्थानी सेना ने कानपूर में क्रान्ति का आरम्भ कर दिया। सवेरे खजाना और शस्त्रागार क्रान्तिकारियों के हाथ में आ गये और नाना को राजा घोषित कर दिया गया।

[४९]

स्कीन, गार्डन, डनलप इत्यादि को झाँसी में मई की खबरें मिल गई और रानी को उनसे पहले ही ! रानी ने एक विशेष समय तक के लिये, लगभग सब आने-जाने वालों का महल आना बन्द कर दिया। जो थोड़े-से लोग आते-जाते थे, उनमें एक मोतीबाई थी। उसी द्वारा रानी सब महत्वपूर्ण समाचार लेती और देती थीं। मोतीबाई, खुदाबख्श और रघुनाथसिंह के सम्पर्क में थी। वह इन लोगों को सब बातें भुगता देती थी—स्वाभाविक था। ये दोनों दूसरे लोगों के सम्पर्क में थे। इस प्रकार काम जारी था।

मोतीबाई ने खुदाबख्श को महल में आगन्तुकों वाले निषेध का वास्तविक कारण बतलाया। खुदाबख्श ने पीरअली को सुनाया और पीरअली ने नवाब अलीबहादुर को। ३१ मई के दिन और समय वाली बात भी उन अङ्गरेज अफसरों को मालूम हो गई। परन्तु मेरठ और दिल्ली इत्यादि स्थानों में इसके काफी पहले ही काण्ड हो चुके थे इसलिये उन लोगों ने ३१ मई सम्बन्धी सावधानी पर ध्यान नहीं दिया।

स्कीन ने जो चिट्ठियां मई के महीने में लैफ्टिनेन्ट गवर्नर के पास आगरे भेजीं उनमें साफ लिखा कि झाँसी में विद्रोह का कोई भी चिन्ह नहीं है और सिपाहियों का पूरा विश्वास किया जा सकता है। पहली जून की चिट्ठी में उसने सब से पहले कुछ झंझट की सूचना दी।

'रात को मुझे खबर मिली कि कुछ ठाकुर लोग कोंच पर धावा करने वाले हैं। मैंने तुरन्त डनलप को सूचित किया। सवेरे ही कुछ फौज गाँव की रक्षा के लिये भेज दी। फौज के पहुँचते ही ठाकुरों का विचार बदल गया। इधर-उधर भले ही विद्रोह फैला हो, परन्तु यहाँ के लोग हम से कभी नहीं बिगड़ेंगे।'

असल में रानी की दृढ़ सावधानी के कारण, झाँसी में असमय विस्फोट नहीं हो पाया। महल में आगतुन्कों के निषेध की बात सुनकर इन लोगों को और भी विश्वास हो गया कि रानी को आन्दोलन से

सरोकार नहीं है कोंच पर इकतीस मई को 'कुछ ठाकुरों' का पहुँच जाना, जिसका समाचार स्कीन को पहली जून की रात को मिला, काफी अर्थ रखता था। परन्तु जान पड़ता है कि उन ठाकुरों को यह नहीं मालूम था कि ३१ मई के आगे के लिये कार्यक्रम स्थगित हो गया है। और फिर दूसरे ही दिन कुछ हिन्दुस्थानी फौज का डनलप के साथ कोंच पहुँच जाना ठाकुरों के हतोत्साह होने का कारण हो गया।

चौथी जून को कानपूर में और उसी दिन झांसी में क्रान्ति के लक्षण प्रकट हुये। गुरबख्शसिंह नाम का हवलदार कुछ सैनिकों को लेकर कम्पनी निर्मित छोटे से किले में, जो पुराने किले से एक मील शहर बाहर है, और जिसे अङ्गरेज लोग उसकी बनावट के कारण 'स्टार फोर्ट' (तारा-गढ़) कहते थे, घुस पड़ा और लड़ाई का सब सामान और रुपया-पैसा उठवाकर ले आया। डनलप बची बचाई सेना लेकर मुकाबले के लिये आया।

स्टार फोर्ट में कोई भी सामान न पाकर वह लौट गया। कमिश्नर को सूचना मिली। उसकी सलाह पर छावनी के सब अङ्गरेज अपने बाल-बच्चे लेकर किले में जाने को तैयार हुये। डनलप ने नौगांव छावनी, सहायता पाने के लिये, पत्र लिखा।

अब इन लोगों को रानी की, रानी के शौर्य की, उनकी योग्यता की और उनकी तेजस्विता की याद आई।

गार्डन कई अङ्गरेजों को लेकर रानी महल पर पहुंचा।

गार्डन ने कहलवाया, 'अभी हमको भरोसा है कि फौज में थोड़ी सी गड़बड़ हुई है उसको दबा लेंगे, परन्तु यदि कोई बड़ी विपद आवे तो आप हमारी सहायता करियेगा।'

रानी ने उत्तर दिलवाया, 'इस समय हमारे पास न तो काफी शस्त्र हैं और न लड़ने वाले आदमी। देश में उपद्रव फैल रहा है। यदि अनुमति मिल जाय तो मैं अपनी और जनता की रक्षा के लिये एक अच्छी सेना भर्ती कर लूं।'

डनलप सहमत होकर चला आया।

दूसरे दिन छावनी में स्कीन, गार्डन और डनलप की बैठक हुई। उन लोगों को अब भी विश्वास था कि हिन्दुस्थानी का व्यक्तिगत रूप से अपमान करना किसी भी नुकसान का कारण नहीं बनता। वे समझते थे कि सारी फौज में कुछ व्यक्ति नाराज हो सकते हैं, सब नहीं।

इसी भरोसे डनलप एक और अङ्गरेज को साथ लेकर पल्टन में पहुँचा। सिपाहियों ने, जिनमें रिसालदार कालेखाँ सबसे आगे था, तुरन्त गोली से मार दिया।

अङ्गरेजों में भगदड़ मच गई।

गार्डन अकेला रानी के पास दौड़ा आया। मुन्दर के द्वारा बातचीत हुई।

गार्डन—'हम लोग पुरुष हैं। हमको अपनी चिन्ता नहीं। हमारी स्त्रियों और बच्चों को अपने महल में आश्रय दे दीजिये।'

मुन्दर ने रानी को आगा-पीछा सुझाया, 'सरकार, इस आफत से दूर रहिये। फौज के लोग हमारे महल पर टूट पड़ेंगे।'

रानी ने धीमें, परन्तु दृढ़ स्वर में मुन्दर से कहा, 'हमारी लड़ाई अङ्गरेज पुरुषों से है, उनके बाल-बच्चों से नहीं। यदि मैंने सिपाहियों का नियन्त्रण न कर पाया तो उनका नेतृत्व क्या करूँगी? कह दो गार्डन से कि स्त्रियों और बालकों को तुरन्त महल में भेज दे।'

मुन्दर ने सम्वाद दे दिया।

गार्डन तुरन्त स्त्रियों और बच्चों को छावनी से निकाल कर शहर ले आया और उनको महल में दाखिल कर दिया। रानी ने उनको भोजन करवाया और ढाढ़स दिया।

परन्तु स्कीन ने हठ किया, इसलिये ये सब महल से हटा लिये गये और किले में भेज दिये गये।

इस बीच में सिपाही छावनी के तहस-नहस में उलझे थे। फारिग होकर वे किले पर धावा करने के लिये बढ़े। गार्डन इत्यादि ने सब

फाटक बन्द कर लिये। लेकिन सिपाही बहुत थे। उनके पास तोपखाना था और किले में तोप न थी—युद्ध-सामग्री भी थोड़ी, खाने के लिये करीब-करीब कुछ नहीं।

नवाब अलीबहादुर ने उसी समय पीरअली को भेजा और कहला भेजा कि हुक्म हो तो ओर्छा और दतिया से सेना बुलवा ली जावे।*

अङ्गरेज इतने भयभीत हो गये थे या इतनी हेकड़ी में थे कि उन्होंने जवाव दिया, 'कोई जरूरत नहीं है। छोटा-सा बलवा है। दबा लेंगे।'

पीरअली ने नवाब साहब को वह उत्तर भुगता दिया। खुदाबख्श मिल गया। उसको भी सुनाया। खुदाबख्श ने मोतीबाई को रानी के पास भेजा और स्वयं रघुनाथसिंह के पास चला गया।

मोतीबाई ने कहा, 'सरकार अब समय आ गया है।' और खुदाबख्श की कही बात सुनाई।

रानी बोलीं, 'नियुक्त तारीख पर आरम्भ न होने के कारण कार्यक्रम का रूप बदल गया है। तो भी, अपनी सेना तुरन्त तैयार करने का प्रयत्न इसी समय किया जाना चाहिये। रघुनाथसिंह को समाचार दो कि कटीली से दीवान जवाहरसिंह को बुलालें और जितनी विश्वसनीय सेना इकट्ठी हो सके आठ मील पर, रखसा के निकट, जमा करें। घुड़सवार अधिक हों। जब तक मेरी आज्ञा न मिले झाँसी की ओर न आवें।'

मोतीबाई ने दीवान रघुनाथसिंह को आज्ञा सुना दी। वह खुदाबख्श को लेकर चला गया।

उस दिन सिपाही किले पर बराबर आक्रमण करते रहे। परन्तु अङ्गरेज उनको गोलियों की बौछार से पीछे हटाते रहे।

दूसरे दिन भी लड़ाई चलती रही। दोपहर के उपरान्त अंग्रेजों के पास खाने के लिये एक दाना भी न रहा। किले वाला महल दुबारा

---

*नवाब अलीबहादुर का बयान जो उन्होंने सन् १८५९ में दिया था और जिसकी नकल नवाब बन्ने के पास है।

तिबारा छाना कि कहीं कुछ रक्खा हो। वहाँ कुछ भी न मिला। शाम के बाद लड़ाई कुछ ढीली हुई। अङ्गरेजों ने किसी प्रकार रानी के पास अपनी भूख का समाचार भेजा।

रानी ने दो मन रोटियां तत्काल बनवाईं। काशीबाई से कहा, 'तू इन रोटियों को किसी प्रकार अङ्गरेजों के पास पहुंचा। तुझको सारे गुप्त मार्ग मालूम हैं, सुन्दर और मुन्दर को साथ लेजा, और कोई न जावे। जहाँ मशाल की अटक पड़े जला लेना।'

सहेलियाँ रानी की दया को जानती थीं, परन्तु उसकी सीमा को नहीं देखा था।

काशी ने विनम्र शान्त स्वर में कहा, 'सरकार यदि हम लोग इस परिस्थिति में पड़े होते तो क्या अङ्गरेज लोग हमको दाना-पानी देते?'

रानी ने उत्तर दिया, 'अङ्गरेजों जैसे बनकर हम अपने और उनके बीच के अन्तर को क्यों मिटायें? और फिर इन लोगों को भूखा मारकर आगे बढ़ना अनुष्ठान को कलुषित करना है।'

रानी मुस्कराईं। काशी का हृदय आभासमय हो गया।

परन्तु फिर भी उसने सवाल किया, 'कब तक आप इनको इस प्रकार खिलायेंगी?'

'जब तक मेरी निज की सेना तैयार नहीं हो गई,' रानी ने कहा, 'जब सेना तैयार हो जावेगी, मैं उन लोगों के हथियार रखवा लूँगी और कहीं सुरक्षित स्थान में कैद कर दूँगी।'

उन तीनों सहेलियों ने रोटियों के गट्ठर पीठ पर लादे और गुप्त मार्ग में होकर किले में ले गईं। गार्डन इत्यादि ने उन लोगों को प्रणाम किया। उनमें एक व्यक्ति मार्टिन नाम का था। मार्टिन ने सुरङ्ग का रास्ता देख लिया। दूसरे दिन फिर ये तीनों किले में दो मन रोटियाँ दे आईं। मार्टिन चुपचाप पीछे-पीछे आया और गुप्त मार्ग से बाहर निकल कर आगरा चला गया। सहेलियों को या किसी को भी मालूम नहीं पड़ा।

उस दिन घोर युद्ध हुआ। गार्डन उत्तरी फाटक के ऊपर की खिड़की में से ताक-ताककर बन्दूक का निशाना लगा रहा था और सिपाही उसके मारे हैरान हो रहे थे। उनको शहर का एक पुराना तीरन्दाज मिल गया। उस तीरन्दाज ने एक पत्थर की ओट लेकर गार्डन पर तीर छोड़ा। तीर गार्डन की गर्दन को फोड़कर पार हो गया। गार्डन के मरते ही, समस्त अङ्गरेजों में उदासी और निराशा छा गई।

उधर रिसालदार कालेखाँ ने किले के उत्तर-पश्चिम कोने पर, जिसे शङ्कर-किला कहते हैं, भयानक दाब बोली और अपनी सेना की एक टुकड़ी सहित किले में घुस गया। अङ्गरेजों ने देखा कि अब कोई बचत नहीं, इसलिये उन्होंने सुलह की चर्चा छेड़ी। सिपाहियों ने रक्षा का आश्वासन दिया। स्कीन ने ८ जून के सवेरे किले का सदर फाटक, जो दक्षिण की ओर है, खोला और कहा कि हमको सागर चले जाने दो।

सिपाहियों ने उन लोगों को कैद कर लिया। सिपाहियों का मुखिया रिसालदार कालेखाँ छावनी चला गया।

थोड़ी देर में वहां जेल-दरोगा बख्शिशअली आया। उसकी आँखें लाल थी और मुंह झुलसा हुआ। उसने अङ्गरेजों की ओर देखा।

सिपाहियों से बोला, 'रिसालदार साहब रास्ते में मुझे मिले थे। हुकुम दे गये हैं कि इन सब को झोखनबाग ले चलो।'

सिपाही अङ्गरेजों को झोखनबाग ले आये। वहां एक सिपाही घोड़े पर सवार आया। बख्शिशअली ने उसके कान में कुछ कहा। सवार हिचका।

बख्शिशअली बोला, 'भाइयो, यह जो स्कीन कमिश्नर खड़ा है, इसने मुझको जूतों की ठोलों से पीटा था; अब क्या देखते हो?'

सिपाही एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे।

बख्शिशअली—'और इसने जूते की ठोल से मुझको इतना मारा था कि मैं गिर पड़ा था। मारने के पहले इसने मुझको सुअर की गाली दी थी।'

स्कीन भयभीत खड़ा था। परन्तु इस आरोप ने उसको जगा दिया। बोला, 'मैंने गाली कभी नहीं दी। मारा शायद हो, मगर याद नहीं आता। काम में गफलत करने पर तो कभी कभी मारना ही पड़ता है।'

वह जो सवार आया था, उसकी ओर बख्शिशअली ने भयानक दृष्टि से देखा।

सवार ने कड़कती हुई आवाज में कहा, 'रिसालदार साहब ने इन सबके कतल का फरमान किया है।'

बख्शिशअली ने सबसे पहले स्कीन को मारा, और फिर सब काट दिये गये। उस समय वहाँ सिवाय उन सिपाहियों के और कोई न था।

उसी समय रिसालदार कालेखाँ आ गया। खून में रंगी तलवारों को देखकर क्रुद्ध स्वर में बोला, 'यह क्या किया!'

बख्शिशअली ने कहा, 'और क्या करते?'

रिसालदार ने अपने स्वर को संयत करके पूछा, 'किसके हुकुम से? क्या रानी साहब ने हुकुम दिया था?'

बख्शिशअली के पास ही वह सवार खड़ा था। उसने उत्तर दिया, 'रानी साहब को कुछ नहीं मालूम। वे तो हम लोगों से कुछ कटी कटी सी जान पड़ती हैं।'

'तब किसके हुकुम से?' रिसालदार ने और भी संयत स्वर में पूछा।

बख्शिशअली ने जवाब दिया, 'आपके नाम पर मेरे हुकुम से...'

'ओफ!' रिसालदार ने धीरे से कहा, 'हमारे बड़े मुखिया जब सुनेंगे क्या कहेंगे? मगर...मगर...'

रिसालदार थोड़ी देर चुप रहा। सूर्य की किरणों में जलन बढ़ती चली जा रही थी। रिसालदार ने मुँह पर हाथ फेरा। माथा दबाया। थोड़ी देर खामोश रहा।

बोला, 'जो हुआ सो हुआ। आगे बिना हुकुम के कोई काम न करना। रानी साहब के महल पर चलो।'

वैसी ही तलवारें लिये सिपाही महल की ओर चल पड़े।

[५०]

सिपाहियों में अनुशासन न था। घिन और गुस्सा मन को घेरे थे। अपनी विजय पर उनको पागलों जैसा हर्ष था।

रानी के महल पर वे पीछे पहुँचे, उनका शोरगुल पहले पहुँच गया। पहरेदार ने फाटक बन्द कर लिये। सेना के कुछ सिपाही शहर को लूटने की बातचीत करने लगे। कवायद-परेड सीखे हुये वे सिपाही अच्छे नेता की कमी के कारण महज हुल्लड़ और भब्भड़ की भूमिका भरने लगे। कोई किसी की नहीं सुन रहा था। हर एक आदमी अपना-अपना गुबार निकालने की धुन में था।

इतने में कालेखाँ चिल्लाया, 'खलक खुदा का, मुलक बादशाह का राज महारानी लक्ष्मीबाई का।'

सब सिपाहियों ने यही नारा लगाया। सिपाहियों की विचारधारा इसी नारे की ओर मुड़ गई—उस नारे ने अनुशासन की कमी को कुछ पूरा किया। खिड़की की झरप हटी। हाथ जोड़े हुये लक्ष्मीबाई दिखलाई दीं। पीछे सशस्त्र सहेलियाँ।

बिलकुल गौर-बदन। गले में हीरों का कण्ठ। होठ एक दूसरे से सटे हुये। सिपाहियों ने फिर नारा लगाया।

रानी ने नमस्कार किया। हाथ उठाकर चुप रहने का संकेत किया। भीड़ में सन्नाटा छा गया। रिसालदार आगे बढ़ा।

रानी ने तीव्र स्वर में पूछा, 'क्या है ? तुम रिसालदार कालेखाँ हो ?' स्वर में तीव्रता होते हुये भी कण्ठ का प्राकृतिक सुरीलापन था।

कालेखाँ ने सैनिक प्रणाम किया। बोला, 'हुजूर का ताबेदार कालेखाँ रिसालदार मैं ही हूं।'

रानी की अनिमेष दृष्टि से कालेखाँ ने अपनी आँख मिलाई। कालेखां की आंख झरप गई। नीची हो गई। रानी ने कहा, 'इन तलवारों में रक्त कैसे लगा ?'

कालेखाँ ने बतलाया।

रानी बोलीं, 'इन्हीं कर्मों से स्वाराज्य और बादशाही स्थापित करोगे ? तुम लोगों ने घोर दुष्कर्म किया है। क्या तुम यह समझते हो कि संसार से सब नियम-संयम उठ गये ?'

कालेखां—'हुजूर···'

रानी—'और अभी तुम लोगों में से कुछ झांसी नगर को लूटने की भी चर्चा कर रहे थे। तुम अपने को इतना भूल गये ! क्या तुम लोगों को यही सिखलाया गया है ?'

कालेखां—'हुजूर के हुकुम के खिलाफ अगर अब कुछ हो तो हम सब को तोप से उड़ा दिया जाय। जो आज्ञा हो उसका हम लोग पालन करेंगे।'

रानी—'तो मैं यह कहती हूं कि छावनी को लौट जाओ। सोच-विचार कर सन्ध्या तक आज्ञा दूंगी कि आगे तुम्हें क्या करना है।'

कालेखां सिपाहियों से बातचीत करने लगा।

कुछ ने कहा, 'छावनी चलो।'

कुछ बोले, 'दिल्ली चलो। वहां मजा रहेगा।'

कुछ ने सलाह दी, 'कुछ रुपया तो पहले गांठ में कर लो।'

अन्त में सिपाहियों ने निश्चय किया, 'रानी साहब से रुपया लो और दिल्ली चल दो। रानी साहब रुपया न दें तो जितना शहर से वसूल करते बने वसूल करके, झांसी रानी के हवाले करो और आगे बढ़ो।'

कालेखाँ ने सिपाहियों का निर्णय रानी को सुना दिया। कहा, 'सरकार, सिपाही भूखे हैं।'

रानी परिस्थिति को समझ गईं। उन्होंने दूरदर्शिता से काम लिया।

बोलीं, 'अङ्गरेजों ने मेरे पास रुपया नहीं छोड़ा। राज्य अङ्गरेजों के आधीन रहा हैं। मैं कहाँ से रुपया लाऊँ ?'

कालेखां ने कहा, 'हम लोग मजबूर हैं। आप मालिक हैं। आप से कुछ नहीं कह सकते। यदि यहां से रुपया नहीं मिलता है तो हम लोग शहर से उगावेंगे।'

रानी समझ गईं कि शहर लुटने वाला है। उन्होंने गले से हीरों का कण्ठा उतारा और कालेखाँ की अञ्जलि में डाल दिया।

बोलीं, 'इससे तुम्हारी सारी अटकें पूरी हो जायेंगी। मनुष्यों की तरह यहाँ से जाओ। कहीं लूटमार बिलकुल न करना, अदब-कायदे के साथ दिल्ली पहुँचो। हिन्दुओं को गङ्गा की और मुसलमानों को कुरान की सौगन्ध है।'

कुछ सिपाहियों ने रानी की नौकरी करनी चाही। परन्तु बहुमत दिल्ली जाने के पक्ष में था। इसलिये लगभग सब दिल्ली चले गये—केवल थोड़े से रह गये। उनमें से एक लालता तोपची था।

सिपाहियों के चले जाने पर रानी ने रकसा से दीवान जवाहरसिंह इत्यादि को तुरन्त ससैन्य बुलवाया। सिपाही फौजी सामान तोपें इत्यादि अपने साथ ले गये।

[५१]

रात में दीवान जवाहरसिंह ससैन्य आ गया। रानी ने आदेश भेजा कि नगर और किले का प्रबन्ध करो और कल दिन में मिलो।

दूसरे दिन महल में बहुत लोग उपस्थित हुये। सेना और शासन से सम्बन्ध रखने वाले सरदार, कर्मचारी, जागीरदार, जनता के साहूकार मुखिया और पञ्च।

रानी पर्दे के पीछे बैठीं।

रानी ने कहा, 'कल कठिनाई के साथ मैंने नगर को लूटने से बचा पाया। विद्रोही तो यहां चले गये, परन्तु अव्यवस्था छोड़ गये हैं। डकैती और लूटमार बढ़ने का बहुत भय है। मैं चाहती हूँ जनता त्रस्त न होने पावे। इसीलिये मैंने झाँसी राज्य के पुराने जागीरदारों और सरदारों को कुछ सेना लेकर बुलवाया है, जिसमें अव्यवस्था न रहने पावे। आप लोगों को और जनता के मुखिया पञ्चों को सम्मति के लिये बुलवाया है। बतलाइये अब क्या करना चाहिये ?'

गार्डन के सरिश्तेदार ने कहा, 'मैं तो यह सलाह दूंगा कि सरकार के डिप्टी कमिश्नर को बलवे की सूचना दी जावे और जबलपुर के कमिश्नर को लिखा जावे कि आपने अङ्गरेजों की ओर से शासन की बागडोर हाथ में ले ली है।'

माल के सरिश्तेदार ने समर्थन किया।

कोरियों का सरपञ्च पूरन बोला, 'मुश्किल सें तो कम्पनी कौ राज हट पाओ है अब उन्हें जा खबर काये दई जाय कै हम तुमाये लानें अपनी मूंड़ संजो रये, और फिर किड़ बिड़ करकें झाँसी के प्रान खाओ ?'

दोनों सरिश्तेदारों ने आँखें तरेरीं।

काछियों के मुखिया ने कहा, 'हमैं नईं चाउनें काऊ और को राज झाँसी में। करें राज तो हमाई बाई साव, न करें तो हमाई साब।'

तेलियों के पञ्च ने मत प्रकट किया, 'हमें तो, अपनौं पुरानौं राज लौटाउनें, चाय पृथी इतै की उतै हो जाय।'

प्रमुख साहूकार मगन गंधी बोला, 'बाट जोहते-जोहते आँखें पथरा गईं। आज कितनी मानताओं के बाद यह दिन देखने को मिला। हम लोग तो अपना राज्य चाहते हैं।'

सरिश्तेदारों ने फिर आँखें तरेरीं।

चमारों के मुखिया ने कहा, 'एल्लो, ऊसईं आँखें नटेर रये! राज बाई साब कौ और फिर बाई साब कौ और हम सब बाई साब के।'

माल का सरिश्तेदार बोला, 'नवाब अलीबहादुर साहब को भी बुला लीजिये। वे दुनियाँ देखे हुये हैं। ठीक सलाह देंगे। इन बेपढ़ों की सलाह पर अमल करना गलत होगा।'

'हौ, तैं है बड़ौ मौलबी पण्डित।' अहीरों के नायक ने रुष्ट होकर कहा, 'हमें परदेसियन की हुकूमत नईं चावनैं। जो उनकी पिच्छदारी करैं तीकौ करिया मौ हो जाय।'

मोरोपन्त ने जन–मत का समर्थन किया। एक लक्ष्मणराव बाँडे नामक, चतुर काँइयाँ भी उसमें था।

बोला, 'सरिश्तेदार साहब अङ्गरेजी और अङ्गरेजों को जानते हैं। वे वास्तव में यह चाहते हैं कि बाई साहब दो-चार रोज यह मुफ्त का झमेला अपने सिर लिये रहें और सागर के डिप्टी कमिश्नर को बुलाकर उनको पेशकारी दिलवा दें ताकि कसकर रोजगार चले।'

अब सरिश्तेदारों को कोई कुछ कहने लगा और कोई कुछ।

वृद्ध नाना भोपटकर ने, जो अब भी काफी स्वस्थ था, कहा, 'हम लोग सरिश्तेदार साहब की सलाह पर भी विचार करेंगे। इस समय इतना तो अवश्य तै कर लेना चाहिये कि राज्य का सर्वाङ्गीन शासन बाई साहब के हाथ में रहे और सब लोग अपने को उनकी प्रजा मानकर दृढ़तापूर्वक अपने जीवन का निर्वाह करें।'

उपस्थित जनता ने हर्ष और उत्साह के साथ इस मत को स्वीकार किया।

वे दोनों सरिश्तेदार दरबार से हटा दिये गये।

रानी बोलीं, 'आप लोग जो भार मुझे दे रहे हैं, उसको मैं अपना गौरव मानती हूँ और परमात्मा की कृपा से उसको निभाऊँगी।'

लोगों ने जय-जयकार किया।

गुलाम गौसखाँ तोपची हाथ बाँधकर खड़ा हो गया।

उसने कहा, 'श्रीमन्त सरकार, मुझको मेरी पुरानी नौकरी मिलनी चाहिये।'

रानी उसको पहचानती थीं।

बोलीं, 'तुम सदर तोपची नियुक्त किये जाते हो। सब तोपों को सम्भालो। जो तोपें खराब कर दी गई हैं उनको ठीक करो।'

'जो आज्ञा', गुलाम गौसखाँ ने गद्गद् होकर कहा,—'एक विनय और है, साढ़े तीन साल से ऊपर हुये एलिस किले वाले महल में आया और हम लोगों के मन में आशा बँधी कि झाँसी के राज्य को लौटाने की चिट्ठी लाया होगा, तब मैंने तोपों में बारूद डाल ली थी—सलामी दागने के लिये। आज मुझको अपने मन की करने का हुक्म दिया जाय।'

रानी ने सुरीले मधुर स्वर में कहा, 'अभी ऐसा क्या हो गया है?'

गुलाम गौस—'हो गया है सरकार। हमारे दिलों में हो गया है। दिलों के बाहर हो गया है।'

मोरोपन्त—'हो गया है।'

लक्ष्मणराव—'हो गया है।'

नाना भोपटकर—'हो गया है।'

उपस्थित जनता ने उसी को दुहराया और जय-जयकार की।

रानी ने अनुमति दे दी।

गुलाम गौस ने थोड़ी देर में तोपों को सम्भाला। जो चलाने लायक थीं, उसने सलामी दाग दी।

जब भीड़ छट गई, रानी ने एकान्त में अपने सरदारों से विचार-विमर्श किया।

नाना भोपटकर—'अभी लक्षणों से ऐसा प्रतीत नहीं होता कि अङ्गरेजी राज्य उठ गया। इसलिये एक चिट्ठी जबलपुर के कमिश्नर के पास इस विषय की भेज दी जावे कि बाईसाहब झाँसी में अङ्गरेजों की ओर से राज्य कर रही हैं, जिससे डकैती, बटमारी और अव्यवस्था जनता को त्रस्त न कर सके। यदि अंग्रेज देश से निकाल दिये गये तो झाँसी हाथ से कहीं गई नहीं और यदि अङ्गरेज झाँसी वापिस आ गये तो बाईसाहब का कोई नुकसान नहीं हो पावेगा।'

मोरोपन्त—'मैं इस मत को अनुचित समझता हूँ। नाना साहब और दिल्ली, लखनऊ इत्यादि के अपने सहयोगी सुनेंगे तो क्या कहेंगे?'

रघुनाथसिंह—'नाना साहब इत्यादि हम लोगों को अच्छी तरह जानते हैं। उनके मन मंजे हुये हैं। भ्रम नहीं हो सकता। मेरे पास रानी विक्टोरिया की दी हुई सनद और तलवार है। सनद को परवाने का काम करने दीजिये और तलवार को देश की स्वाधीनता का।'

दीवान दूल्हाजू—'मैं अपने शरीर के टुकड़े-टुकड़े करने कराने को तैयार हूं। खूब डट कर राज्य हो और कसकर लड़ाई। मैं तो आज हर्ष के मारे बेकाबू हुआ जा रहा हूं।'

जवाहरसिंह—'दीवान साहब समय पड़ने पर सब देखा जायगा।'

दूल्हाजू—'कैसे दीवान साहब?'

जवाहरसिंह—'आप तो रुष्ट होने लगे? लड़ना मरना सबको आता है। यह समय शाँति के साथ सलाह करने का है, मेरा निवेदन का इतना ही अर्थ है।'

भाऊबख्शी—मेरी समझ में नाना भोपटकर जो कह रहे हैं, वह ध्यान देने योग्य है।'

मोरोपन्त—'मैं इस सलाह के विरुद्ध नहीं हूं। परन्तु झण्डे का सवाल उठता है। जगह-जगह बादशाह का हरा झण्डा फहराया जा रहा है।'

रानी—'झाँसी पर केवल भगवा झण्डा उड़ाया जावे ।'

नाना भोपटकर—'मेरी भी यही राय है ।'

रानी—'नीति का काम नाना भोपटकर जी को सौंपा जाय वे जैसा ठीक समझें करें । मैं स्वयं रणनीति और राजनीति के समीकरण में विश्वास करती हूं । एक का पलड़ा भारी हुआ कि दूसरा झमेले में पड़ा ।

नाना भोपटकर—'मैं स्वयं चिट्ठी नहीं लिखूंगा । गार्डन के सरिश्तेदार से लिखवा कर भेजूँगा । वह यहां से खिसिया कर गया है । मना लूँगा ।'

इस बात के तै होने पर राज-कार्य का विभाजन किया गया और पदाधिकारी नियुक्त किये गये । लक्ष्मणराव प्रधान मन्त्री, बख्शी और तोपें ढालने वाला भाऊ, प्रधान सेनापति दीवान जवाहरसिंह, पैदल सेना के तीन कर्नल—एक दीवान रघुनाथसिंह दूसरा मुहम्मद जमाखाँ तीसरा खुदाबख्श । घुड़सवारों की प्रधान स्वयं रानी । कर्नल-सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई । तोपखाने का प्रधान गुलाम गौसखाँ, नायब दीवान दूल्हाजू । न्यायाधीश—नाना भोपटकर । मोरोपन्त कमठाने के प्रधान । जासूसी विभाग मोतीबाई के हाथ में, नायब जूही ।

पुलिस, माल विभाग, दान-धर्म विभाग इत्यादि के भी कर्मचारी नियुक्त कर दिये गये । तहसीलों के तहसीलदार भी । मऊ का परगना काशीनाथ भैया नामक एक महाराष्ट्र और आनन्दराय के हाथ में दिया गया । उस दिन खूब लू चली । काफी गर्मी पड़ी । परन्तु किसीने यह न जाना कि दिन कैसे निकल गया । जब सब काम अच्छी तरह से निबटा लिया तब रानी ने सभा विसर्जित की ।

[५२]

सब कर्मचारियों को अपने-अपने विभागों को दृढ़ता और सावधानी के साथ सम्भालने और चलाने का आदेश रानी ने कर दिया !

सवेरे से ही रिसाले और पैदल पल्टनों की कवायद और निशानेबाजी शुरू हो गई। समय पर बिगुल बजा और ठीक समय पर सब काम हुआ और होता रहा। सेना में लगभग सब पुराने सिपाही आ गये। नई भर्ती भी बहुत हुई। सब जातियों और वर्गों के आदमी लिये गये। रानी की हिदायत थी कि सेना को सारे राज्य की जनता अपना समझे और यह तभी हो सकता था जब सेना में सब जातियों के लोग रक्खे जाते।

झाँसी का राज्य लेने पर अङ्गरेजों ने लगभग सब पुरानी तोपों को कीले ठोक कर, बेकार कर दिया था। तोपों के ढालने के कारखानों को चालू करने का कार्य तुरन्त शुरू कर दिया गया। गोले-गोलियाँ बनाने का, तलवारें, बन्दूकें, पिस्तौलें इत्यादि तैयार करने का भी काम जारी हो गया। परन्तु नये हथियारों का कारखानों से बनकर निकलना शीघ्र सम्पादित नहीं हो सकता था। इसलिये रानी ने, जहाँ मिले, पुराने हथियार इकट्ठे किये। जनता ने जी खोलकर रुपया दिया।

गुलाम गौसखाँ ने दो दिन में तोपों को ठीक कर लिया। कुछ तोपें गड़ी हुई पड़ी थीं। उनको भी सम्भाल लिया।

यह अच्छा हुआ क्योंकि राज्य को हाथ में लेने के लिये ठीक पाँच दिन बाद (१३ जून की रात को) रानी को मोतीबाई ने खबर दी कि करेरा के किले पर सदाशिवराव नेवालकर ने हमला किया है और काफी सेना इकट्ठी करली है।

सदाशिवराव झाँसी की गद्दी का दावेदार था। झाँसी में ही रहता था। ३१ मई की हलचल की उसको खबर थी। वह अपनी लुड़िया मारने के लिये झाँसी से निकल गया। गाँवों में लोग क्रान्ति के लिये तैयार थे ही, बहुत से मनचले नौजवान हथियार बाँधकर सदाशिव के साथ हो गये।

करेरा में थानेदार और तहसीलदार अंग्रेजों की ओर से नियुक्त थे। उनको सदाशिव ने मार भगाया। तुरन्त अड़ोस-पड़ोस के जागीरदारों से रुपया वसूल किया और दो एक दिन के भीतर ही अभिषेक करवा लिया। पदवी धारण की—महाराजा श्री सदाशिव नारायण ! और प्रसिद्ध किया कि मैं ही झाँसी राज्य का सच्चा और सही अधिकारी हूं। गाँव-गाँव में अपने 'महाराज' होने के घोषणा पत्र भिजवाये। जिसने उसको झाँसी का राजा न माना उसकी तुरन्त जायदाद जब्त कर ली। ऐसे सपाटे के साथ कदम बढ़ाया मानो दो चार हफ्ते में ही सारे हिन्दुस्थान का चक्रवर्ती हो जायगा।

उसने समझा झाँसी अनाथ है—एक महज अल्प वयस्क स्त्री के हाथ में है।

खबर पाते ही रानी ने तैयारी करदी। नगर का प्रबन्ध मजबूत था ही। उत्तर, पूर्व और दक्षिण के भागों का शीघ्र सन्तोषजनक प्रबन्ध कर लिया। करेरा पश्चिम दिशा में था। गड़बड़ केवल इसी दिशा में 'महाराज' सदाशिव के कारण थी।

झाँसी की सेना अधकचरी थी, परन्तु सेनापति चतुर और उत्साही थे। करेरा कूच करने के पहले तीनों सहेलियों से मुस्करा कर रानी ने कहा, 'तुम तीनों कर्नलों की परीक्षा महाराजा सदाशिव नारायण के सामने होगी।'

मुन्दर बोली, 'यदि महाराजा साहब हमारे जनरल का नाम सुनते ही भाग गये तो ?'

रानी हँसीं। जैसे मोतियों ने आभा बरसाई हो। काशी शान्त प्रकृति की होते हुये भी बहुत हँसी।

रानी ने कहा, 'काशी, मैं बिलकुल पीछे रहूंगी। तुमको आगे जाकर लोहा लेना पड़ेगा।'

काशी बोली, 'बाईसाहब, उस समय या तो आपका घोड़ा न मानेगा या आप न मानेंगीं।'

रानी ने काशी के कन्धे की चुटकी भरी और कहा, तेरी एक बात तो सच्ची हो गई। उस दिन तूने कहा था—जवाहरसिंह सेनापति होगा। सो हो गया। अब देखूं करेरा के सम्बन्ध में मुन्दर की बात ठीक निकलती है या नहीं। युद्ध होगा।'

'सरकार', मुन्दर उत्साह के साथ बोली, 'अबकी बार मेरी वाणी सची होगी।'

'तो अपने हाथ से लड्डू बनाकर खिलाऊँगी', रानी ने कहा।

मुन्दर को उन थाल भर लड्डुओं की याद आ गई जो रानी ने अपने हाथ से उस दिन बनाये थे और रघुनाथसिंह इत्यादि को खिला दिये थे।

रानी ने कूच कर दिया।

वे इतने वेग के साथ अपने घुड़सवारों को लेकर करेरा पहुँचीं कि 'महाराज' सदाशिवराव को लड़ने तक का मौका नहीं दिया!

रानी ने पहुंचते ही करेरा के किले को ऐसा घेरा कि सदाशिव ने मुश्किल से भाग कर अपनी जान बचा पाई। सिन्धिया के राज्य में, नरवर में, जाकर दम ली।

वहाँ से सदाशिव ने सिन्धिया से सहायता की याचना की। ग्वालियर से थोड़ी सी सहायता आई थी। परन्तु रानी ने सदाशिव को नरवर में, घेर लिया—और पकड़कर झांसी ले आईं। झांसी के किले में कैद कर दिया।

मुन्दर ने कहा, 'बाईसाहब, मेरी भविष्यवाणी कैसी अक्षर अक्षर सत्य निकली?'

काशी बोली, 'और मेरी भी। मैंने कहा था न कि बाईसाहब सबसे आगे होंगी।'

रानी ने कहा, 'मेरे दोनों कर्नल सच्चे।' सुन्दर ने अपनी सुन्दर आँखों से जरा तृष्णा प्रकट की।

रानी बोलीं, 'तू भी नाम करेगी सुन्दर। अबकी तेरी बारी है।'

[५३]

कानपूर की सेना के जनरल व्हीलर ने किलेबन्दी की और उसके अन्दर सब अङ्गरेजों को बाल-बच्चों सहित ले गया।

नाना ने व्हीलर को चेतावनी दी कि शाम तक आत्मसमर्पण कर दो वरना किले पर हमला किया जावेगा। व्हीलर ने नहीं माना। किलेबन्दी का मुहासिरा कर दिया गया और गोले बरसाये जाने लगे। व्हीलर भी खूब लड़ा। २१ दिन युद्ध हुआ।

इलाहाबाद में भी विप्लव हो गया था। बङ्गाल की ओर से जनरल नील फौज लेकर आया। उसने अत्यन्त निर्दयता के साथ मार्ग में पड़ते हुये ग्रामों को जलया, अपराधी और निरपराधी ग्रामीणों की हत्यायें कीं। जब इलाहाबाद के विजन से घबराकर हिन्दुस्थानी पुरुष-स्त्री और बालक नावों में बैठकर भागे उसके सैनिकों ने गोलाबारी की और उनमें से अधिकाँश को मार दिया। इतना अन्याय और ऐसा नरसंहार किया कि सर्वत्र सनसनी, भय और क्रोध फैल गया। कानपूर में भी नील और उसके सहयोगियों के नृशंस कुकृत्यों के समाचार पहुँचे। आग-सी लग गई।

हिन्दू–मुसलमान स्त्रियों के भी कलेजे दहक उठे। अजीजन नाम की एक वेश्या घोड़े पर सवार, तलवार बाँधे शहर की गलियों और छावनी में उत्तेजना और प्रोत्साहन देने के लिये दौड़-धूप करने लगी !

व्हीलर ने लखनऊ से सहायता माँगी। लखनऊ खुद घिरी हुई थी। सहायता न आई। व्हीलर ने अपनी किलेबन्दी पर सुलह का सफेद झण्डा गाड़ दिया।

इसी समय इलाहाबाद के आसपास से नील की पल्टन के बीभत्स अत्याचारों के समाचार आये। हिन्दुस्थानी सेना क्रोध में भी पागल हो गई।

कानपूर की घिरी हुई अंगरेज सेना ने आत्मसमर्पण कर दिया। उनको इलाहाबाद भेज देने के लिये ४० नावें तैयार करा दी गईं। नाना अपने बिठूर वाले महल में था। सिपाहियों ने गुस्से में आकर अङ्गरेज पुरुषों को

मार डाला। इस क्रूर दुष्कृत्य के उपरान्त उन लोगों ने स्त्रियों और बच्चों का वध करना चाहा, परन्तु नाना को खबर लग गई और उसने तुरन्त प्रयत्न करके इनको बचा लिया। फिर कुछ समय उपरान्त जब इनको नावों में बिठला कर इलाहाबाद की ओर भेजा जा रहा था, सिपाहियों ने, नाना की आज्ञा बिना, बल्कि उसकी आज्ञा के प्रतिकूल, कतल करके अपने को कलंकित किया।

कानपूर के कुल अङ्गरेजों में से एक स्त्री और चार पुरुष बचकर निकल पाये थे।

इन घटनाओं ने अङ्गरेज और हिन्दुस्थानी की परस्पर हिंसा को बेहद बढ़ा दिया।

लखनऊ में विप्लव ३० मई को आरम्भ हुआ था। अवध भर में विप्लव की आग फैल गई। तो भी कई स्थानों में विप्लवकारियों ने अङ्गरेज स्त्री-बच्चों की प्राणपण से रक्षा की।

इलाहाबाद को कब्जे में करके नील लखनऊ की ओर बढ़ा और जनरल हैवलाक कानपुर की ओर।

अवध अदम्य जान पड़ता था।

पञ्जाब की छावनियों में भी गड़बड़ हुई, लेकिन उसको दबाने में अङ्गरेजों को ज्यादा मुश्किल का सामना नहीं करना पड़ा।

झाँसी के विप्लव का समाचार सागर और बुन्देलखण्ड के अन्य जिलों में पहुंचा। गार्डन के रिश्तेदार ने सागर चिट्ठी भेजी, जिसमें अङ्गरेजों की ओर से रानी द्वारा झाँसी का प्रबन्ध किये जाने की ओर संकेत था। सागर के अङ्गरेजों को यह भी विदित कर दिया कि झाँसी के अङ्गरेज स्त्री-पुरुषों और बालकों की हत्या में रानी का बिलकुल भी हाथ नहीं था। इस चिट्ठी के पहुँचने पर सागर के अङ्गरेज सावधान हुये, परन्तु वे विप्लव को थोड़े समया तक ही रोकने में सफल हो पाये। सागर की एक हिन्दुस्थानी पल्टन विप्लव में शामिल हो गई। दूसरी पल्टन सरकार-भक्त बनी रही।

[५४]

विन्ध्यखण्ड की समग्र जनता में सनसनी फैली हुई थी। यहां की जनता ने कभी किसी अत्याचारी का शासन आसानी के साथ नहीं माना। स्वाभिमान को आघात पहुँचा कि व्यक्ति ने सिर उठाया और हथियार हाथ में लिया। शायद भारत का यही खण्ड एक ऐसा है जहां डाकू को 'बागी' कहते हैं।

विन्ध्यखण्ड छोटी-बड़ी रियासतों में बिखरा हुआ था। सब बड़ी-बड़ी रियासतें कम्पनी सरकार का साथ दिये थीं। बानपूर और शाहगढ़ साधारण राज्य थे। ये राज्य विप्लव में शामिल हुये।

रानी को इन दोनों राजाओं के स्वाधीनता-प्रिय विचारों का पता था। इन दोनों को उन्होंने स्वराज्य-स्थापना के संग्राम में भाग लेने के लिये पत्र भेजे। वे दोनों लड़ने के लिये उद्यत हो गये।

बानपूर राज्य के राजा मर्दनसिंह ने अपनी सेना को लेकर सागर जिले में प्रवेश किया और खुरई तहसील तथा नरयावली के परगने पर अधिकार कर लिया। इसके उपराँत वह झांसी जिले के दक्षिण में ललितपुर आया और चन्देरी की ओर बढ़ा। चन्देरी अङ्गरेजों के अधिकार में थी। वहाँ विप्लव नहीं हुआ था।

वहां के हाकिम परगना को राजा मर्दनसिंह के आने की खबर एक चन्देरी निवासी ने दी। वह कचहरी में था। रैडटेपिज्म (लाल फीता-जाब्ता) का पुजारी था।

खबर देने वाले ने कहा, 'साहब, बलवा हो गया है। फौज चढ़ी चली आ रही है।'

साहब उपेक्षा के साथ बोला, 'अर्जी लिखवाकर लाओ। जबानी नहीं सुनाया जायगा।'

थोड़ी देर में राजा मर्दनसिंह आ गया। उसने बिना किसी अर्जी-दरख्वास्त के चन्देरी को घेर लिया और बिना किसी अर्जी-पुर्जी के चन्देरी में अङ्गरेजी शासन को खतम कर दिया।

शाहगढ़ का राजा बखतवली था। उसने भी विप्लव किया।

'सागर, दमोह, जबलपूर के जिले में विद्रोहियों की संख्या बहुत बढ़ गई। दमोह जिले के तो समस्त लोधी क्रान्ति में सम्मिलित हो गये। ये सब शाहगढ़ के राजा के साथ थे। उससे लड़ने के लिये सागर से पल्टन आई, पर राजा बखतवली ने उसको आसानी से हरा दिया। इस राजा के एक सरदार बोधन दौआ ने गढ़ाकोटा पर चढ़ाई की और उस पर अधिकार कर लिया। राजा मर्दनसिंह चन्देरी को अधिकृत करके सागर लौटा। उसी समय जबलपूर की हिन्दुस्थानी पल्टन ने भी विप्लव कर दिया। अङ्गरेजों ने पन्ना राज्य से सहायता मांगी। पन्ना के राजा ने अङ्गरेजों की सहायता के लिये अपनी काफी सेना भेजी। पन्ना की सेना ने विप्लवकारियों को दमोह के जिले में पराजित किया और अङ्गरेजों की ओर से दमोह का शासन किया। पन्ना की सेना जबलपूर की विप्लव कारिणी पल्टन से भी लड़ी और उसको भी हरा दिया।

झाँसी के चारों ओर, दूर और पास, इसी प्रकार की परिस्थिति थी। इस परिस्थिति में रानी लक्ष्मीबाई झाँसी में एक सुदृढ़ स्फटिक सी थीं। झाँसी जिले में उन्होंने प्रबलता के साथ शान्ति स्थापित की।

उनकी दिनचर्या वैसे ही नियम-संयम के साथ चली जा रही थी। उनकी चर्या में केवल दो अन्तर आये। एक तो वे सुबह के नित्य कृत्यों और पूजा ध्यान के उपरान्त राज्य के कर्मचारियों को मिलने और उनकी समस्याओं को सुनने के लिये समय देने लगीं; दूसरे ठीक तीन बजे के पश्चात वे कचहरी करने लगीं। बड़े और महत्वपूर्ण मुकद्दमें वे स्वयं सुनती थीं और तुरन्त निर्णय कर देती थीं। कभी-कभी दण्ड भी स्वयं अपने हाथ से दे देती थीं परन्तु केवल उन मामलों के जिनमें किसी ने बालक या स्त्री को सताया हो।

वे कचहरी में टोपी लगाकर बैठती थीं। भीतर लोहा ऊपर लाल रेशम। टोपी झालरदार, मोतियों और जवाहरों की। कण्ठ में हीरों की माला। सुडौल और भरे हुये वक्षस्थल पर कंचुकी, जो सुनहरी जरीदार

कमरपेटी से कसी रहती थी। कभी साड़ी और कभी ढीला पैजामा पहिन आती थीं।

रानी के आसन के पास ही दीवान लक्ष्मणराव कागज, कलम, दवात लिये बैठता था।

यद्यपि वह पढ़ा-लिखा बहुत कम था, परन्तु वह अपनी निरक्षरता को खूबी के साथ छिपाये रहता था। कभी-कभी रानी अपने हाथ से फैसला लिखती थीं और कभी बोल देती थीं। लक्ष्मणराव लिखने का बहाना करता था और नीचे बैठे हुये मुसद्दियों से लिखवा कर झटपट मुहर लगा देता था।

आये-गये की उनको जबरदस्त याद रहती थी। नित्य का आने वाला यदि एक दिन भी चूक जाय तो वह उसके आते ही गैरहाजिरी का कारण पूछती थीं, और समय की वे कठोर पाबन्दी करती थीं।

वर्षा का आरम्भ विलम्ब से हुआ, परन्तु प्रचण्डता के साथ। फिर भी उनके कार्यों में शिथिलता न आई—घोड़े की सवारी करने से जरूर विवश थीं।

ऐसी ऋतु में प्रायः डकैती बटमारी बन्द हो जाती है, परन्तु इन्हीं दिनों उनको सूचना मिली कि बरुआसागर के पास सागरसिंह—कुँवर सागरसिंह—डाकू ने लगातार कई डाके डाले हैं और बरुआसागर का थानेदार उसका कुछ नहीं कर पा रहा है। रानी ने तुरन्त निश्चय किया। मोतीबाई द्वारा खुदाबख्श को बुलवाया।

आने पर खुदाबख्श से कहा, 'सागरसिंह का शीघ्र दमन किया जाना चाहिये।'

खुदाबख्श ने हाथ जोड़कर स्वीकार किया।

रानी—'तुम इसी समय २५ सिपाही लेकर बरुआसागर जाओ और सागरसिंह को मृत या जीवित ले आओ। उसकी दुष्टता के कारण बरुआसागर और बरुआसागर का पड़ोस त्रस्त और सन्तप्त हो उठा है। इस काम को कितने दिन में पूरा कर सकोगे?—एक महीने?'

खुदाबख्श—'श्रीमन्त सरकार, जितना जल्दी हो सकेगा उतनी जल्दी। केवल वर्षा की कठिनाई है।'

रानी—'परन्तु सागरसिंह को वर्षा कोई विघ्न-बाधा नहीं पहुँचाती !'

खुदाबख्श—'सरकार—'

रानी—'कहो, कहो।'

खुदाबख्श—'सरकार, ये लोग कुछ ग्रामीणों से मिलकर बनियों महाजनों को लूटते हैं और सघन जंगलों में भागकर छिप जाते हैं।'

रानी—'पानी बरसते घने जंगलों में वे सोते-खाते कहां होंगे। यदि तुम उन्हें उनके अड्डों पर ढूंढ़ो तो वे जंगलों में नहीं मिलेंगे बल्कि अपने अड्डों पर। कुछ और सिपाही चाहिये हों तो ले जाओ।'

खुदाबख्श—'नहीं सरकार, इतने ही बहुत हैं। यदि अटक पड़ेगी तो समाचार दूंगा।'

खुदाबख्श चला गया।

रानी ने अपनी सहेलियों से एकान्त में सलाह की।

रानी ने प्रश्न किया, 'खूब बरसते पानी में घोड़ा दौड़ा सकोगी ?'

मुन्दर ने उत्तर दिया, 'दौड़ा लूंगी। अभ्यास तो किया है।'

'तुम, सुन्दर और काशीबाई ?' रानी ने पूछा।

उन दोनों ने भी हां भरी परन्तु काशीबाई की हां में कुछ दुर्बलता थी।

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'काशी हाल में कुछ अस्वस्थ रही है इसलिये वह महल में ही रहेगी और यहाँ का काम-काज देखेगी। मेरी अनुपस्थिति का समाचार झाँसी से बाहर न जाने पावे। खुदाबख्श के बरुआसागर पहुंचने के बाद किसी दिन हम लोग यहाँ से चलेंगे।'

खुदाबख्श उसी दिन चला गया। सन्ध्या तक बरुआसागर पहुँचा। भीगा हुआ और भूखा। परन्तु उसको मानसिक क्लेश कुछ न था।

जरा सुस्ताकर भोजन किया। थानेदार से सागरसिंह की गतिविधि पर बातचीत की। खुदाबख्श झाँसी से यह ख्याल लेकर आया था कि बरुआसागर का थानेदार किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गया है; परन्तु उसका यह

भ्रम निकला। सागरसिंह बहुत चालाक और बड़ा साहसी था। उसके साथ उत्पातियों का काफी बड़ा गिरोह था। बरुआसागर का थाना प्रयास करने पर भी उसके कार्य-क्रम में बहुत कम बाधा डाल सकता था।

सागरसिंह का घर रावली ग्राम में, बरुआसागर से पाँच छः कोस की दूरी पर था परन्तु वह घर रहता बहुत कम था।

खुदाबख्श को बरुआसागर आकर अपने आसामी की बिकटता का पता लगा। और अधिक सिपाही मँगाने में नाक सी कटती थी। समय केवल एक महीने का था। मोतीबाई की याद आई। अपने जादू से शायद वह कुछ कर डालती। तुरन्त उसके मन ने इस कल्पना को धिक्कारा।

दूसरे दिन बादल जरा खुला। भरे-भरे सांवले-धूँधरे बादल आते और चले जाते थे। एकाध फुहार छोड़ जाते। नदियाँ नाले भरे, इठलाये हुये और सवेग। खुदाबख्श ने बरुआसागर के थानेदार, उसके सिपाहियों और अपने सिपाहियों को लेकर सवेरे ही रावली की ओर दौड़ कर दी। छिपे-लुके, भीगे और कीचड़ में लतपत, बन्दूकों को कपड़ों से ढके, जेबों में भुने चने और प्याज भरे, ये लोग दुपहरी में रावली के गेंवड़े पहुंच गये। खेतों में कोई काम नहीं हो रहा था, इसलिये मार्ग में किसी से भेंट नहीं हुई। सब लोग गाँव में थे और पानी के खुलने की मना रहे थे। सागरसिंह भी घर पर था।

सागरसिंह का मकान ऊँची टौरिया पर था। सागरसिंह खाना खाने के बाद झपकी ले रहा था। झकोरों हवा चल रही थी और कभी कभी फुहार पड़ जाती थी, इसलिये खुदाबख्श के दल का शब्द सुनाई नहीं पड़ा।

जब तक गाँव वाले सागरसिंह को सचेत करें कि खुदाबख्श ने सागर-सिंह की हवेली घेर ली। उसको फाटक लगवा लेने का अवसर मिल गया। हवेली में उसके कुछ आदमी थे। वे सब जल्दी तैयार हो गये।

सागरसिंह को आश्चर्य था कि कुऋतु और कुसमय पर किसने घेरा डालने की हिम्मत की। दीवारों के तीरकशों में होकर उसने परख लिया कि घेरने वालों के साथ तोप नहीं है और वे केवल घर में घुस कर ही

नुकसान पहुंचा सकते हैं। सोचा शाम तक यों ही पड़ा रहने दूं और देखता रहूँ, फिर उसको ख्याल आया कि घेरने वाले रानी के सिपाही होंगे और इनकी पीठ पर कुछ बल कहीं और लगा होगा। इसलिये उसने तुरन्त लड़ डालने की ठानी। वह जानता था कि घेरने वाले अधिक समय तक बन्दूक नहीं चला सकेंगे और वह स्वयं सूखी जगह में बैठकर बहुत अच्छा और बड़ी देर तक लड़ सकेगा।

हवेली टौरिया की ठीक चोटी पर न थी किन्तु अधवारी से जरा ऊपर। खुदाबख्श ने इस स्थिति से लाभ उठाने का प्रयत्न किया परन्तु सागरसिंह की पहली बाढ़ ने ही खुदाबख्श के कई सिपाहियों को घायल कर दिया। खुदाबख्श ने तुरन्त हवेली पर चढ़ जाने की आज्ञा दी। स्वयं आगे हो गया। जब तक सागरसिंह फिर बन्दूकों को भरे खुदाबख्श हवेली पर चढ़ गया, और उसके कई साथी भी। सागरसिंह ने फिर बाढ़ दागी, परन्तु खाली गई।

सागरसिंह ने समझ लिया कि अब गये। उसने तलवार हाथ में ली। खुदाबख्श और उसके साथी आँगन में कूद पड़े।

सागरसिंह का मुकाबला न हो सका। खुदाबख्श घायल होकर गिर पड़ा और सागरसिंह उसके साथियों को चीरता हुआ बाहर निकल गया। तब खुदाबख्श के अन्य सिपाही फाटक से होकर भीतर आ गये।

खुदाबख्श और उसके साथियों ने गांव में टिकना ठीक नहीं समझा। खुदाबख्श बैलगाड़ी से रात होते बरुआसागर आ गया।

घाव बहुत गहरे न थे परन्तु थे कई, और खून काफी निकल चुका था। उसकी और उसके घायल सिपाहियों की मरहम-पट्टी की गई। रात में खुदाबख्श को बेहोशी रही।

सवेरे रानी के पास समाचार भेज दिया गया।

[५५]

मेघ छाये हुये थे। हवा सन्न थी। पानी रिमझिम-रिमझिम बरस रहा था। महल के ऊपरी खण्ड के हवाई कमरे में रानी आंखें मूंदे हुये मोतीबाई का भजन सुन रही थीं। मुन्दर जमुहा रही थी। सुन्दर बैठे-बैठे सावधानी के साथ निद्रामग्न हो गई थी। काशी सचेत थी।

भजन की समाप्ति पर रानी का ध्यान टूटा, मुन्दर की जमुहाई हटी। परन्तु सुन्दर की निद्रा-समाधि भङ्ग न हुई।

रानी ने हँसकर कहा, 'सुन्दर, देख यह भालू कहां से आ गया है।'

सुन्दर हड़बड़ा गई। भौंचक्की होकर बोली, 'कहाँ है बाईसाहब ?'

'ढूँढ़ तो पता लग जायगा' रानी ने कहा, 'साधारण भालू तो है नहीं।'

सुन्दर लज्जित हो गई।

हाथ जोड़कर बोली, 'सरकार, दिन भर की थकी थी, इसलिये अभी अभी थोड़ी-सी नींद आ गई।'

काशीबाई—'सरकार, यह आज दिन भर चक्की चलाती रही है, इसलिये बहुत थक गई।'

सुन्दर—'नहीं काशीबाई, चक्की नहीं चलाई तो और काम तो बहुत किया है।'

मुन्दर—'अकेली ने !'

उसी समय पहरे वाले ने निवेदन किया, 'बरुआसागर से एक सिपाही आवश्यक समाचार लाया है।'

रानी ने दूसरे कमरे में उसको बुलवाया। उनका आदेश था कि आवश्यक समाचार के लिये समय-कुसमय न देखा जावे और उनको तुरन्त सूचना दी जाया करे।

रानी सहेलियों के साथ दूसरे कमरे में गईं।

समाचार-वाहक ने कहा, 'सरकार, रावली के बागियों से सरदार खुदाबख्श की लड़ाई हुई। वे घायल हो गये हैं। सात सिपाही भी घायल

हुये हैं। सरदार को तलवार के घाव लगे हैं और सिपाहियों को गोलियों के। भगवान की कृपा से मरे कोई नहीं हैं। और, न किसी के लिये इस तरह का भय है। सागरसिंह भाग गया है। लड़ाई रावली में सागरसिंह के घर पर हुई थी।'

मोतीबाई का चेहरा पीला पड़ गया।

रानी ने पूछा, 'रावली बरुआसागर से कितनी दूर है?'

उसने उत्तर दिया, 'पाँच-छः कोस है, सरकार। जासूस ने पता दिया कि सागरसिंह अपने घर है। सरदार ने धावा बोल दिया।'

रानी - 'खुदाबख्श को कहां चोट आई है और अब क्या हाल है? लड़ाई को कितने दिन हो गये?'

उत्तर—'लड़ाई को आज चौथा दिन है। घाव बांहों और जांघों में अलबत्ता ज्यादा गहरे हैं।'

रानी—'तुमको समाचार लाने में इतना विलम्ब क्यों हुआ?'

उत्तर—'बेतवा इतनी चढ़ी हुई है कि नाव नहीं लग सकी, सरकार आज दोपहर कुछ उतरी तब आ पाया हूँ।'

रानी—'प्रबन्ध करती हूं। तुम जाओ।'

रानी अपने कक्ष में लौट आईं।

रानी ने कहा, 'कल बरुआसागर चलना चाहिये।'

काशी बोली, 'सरकार न जायँ। कुछ ठीक नहीं किस समय जोर से पानी बरस पड़े, नदी चढ़ आवे। उस दिन जब आपने बरुआसागर जाने का निश्चय किया, मैं कुछ न कह सकी थी, परन्तु आज तो मैं हठ करूँगी।'

रानी सोचने लगीं। उन्होंने मोतीबाई की उदासी देख ली, और पहिचान ली।

रानी—'तुम ठीक कहती हो काशी। परंतु स्थिति की माँग हम पर प्रबल है। यदि कल पानी न बरसा तो अच्छे घोड़ों पर चल देंगे। हाथी

भी जा सकता है, परन्तु मैं इस समय प्रदर्शन बचाना चाहती हूँ, और वह सवारी बहुत धीमी भी है।'

मोतीबाई—'सरकार को कुछ घुड़सवार साथ ले लेने चाहिये।'

रानी—'लूंगी। दीवान रघुनाथसिंह को सवेरे सूचना दे देना।'

काशीबाई—'मैं भी चलूंगी।'

रानी—'चलना, मैं क्या रोकती हूँ ?'

मोतीबाई—'आज्ञा हो तो मैं भी चलूं।'

रानी—'नाव न लगी तो घोड़े पर नदी पार कर लेगी ?'

मोतीबाई—'सरकार की सेवा में रहते, मुझको आग-पानी किसी का भी डर नहीं रहा।'

रानी ने स्वीकृत किया।

रात में पानी थोड़ा थोड़ा बरसता रहा। सवेरे बादल खुलासा दिखलाई दिया। रानी सहेलियों समेत बरुआसागर की ओर चल दीं। पच्चीस घुड़सवार साथ में ले लिये। दीवान रघुनाथसिंह सङ्ग में। शीघ्र ही घाट पर यह दस्ता पहुंच गया। देखें तो बेतवा दोनों पाट दाबे वेग से चली जा रही है।

ऊपर ज्यादा पानी बरस गया था, इसलिये बेतवा बेतहाशा इठला गई। हवा, आँधी के रूप में चल रही थी। मल्लाहों के लिये नाव का लगाना असम्भव था। अनेक घुड़सवारों के दिल टूटने लगे।

उस पार की पहाड़ियों का लहरियादार सिलसिला हरियाली से ढका हुआ था। बादल के सफेद धूमरे टुकड़े पहाड़ियों की चोटी और हरियाली को चूमने के लिये नभ से उतर-उतर कर टकराते चले जा रहे थे। बेतवा का शोर आँधी का साथ पाकर तुमुल हो उठा।

रानी ने मुड़कर मोतीबाई की ओर देखा। वह उस पार की पहाड़ियों से टकराते मेघ खण्डों पर दृष्टि जमाये थी।

रानी ने आज्ञा दी, 'कूद पड़ो। और वे सबसे आगे घोड़े पर पानी में धस गईं।

फिर क्या था, उनकी सहेलियां और सब घुड़सवार धार को चीरते दिखलाई पड़ने लगे। रानी सबसे आगे।

बेतवा की धार पुञ्ज के ऊपर पुञ्ज-सी दिखलाई पड़ती थी। क्रम अभङ्ग और अनन्त-सा। जब एक क्षण में ही अनेक बार एक जलपुञ्ज दूसरे से संघर्ष खाता और एक, दूसरे से, आगे निकल जाने का अनवरत, अथक, अटूट प्रयास करता तब इतना फेनिल हो जाता कि सारी नदी में फेन ही फेन दिखलाई पड़ता था। झाग की इतनी बड़ी निरन्तर बहती और उत्पन्न होती हुई राशियाँ आड़े आ जाती थीं कि घुड़सवारों को सामने का किनारा नहीं दिखलाई पड़ पाता था।

लहरों के एक पल्लड़ को चीरा, उस पर के झाग को बेधा कि दूसरा सामने। शब्दमय प्रवाह की निरर्थक भाषा मानो बार बार कहती थी बचो, बचो। सामने की उथलपुथल से आगे बढ़े कि बगल से थपेड़ पड़ी। घोड़े आँखें फाड़े नथनों से जल फुफकारते बढ़ रहे थे। वे अपना और अपने सवार का सङ्कट समझ रहे थे। सवार के पैर घोड़े से चिमटे हुये और उनके पैरों के नीचे घोड़े की निस्तब्ध टाप। और टाप के नीचे? न जाने कितनी गहराई। सवारों के चारों ओर भँवरें पड़ पड़ जा रही थीं। एक भँवर बनी, पार की, कि दूसरी तुरन्त मौजूद। परन्तु अपनी रानी और उनकी सहेलियों को आगे देखकर किस सिपाही के मन में अधिक समय तक भय ठहर सकता था?

रानी के घोड़े का केवल सिर ऊपर, शेष भाग पानी और झाग में। रानी की कमर तक झाग, पानी और धार के साथ बहकर आया हुआ झाड़ी-झङ्खाड़। धार की बूँदों की झड़ी उचट-उचटकर आँखों में, बालों पर और सारे शरीर पर बरस रही थी। जब कभी सिपाहियों और सहेलियों को उत्साह देना होता तो हँस-हँसकर शाबाशी देतीं--मानो प्रचण्ड बेतवा की मलिन अञ्जलि में मुक्ता बरसा दिये हों। धूमरे बादलों के आगे एक ओर बगुलों की पांत निकल गई। मानो पहाड़ियों और पहाड़ियों से मिलने वाले बादलों को सफेद खौर लगा दी हो।

पहाड़ों की कन्दराओं में घुसे हुये, उनको आच्छादित किये हुये वादलों में होकर वह वकुलावलि छिपती हुई-सी मालूम पड़ी। और फिर तितर-बितर हुई। जैसे हिलती हुई साँवली सलौनी चादर में टके हुये सितारे। पहाड़ पर बड़े बड़े और सघन पेड़। गहरे हरे श्यामल। बगुले एक पेड़ पर जा बैठे मानो वनदेवी ने प्रभा छिटका दी हो। उस विषम धार के पार थोड़ी देर में किनारा दिखलाई दिया।

रानी फिर हँसीं। बगुलों की सफेदी से रानी के दाँतों ने तुरन्त होड़ लगा दी।

चिल्लाकर बोलीं, 'देखो किनारा आ गया। पड़ाव मार लिया।'

थोड़ी देर में पूरा दस्ता नदी पार हो गया। सब भीग गये थे। परन्तु पीठ पर कसे ढके हुए हथियार लगभग सूखे थे। घोड़े ठिठुर गये थे।

घाट पर कपड़े सुखाने, वदलने में और घोड़ों को आराम देने में थोड़ा-सा समय लगा।

फिर दौड़ लगी और रानी बरुआसागर के किले में दोपहर के करीब पहुँच गईं।

बरुआसागर का किला विशाल झील के ठीक ऊपर है। झील में बरवा नाम का बड़ा नाला पड़ता है। झील को विशालता इस नाले ने ही दी है।

घायल सिपाही और खुदाबख्श इसी किले में पड़े हुये थे।

रानी ने तुरन्त इन सवको देखा। किसी के सिर पर हाथ फेरा, किसी की मरहम-पट्टी की देखभाल की। सिपाही अपनी रानी के स्नेह को पाकर मुग्ध और गद्गद हो गये।

फिर खुदावख्श के पास पहुँचीं। खुदाबख्श ने चारपाई से उठने का प्रयत्न किया, परन्तु न उठ सका।

रानी को देखते ही उसके आँसू आ गये। चरण स्पर्श करने की कोशिश की।

रानी ने फिर सिर पर हाथ फेरा। चौकी पर बैठ गईं। सहेलियां खड़ी थीं। मोतीबाई सहेलियों के पीछे से खुदाबख्श को एकटक देख रही थी। खुदाबख्श ने उसको देख लिया, परन्तु आंखें उसकी मोतीबाई की ओर न थीं।

खुदाबख्श ने रानी को सागरसिंह की लड़ाई का ब्योरेवार हाल सुनाया।

रानी—'कुछ पता चला सागरसिंह अब कहाँ चला गया है?'

खुदाबख्श—'सरकार, गाँव वाले पता नहीं बतलाते। वे ही उसको शरण, भोजन इत्यादि सब देते हैं। इतना तो भी मालूम हो गया है कि वह पड़ोस के जङ्गल में है।'

रानी—'गाँव वाले डाकुओं से डरते हैं। उनके पास निर्भय होने का कोई साधन नहीं है। अंग्रेजी राज्य ने पञ्चयतों का सर्वनाश कर दिया है, इसलिये गाँवों में परस्पर सहायता की प्रणाली उठ सी गई है और उसने डाकुओं को सहायता देने का रूप पकड़ लिया है। देखूंगी। तुम चिन्ता मत करो।'

खुदाबख्श—'अब सरकार स्वयं यहाँ आ गई हैं। मुझको किस बात की चिन्ता? घाव लगभग अच्छे हो गये हैं। एकाध दिन में ठीक हुआ जाता हूँ। फिर देखता हूँ सागरसिंह को।'

रानी ने उसको विश्राम करने का हठ किया। मोतीबाई को खुदाबख्श के पास छोड़कर, किले के महल वाले हिस्से में चली गईं। स्नान-ध्यान में लग गईं।

अब मोतीबाई की आँखें तरल हुईं। रुद्ध कण्ठ मुखरित होने के लिये आकुल हो गया। खुदाबख्श ने देख लिया।

बोला, 'यह क्या! आंखों में आँसू! आपको तो हर्ष और गर्व से हंसना चाहिये था। आपका कैदी—नहीं आपकी सरकार का सिपाही, अपने मालिक के लिये कुछ तो कर सका।'

मोतीबाई ने आँख पोंछकर कहा, 'क्या दर्द बहुत है?'

खुदाबख्श ने जवाब दिया, 'जरा भी नहीं। मालिक ने हाथ क्या फेरा, अमृत लुढ़का दिया। सच कहता हूँ, अभी उनकी आज्ञा हो तो घोड़े पर बैठकर उस अत्याचारी से दो हाथ करूँ।' फिर उसने करवट लेने की कोशिश की। जरा कष्ट हुआ।

एक आह को दबाकर बोला, 'जान पड़ता है कि श्रीमन्त सरकार मेरे स्वस्थ होने तक नहीं ठहरेंगी।'

मोतीबाई ने सतृष्ण नेत्रों से कहा, 'मैं भी उनके साथ जाऊँगी।'

खुदाबख्श ने आंख मीच ली। बोला, 'आप भी जाओगी।'

'क्यों? मुझे क्या हुआ? उनकी छाया में आदमी आंधी बन जाता है, तो औरत क्या आदमी भी नहीं बन सकती!'

मोतीबाई को रत्नावली नाटक में रंगमंच पर रत्नावली का अभिनय करते देखा था स्मरण हो आया। एक साथ कोमलता और प्रसूनों के चित्र आँखों में घूम गये। खुदाबख्श ने एक निश्वास लिया।

आँखें मूँदे ही बोला, 'मेरी मरहम-पट्टी के लिये रह जाना।'

मोतीबाई ने सस्नेह कहा, 'सरकार से कह देना। मैं खुशी से रह जाऊँगी।'

खुदाबख्श ने आँख खोली। भ्रकुटि भङ्ग की। जरा रुखाई के साथ बोला, 'श्रीमन्त सरकार से भिक्षा मागूँगा कि रत्नावली को सेवा-टहल के लिये दे दीजिये।'

मोतीबाई ने उसकी रुखाई की उपेक्षा की।

कहा, 'रत्नावली कौन?'

खुदाबख्श को आश्चर्य हुआ। बोला, 'क्या मैंने रत्नावली कहा?'

मोतीबाई हँसी। उसकी हँसी में चमत्कार था। परन्तु खुदाबख्श पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

मोतीबाई – 'रत्नावली ही तो कहा। क्या कोई सपना देख रहे थे?'

खुदाबख्श—'वह सपना था। अब मीठा जागरण सामने है।'

मोतीबाई ने खुदाबख्श की आंखों में स्नेह को पकड़ने का प्रयत्न किया।

बोली, 'तब मैं खुद तो उनसे नहीं कह सकूँगी। वह सोचेंगी, मैं बहुत टुच्ची हूँ।'

'जी हाँ', खुदाबख्श ने जरा-सा सिर उठाकर कहा, 'आप चाहती हैं वह आपको बहादुर समझें और मुझे टुच्चा और निकम्मा।'

'मैंने यह तो नहीं कहा', मोतीबाई बोली, 'खुदा करे आप जल्दी अच्छे हो जावें', और वह वहाँ से चली गई।

ऊपर की छत को घेरे हुये किले की दीवार थी दीवार में मुड़ेरदार खिड़की। उसमें होकर मोतीबाई झील की लहरों को परखने लगी और रोने लगी। जब उसने रत्नावली का अभिनय किया था इतनी नहीं रोई थी।

नियन्त्रण करके वह अपने काम में लग गई।

[५६]

सन्ध्या के पहले बरवासागर के मुखिया और पञ्च रानी से मिलने के लिये आये। नजर-न्योछावर हुई। रानी ने सब से कुशल-क्षेम की वार्ता की।

जब एकान्त पाया, थानेदार ने रानी को सागरसिंह के विषय में सूचना दी। मालूम हुआ कि खिसनी के जङ्गल में आश्रय पाये हुये है। खिसनी का जङ्गल बरवासागर से १२ मील था। थानेदार को उन्होंने आदेश दिया।

'सवेरे आठ बजे तैयार रहना। किसी को मालूम न होने पावे।'

सवेरे सब तैयार हो गये।

ठीक समय उन्होंने मोतीबाई को बुलाकर कहा, 'तुम यहीं रहो। खुदाबख्श की मरहम-पट्टी और देख-भाल करना।'

मोतीबाई ने पलकें नीची कीं। बोली, 'मैं तो सरकार की सेवा में चलूंगी। क्या किसी ने प्रार्थना की है?'

'नहीं, मैं ही कह रही हूँ', रानी ने उत्तर दिया।

मोतीबाई ने चलने का हठ किया। उसकी अन्य सहेलियों ने भी अनुरोध किया। रानी मान गईं।

रानी अपनी और बरवासागर के थाने की टुकड़ी को लिये हुये चल दीं। उन्होंने इस टुकड़ी के दो भाग किये। एक को दीवान रघुनाथसिंह की अधीनता में रावली की ओर रवाना किया और दूसरी को स्वयं लेकर खिसनी के जङ्गल की ओर चल दीं।

दीवान रघुनाथसिंह ने सागरसिंह की हवेली घेर ली। एक गाँव वाले से कहलवा भेजा, 'हथियार डालकर मेरे पास आ जाओ। रानी साहब कुछ रियायत कर देंगी, नहीं तो हवेली की ईंट से ईंट बजा दूंगा।'

गाँव वाले ने कहा, 'कुँवर सागरसिंह हवेली में नहीं हैं।'

रघुनाथसिंह—'तब तो हवेली को पटक देने में और भी सुभीता रहेगा।'

परन्तु जब उसको निश्चय हो गया कि सागरसिंह हवेली में नहीं है, उसने रानी के पास संदेशा खिसनी की ओर भेज दिया। खुद हवेली का घेरा डाले रहा।

रानी जब जङ्गल को घेरने की योजना तैयार कर रही थीं, तब उनको यह संदेशा मिला। उनका मन कह रहा था कि सागरसिंह इसी डांग में है।

जासूस ने घण्टे भर के भीतर सूचना दी, 'दो पहाड़ियों की दून के सिरे पर एक बड़ी सी पर्णकुटी में बागी खाने-पीने की तार में लगे हुये हैं। उनके पास घोड़े हैं।'

रानी ने दोनों पहाड़ों की ऊँचाइयाँ बन्दूक वालों से घिरवा लीं और दून के सिरे पर भी कुछ आदमी भेज दिये। स्वयं तीनों सहेलियों और मोतीबाई के साथ दून के निकास पर दो कतारों में ओट लेकर घोड़ों समेत ठहर गईं।

उनकी आज्ञा थी कि ऊपर वाले सिपाही धीरे-धीरे दून के ढाल की ओर बढ़ें और जब डाकुओं के जरा निकट आ जायें तब बन्दूकों की बाढ़ दागें।

ऐसा ही किया गया।

डाकू बेहद हड़बड़ा गये। खाना-पीना और साज-सामान छोड़कर, घोड़ों पर नङ्गी पीठ सवार हुये और दून के निकास की ओर भागे।

ऊपर तीनों ओर से बन्दूकें चल रही थीं, परन्तु डाकुओं का एक आदमी भी घायल तक नहीं हुआ।

निकास पर पहुँचते ही उनके ऊपर सामने से पाँच बन्दूकें चलीं। घोड़े मरे, डाकू घायल हुये। उन लोगों ने बन्दूकों से जवाब दिया, परन्तु रानी का दल आड़ें लिये हुए था। इसलिए कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

डाकू सिर पर पैर रखकर इधर-उधर भागे।

काशी, सुन्दर और मोतीबाई ने अलग अलग पीछा किया।

रानी और मुन्दर के पास से जो डाकू घोड़े पर सवार, जरा पीछे निकला वह सतर्क था। नङ्गी तलवार हाथ में, गले में सोने का जेवर।

वस्त्र भी उसके अच्छे थे। जो वर्णन उनको सागरसिंह का मिला था, उससे इस डाकू-सवार की हुलिया मिलती थी। रानी ने निर्णय किया कि यही सागरसिंह है। रानी ने मुन्दर को मुस्कराकर इशारा किया। मुन्दर ने होंठ दावे और सपाटे के साथ उस पर टूटी। रानी दूसरी बगल से। सागरसिंह ने घोड़ा तेज किया। इन दोनों ने पीछा किया। जब तक मार्ग ऊबड़-खाबड़ रहा सागरसिंह बचता हुआ चला गया। जब मार्ग कुछ समस्थल आया, जमीन मुलायम और कीचड़ वाली मिली, सागरसिंह का घोड़ा अटकने लगा। रानी और मुन्दर के घोड़े बहुत प्रबल थे—दोनों काठियावाड़ी। सागरसिंह को एक ओर से मुन्दर ने दबाया और दूसरी ओर से रानी ने।

रानी गले में हीरों का दमदमाता हुआ कण्ठा डाले थीं। उनको देखते ही सागरसिंह समझ गया कि जिस रानी के विषय में बहुत सुना करते थे, वह स्वयं आज, इसी क्षण उसके प्राणों की ग्राहक बनकर आ कूदी है।

आत्म-रक्षा के भाव से प्रेरित होकर उसने रानी पर वार किया। तुरन्त मुन्दर ने चपल गति से अपनी तलवार उस पर ढाई। वार ओछा पड़ा, घोड़े की पीठ पर। उधर रानी ने घोड़े को फुर्ती के साथ जरा-सा रोका। वह कुछ अंगुल पीछे हुईं, और सागरसिंह का वार उनसे आगे खिच गया। रानी ने अपनी तलवार ऐसी कसी कि सागरसिंह की तलवार के दो टुकड़े हो गये। उसने अपने घोड़े को बहुत खींचा दाबा, परन्तु उसकी पीठ कट चुकी थी। मुन्दर ने सागरसिंह की गर्दन को ताक कर तलवार उबारी कि रानी ने तुरन्त कहा, 'जीवित पकड़ना है', और रानी ने इस तरकीब से अपना घोड़ा सागरसिंह की बराबरी पर किया कि वह सट गया। रानी ने सागरसिंह की कमर में अपना हाथ डाला। मुन्दर समझ गई कि क्या करना है। दूसरी ओर से उसने अपना हाथ उसकी कमर में लपेट दिया और झटका देकर घोड़े पर से उठा लिया। घोड़ा पीछे रह गया। सागरसिंह ने इस वज्रपाश में से निकलने, खिसकने की बहुत कोशिश

की परन्तु वह सफल न हो सका। उसने अपने दांतों को काम में लाने का प्रयत्न किया। रानी ने तुरन्त कहा, 'सावधान, यदि मुँह खोला तो तलवार ठूँस दूंगी।'

सागरसिंह को रानी और मुन्दर के बल की प्रतीति हो गई और उसने अपनी रक्षा को अपने भाग्य के हवाले कर दिया। थोड़ी दूर चलने पर रानी के दस्ते के लोग सिमट आये। सागरसिंह उस वज्रपाश में से निकला और रस्सियों से बांध लिया गया। घोड़े पर लादकर यह टुकड़ी एक जगह ठहर गई। मोतीबाई, काशी और सुन्दर की बाट देखने लगी। रानी ने बिगुल बजवाया। वे तीनों थोड़ी देर में उस स्थल पर आ गईं। मालूम हुआ कि बाकी डाकू निकल भागे। दीवान रघुनाथसिंह को समाचार देकर रानी बरवासागर चली आईं। उन्होंने कहा, 'ये भागे हुये डाकू इस समय हाथ नहीं लगेंगे। समय काफी हो चुका है। बरवासागर संध्या के पहले पहुँच जाना चाहिये।'

रानी संध्या के पहले ही बरवासगार पहुँच गईं। सागरसिंह सख्त पहरे में रख दिया गया। रात होने के पहले रघुनाथसिंह अपने दल समेत आ गया।

रानी की बुद्धि और बिकट वीरता की घर-घर महिमा बखानी जाने लगी। दूसरे दिन गाँव-गाँव में चर्चा फैल गई।

समय पर सागरसिंह रानी के सामने पेश किया गया। उसने प्रणाम किया और पैर छूने के लिये हाथ बढ़ाने चाहे। पहरेवालों ने रोक लिया।

रानी ने पूछा, 'तुम्हारा नाम ?'

उसने उत्तर दिया, 'कुंवर सागरसिंह, श्रीमन्त सरकार।'

रानी मुस्कराई। सागरसिंह उस मुस्कराहट से काँप गया।

रानी ने कहा, 'कुँवर होकर यह निकृष्ट आचरण कैसा ?'

सागरसिंह बोला, 'सरकार हमारा वंश सदा लड़ाइयों में भाग लेता रहा है। महाराज ओरछा की सेवा में लड़ा। महाराज छत्रसाल की सेवा में रहकर युद्ध किये। जब अङ्गरेज आये तब उनकी आधीनता जिन

ठाकुरों ने स्वीकार नहीं की, उनमें हम लोग भी थे। हमको जब दबाया गया, हम लोग बिगड़ खड़े हुये और डाके डालने लगे। मैं अपने लिये और अपने साथियों के लिये गङ्गा जी की शपथ लेकर कह सकता हूं कि हम लोगों ने स्त्रियों और दीन दरिद्रों को कभी नहीं सताया।'

रानी ने कहा, 'इन दिनों जिन लोगों पर तुमने डाके डाले वे सब मेरी प्रजा हैं, अङ्गरेजों की नहीं। डाके के लिये दण्ड प्राणों का है। तैयार हो जाओ। तुम्हारे साथी भी न बचेंगे और न तुम्हारे और उनके घर। मिट्टी में मिलवा दूँगी।'

सागरसिंह ने कनखियों रानी को देखा। उसने इतनी बड़ी, ऐसी करारी और प्रभापूर्ण आँख न देखी थी। उसको ऐसा लगा मानो साक्षात् दुर्गा सामने खड़ी है।

सागरसिंह बोला, 'सरकार, मैं कुछ प्रार्थना कर सकता हूं ?'

रानी ने अनुमति दी।

सागरसिंह ने प्रार्थना की, मुझको प्राण दण्ड गोली या तलवार से दिया जाय, फाँसी से नहीं। यदि फांसी दी गई तो मेरा और जाति भर का अपमान होगा। बागी बढ़ जावेंगे। घटेंगे नहीं सरकार।'

रानी—'तुमको यदि छोड़ दूँ तो क्या करोगे ?'

सागरसिंह—'श्रीमन्त सरकार के सामने झूठ नहीं बोलूँगा। यदि काम न मिला तो फिर डाके डालूँगा, परन्तु सरकार के राज्य में नहीं।'

रानी—'यदि मैं कहूं कि तुम डाके बिलकुल न डालो तो इसके बदले में क्या चाहोगे ?'

सागरसिंह—'सरकार के चरणों की नौकरी, जहाँ रहकर लड़ाई में कल की अपेक्षा अधिक पराक्रम दिखला सकूँगा।'

रानी—'तुम्हारे साथी कितने हैं ?'

सागरसिंह—'जङ्गल में १५, १६ थे। गाँव में ६०, ६५ हैं और अदृष्ट सहायक मेरे सब नातेदार।'

रानी—'वे लोग क्या करेंगे ?'

सागरसिंह—'सरकार की आज्ञा हुई तो सरकार की सेना में मेरे साथ नौकरी।'

रानी—'यदि मैंने आज्ञा न दी तो ?'

सागरसिंह—'सरकार के राज्य के सिवाय और सब जगह उनकी बगावत का अधिकार क्षेत्र चाहूंगा।'

रानी—'तुमको मैं इसी समय छोड़ दूँ तो सीधे कहाँ जाओगे ?'

सागरसिंह—सरकार, झाँसी।'

रानी—'तुम सबसे बड़ी सौगन्ध किसकी मानते हो ?'

सागरसिंह—'गङ्गा जी की। सरकार के चरण की, अपनी तलवार की।'

रानी—'मैं तुमको छोड़ती हूँ सागरसिंह। सौगन्ध खाओ और अपने साथियों सहित झाँसी की सेना में भर्ती हो जाओ।'

सागरसिंह ने सौगन्ध खाई। रानी ने उसको छोड़ दिया। वह उनके पैरों में गिर पड़ा। हाथ जोड़कर बोला, 'सरकार मैं झाँसी चलूँगा। वहाँ सेना में भर्ती होने के उपरान्त घर लौटूँगा और अपने साथियों को बटोर कर झाँसी ले आऊंगा। और उन सबको भर्ती कराऊँगा।'

'नहीं सागरसिंह', रानी ने कहा, 'मैं बरुआसागर तब छोड़ूँगी जब तुम्हारे सब साथी मेरे सामने आ जायँ और सौगन्ध खा जायँ नहीं तो मैं उनको पकड़ूँगी और दण्ड दूँगी।'

'मेरा नाम कुँवर सागरसिंह नहीं जो मैंने सरकार के सामने सबों को पेश न किया।' सागरसिंह ने दम्भ को दबाते हुये कहा।

आँख में झेंप थी।

रानी जरा हँसी। सोचने लगीं।

बोलीं, 'तुमको कुंअर शब्द से सम्बोधन करने के पहले, मेरा एक और सामन्त इस पदवी के पाने का पात्र है। वही जो तुमको पकड़ने के लिये तुम्हारी हवेली में पहुँच गया था और जिसको तुमने घायल कर दिया था।'

सरकार', सागरसिंह बोला, 'उस दिन यदि मैंने उस सामन्त को घायल न कर पाया होता तो मैं किसी प्रकार भी न बच पाता।'

रानी—'वह यहीं है। अभी अस्वस्थ है।'

सागरसिंह—'मैं उसके दर्शन करना चाहता हूं। क्षमा मागूंगा।'

रानी ने खुदाबख्श की कुशलवार्ता मँगवाई। वह एक सिपाही का सहारा लेकर आ गया। सागरसिंह ने उसको अभिवादन किया।

रानी ने कहा, 'क्या हाल है?'

खुदाबख्श ने उत्तर दिया, 'इतने बड़े स्वामी की रक्षा होते हुये हाल बुरा हो ही नहीं सकता। जिस समय सरकार के पराक्रम की बात मालूम हुई उसी समय दुःख दर्द एक स्वप्न-सा हो गया।'

रानी ने कहा, 'तुमने सुन लिया होगा कि मैंने अपराधी को छोड़ दिया।'

खुदाबख्श बोला, 'मैंने सरकार की दया का सब हाल सुन लिया।'

रानी ने कहा, 'आज से तुम कुंवर खुदाबख्श कहलाओगे और यह कुंवर सागरसिंह। जितने लोग अनोखी सूरवीरी के काम करेंगे, वे सब कुंवर कहलावेंगे और उनका वर्ग कुंवर मण्डली के नाम से राज्य के कागज पत्रों में सम्बोधित होगा।'

खुदाबख्श गद्गद् हो गया। पैर छुये और बोला, 'सरकार, कुंवर मण्डली का नाम सच्चा तब होगा जब कदमों की सेवा करते हुये हम सब के सिर कटें।'

रानी ने कहा, 'जाओ कुंवर खुदाबख्श आराम करो।'

खुदाबख्श बोला, 'माता का आशीर्वाद मिल गया अब आराम ही आराम है!'

'सागरसिंह', रानी ने कहा, 'तुम्हारा नाम हमारे कागजों में कुंवर युक्त लिखा जावेगा, परन्तु मुझको बारबार कुंवर, राव, दीवान इत्यादि कहने में अड़चन जान पड़ती है। क्या बुरा मानोगे?'

सागरसिंह का गला रुद्ध हो गया। जिस मनुष्य ने एक दीर्घ समय डकैती और बटमारी में बिताया था उसको जान पड़ा मेरे भीतर कुछ पवित्र भी है।

हाथ जोड़कर बोला, 'नहीं सरकार, कभी नहीं। यदि मेरा आधा नाम ही लिया जायगा तो बहुत है। मुझको क्षमा किया जाय।'

कुंवर रघुनाथसिंह ने कहा, 'जब हम लोग पूरे कुँवर की पदवी पर पहुँच जावेंगे तब हमारा नाम आधा लिया जावेगा।'

[५७]

बरवासागर में रानी कुल पन्द्रह दिन रहीं। सागरसिंह का पूरा गिरोह हथियार डालकर उनकी शरण में आ गया और सेना में भर्ती हो गया।

खुदाबख्श चंगा तो उसी दिन से हो चला था, अब स्वस्थ हो गया। रानी झाँसी ससैन्य लौट आईं। लोगों की छाती रानी के पराक्रम से उमग उठी।

नवाब अलीबहादुर रानी को बधाई देने आये। इत्र-पान लेकर चले गये। कम से कम मोतीबाई को उनकी बधाई की सचाई में विश्वास नहीं था।

अलीबहादुर और पीरअली में सलाह हुई।

अलीबहादुर—'पीरअली यह वही सागरसिंह है, जो झाँसी का जेल तोड़कर भागा था। रानी ने उसी को नहीं बल्कि उसके सारे गिरोही डाकुओं को, फौज में भरती कर लिया है। यह सब सरकार बहादुर के खिलाफ तैयारी का सबूत है।'

पीरअली—'और हुजूर, तुर्रा यह कि उनके नये-पुराने कामदार, अङ्गरेज सरकार को इस धोखे में रखना चाहते हैं कि झाँसी का राज नवाब गवर्नर जनरल बहादुर की तरफ से किया जा रहा है और रानी साहब तो केवल मुन्तजिम हैं।'

अलीबहादुर—'असली बात की इत्तिला जबलपूर पहुंचनी चाहिये, जैसे हो तैसे।'

पीरअली—'हुजूर का हुक्म हो तो मैं चला जाऊँ। मगर मेरे जाने से शक हो जावेगा।'

अलीबहादुर—'माल का सरिश्तेदार रानी के बुरे सलूक की वजह से नाराज है। वह इस काम के करने के लिये तैयार हो जावेगा। अगर जाये तो खर्चा मैं दे दूंगा।'

पीरअली—'मैं कहूँगा। वे मान जायेंगे। उनको टीकमगढ़ होकर भेजा जाय। वहाँ से दीवान नत्थेखाँ की चिट्ठी और उनके कुछ आदमियों को साथ लेते जावें, क्योंकि रास्ते में खतरा है।'

अलीबहादुर—'बिलकुल ठीक। तुमने इस बात को तलाश किया कि झाँसी खास में रानी के खिलाफ कितने आदमी हैं ?'

पीरअली—'ऐसे किसी खास आदमी का नाम नहीं ले सकता। मगर औरतों में रानी साहब ने जो इतनी आजादी फैला रक्खी है वह जरूर बहुत लोगों को खटकती है।'

अलीबहादुर—'रानी के खिलाफ बहुत लोग होंगे मगर मुझको वे लोग रानी का आदमी समझने लगे हैं इसलिये अपने मन की बात नहीं बतलाते।'

पीरअली—'ऐसी हालत में कम से कम कुछ ऐसे आदमी हुज़ूर के पास तो जरूर आते, जो रानी से बैर मानते हों।'

अलीबहादुर—'हो सकता है। सम्भव है। कम से कम सरिश्तेदार वगैरह उनके बहुत खिलाफ हैं।'

नवाब अलीबहादुर ने सरिश्तेदार को इस प्रपञ्च के लिये राजी कर लिया। अपनी चिट्ठी दी। वह पहले टीकमगढ़ गया। टीकमगढ़ से उसने आदमी लिये और रुपया भी। दीवान नत्थेखाँ को अलीबहादुर की योजना पसन्द आई। उसने अलीबहादुर के पास अपना एक विश्वस्त आदमी भेजा। उसके द्वारा परस्पर सहायता देने की बात निश्चित हो गई। नवाब साहब को आशा हो गई कि किसी दिन नत्थेखाँ झाँसी पर आक्रमण करेगा। वे उस दिन की बाट जोहने लगे।

ओर्छा के राजा भारतीचंद के पीछे सन् १७७६ में विक्रमाजीत राजा हुये। राज्य की बहुत हीन अवस्था हो गयी थी। राजा के पास केवल ५० सैनिक, १ हाथी और २ घोड़े रह गये थे। छः सात बरस में इन्होंने अपने राज्य का फिर विस्तार कर लिया। राजधानी टीकमगढ़ में कायम की। सन् १८१२ में अङ्गरेजों से संधि हुई। इन्होंने अपने जीवनकाल में अपने लड़के धर्मपाल को गद्दी दे दी, परन्तु उसका देहान्त हो गया और फिर बहुत वृद्धावस्था में मर गये। इनके भाई ने सात वर्ष राज्य किया। सन् १८४१ में गद्दी खाली थी। धर्मपाल की विधवा रानी लड़ई दावेदार

हुई। सुजानसिंह उक्त वृद्ध राजा के भतीजे थे। उनका रानी लड़ई से झगड़ा था। वे झांसी चले आये। राजा रघुनाथराव वाले महलों में नईबस्ती में, गङ्गाधरराव ने इनको ठहराया था। अलीबहादुर को अपना ठौर छोड़ना पड़ा था, इसलिये उनके मन में झांसी के राजा के प्रति क्षोभ और भी सघन हो गया। सुजानसिंह के देहांत के बाद सन् १६५४ में रानी लड़ई को गोद लेने की अनुमति मिल गई और उन्होंने हमीरसिंह को गोद ले लिया। सन् ५७ के विप्लव के समय रानी लड़ई हमीरसिंह की ओर से अभिभावक थी और नत्थेखां मन्त्री था। इधर-उधर से कुछ अङ्गरेज अफसर भागकर टीकमगढ़ आये। राज्य ने उनको शरण दी।

इन लोगों की सलाह से अलीबहादुर की चिट्ठी जबलपुर भेज दी गई और एक खास दूत द्वारा इनको कहला भेजा कि झाँसी में अपनी अनुकूल एक गिरोहबन्दी करलो, एकाध झगड़ा-बखेड़ा हो जाय तो और भी अच्छा, हम ठीक मौके पर टीकमगढ़ से सेना लेकर आते हैं। नत्थेखाँ ने तैयारी कर दी।

अलीबहादुर को खुशी हुई। मुहर्रम आने वाला था। उपयुक्त अवसर की कमी न थी। पानी खूब बरस कर यकायक रुक गया। बादल खुल गये। दिन को कड़ी धूप, रात को धुले हुये निर्मल तारे और शीतल पवन। जनता दिन में परिश्रम करती, सन्ध्या समय आमोद-प्रमोद। रात को गहरी नींद में सो जाती।

उसके नीचे जो सुरङ्ग तैयार की जा रही थी उसका बिचारी जनता को पता न था।

हिन्दू रियासतों में एक जमाने से शिया मुसलमान काफी संख्या में आ बसे थे, कोई नौकर थे, कोई कारीगर, हकीम जर्राह इत्यादि। परंतु संख्या सुन्नी मुसलमानों की अधिक थी। इनमें भी उनाव-दरवाजे की तरफ मेवाती और बड़ागाँव दरवाजे के निकट पठान। इन मुहल्लों में केवल मुसलमान ही न बसते थे—मराठे, ठाकुर, तेली, काछी इत्यादि हिन्दू बीच बीच में। बड़ेगांव दरवाजे मस्जिद थी और थोड़ी दूर पर बिहारी

जी का मन्दिर। हिन्दू और मुसलमान, सब, अपने-अपने विश्वास के अनुसार परम्परा क्रमागत त्योहारों को मनाते आये थे कभी कोई झंझट खड़ा नहीं हुआ।

उस साल डोल एकादशी और मुहर्रम एक ही दिन—सोमवार को पड़े। सुन्नी मुसलमान ९-१० दिन पहले से ताजियों की तैयारी में लगे—अबकी साल उनको ताजिये और भी अधिक धूमधाम के साथ निकालने थे क्योंकि उनकी झाँसी स्वतन्त्र हो गई थी, उनकी रानी राज्य कर रही थीं। मन्दिरों में भी खूब नाच और गाना के साथ मन की ओज प्रस्फुटित हो रही थी। इन दिनों भी झाँसी के मन्दिरों में जो नित्य नई सजावट की जाती है उनको 'घटा' कहते हैं। किसी दिन नीली घटा, किसी दिन पीली घटा, किसी दिन कोई और। सारे मन्दिर में एक ही प्रकार के रङ्ग के वस्त्र और फूल। यह सब कई दिन एकादशी तक चलता रहा। सोमवार के रोज शाम के समय ताजिये दफनाये जाने को थे और उसी समय विमानों का जलविहार होना था। यदि दोनों धर्म वालों में मेल-जोल हो तो मजे में सब रस्में निभाली जायें, और यदि एक दूसरे से अनमने हों, तो एक डग भी रखने को जगह नहीं।

मोतीबाई और जूही जैसे दिवाली मनाती थीं वैसे ही ताजियादारी भी करती थीं। और उसी उत्साह के साथ वे 'मुरलीमनोहर' के मन्दिर में, जिस समय रानी दर्शन के लिये जाती थीं नृत्य और गान भी करती थीं,—उन्हीं दिनों मुहर्रम के जमाने में! परन्तु उनके इस कार्य पर मुसलमान किसी प्रकार का आक्षेप नहीं कर रहे थे, क्योंकि वे प्रायः रानी के साथ रहा करती थीं।

दुर्गाबाई सुन्नी मुसलमान थी। वह भी ताजियादारी करती थी और नाचना उसका पेशा था। मन्दिरों में उसके नृत्य की माँग थी। वह मन्दिरों में नृत्य के लिये जाने लगी।

कुछ मुसलमानों को असङ्गत लगा। चर्चा शुरू हो गई। इस चर्चा में पीरअली ने प्रधान भाग लिया।

सबेरे का समय था। ठण्डी हवा चल रही थी, धूप में तेजी न आई थी। हलवाइयों की दूकान पर ताजी मिठाइयाँ थालों में सजतीं और बिकती चली जा रही थीं। दूसरी ओर मालिनों की, फूलों से भरी हुई डलियाँ थोड़ी ही देर में खाली होने को थीं।

दुर्गा नर्तकी ने हलवाई के यहाँ से मिठाई ली और मालिन के यहाँ से फूल। मार्ग में एक जगह ठेस लगा। पैर में जरा-सी चोट आई। साथ ही मिठाई के दोने में से कुछ सामान नीचे जा गिरा। उसका मुंह बिदरा। पास से जाने वाला एक आदमी हँस पड़ा। दूसरे का कष्ट उसका विनोद बना। और भी कुछ लोग हँसे। एक ने कहा, 'उठा लो दुर्गा नीचे पड़ा हुआ सामान, वह भी एक अदा ही होगी।'

'अरे रे मुझको तो लग गई तुम हँसते हो।' दुर्गा हँसती हुई बोली।

वहीं पीरअली भी था। वह भी हँसा था।

'अभी क्या हुआ दुर्गाबाई जी', पीरअली ने कहा, 'जैसा करोगी वैसा पाओगी।'

बात कुछ नहीं थी, परन्तु दुर्गा को आग-सी लग गई। पीरअली शिया था। उसकी व्यर्थ बात में कोई गूढ़ प्रच्छन्न व्यङ्ग अवगत करके बोली, 'तुम कहाँ के दूध के धुले हो मियाँ। किसी दिन तुमको भी खुदा ऐसा समझेगा कि याद करोगे।'

पीरअली—'मैं तुम सरीखी औरत को मुंह नहीं लगाना चाहता, अपनी राह देखो।'

दुर्गा—'तुम्हीं मुँह लगने को फिरते हो। मैं तो ऐसों पर लानत भेजती हूँ।'

पीरअली—'खबरदार जो बदजबानी की, जीभ काटकर फेक दूँगा।'

दुर्गा—'हाँ, बल-पोरस औरतों पर ही चलाने आये हो, पर मेरी जबान काटने आओगे तो मैं कौन तुम्हारी जीभ की पूजा करने बैठ जाऊँगी। जानते हो किसका राज है?'

पीरअली दाँत पीसकर रह गया।

कई लोगों ने 'जाम्रो जाम्रो', 'रहने दो, रहने दो' कहा।

ऊपर से झगड़ा रफा दफा हो गया, लेकिन भीतर भीतर ग्राग सुलग उठी।

'एक सुन्नी औरत ने, सो भी नर्तकी वेश्या ने, एक शिया मर्द पर मुहर्रम के दिनों में लानत भेजी!'

शिया सुन्नियों के झगड़े का इस ग्रत्यन्त क्षुद्र घटना के कारण सूत्रपात हुम्रा।

शिया लोग घरों में चुपचाप मातम मनाते हैं। सुन्नियों में भी मातम मनाया जाता है। परन्तु ताजिया इत्यादि बनाने की कोई पाबन्दी नहीं। तो भी बनाये जाते थे और धूमधाम के साथ निकाले जाते थे।

रघुनाथराव के समय में अलीबहादुर का बहुत प्रभाव था। शिया थे। कदाचित् इसलिये भी राज्य की ओर से ताजियों की कोई धूमधाम नहीं की जाती थी। अलीबहादुर का प्रभाव उठ गया था, परन्तु ताजिया सम्बन्धी परम्परा अवशिष्ट थी। शिया अपने ताजिये चुपचाप निकाल ले जाते थे और उनका समय भी सुन्नियों के ताजियों के निकालने के समय से टक्कर न खाता था। परन्तु एकादशी के दिन डोल भी निकलने थे। दिन में। दिन में ही शिया-सुन्नियों के ताजिये भी निकलने थे। दोपहर दोपहर तक दोनों फिर्कों के ताजिये निकल जायें और २ बजे से विमान निकलें, यही योजना सम्भव जान पड़ती थी। पर शिया-सुन्नी इस पर राजी नहीं दिखाई पड़ते थे। दीवान ने समझाने-बुझाने और मनाने की कोशिश की। विफल हुम्रा।

ताजियादार कहते थे:—

'हमारा ताजिया तीसरे नम्बर पर उठा करता है। पहले नम्बर वाला पहले उठे और चल पड़े और उसके पीछे दूसरा वाला, हम तुरन्त उसके पीछे हो जायेंगे।'

'हमारा पहला नम्बर जरूर है, परन्तु ताजिया हमारा हमेशा तब उठा है जब शियों के ताजिये निकल गये। ग्राप कहते हैं कि नौ बजे

से ताजिये निकालना शुरू कर दो। हम तैयार हैं, परन्तु शियों के ताजिये पहले निकलवा दीजिये।'

और शियों के ताजिये उतने सवेरे निकल नहीं सकते थे। विवश कोई किसी को कर नहीं सकता था। धर्म का मामला ठहरा!

अच्छा यही था कि यह झंझट दो दिन पहले खड़ा हो गया था।

शिया लोग अपने ताजिये यदि आतुरता के साथ बड़े भोर निकाल भी ले जाते तो इसमें सन्देह था कि सुन्नी अपने ताजिये हर साल के समय के प्रतिकूल दफना देते या नहीं।

पीरअली इस झंझट में कहीं भी ऊपर नहीं दिखलाई पड़ता था परन्तु भीतर-भीतर उसकी उत्प्रेरणा मौजूद थी।

जब दीवान समस्या को न हल कर सका तब उसने कोतवाली से पुराने क़ागज मँगवाये। परन्तु पुराने कागज विप्लव के आरम्भ में ही भस्मीभूत हो चुके थे—और उनसे कुछ सहायता मिल भी नहीं सकती थी। दीवान हैरान था।

निदान मामला रानी के सामने पहुँचा।

हिन्दू-मुसलमानों की भीड़ इकट्ठी हो गई।

रानी ने समझाने का यत्न किया। लड़ाना-भिड़ाना चाहतीं तो सहज ही ऐसा कर सकती थीं, परन्तु वे तो मेल कराने पर तुली हुई थीं।

जब वे कोई सुझाव देतीं तो सब 'बहुत ठीक सरकार', 'बहुत ठीक सरकार' कह देते, और थोड़ी देर चुप रहने के बाद 'किन्तु' 'परन्तु' करने लगते।

रानी ने यकायक कहा, 'क्या इतने हिन्दू-मुसलमानों में कोई ऐसा नहीं जो इस कठिनाई को हल कर दे?'

महल के पड़ोस में एक बढ़ई रहता था। वह आगे आया। उसने विनय की, 'सरकार, मैं कुछ निवेदन करना चाहता हूँ।'

रानी—'कहो।'

बढ़ई—'सरकार, राम और रहीम सबसे बड़े हैं। उसी तरह उनका मन्दिर विमान से बड़ा और इनकी मसजिद ताजिया से बड़ी। मसजिद में रहीम की पूजा की जाती है। मैं मसजिद बनाकर ठीक समय पर निकाल दूंगा। सब ताजिये उसके साथ निकल जाना चाहिये। आगे पीछे का कोई सवाल नहीं खड़ा होता।'

सुन्नी ताजियेदार सहमत हो गये।

'मसजिद जरूर सबसे आगे रहेगी।'

'मसजिद के पीछे पीछे हम सब के ताजिये चलेंगे।'

उस बढ़ई ने दो दिन के भीतर कागज और भोड़र की एक सुन्दर मसजिद बनाई। एकादशी के दिन ठीक समय पर सब ताजिये निकल गये। सबसे आगे बढ़ई की मसजिद थी। हिन्दुओं के विमानों को निकलने में कुछ विलम्ब हो गया, परन्तु इसका किसी ने बुरा न माना। इस प्रकार वह उठता हुआ तूफान बिना प्रयास के ठण्डा हो गया।

परन्तु दूसरा तूफान जो उठ खड़ा हुआ था वह न बैठ सका।

नत्थेखाँ ने तैयारी कर ली थी। झाँसी में झगड़ा खड़ा हो जाता तो अच्छा ही था, नहीं खड़ा हुआ तो भी उसको प्रहार करना ही था। वह एकादशी के दो दिन बाद ओर्छा में ससैन्य आ गया।× तीसरे दिन अनन्त चतुर्दशी थी।*

अनन्त चतुर्दशी के दिन भोर होते ही नत्थेखाँ का दूत दीवान के पास आया।

× कहते हैं कि यह बीस सहस्र सेना लेकर आया था।

*अनन्त चतुर्दशी उस साल तीन सितम्बर को थी।

[५८]

नत्थेखाँ के दूत ने जो सन्देसा दिया, उसका सार यह था कि झाँसी पहले ओर्छा का अंश था, वह अनुचित प्रकार से ओर्छा से काट दिया गया, अब ओर्छा को वापिस मिलना चाहिये। अङ्गरेज जो पांच सहस्र मासिक वृत्ति रानी साहब को देते थे। उन्हें ज्यों की त्यों मिलती रहेगी, किला नगर और शस्त्र हमारे हवाले कर दो।

नगर में समाचार फैलते देर न लगी। नईबस्ती से, जहां अलीबहादुर का निवास था, खबर फैली कि नत्थेखाँ फौज लेकर आ भी गया है और शहर के चारों ओर घेरा पड़ गया है। लोग घबरा गये।

मोतीबाई ने रानी को समाचार दिया, 'नत्थेखाँ बीस सहस्र सेना और अनेक तोपें लेकर ओर्छा से कूच करने वाला है।'

रानी ने पूछा, 'वह ओर्छे में आया कब ?'

'कल आया था', मोतीबाई ने उत्तर दिया।

रानी ने कर्मचारियों से विचार-विमर्श किया। झांसी में अच्छी तैयारी न थी। कर्मचारी सब घबराहट में थे।

अकेली रानी धैर्य धारण किये थीं। उन्होंने कहा, 'राजनीति की आप लोग जानो। युद्ध का संचालन मैं करती हूं। नत्थेखां को भागने के लिये कठिनता से गली मिलेगी।'

नाना भोपटकर ने अनुरोध किया, 'सरकार विजय की मूर्ति हैं। हमको युद्ध के अन्तिम परिणाम के विषय में कोई सन्देह नहीं। यदि सरकार को मेरी राजनीति में विश्वास है, तो मेरी एक प्रार्थना मानी जाय।'

रानी ने स्वीकार किया।

भोपटकर ने कहा, 'हमारे यहां अङ्गरेज झण्डा, यूनियन-जैक रक्खा हुआ है। अपने झण्डे के साथ हम उसको भी खड़ा करेंगे। किले में जो अङ्गरेज बन्द हो गये थे उनमें से एक मार्टिन नाम का व्यक्ति, फौज वालों के हाथ से भाग निकला था। वह आगरा में है। एक चिट्ठी में उसको

इस प्रकार की लिखूंगा कि हम लोग नत्थेखाँ के विरुद्ध अंग्रेंजों की ओर से लड़ रहे हैं। मेरी राजनीति को इस चिट्ठी से सहायता मिलेगी।'

रानी बोलीं, 'परन्तु यह राजनीति चलेगी कितने दिनों ? हमको अन्त में, सारे देश में स्वराज्य स्थापित करना है। यूनियन जैक झण्डे के नीचे स्वराज्य की स्थापना असम्भव है। चिट्ठी चाहे जिसको मनमानी लिखो, परन्तु झण्डा तो चिट्टी से बहुत बड़ा होता है।'

'सरकार', भोपटकर ने कहा, 'चिट्ठी और झण्डे का सामञ्जस्य है। हम कुछ समय तक अपने आदर्श को ढका-मुँदा रखना चाहते हैं। यदि स्वराज्य का प्रयत्न देश भर में ३१ मई को एक साथ ही हो गया होता, तो राजनीति की दिशा कुछ और होती परन्तु अब उसमें परिवर्तन आवश्यक है।'

लालाभाऊ बख्शी बोला, 'सरकार, देखने के दाँत कुछ और, खाने के कुछ और। भोपटकर साहब का यही तात्पर्य है।'

रानी मुस्कराईं। दरबारियों ने समझ लिया कि उन्होंने कोई दृढ़ निश्चय कर लिया है।

'नाना की बात को मैं नहीं टाल सकती हूँ,' रानी ने कहा, 'परन्तु गेरुआ झण्डा सबसे ऊपर की बुर्ज पर रहेगा और अङ्गरेजों का झण्डा चाहे जहां, नीचे की बुर्ज पर लगा लो।'

मन्त्रिमण्डल ने स्वीकार किया।

रानी बोलीं, 'लालाभाऊ, तोपों का तुरन्त प्रबन्ध करो। जवाहरसिंह रघुनाथसिंह इत्यादि को सावधान करो। सब फाटक बन्द करके फाटकों की बुर्जों पर गोला-बारूद इसी समय जमा करो। नत्थेखाँ कई ओर से आक्रमण करेगा। और किले पर बड़ी तोपें चढ़ी हैं ?'

भाऊ ने उत्तर दिया, 'सरकार, केवल कड़कबिजली नीचे रक्खी है। उसको अभी चढ़वाता हूं और सरकार की अन्य आज्ञाओं का पालन करता हूँ। दीवान जवाहरसिंह यहीं हैं, परन्तु दीवान रघुनाथसिंह उनाव की ओर गये हुये हैं !'

रानी—'तुरन्त बुलाओ।'

भाऊ—'जो आज्ञा सरकार।'

रानी—'बरवासागर वाला सागरसिंह कहाँ है ?'

भाऊ—'मऊवाले काशीनाथ भैया के साथ करेरा की ओर गये हुये हैं।'

रानी—'दोनों को वहाँ से बुलाओ। सेना हमारे पास बहुत थोड़ी है। यदि नत्थेखाँ वास्तव में २० सहस्र सेना लेकर आ रहा है, तो कड़ा सामना पड़ेगा, परन्तु चिन्ता मत करो। हमारे पास किला है। बुर्ज और तोपें हैं। और गोलन्दाज अच्छे हैं।'

भाऊ—'गोलन्दाज हमारे पास कुछ कम हैं, परन्तु सरकार का जैसा आदेश होगा, उनकी वैसी ही नियुक्ति कर ली जावेगी।'

रानी—'मैं कुछ स्त्रियों को तोपची का काम सिखाना चाहती थी, अभी उनकी शिक्षा पूरी नहीं हो पाई है, इसलिये गुलाम गौसखाँ को ओर्छे दरवाजे के लिये तैयार रक्खो और तुम स्वयं किले की दक्षिणी बुर्ज पर कड़कबिजली चढ़ाकर काम करो। मैं अपनी स्त्री सेना को लेकर सब मोर्चों पर जवाहरसिंह की और गौस की सहायता करूंगी। बस्ती वालों से कह दो कि निश्चिन्त रहें परन्तु भीड़ बांधकर बाहर न चलें फिरें।'

भोपटकर ने मार्टिन के नाम एक पत्र आगरा भेजा, और नीचे वाली बुर्ज पर यूनियन जैक झण्डा चढ़ा दिया।

ओर्छा के दूत को नत्थेखाँ के संदेसे का उत्तर दिया कि लक्ष्मीबाई एक स्त्री हैं, खाँसाहब को अबला की रक्षा करनी चाहिये न कि उसके साथ इस प्रकार का व्यवहार। रानी अङ्गरेजों की ओर से झाँसी का प्रबन्ध कर रही हैं, ओर्छा अङ्गरेजों का मित्र राज्य है, इसलिये ओर्छा की ओर से झाँसी पर आक्रमण होना बिलकुल अनुचित है यदि आक्रमण हुआ तो झाँसी अपनी रक्षा करेगी।

दूत संदेसे का उत्तर लेकर तुरन्त चला गया।

रानी ने दीवान से कहा, 'मुझे खेद है कि झाँसी के समग्र निवासी युद्ध विद्या में निपुण नहीं किये जा सके हैं। मैं नत्थेखाँ से निबट लूं तब अवश्य इस ओर अधिक ध्यान दूंगी।'

इसके उपरांत वह अनन्त चतुर्दशी की पूजा के उपकरणों में संलग्न हो गईं।

जवाहरसिंह, कर्नल जमाखाँ, भाऊ बख्शी, गुलाम गौसखां इत्यादि अपने काम में जोर के साथ जुट पड़े। उनके लिये एक-एक क्षण महत्व का था।

भाऊ बख्शी ने कड़कबिजली दक्षिण की ऊँची बुर्ज पर चढ़ा दी। गुलाम गौसखाँ एक बड़ी तोप और कई छोटी तोपें लेकर ओर्छे दरवाजे पर पहुँच गया। सब फाटकों की बुर्जों पर रख दी गईं। उनका मसाला तथा गोलंदाज भी यथा-स्थान नियुक्त कर दिये गये। जवाहरसिंह की सेना फाटकों और परकोटे के दीवारों के छेदों के पास बन्दूकें लेकर डट गई। उन सबके भोजन और शयन का वहीं प्रबन्ध हो गया। चार-पांच घण्टे के भीतर झांसी ने रणक्षेत्र का रूप धारण कर लिया।

तीसरे पहर लगभग ३ बजे रानी अनन्त चतुर्दशी का पूजन समाप्त करने को ही थीं कि एक धड़ाका हुआ। दामोदरराव को अनन्त रक्षा का गंडा बंधवा कर बाहर हुई थीं कि समाचार मिला, 'नत्थेखां ने चढ़ाई कर दी है और गोला शायद शहर में गिरा है।'

रानी ने दिन भर उपवास किया था। थोड़ा-सा फलाहार किया। इतने में समाचार आया कि टकसाल के पीछे एक सेठ के मकान में गोला गिरा है। रानी ने कल्पना की कि या तो नत्थेखां का गोलन्दाज अजान है, इतने बड़े किले को उसने अनी पर नहीं साध पाया या काफी चतुर है—अनुमान से महल को निशाना बनाया, परन्तु गोले ने करवट ले ली और महल को बचा गया।

योधा वेश में तुरन्त घोड़े पर सवार हुईं और अपनी तीनों सहेलियों को लेकर ओर्छे दरवाजे पहुँचीं। गुलाम गौसखां को आज्ञा दी, 'शत्रु इसी ओर हैं। गोलों की लगातार वर्षा करो।'

कासीबाई से कहा, 'तू तुरन्त किले पर जा। बख्शी से कहना कि जैसे ही नत्थेखां की सेना टौरियों का आश्रय लेने के लिये पश्चिम में

सेंयर फाटक की ओर बढ़े, कड़कबिजली की मार करें। जब तक उसकी सेना ओर्छा फाटक से पश्चिम की ओर न बढ़े, कड़कबिजली चुप बनी रहे।'

काशीबाई तुरन्त गई।

गौस ने अपने तोपखाने को सम्भाला। एक के बाद दूसरी तोप पर पलीता पड़ना शुरू हुआ। ११ तोपें थीं। जब तक अन्तिम तोप गोला उगलती तब तक पहली विनाश-वमन के लिये तैयार हो जाती।

गोला, बारूद और काम करने वाले सुव्यवस्थित।

ओर्छा फाटक से पूर्व उत्तर की ओर थोड़ी दूरी पर सागर खिड़की और उससे कुछ अधिक दूरी पर लक्ष्मी फाटक था। सुन्दर और मुन्दर के साथ रानी सागर खिड़की पर आईं। इस खिड़की से पश्चिम की ओर ओर्छा फाटक की तरफ कुछ ही डग के फासले पर एक मुहरी थी। नगर के दक्षिणी भाग के पानी का बहाव इसी में होकर था। यह मुहरी इतनी बड़ी थी कि नाटे कद का आदमी आसानी से इसमें होकर निकल सकता था। सागर खिड़की के ऊपर जो तोपें थीं, उनमें से एक को रानी ने, इस मुहरी के ऊपर दीवार के पीछे लगा दिया। एक से अधिक तोपें वहाँ रक्खी भी नहीं जा सकती थीं।

सागर खिड़की पर दीवान दूल्हाजू गोलन्दाज था। उसको रानी ने आदेश दिया, 'तुम पश्चिम-दक्षिण की ओर कुछ अन्तर से तोप दागो। कोई दिखलाई पड़े या नहीं, परन्तु जब तक मेरा निषेध न मिले, ऐसा ही करते जाना।'

दूल्हाजू जरा ठमठमाया।

रानी ने समझाया, 'मैं चाहती हूँ कि नत्थेखाँ की सेना और तोपें दक्षिण की ओर ओर्छा फाटक और सैंयर फाटक के बीच में ही बनी रहें। तुम्हारे पास से होकर पूर्व और उत्तर की ओर न बढ़ने पावें। मैं जहाँ चाहती हूं युद्ध वहीं हो समझ गये?'

दूल्हाजू ने कहा, 'हां सरकार।'

इसी प्रकार सब फाटकों पर आवश्यक आज्ञा देकर रानी ओर्छा फाटक पर फिर आ गईं। नत्थेखाँ की सेना मार खाकर पीछे हटी, परन्तु टौरिया पर नहीं चढ़ी। उनके बीच में जो खाइयां थीं, उनमें रक्षा का यत्न करने लगी।

इतने में रात हो गई। रानी मुन्दर को वहीं छोड़कर महल चली आईं। गीता के अठारहवें अध्याय का पारायण या श्रवण वह यथासंभव नित्य करती थीं। पाठ समाप्त करके आधी घड़ी विश्राम किया था कि मुन्दर ने समाचार दिया—'नत्थेखाँ ने नगर-कोट पर चारों ओर से आक्रमण किया है, ओर्छा फाटक पर आक्रमण सबसे अधिक भयङ्कर है।'

रानी सहेलियों सहित सवार होकर तुरन्त ओर्छा फाटक पर पहुँचीं।

चाँदनी रात। आकाश निर्मल। पास का काफी अच्छा दिखलाई पड़ रहा था और दूर का धूमरा। सागर-खिड़की पर गोले बरस रहे थे और ओर्छा फाटक तो ऐसा जान पड़ता था कि अब गया, अब गया।

रानी ने गुलामगौस और उसके तोपचियों को समझाया, 'दो बाढ़ें जल्दी जल्दी दाग कर बिलकुल चुप हो जाओ। बैरी समझेगा कि तोपें बन्द कर लीं। बढ़ेगा। बढ़ते ही दीवार के छेदों में से बन्दूकों की बाढ़ दागी जाय। बैरी अपनी तोपें ऊँची टौरिया पर चढ़ाकर ले जावेगा और वहां से फाटक और बुर्ज को धुस्स करने का उपाय करेगा। उस समय तोपें दागना।'

काशीबाई से कहा, 'तुम भाऊ बख्शी से किले में जाकर कहो कि कड़कबिजली के प्रयोग का समय आ गया। जैसे ही ओर्छा-फाटक की हमारी तोपें बन्द हों और अपनी बन्दूकों की बाढ़ के उपरान्त शत्रु के तोपखाने से बाढ़ दगे, वह कड़कबिजली और उसी बुर्ज के तोपखाने से ओर्छा फाटक के बाहर की दाईं ओर वाली ऊँची टौरिया को अपना अचूक निशाना बनावे और अनवरत गोलीबारी करे।'

काशीबाई सम्वाद लेकर गई।

रानी ने मुन्दर और सुन्दर को कुछ हिदायतें देकर दूसरी दिशाओं में भेजा।

गुलामगौस ने अपनी तोपों से जल्दी जल्दी दो बाढ़ें छोड़ीं। नत्थेखाँ की सेना ने जवाब दिया। गौस की तोपें बिलकुल बन्द हो गईं। नत्थेखाँ ने सोचा तोपची मारे गये। उसके सिपाही दीवार पर चढ़ने के लिये बढ़े। इधर से बन्दूकों की बाढ़ दगी। उसका कोई बड़ा असर नहीं हुआ। जब बाढ़ों पर बाढ़ें दगीं तब उसके सिपाही पीछे हटे। नत्थेखां ने निश्चय किया कि ऊँची टौरिया पर तोपखाना चढ़ाकर ओर्छा फाटक और अगल बगल की दीवारों पर गोलाबारी करने से शहर के लिये मार्ग मिल जायगा और फिर किले को अधिकृत कर लेना सहज हो जायगा। सागर-खिड़की की ओर से बराबर गोलाबारी हो रही थी और उसका एक तोपखाना उस ओर मोर्चा लगाये था। ओर्छा फाटक की तोपें बन्द थीं, इसलिये उसको अपना यही उपाय महा फलदायक जान पड़ा।

उसने ऊँची टौरिया पर अपनी तोपें चढ़ा दीं और फाटक पर बाढ़ दागी। दीवारों पर उस बाढ़ का विनाशकारी प्रभाव पड़ा। तोपची उकता उठे। रानी ने वर्जित किया।

नत्थेखाँ की तोपों से दूसरी बाढ़ नहीं दगने पाई। टौरिया पर धम धम हुआ और विकट चीत्कार और तुरन्त किले से चली हुई तोपों का भयंकर गर्जन-तर्जन सुनाई पड़ा। भाऊ का निशाना अचूक बैठा। फिर बाढ़ आई। इधर रानी ने गुलामगौस को अपनी तोपों पर पलीता देने की आज्ञा दी

अब नत्थेखाँ को मालूम हुआ कि किसका सामना कर रहा हूं।

उसने स्थिति को संभालने का प्रयत्न किया, परन्तु कुछ न बन पड़ा। तोपों और सामान को छोड़कर नत्थेखाँ भागा। वह केवल एक दाग लगा गया—लक्ष्मीफाटक पर कर्नल जमाखाँ मारा गया।

रात को लड़ाई बहुत धीमी गति से चली। परन्तु रानी की साव-धानी में रत्ती भर भी अन्तर नहीं आया।

दूसरे दिन भी लड़ाई चली, परन्तु शहर से जरा हटकर। नत्थेखां की सेना का एक बड़ा भाग झाँसी के उत्तर में जाकर प्रताप मिश्र के परकोटे की आड़ पा गया, परन्तु यही उसके नाश का भी कारण हुआ।

दीवान रघुनाथसिंह एक दूर गाँव में था, इसलिये विलम्ब से समाचार मिला था। वह लड़ाई के दूसरे दिन उनाव की ओर से, जो झाँसी के उत्तर में है, आ गया। फाटक सब बन्द थे। खुलवाने की जरूरत भी न थी। उसने नत्थेखाँ की सेना की उस टुकड़ी पर जोर के साथ हमला किया, जो प्रताप मिश्र के परकोटे से झाँसी के उत्तरी भाग को परेशानी में डाले थी। इस परकोटे के करीब एक पहाड़ी है। इस पहाड़ी की ओट से रघुनाथसिंह और नगर-कोट के पीछे से झाँसी की सेना की बन्दूकों ने नत्थेखाँ की सेना को छलनी कर दिया। ठीक अवसर पाकर रघुनाथसिंह ने प्रचण्ड वेग के साथ प्रहार किया और उस टुकड़ी को तहस-नहस कर डाला। दक्षिण-पश्चिम की ओर से काशीनाथ भैया आ पहुंचा। सर्वनाश में जो कसर रह गई थी वह उसने पूरी कर दी।

फिर कई दिन तक झाँसी से जरा दूर नत्थेखाँ की सेना की छोटी बड़ी टुकड़ियाँ भागते भागते लड़ती रहतीं। परन्तु तोपें और बहुत-सी युद्ध-सामग्री छोड़कर नत्थेखाँ को पराजित होकर भागना पड़ा।

नत्थेखाँ एक टुकड़ी समेत नवाब अलीबहादुर के नईबस्ती वाले महल में आ गया था। नवाब अलीबहादुर नहीं चाहते थे, परन्तु विवश थे।

नत्थेखाँ के भागने पर उनके महल पर काशीनाश भैया के दस्ते ने आक्रमण किया। अलीबहादुर ने समझ लिया कि सब गया। बच निकलने का प्रयत्न किया। उनके महल के पीछे बहुत निचाई पर मेंहदी बाग नाम का उद्यान था। एक सुरंग में होकर इस बगीचे से निकल जाने का मार्ग था। जवाहर इत्यादि जितना सामान बना लेकर पीरअली के साथ बाहर निकल आये। बालबच्चे और एक नौकर भी।

सुरक्षित स्थान में पहुँचने पर पीरअली ने कहा, 'आप अकेले भांडेर चले जाइये। मैं यहीं रहूँगा। रानी की सेना के साथ मिलकर महल पर

मैं भी हमला करूँगा। उनका भला बन जाऊँगा और महल में जो कुछ बचाने योग्य है, बचाने की कोशिश करूँगा। यहां रहकर आपकी अधिक सेवा कर सकूंगा।'

'किस तरह ?' अलीबहादुर ने आतुरता के साथ पूछा।

पीरअली ने उत्तर दिया, 'आपको समय समय पर समाचार मिलता रहेगा और जब अङ्गरेज यहाँ रानी से लड़ने के लिये आवेंगे तब उनको आपके सेवक के द्वारा बड़ी सहायता मिलेगी। आप फिर झांसी आवेंगे ? फिर महल आपके होंगे और कोई बड़ी जागीर भी कम्पनी सरकार की तरफ से आपको मिलेगी, क्योंकि रानी का राज थोड़े दिन ही और टिकेगा। इस वक्त तो खून का सा घूँट पीकर रह जाइये। अपमान का बदला लिया जायगा आप प्रतीति रखिये।'

अलीबहादुर चले गये। पीरअली रानी के सैनिकों की ओर लौट पड़ा। उसको सैनिक पहिचानते थे। वे मारने पकड़ने को दौड़े। सागरसिंह उस भीड़ में था।

पीरअली ने कहा, 'क्या करते हो, मैं तो तुम्हारा मित्र हूँ। महारानी साहब का शुभचिन्तक। बस्ती भर जानती है ! नौकरी नवाब साहब की जरूर करता रहा हूँ परन्तु सदा उनको समझाता रहा कि सीधे रास्ते पर चलो। वे नहीं माने उन्होंने भुगता। मैं तुम्हारी सहायता करने आया हूं। यह महल गोला-गोली लायक नहीं है। इसमें आग लगाओ।'

सैनिकों को कुछ आश्वासन हुआ।

सागरसिंह ने पूछा, 'किधर से आग लगायें ? नवाब साहब कहाँ हैं ?'

'भीतर', पीरअली ने उत्तर दिया, 'आग फाटक से लगाना शुरू करो। दरवाजा अपने आप खुल जायगा। भीतर काफी माल है। मुझको सब पता है। राई-रत्ती बतलाऊँगा।'

सिपाहियों ने फाटक में आग लगा दी। जल जाने पर घुसने का मार्ग मिल गया। फिर भीतर के फाटकों में आग लगाई। एक-दो जगह और

पीरअली ने स्वयं कई जगह अग्नि प्रज्वलित की। जब भीतर पहुँचे तो वहाँ कोई न मिला।

'मालूम होता है गड़बड़ में नवाब साहब निकल भागे। मगर असबाब सामान तो मौजूद है।'

पीरअली ने उनकी साधारण धन-सम्पत्ति लुटवा दी। थोड़ी देर में आग शान्त हो गई परन्तु काफी क्षति हो गई थी।

पीरअली का नाम हो गया कि रानी की सेना के साथ वह नवाब साहब और नत्थेखाँ की फौज के खिलाफ लड़ा। काशीनाथ और सागरसिंह ने विश्वास दिलाया। मोतीबाई को आश्चर्य था। परन्तु विजय के हर्ष में अपने हितचिन्तक पर सन्देह करना ईश्वर के प्रति कृतज्ञता की मात्रा को कम करना था। इसलिये पीरअली शीघ्र विश्वासपात्र लोगों की गिनती में मान लिया गया।

रानी ने गुलाम गौसखाँ, रघुनाथसिंह और भाऊ बख्शी को विशेष तौर पर पुरस्कृत किया।

दीवान खास में जब रघुनाथसिंह अकेला रह गया तब उसने रानी से प्रार्थना की।

'सरकार, मुझको सब कुछ मिल गया। केवल लड्डू रह गये।'

रानी हँसी। मुन्दर पास खड़ी थी। उससे कहा, 'उस दिन तू ही थाल उठा लाई थी। आज भी तू ही ला।'

मुन्दर थाल ले आई। बहुत प्रसन्न थी।

रानी ने आदेश दिया, 'अब तू ही खिला भी दे।'

मुन्दर ने रघुनाथसिंह को लड्डू खिलाये। वह हँस-हँसकर लड्डू खिलाने में सचेष्ट थी, परन्तु रघुनाथसिंह अधिक नहीं खा सका। उसके गले में कुछ अटक-अटक जाता था।

[५९]

रात को मोतीबाई आई। रानी ने भजन सुना। समाप्ति पर काशी-बाई ने कहा, 'सरकार, मैं बड़ी तोप चलाने का काम सीखना चाहती हूँ। जब बख्शी जी कड़कबिजली चला रहे थे, मैं उनके पास थी। निशाना मिलाना, ध्यान के साथ बाहर की स्थिति को परख कर तोप का रुख बदलना और पलीता छुलाकर वैरी की बड़ी सेना में भी अकेले खलबली उत्पन्न कर देना, मुझको बहुत अच्छा लगा।'

रानी बोलीं, 'मैंने निश्चय कर लिया है। तुम सबको तोप का काम सिखवाऊँगी। परन्तु पूरी शिक्षा के लिये कुछ समय लगेगा।'

सुन्दर ने कहा, 'अपने यहाँ गुलाम गौस तो बहुत चतुर तोपची हैं ही, अङ्गरेजी सेना से आया हुआ एक लालता ब्राह्मण भी बहुत अच्छा जानकार है। उसके ज्ञान का भी लाभ उठाया जाय।'

'दीवान रघुनाथसिंह भी इस काम को बहुत अच्छा जानते हैं', मुन्दर ने उत्साह के साथ कहा।

एक पल के बहुत छोटे अंश के लिये रानी की आँख असाधारण सजग हुई, और तुरन्त ही शान्त। मुन्दर ने लक्ष नहीं किया।

रानी ने मोतीबाई से पूछा, 'तू नाटक खेलना भूल गई कि अभी आता है?'

मोतीबाई—'सरकार, जो एक बार पानी में तैरना सीख लेता है, वह फिर कभी नहीं भूल सकता। आज्ञा हो तो किसी दिन कोई अच्छा खेल दिखलाऊँ?'

रानी—'सुचित्त हो जाऊँ तो किसी दिन अवश्य देखूंगी। तू किस खेल को सबसे अच्छा समझती है?'

मोतीबाई—'रत्नावली को। वैसे शकुन्तला, हरिश्चन्द्र, प्रबोध-चन्द्रोदय भी बहुत अच्छे हैं।'

रानी—'मैंने सुना है कि ग्वालियर में एक मण्डली हरिश्चन्द्र नाटक बहुत अच्छा खेलती है।'

मोतीबाई—'हम लोगों का और ग्वालियर की मण्डली का भी अभिनय देखा जावे। फिर सरकार तुलना करें। मुझको विश्वास है कि झाँसी की बात सिरे पर रहेगी।'

रानी—'मोती मैं झाँसी को हर बात में आगे देखना चाहती हूँ। अश्वारोहण और असि-विद्या में उस्ताद वजीर खाँ; अमीरखाँ, गोलन्दाजी में गुलामगौस; सैन्य संचालन में जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह; गायन में मुगलखाँ; शस्त्र बनाने में भाऊ बख्शी; कपड़े सीने में बल्देव दर्जी; नृत्य में दुर्गा। ये सब झांसी के गौरव हैं। मैं चाहती हूं कि प्रत्येक विद्या में झाँसी देश भर में सबसे आगे रहे, परन्तु होगा यह तभी जब देश को अङ्गरेजों के पञ्जे से छुटकारा मिल जाय।'

मोतीबाई—'सरकार ने जिस यज्ञ का आरम्भ किया है, वह किसी न किसी दिन वरदान देगा।'

मुन्दर—'सरकार, ब्राह्मण लोग कहते हैं कि एक यज्ञ भी होना चाहिये।'

रानी—'ब्राह्मणों को यज्ञ और मिष्ट-भोज चाहिये। करा दूँगी, परन्तु युद्ध के देवता कार्तिकेय, इस युद्ध में बारूद और गोले का होम अधिक पसन्द करने लगे हैं। और ब्राह्मणों को कलियुग की बात कम मालूम है।'

मुन्दर—'अपने यहाँ के भट्ट और शास्त्री लोग अनुष्ठान के लिये बहुत आग्रह कर रहे हैं। कहते हैं कि सब काम छोड़कर पहले उनके विधान का पालन होना चाहिये।'

रानी—'सब काम छोड़कर तो ऐसा न होगा, परन्तु और सब कार्यों के साथ साथ अवश्य हो जायगा। तो पहला काम यह है कि कल से तोप चलाना मोतीबाई गौस से, काशीबाई भाउ बख्शी से, मुन्दर रघुनाथसिंह से, और सुन्दर.....'

मुन्दर—'सरकार, दीवान दूल्हाजू भी अच्छे जानकार हैं।'

रानी—'उस पर ध्यान नहीं जम रहा था। उस दिन वह ठमठमा गया था, परन्तु तोप अच्छी चलाता है। ठीक है। उससे सुन्दर सीखे।'

काशीबाई—'उस रात भाऊ बख्शी ने ऐसा प्रहार किया कि नत्थेखाँ इस जन्म में तो भूलेगा नहीं। मेरे कान तो आज तक सनसना रहे हैं।'

रानी—'अबकी बार दिखता है कि गोरों का सामना होगा। तुम सबकी उस समय परीक्षा होगी।'

काशीबाई—'सरकार, हम लोगों की परीक्षा के फल से निराश न होंगी।'

मोतीबाई को एक बात कसक रही थी। उसने प्रसङ्ग विक्षेप-सा करते हुये कहा, 'सरकार ने कहा था कि सब कार्य साथ-साथ चलेंगे, तो नाटकशाला का भी काम चालू कर दूं ?'

'तुमको उसके लिये विशेष प्रयत्न करना ही क्या पड़ेगा ?' रानी बोलीं, 'नृत्य-गान जानती ही हो। अवसर आने पर बतला दूँगी।'

मोतीबाई—'सरकार ने दुर्गा के नृत्य के विषय में कहा था। वह कत्थक नृत्य बहुत अच्छा करती है, परन्तु प्राचीन नृत्यकला को बिलकुल नहीं जानती।'

रानी मुस्कराईं।

रानी—'मैं भूल गई थी मोती। नृत्य के विषय में झाँसी का गौरव वास्तव में तुम हो, परन्तु बैरियों को तो गोलों से रिझाना होगा।'

मोतीबाई ने दृढ़तापूर्वक कहा, 'सरकार, उनको ऐसा रिझाया जावेगा कि अनन्त काल तक उनकी चर्चा होगी।'

मुन्दर ने अनुरोध किया, 'सरकार, नाटक भी किसी दिन खिलवाया जाय।'

'अच्छा मुन्दर', रानी ने कहा, 'मोतीबाई उसकी भी तैयारी करेगी। यज्ञ की जिस दिन पूर्णाहुति होगी, उसी रात नाटक होगा। मोती, नाटक के सम्बन्ध में, मैं तुमसे कुछ पूछना चाहती हूँ।'

मोतीबाई—'आज्ञा हो सरकार।'

रानी—'तू जब अभिनय करती है, तब क्या अपने को बिलकुल भूल जाती है ?'

मोतीबाई—'बिलकुल तो नहीं भूल सकती सरकार।'

रानी—'क्या याद रहता है ?'

मोतीबाई—'अपना निजत्व, दर्शक और अभिनय।'

रानी—'क्या सब दर्शक ?'

मोतीबाई—'नहीं सरकार। जो दर्शक विशेष रुचि दिखलाते हैं, उनके ऊपर प्रायः ध्यान जाता है। तभी अभिनय अच्छा हो सकता है।'

रानी—'तुमको अपने दर्शक याद रहते हैं ?'

मोतीबाई—'यदि वे बार-बार नाटकशाला में आवें तो।'

रानी—'तुम्हें अपने कुछ दर्शकों का अब भी स्मरण है ?'

मोतीबाई की आँख जरा लजीली हुई, परन्तु उसने तुरन्त सँभल कर कहा, 'हां सरकार, कोई याद रह जाते हैं।'

रानी ने पूछा, 'तुझे कौन सबसे अधिक याद है ?'

क्षण के दशांश के लिये सहेलियों ने एक दूसरे के प्रति दृष्टिपात किया। मोतीबाई की आँख परवश नीची पड़ गई। सिर उठाया। कहने को हुई। जरा-सा हँसी। फिर गम्भीर हो गई। खाँसी।

बोली, 'कोई नाम याद नहीं आता सरकार।' और हँसी।

रानी को भी हँसी आ गई।

'अच्छा जब याद आ जावे तब बतलाना', रानी ने कहा, 'अभी कोई जल्दी नहीं।'

मोतीबाई ने निष्कृति की सांस ली।

काशीबाई—'सरकार, इनके साथ जूही भी अभिनय किया करती थी।'

रानी—'वह भी अब अपना काम कर रही है।'

मोतीबाई—'उसने खूब काम किया और करेगी।'

रानी—'उसको भी गुलामगौस से तोप चलाना सिखलाओ। हमको बहुत तोपचियों की आवश्यकता पड़ेगी। जिसके पास तोपें और तोपची, उसी के हाथ विजय।'

काशीबाई—'जहाँ हमारी श्रीमन्त सरकार होंगी, वहीं विजय होगी।'

[६०]

झाँसी के दक्षिण में सागर का जिला और सागर के दक्षिण पश्चिम में भोपाल रियासत । भोपाल रियासत में आमापानी नाम की गढ़ी थी । थोड़ी दूर पर राहतगढ़ नाम का किला था । राहतगढ़ में बहुत से पठान इकट्ठे हो गये ।

सागर की सेना ने विद्रोह किया और सागर को लूट लिया । जबलपूर में विप्लव हुआ । सारे विन्ध्यखण्ड में विप्लव की लपटें बढ़ीं ।

सन् १८५८ के मध्य सितम्बर में जनरल सरह्यूरोज ससैन्य इङ्गलैण्ड से बम्बई उतरा । विप्लवकारियों से बदला लेना और विप्लव का दमन करना उसका दृढ़ निश्चय था ।

उसी महीने में दिल्ली का पतन हुआ । बहादुरशाह कैद कर लिया गया और उसके दो शाहजादे मार डाले गये । लखनऊ का मुहासिरा समाप्त हुआ । कानपूर में तात्या टोपे ने अङ्गरेजों के कम से कम तीन जनरलों को लड़ाई में हराया । परन्तु दिल्ली के पतन का विप्लवकारियों पर बुरा प्रभाव पड़ा ।

लखनऊ के प्रथम पतन पर भी अवध में जनता ने युद्ध जारी रक्खा । अंगरेजों ने इलाहाबाद, फतेहपूर इत्यादि में प्रचण्ड हिंसा वृत्ति से प्रेरित होकर भीषण और बीभत्स क्रूर कृत्य किये । इनके समाचार झाँसी में आये । बिठूर का पतन हुआ । नाना साहब कठिनाई से रात के समय अपनी पत्नियों और विमाता को नाव में बिठला कर निकल पाये और लखनऊ की बेगम के पास पहुँच पाये । झाँसी वालों के संसर्ग में फिर कभी नहीं आये । रावसाहब और तात्या टोपे अपनी सेना लेकर कालपी आ गये और यहाँ से युद्ध की योजनायें प्रयुक्त करने लगे । यह समाचार भी झाँसी आया ।

झाँसी में हार खाकर नत्थेखाँ टीकमगढ़ में शान्ति के साथ नहीं बैठा, वरन झाँसी के पूर्वीय परगनों में डेढ़ दो महीने तक लूटमार करता रहा । उसकी पंडवाहा, गरौठा और नौटा की लूट विख्यात है । परन्तु

रानी ने थोड़े समय में ही यह सब लूटमार कुचल दी और नत्थेखाँ को बिलकुल हट जाना पड़ा।

रानी की छोटी सी सेना को दहलाने और हैरान करने के लिये यह सब काफी था; परन्तु रानी को घबराया हुआ या चिन्तित कभी किसी ने नहीं देखा। उनका कार्य सतत, अनवरत जारी था।

वही कार्यक्रम। वही दिन चर्या। वही सद्भावना और जनता की रक्षा तथा जनता के नायकत्व का वही दृढ़ संकल्प। 'यदि अकेले ही स्वराज्य की लड़ाई लड़नी पड़े तो लड़ी जायगी'—यह रानी का अटल निश्चय था! और उनका अचल विश्वास था कि एक युद्ध और एक जन्म से ही कार्य पूरी तौर पर सम्पन्न नहीं होता।

'संभवामि युगे युगे'

उन्होंने पढ़ा था, उनको याद था और उनके कण कण में व्याप्त था।

वे अपने युग के उपकरण और साधन काम में लाती थीं। जिस समाज में उनका जन्म हुआ था, उसी में होकर उनको काम करना था, परन्तु उस समाज की हथकड़ियों और बेड़ियों की उन्होंने पूजा नहीं की। वे अपने युग से आगे निकल गई थीं, किन्तु उन्होंने अपने युग और समाज को साथ ले चलने का, भरसक प्रयत्न किया। झाँसी में और विशेषत: विन्ध्यखण्ड में साधारणतया, स्त्री की अपेक्षाकृत स्वतन्त्रता और नारीत्व की स्वस्थता लक्ष्मीबाई के नाम के साथ बहुत सम्बद्ध है।

मंगल और शुक्र के दिन रानी, महालक्ष्मी के मन्दिर में जाया करती थीं, जो लक्ष्मी फाटक के बाहर, लक्ष्मी ताल के ऊपर है। कभी पालकी में, कभी घोड़े पर। कभी पालकी पर चिक डालकर, कभी बिना चिक के। कभी साड़ी पहिनकर, कभी पुरुष वेश में—सुन्दर साफा बांधे हुये। कभी बिलकुल अकेली, और कभी धूमधाम के साथ। जब पालकी पर जातीं। कुछ स्त्रियां अलंकारों से लदीं, लाल मखमली जूते पहिने परतले में पिस्तौल लटकाये पालकी का पाया पकड़े साथ दौड़ती हुई जाती

थीं। पालकी के आगे सवार गेरुआ झण्डा फहराता हुआ चलता था। उसके आगे सौ घुड़सवार।

साथ में रणवाद्य, नौबत। पीछे पठानों, मेवातियों और बुन्देलखण्डियों का रिसाला। बगल में प्रायः भाऊ बख्शी घोड़े पर सवार।

मार्ग में बिनती भी सुनती थीं।

एक दिन भिक्षुक ब्राह्मण आ खड़ा हुआ। काशी से आया था। पत्नी मर गई थी। दूसरा विवाह करना चाहता था। दरिद्र होने के कारण लड़की वाला विवाह करने को तैयार न था। चार सौ रुपये की अटक थी।

उन्हीं दिनों कुंवर मण्डली में एक नया व्यक्ति भर्ती हुआ था। नाम रामचन्द्र देशमुख। देशमुख को आज्ञा दी, खजाने से इस ब्राह्मण को पाँच सौ रुपया दिलवा दो।

देशमुख ने कहा, 'जो हुकुम।'

ब्राह्मण ने आशीर्वाद दिया।

रानी ने ब्राह्मण से मुस्कराकर कहा, 'विवाह के समय मुझको न्यौता देना न भूल जाना।'

ब्राह्मण गद्गद हो गया। आंखों से आँसू बह पड़े। मुँह से एक शब्द न निकला। साथियों में, सहेलियों में, जनता में, सेना में, ब्राह्मणों में, अब्राह्मणों में विद्युत वेग के साथ यह बात फैल गई।

ऐसी रानी के लिये, ऐसी रानी की बात के लिये, ऐसी स्त्री के सिद्धान्त के लिये, क्यों न लोग सहज ही प्राण दे डालने को सन्नद्ध होते?

कुँवार का महीना आया। रानी ने श्राद्ध किया। नवरात में यज्ञ का अनुष्ठान। महल के सामने पुस्तकालय था। निकटवर्ती मैदान में यज्ञ मण्डप खड़ा किया गया। सौ ब्राह्मण हवन करने के लिये नियुक्त किये गये। अन्य ब्राह्मण विविध विधान के लिये।

गणेश मन्दिर में अथर्व का आवर्तन अलग हो रहा था। सप्तशती के पाठ के लिये १४ ब्राह्मण दुर्गा के मन्दिर में चाँदी के शमइयों में घी

के दिये जलाये पाठ करने पर नियुक्त। जब यज्ञ समाप्त हुआ, मुख्य संकल्प रानी के नाम से और नान्दीश्राद्ध दामोदरराव के हाथ से कराया गया। पूना तरफ से एक ब्राह्मण ने आक्षेप किया और शास्त्रों के वचन उद्धृत करने आरम्भ किये। उसकी बात मानी गई। वह विजय-गर्व से फूल गया।*

रानी को यह दुस्सह हुआ।

रानी ने काशीबाई से कहा, 'काशी तू शान्ति के साथ सोच विचार किया करती है। ब्राह्मणों का यह विवाद तुमको कैसा लगा ?'

काशी ने उत्तर दिया, 'सरकार, इन लोगों का वितण्डावाद कभी न झुका, देश का दुर्भाग्य कभी न रुका—ये लोग सदा इसी में मस्त रहे। मालूम नहीं भगवान् ने इतनी नासमझी क्यों इन शास्त्रज्ञों के ही पल्ले में परसी है।'

रानी ने कहा, 'कर्म अच्छा है, परन्तु उसके कराने वाले अकर्मण्य हैं।'

'बड़ी बात यह है कि राज्य का भार इन लोगों पर नहीं है, नहीं तो हम सब डूब जाते', काशी बोली, 'राजकीय समस्याओं को सुलझाने में यदि ये लोग इतना विवेक खर्च करें तो कितना बड़ा काम हो।'

'काशी', रानी ने कहा, 'जब ये लोग राजनीति का व्यायाम करते हैं तब वितण्डा नहीं करते। धर्म से ही न जाने ये लोग क्यों ऐसे रूठे हैं।'

विजयादशमी के दिन दरबार हुआ। अङ्गरेजों ने जो जागीरें जब्त कर ली थीं, वे वापिस कर दी गईं। नत्थेखाँ वाली लड़ाई में जिन लोगों ने बड़े काम किये थे, उनको या उनके वारिसों को, जो पहले ही पुरस्कृत नहीं हो चुके थे, पारितोषिक दिये गये। सागरसिंह और पीरअली भी खाली हाथ न लौटे।

जब सागरसिंह सामने आया रानी ने कहा, 'तुमको नवाब साहब की हवेली में कितना माल मिला ?'

---

* देखिये परिशिष्ट।

सागरसिंह ने उत्तर दिया, 'बहुत कम सरकार। पीरअली मेरे गवाह हैं। वे साथ थे। नवाब साहब की हवेली में आग लगाने वालों में ये सबसे आगे थे।' पीरअली आगे बढ़ा।

बोला, 'श्रीमन्त सरकार, मैंने नवाब साहब का बहुत दिनों नमक अदा किया, परन्तु जब देखा कि श्रीमन्त सरकार के विरुद्ध हैं, तब उनसे अलग हो गया। बेबस मुझको लड़ना भी पड़ा। आग मैंने सबसे पहले नहीं लगाई। आग लग चुकी थी। माल अवश्य मैंने सिपाहियों को बतलाया, क्योंकि यह उचित था। थोड़ा ही मिला। नवाब साहब पहले ही निकाल ले गये।'

रानी को अच्छा नहीं लगा, परन्तु उन्होंने कहा कुछ नहीं।

रात को नाटक हुआ। पुरुष और स्त्रियों का–दोनों का–अभिनय, स्त्रियों ने ही किया। नाटकशाला में भी स्त्रियों के सिवाय पुरुष एक भी न था। खेल शकुन्तला का था। जूही ने शकुन्तला का अभिनय किया मोती ने उसकी सहेली का और काशी ने दुष्यन्त का।

नाटक की समाप्ति पर रानी ने मोतीबाई से पूछा, 'पहले भी ऐसा ही अभिनय किया करती थी?'

मोतीबाई—'आज, सरकार, हम लोगों ने अच्छे से अच्छा प्रयत्न किया।'

रानी—'जूही तो शकुन्तला जैसी जची, परन्तु इसका दुष्ययन्त रद्दी था।'

जूही—'नहीं सरकार।'

रानी को कुछ स्मरण हो आया।

बोलीं, 'ठीक कहती है जूही। तेरा और तेरे दुष्यन्त का जौहर युद्ध में देखूंगी।'

जूही ने निस्संकोच कहा, 'सरकार मेरा और मेरे दुष्यन्त का जौहर देखकर पुरस्कार देंगी।'

काशीबाई हँसकर बोली, 'मुझको तो आगे कभी दुष्यन्त बनना नहीं।'

रानी ने चुटकी काटी। कहा, 'तब और कोई दुष्यन्त बनेगा।' और मोतीबाई की ओर देखा। मोतीबाई ने गर्दन मोड़ी। जूही झेंपकर पीछे हट गई।

सहेलियों में विनोद छा गया।

जाते जाते रानी ने मोतीबाई से अकेले में कहा, 'खुदाबख्श से कहना कि बारूद के कारखाने का ध्यान रक्खें। हमको इतनी बारूद चाहिये कि हम किले में बैठकर महीनों लड़ सकें।'

मोतीबाई ने नीचा सिर किये हुए पूछा, 'सरकार की इस आज्ञा का कथन मैं ही करूँ ?'

'और कौन करेगा पगली', रानी ने हँसकर कहा, 'तात्या टोपे का भी समाचार मंगवा। देख, क्या वे अब कालपी में हैं ? उनका झाँसी आना जाना बना रहना चाहिये। न मालूम अङ्गरेज कब आजावें। हम लोग झाँसी में घिरे हुये अनन्त काल तक तो लड़ नहीं सकते। उनको इतना समीप रहना चाहिये कि अटक पड़ने पर सहायता लेकर शीघ्र आ सकें।'

दूसरे दिन रानी ने दीवान खास में जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह को बुलवाया। रानी कार्य की प्रगति को और तेज करना चाहती थीं।

रानी—'तोपें ऐसी ढल रही हैं न, जो पीछे धक्का न दें और जल्दी गरम न हों ?'

जवाहरसिंह—'हाँ सरकार, बख्शी जी और उनके कारीगर इस विद्या में निपुण हैं।'

रानी—'बारूद ?'

रघुनाथसिंह—'तीन महीने की लड़ाई के लिये तैयार है। आज से कुंवर खुदाबख्श ने तेजी पकड़ी है।'

रानी—'अच्छी बन्दूकें और तलवारें भी बहुत संख्या में चाहिये।'

जवाहरसिंह—'बन गई हैं और बन रही हैं।'

रानी—'गोले ?'

जवाहरसिंह—'भाऊ बख्शी आध सेर से लेकर पैंसठ सेर तक के गोले तैयार कर रहे हैं। ठोस और पोले फटने वाले भी।'

रानी—'मैं चाहती हूँ कि इन सब हथियारों के चलाने वाले भी अधिकता से तैयार किये जावें।'

जवाहरसिंह—'जनता में बहुत उत्साह है। ऊँची नीची सब जातियां युद्ध की उमङ्ग से उमड़ रहीं हैं।'

रानी—'सबसे अधिक किन लोगों में उत्साह है?'

जवाहरसिंह—'सरकार यह बतलाना कठिन है। ठाकुरों और पठानों में तो स्वाभाविक ही है। कोरियों, तेलियों और काछियों में भी बहुत उमङ्ग है। बनिये और ब्राह्मण भी पीछे नहीं हैं।'

रानी—'क्या शास्त्रियों में भी?'

जवाहरसिंह—'वे भी तो झाँसी के ही हैं, परन्तु जब उनको शास्त्र और पूजन से अवकाश मिलता है तब।'

रानी—'हमारे देश में ऊँच नीच का भेद न होता तो कितना अच्छा होता।'

जवाहरसिंह—'भेद तो भगवान ने ही बनाया है, सरकार।'

रानी चुप रहीं। थोड़ी देर बाद बोलीं, 'मैं चाहती हूं कि सब जातियों के चुने हुये लोगों को, तोप बन्दूक का चलाना सिखलाया जावे।'

जवाहरसिंह ने बहुत उत्साह बिना दिखलाये कहा, 'यह काम जारी है सरकार।'

रानी—'मैं अपनी सहेलियों और कुछ अन्य स्त्रियों को, बहुत अच्छा गोलन्दाज बनाना चाहती हूँ।'

रघुनाथसिंह—'आज्ञा मिल गई है। उसके अनुसार काम किया जायगा। अवश्य।'

रानी—'किले में अन्न इत्यादि भी काफी जमा करलो। कुछ ठीक नहीं कब घेरा पड़ जाय।'

जवाहरसिंह—'काफी अन्न एकत्र किया जा रहा है। और शीघ्र ही किले के कमठाने में जमा कर लिया जावेगा।'

रानी—'चूना, ईंट, पत्थर भी इकट्ठा कर रखना। कारीगर भी हाथ में रहें।'

जवाहरसिंह—'जो आज्ञा।'

रानी—'सेना का और युद्ध का कोई अङ्ग निर्बल न रहने पावे।'

[६१]

उत्तर और पूर्व में अङ्गरेजों की विजय-पराजय का क्रम चालू था। लखनऊ के पतन के उपरांत उसका फिर उत्थान हुआ। शहर में, बगीचों-बारहदरियों में, महलों में युद्ध होता रहा। कानपूर के सूत्र को तात्या टोपे ने फिर पकड़ा। वह ग्वालियर गया और वहां की अङ्गरेजी-हिन्दुस्थानी सेना को फोड़कर अपने साथ ले आया और उसने अङ्गरेजों के जनरल विढम को हराया। परन्तु अङ्गरेज सत्तर सहस्त्र गोरी सेना, नौ सहस्त्र गोरखों और बहुसंख्यक सिक्खों का दल लेकर लखनऊ पर पहुँच गये। विप्लवकारियों ने बहुत करारे युद्ध किये। उत्तर और पूर्व के युद्धों में तात्या टोपे ने बहुत भाग लिया। अन्त में जब बिठूर मिट गया और कानपूर अन्तिम बार अङ्गरेजों की आधीनता में चला गया, तब तात्या कालपी के आसपास से युद्ध करने लगा।

शीतकाल आ चुका था। बिहार और अवध में घोर लड़ाई जारी थी, परन्तु विप्लवकारियों में व्यवस्था न थी। बड़े सरदार या राजा के निधन पर छोटी स्थिति वाले नायक का नेतृत्व मान्य न होता था, इसलिये अङ्गरेज धीरे धीरे एक स्थान के बाद दूसरे स्थान को और एक भूखण्ड के उपराँत दूसरे भूखण्ड को अधिकृत करते चले जा रहे थे। अङ्गरेजों की क्रूरताओं ने भी विप्लव को नहीं दबा पाया था और न गोरखों और सिक्खों की सहायता से वे इस देश को पुनः प्राप्त कर सकते थे। विप्लव-कारियों में सामन्त नेता के देहाँत के पश्चात् ही अनुशासन की कमी उत्पन्न हो जाती थी और इसी कारण उनको हार पर हार खानी पड़ी। नहीं तो तात्या टोपे इत्यादि सेनापतियों के होते हुए बड़े बड़े अङ्गरेज जनरल भी मात खा जाते।

यही कारण दक्षिण में काम कर रहा था। जनरल रोज ने अपनी सेना के दो भाग किये। एक को उसने मऊ छावनी की ओर भेजा और दूसरे को लेकर वह सागर की ओर बढ़ा। राहतगढ़ सागर से चौबीस

मील के फासले पर था। यहाँ से पठान जनरल रोज का मुकाबिला कर रहे थे। चार दिन घनघोर युद्ध करने के बाद पठानों को किला छोड़ना पड़ा। राहतगढ़ से १५ मील पर बरोदिया का किला था। यहाँ बानपूर के राजा मर्दनसिंह के आश्रय में अंग्रेजी फौज के कुछ विद्रोही थे। रोज ने इनको भी हरा दिया और फिर वह सागर की ओर बढ़ा। पूर्व की ओर गढ़ाकोटा का किला पड़ता था। वह विप्लवकारियों के हाथ में था। उसको लेने के पहले रोज ने सागर पर चढ़ाई की।

नर्मदा के उत्तरी किनारे का अधिकाँश भूखण्ड विप्लवकारियों के हाथ में था। इसको अपने हाथ में किये बिना जनरल रोज झाँसी की ओर नहीं बढ़ सकता था। सागर और झाँसी के बीच में बानपूर का राजा मर्दनसिंह और शाहगढ़ का राजा बखतबली लोहा लेने को तैयार थे।

अंग्रेजों का प्रधान सेनापति सर कालिन कैम्बेल था। वह उत्तराखंड के विप्लव के दमन में संलग्न था। उसका मत था कि जब तक झाँसी नहीं कुचली जाती, तब तक उत्तराखंड हाथ नहीं आता। इसलिये रोज सागर के द्वार से झाँसी की ओर आ रहा था। बीच में ऊबड़ खाबड़ भूमि और ऊबड़-खावड़ लड़ाकू जन-समूह। परन्तु रोज इत्यादि अंग्रेज जनरलों का विश्वास था—जहाँ विप्लवकारियों के नेता राजा, नवाब, जागीरदार मारे गये वहीं विप्लव समाप्त हो जायगा।

[६२]

विकट ठण्ड । ऊपर से हड्डी कपाने वाली हवा । कुछ ही दिन पहले पानी बरस चुका था । ठिठुरी हुई घास के ऊपर बड़े—बड़े ओसकरण । मृदुल बाल-रवि की रश्मियाँ उनके ऊपर सरकती हुई । झलकारी कोरिन कन्धे पर बन्दूक रक्खे, बगल में बारूद और गोलियों का झोला लटकाये उनाव फाटक से बाहर हुई । जब हाथ ठिठुर जाते तब बन्दूक को बगल में दाब लेती और दोनों हाथ ओढ़नी में छिपा लेती । उनाव फाटक के उत्तर में एक टौरिया है जिसको अंजनी की टौरिया कहते हैं । उसके दक्षिणी सिरे पर अंजनी और हनुमान का एक छोटा-सा चबूतरा है । थोड़ी देर में झलकारी इसी चबूतरे के पास पहुंची और धूप लेने लगी । ठण्डी हवा और सूर्य की कोमल किरणों उसकी बड़ी—बड़ी आँखों को सुरमा-सा लगाने लगीं ।

जब दिन चढ़ आया तब वहाँ से जरा हटकर निशानाबाजी करने लगी । काफी समय तक करती रही ।

अंजनी की टौरिया की उपत्यका विषम थी । वहाँ ऐसे समय कोई आता-जाता न था । लेकिन भेड़-बकरी और ढोर चरने के लिये आ निकलते थे । अकस्मात झलकारी की गोली एक पशु को लगी । उसने ठीक तौर पर नहीं देख पाया कि गोली भेड़ को लगी या बछिया को सन्देह था कि बछिया को लगी, परन्तु मन कहता था कि भेड़ को लगी होगी ।

वह बेतहाशा घर पर आई । पूरन घरू काम कर रहा था । झलकारी ने उसको अपनी घबराहट का कारण बतलाया । पूरन को हद दर्जे की खीझ हुई ।

बोला, 'तुमने जा तक न देखी कै बछिया हती कै भेड़, और न काऊ सें जा पूँछी कै कीकौ ढोर हतौ ?'

झलकारी ने खिसियाकर कहा, 'मैं उतै कीसें पूछती ? उतै बरेदी तौ हतौइ नईं । बरेदी होतौ तो ढोर उतै कैसें आ जाते ?'

पूरन चिन्तित था। खोज करने के लिये निकला। यदि भेड़ मरी है तो उसका दाम दे दिया जावेगा, जाति में कुछ दण्ड लगेगा वह भुगत लेगा, परन्तु यदि बछिया मरी है या घायल हो गई है तो आयी महान् विपद। पूरन सोच रहा था।

निशाने से उचट कर एक बछिया के पैर में गोली लगी थी। वह घायल हुई और गिर पड़ी। बछिया एक ब्राह्मण की थी। मशहूर हुआ कि बछिया मर गई—झलकारी ने मार डाली। बरेदी अपनी अनुपस्थिति अस्वीकृत करता था। उसने कहा, 'मैंने झलकारी को गोली मारते अपनी आँखों देखा है।'

शहर में रौरा मच गया। झलकारी कभी कभी रानी के पास जाती थी। रानी ने स्त्रियों की जो सेना बनाई थी, उसकी एक सिपाही झलकारी भी थी। सन्ध्या समय साफ-सुथरे और रङ्गीन कपड़े पहिनकर थाली में दिये सँवार कर, फूल सजाकर वह मन्दिर में पूजन के लिये आया करती थी और अपने गले में फूलों का हार डाले भी दिखलाई देती थी। अन्य जाति की स्त्रियां भी इस प्रकार की स्वतन्त्रता पाये हुई थीं, परन्तु झलकारी की स्वतन्त्रता में एक ओज था—और वह ऊँची जाति वाले अनेक लोगों को खटकता था।

'झलकारी ने एक गरीब ब्राह्मण की बछिया मार डाली।'

'अरे वह इतनी मस्ता गई है कि अपने पति तक की मारपीट करती है।'

'वह अच्छों अच्छों को किसी गिनती में नहीं लेखती।'

'इस प्रकार की स्त्रियाँ रानी साहब को बदनाम कर रही हैं।' इत्यादि उद्गार बाजार में निसृत हो रहे थे।

'प्रायश्चित कराओ।'

'गधे पर बिठलाकर काला मुंह करो।'

'जब तक प्रायश्चित न हो जाय तब तक कुंआ बाजार, पड़ोस सब बन्द रहें।'

'खाना पकाने के लिये कोई पूरन को आगी तक न दे।'

'कोई उसको छुये नहीं।' इत्यादि व्यवस्थायें भी दे डाली गईं।

पूरन ने खोजकर पता लगा लिया कि बछिया मरी नहीं है। परन्तु लोगों को अपनी बात और व्यवस्था वापिस नहीं लेनी थी, इसलिये ब्राह्मण को फोड़ लिया और उसने घायल बछिया को छिपा लिया। कह दिया कि न जाने कहाँ गई—मर गई।

कोरियों ने पञ्चायत की। बहिष्कार का दण्ड दिया। उस युग के हिन्दू के लिये रौरव नरक से बढ़कर।

काला मुंह करके गधे पर चढ़ाकर बाजार में जुलूस निकालने की बात तै की। पूरन के बहुत घिघियाने-पतियाने और कुछ और स्त्रियों के आड़े आ जाने के कारण काला मुंह करना तो निर्णय में से कम कर दिया गया। बाकी सजा बहाल रही।

जिस दिन प्रायश्चिंत का यह रूप प्रकट होना था, उस दिन शुक्रवार था। सन्ध्या का समय निश्चित था।

उसी दिन रानी महालक्ष्मी के मन्दिर को जाने वाली थीं। वे हलवाई पुरे के पश्चिमी सिरे पर उस दिन अकेली सवार आ रही थीं। थोड़ी दूर पीछे एक अङ्गरक्षक था।

कुछ अधनंगे मंगतों ने घेरा।

रानी ने पूछा, 'क्या है ?'

उत्तर मिला—'ठण्ड के मारे मर रहे हैं। कपड़ा नहीं है।'

रानी ने अङ्गरक्षक को बुलाकर आज्ञा दी, 'दीवान से कहो कि शहर में जितने माँगने, भिखारी, साधू, फकीर हों, उन सब को एक-एक कुर्ती बनवा दें और एक-एक कम्बल दें।'

मङ्गतों को विश्वास हो गया कि आज्ञा का पालन होगा।

हलवाईपुरा के मध्य में पहुँचीं कि पूरन घोड़े के सामने जा गिरा।

रानी के पूछने पर उसने अपनी विपत्ति सुनाई। रानी सोच-विचार में पड़ गईं।

'पञ्चायत के निर्णय का कैसे उल्लंघन करूँ ?'

'सरकार, बछिया मरी नइयाँ।'

'ब्राह्मण को बुलवाओ जिसकी बछिया थी।'

जब तक ब्राह्मण आया, तब तक रानी बाजार वालों से, उनके बालबच्चों की कुशलवार्ता पूछती रहीं।

ब्राह्मण के आने पर रानी ने अपनी सौगन्ध धराकर सच्चा हाल कहने का आग्रह किया। कोई गुन्जायश झूठ बोलने के लिये न रही।

ब्राह्मण ने कहा, 'महाराज, चाहे मारें चाहे पालें, सच बात यह है कि बछिया मरी नहीं है। वह मेरे एक नातेदार के यहाँ दतिया राज्य में भेज दी गई है।'

रानी ब्राह्मण को उसके फरेब के लिये कुछ दण्ड देना चाहती थीं, परन्तु बाजार के मुखिया-चौधरी आड़े आगये। ब्राह्मण छोड़ दिया गया।

परन्तु बाजार वाले भोंचक्के से रह गये। जो लोग झलकारी की गधा-सवारी का जुलूस देखने के आकांक्षी थे, बहुत निराश हुये। पञ्चों को अपना निर्णय वापिस लेने में असुविधा हुई। वापिस लेना पड़ा, परन्तु पूरन को एक पङ्गत बछिया के घायल होने के कारण तो भी देनी पड़ी। प्रायश्चित की ऐसी पङ्गतों में कुछ ब्राह्मण और कुछ अन्य जातियों के सरपँच बुलाये जाते थे। पूरन ने कुछ ब्राह्मण तो न्योत लिये, परन्तु बाजार के सरपञ्च श्याम चौधरी और मगन गन्धी को नहीं बुलाया। ये दोनों बिना निमन्त्रण के पूरन के यहाँ पहुँच गये। पूरन को आश्चर्य और परिताप हुआ।

श्याम चौधरी ने कहा, 'तुम न्योतना भूल गये तो हम पङ्गत में आना तो नहीं भूले।'

ऐसे लोगों के लिये भोजन ब्राह्मण बनाता था और ये लोग भोज में शरीक होते थे। इसी प्रकार के सहयोग के कारण तत्कालीन समाज के वे दुखदायक पहलू किसी प्रकार भुगत लिये जाते थे।

] ६३]

जब जनरल रोज ने सागर पर आक्रमण करके कैदी अङ्गरेजों को मुक्त किया, उनको इतना हर्ष हुआ कि उन्होंने तोपों की सलामी दागी ! सागर को अधिकार में कर लेने के बाद रोज ने गढ़ाकोटा को हाथ में लिया। परन्तु जगह जगह विप्लवकारियों के सशस्त्र दल बिखरे हुये थे। इनका दमन करने के लिये रोज ने अपनी सेना के कई भाग किये और उनको भिन्न-भिन्न दिशाओं में भेजा। वह स्वयं सेना के एक बड़े भाग के साथ झाँसी के लिये नारहट घाटी की ओर आया। उसकी सेना का एक भाग शाहगढ़ के राजा बखतबली का मुकाबला करने के लिये गया था। वहां देखा तो बखतबली काफी बड़ी सेना लिये हुये मौजूद है। नारहट घाटी पर मर्दनसिंह की भी सेना बहुसंख्यक थी। रोज अपनी सेना लेकर मदनपुर घाटी की ओर बढ़ा। मर्दनसिंह ने भी उसी ओर बाग मोड़ी, रोज चाहता था कि बखतबली और मर्दनसिंह मिलने न पावें, इसलिये उसने सेना का एक भाग मर्दनसिंह को अटकाने के लिये नारहट घाटी की ओर लौटाया और स्वयं मदनपूर की ओर चल दिया। मदनपूर उस स्थल से पूर्व दक्षिण की ओर लगभग २० मील था।

मर्दनसिंह रोज की इस चाल को न समझ सका और वह मदनपूर की ओर न बढ़कर नारहट घाटी पर लौटा आया।

बखतबली के साथ रोज का घोर युद्ध हुआ। दो पहाड़ों के बीच में मदनपूर का गाँव और झील है। इस सुहावनी झील के पास ही वह भयंकर संग्राम हुआ था। बहुत अङ्गरेजी सेना मारी गई। खुद रोज घायल हुआ। परन्तु वह लड़ाई जीत गया। यदि मर्दनसिंह और बखतबली की सेनाओं का मेल हो गया होता तो रोज की पराजय निश्चित थी—मदनपूर की झील में रोज के सेनापतित्व का अन्तिम इतिहास उसी दिन लिख गया होता।

बखतबली के अनेक सरदार पकड़े गये और मार डाले गये। बखतबली की पराजय का हाल सुनकर मर्दनसिंह नारहट घाटी को छोड़कर

भागा। रोज ने अपनी सेना के भिन्न-भिन्न टुकड़ों को आदेश दिया कि विप्लवकारियों का पीछा करते हुये वे उसको झाँसी के निकट मिलें।

बानपूर के राजा मर्दनसिंह ने मदनपूर की पराजय और नर-संहार का वृत्तान्त झाँसी भेजा। झाँसी में और राज्य के बड़े बड़े नगरों और ग्रामों में, जहाँ जहाँ गढ़ और किले थे, तैयारी शुरू हो गई।

उन दिनों ग्वालियर से झाँसी में एक नाटकमण्डली आई।

मुन्दर ने अनुनय पूर्वक कहा, 'सरकार, लड़ाई के आरम्भ होने के पहले एकाध खेल अपनी नाटकशाला में भी हो जाने की अनुमति दी जाय।'

'यह समय नाटक और तमाशों का नहीं है', रानी मिठास के साथ बोलीं।

सुन्दर ने अनुरोध किया, 'मैं लड़ाई में मारी गई तो फिर कब नाटक देखूँगी ?'

रानी ने हँसकर कहा, 'दूसरे जन्म में। उस समय तुझको स्वराज्य स्थापित किया हुआ मिलेगा।'

काशीबाई ने आग्रह किया, 'केवल एक खेल सरकार, और फिर हम लोग जो खेल खेलेंगी उसको स्वराज्य वाले सदा स्मरण किया करेंगे।'

'युद्ध वास्तव में है ही किस निमित ?' रानी मुस्कराकर बोलीं, 'अपने जीवन और धर्म की रक्षा के लिये, अपनी संस्कृति और अपनी कला के बचाने के लिये। नहीं तो युद्ध एक व्यर्थ का रक्तपात ही है। यह खेल जल्दी हो जाय और फिर उस खेल को ऐसा खेलो कि अंग्रेजों के छक्के छूट जायें और यह देश उनकी फांस से मुक्त हो जाय।'

मुन्दर ने हर्ष में कहा, 'सरकार, खेल मराठी में होगा।'

रानी बोलीं—'झाँसी में मराठी ! महाराष्ट्र यहाँ बड़ी संख्या में हैं यह ठीक है, और वे लोग अपने मनोरञ्जन के लिये मराठी में नाटक खिलवावें परन्तु वह नाटकमण्डली राज्य का आश्रय तभी पावेगी जब नाटक हिन्दी में खेलें। अवश्य मेरा जन्म महाराष्ट्र कुल में हुआ है, परंतु मैं अपने को महाराष्ट्र न समझ कर विन्ध्यखण्डी समझती हूँ। मेरी

झाँसी की भाषा हिन्दी है। नाटक यदि हिन्दी में हो, तो हो, नहीं तो गुझसे कोई सरोकार न होगा। मेरा निश्चय है।'

सहेलियों ने स्वीकार कर लिया।

नाटकमण्डली वालों से कहा गया। उनमें थोड़े अभिनेता ही हिन्दी जानते थे। उनकी यह कठिनाई दूर कर दी गई। झाँसी के हिन्दी जानने वाले अभिनेता शामिल कर लिये गये। उस मण्डली ने हरिश्चन्द्र का अभिनय उत्कृष्टता के साथ किया। मोतीबाई इत्यादि जानकारों तक ने सराहना की। रानी ने मण्डली के प्रबन्धक को चार सहस्र रुपया पुरस्कार दिया। मण्डली ग्वालियर चली गई।*

रानी ललित कलाओं की प्रबल पोषक थीं। उस कठिन और चिन्ताकुल समय में भी रानी प्रत्येक नवागन्तुक गायक, वीणाकार, सितारिये इत्यादि को सुनने के लिये थोड़ा-बहुत समय दिया करती थीं और उचित पुरस्कार भी। कवि, चित्रकार, शिल्पी कोई भी उन्मुख नहीं जाता था। शास्त्री, याज्ञिक, ज्योतिषी, वैद्य, हकीम इत्यादि भी पोषण पाते थे। अपनी इसी वृत्ति को वे स्वराज्य में विकसित और प्रसरित देखना चाहती थीं।

पीरअली देर-सवेर सब महत्वपूर्ण समाचार नवाब अलीबहादुर के पास बड़ी सावधानी के साथ भेजता रहता था। झाँसी छोड़ने के कुछ दिनों बाद वे घूमते-घामते दतिया पहुँचे। वहाँ थोड़े समय रहकर भांडेर पहुंच गये। झाँसी से दतिया १७ मील और भांडेर चौबीस।

नवाब अलीबहादुर उन्ही स्थानों से अङ्गरेजों को काम के समाचार भेजते रहते थे। रोज इत्यादि अङ्गरेज जनरल झाँसी को अधिकृत करने के महत्व को जानते थे। उन लोगों को नवाब से निरर्थक और सार्थक सभी तरह के—हाल समय-समय पर मिलते रहते थे। मदनपूर युद्ध के पश्चात् झाँसी रोज का प्रथम लक्ष्य और पहला कर्तव्य बनी।

---

* देखिये परिशिष्ट।

अस्त

(क्या सचमुच ?)

[६४]

मदनपूर की लड़ाई जीतने के बाद रोज की सेना ने शाहगढ़ को अधिकार में किया। फिर मड़ावरा की गढ़ी को कब्जे में करने के उपरांत बानपूर राज्य को अङ्गरेजी राज्य में मिला लिया। बानपूर के महल के कुछ भाग को तोप से उड़ा दिया, बाकी को जला दिया और इन दोनों राज्यों के बड़े कर्मचारियों को फांसी पर चढ़ा दिया। इन महलों में पुस्तकों और चित्रों का भी संग्रह था, परन्तु विप्लवकारियों की सम्पत्ति होने के कारण वे अस्पृश्य हो गये थे।

वध और अग्नि बरसाती हुई, रोज की सेना १२ मार्च सन् १८५८ को तालबेहट आ पहुँची। तालबेहट का प्राचीन दृढ़ किला लड़ाई के लिये उपयुक्त था, परन्तु उसमें विपल्वकारी बहुत थोड़ी संख्या में थे और उनका नायक कोई बड़ा आदमी न था। मुकाबिले में रोज सरीखा चतुर और विजय प्राप्त सेनापति तथा अंगरेजों की विशाल सेना और तोपें। विप्लव-कारी भाग गये और रोज ने तालबेहट का किला सहज ही अधिकार में कर लिया। चन्देरी में बानपूर के राजा का एक दस्ता था। रोज ने सोचा बगल के इस कांटे को पहले निकाल डालना चाहिये। उसने चन्देरी पर

हमला करने के लिये अपने एक अफसर ब्रिगेडियर स्टुअर्ट को भेजा। स्टुअर्ट ने बिना किसी कठिनाई के चन्देरी को पराजित कर दिया।

झाँसी की पूर्वी तहसील मऊ में एक छोटा सा गढ़ था। इस गढ़ में रानी की ओर से काशीनाथ भैया और आनन्दराय इत्यादि छोटे छोटे जागीरदार तैयारी कर चुके थे। मऊ के दमन के लिये रोज ने बानपूर विध्वंस के बाद अपना एक दस्ता सीधा भेज दिया था। रोज ने झाँसी पर चढ़ाई करने के पहले रानी लक्ष्मीबाई के पास सम्वाद भेजा।

'आप अपने दीवान लक्ष्मणराव, लाला भाऊबख्शी, मोरोपन्त ताम्बे (आपके पिता), नाना भोपटकर, दीवान जवाहरसिंह, दीवान रघुनाथ-सिंह, कुँवर खुदाबख्श, और मोतीसाईं के साथ निश्शस्त्र चली आवें अन्यथा कठोर और भयंकर फल के लिये तैयार रहें।'

इस प्रकार के संवाद के लिये रानी तैयार थीं, परन्तु जिस मोतीसाईं को जनरल रोज चाहते थे, उसके स्मरण से रानी के दीवान खास में हँसी का तूफान खड़ा हो गया।

'नाना साहब', रानी ने हँसी को रोककर कहा, 'इस मोतीसाईं को कहाँ से पकड़ बुलाऊँ ?'

नाना भोपटकर ने कहा, 'सरकार के यहाँ यदि बनावट चलती होती और जाली सिक्के ढलते होते तो किसी न किसी को साईं का चोगा पहिना दिया जाता।'

मोतीबाई दीवान खास में मौजूद थी भुँझलाई हुई सूरत बनाकर बोली, 'सरकार दूत को बुलाकर पूछा जाय कि मोतीसाईं किस हुलिया का आदमी है।'

मोरोपन्त ने कहा, 'उसके लम्बी दाढ़ी होगी, बड़े बड़े केश और खूनी आँखें। सांइयों और साधुओं ने अङ्गरेजी फौज के भड़काने में ज्यादा भाग लिया है, इसलिये रोज को एक साईं भी चाहिये।'

दीवान लक्ष्मणराव गंभीर होकर बोला, 'सरकार, उत्तर जल्दी भेज दिया जाना चाहिये । दूत को शीघ्र लौटना है, क्योंकि उसको कोई भी अपने घर नहीं ठहराना चाहेगा ।'

भाऊ बख्शी ने कहा, 'और रोज यहाँ से बहुत दूर भी नहीं है । शायद दूत के पीछे पीछे आ रहा हो ।'

मोतीबाई ने पूछा, 'और यह सोतीसाईं कौन सी बला है ? इसका क्या उत्तर होगा ?'

रानी ने हँसी को दबाकर कहा, 'मैं बतलाऊँगी ।'

लक्ष्मणराव फिर बोला, 'क्या उत्तर दिया जाय ?'

रानी ने और भी अधिक गम्भीर होकर कहा, 'मैं अकेली उत्तर देने वाली कौन होती हूँ ? झाँसी के समग्र मुखियों को, सब जातियों के पंचों को जोड़ो । अपने सब सरदार इस समय झाँसी में ही हैं । वे सब और आप लोग एकमत होकर कहदें तो मैं अकेली निश्शस्त्र चली जाऊँगी ।'

वाक्य समाप्त होते होते रानी ने श्वास और उच्छ्वास लिये और किसी उखड़ते हुये भाव का कठिनता के साथ, कठोरता के साथ नियंत्रण किया । तुरन्त झाँसी के मुखिया, पञ्च, सरदार इत्यादि इकट्ठे किये गये । जो कुछ उन लोगों ने कहा उसमें महत्व की बातें ये थीं ।

'लड़ेंगे । अपनी झाँसी के लिये, अपनी रानी के लिये, मरेंगे ।'

'हमारे पास जितना रुपया और आभूषण है, सब स्वराज्य की लड़ाई के लिये रानी के हाथ संकल्प है ।'

'हम दिखलायेंगे कि झाँसी का पानी कितना स्वच्छ और कितना गहरा है ।'

'आप अङ्गरेजों को उत्तर दीजिये कि झाँसी उन लोगों को माँ की छठी के दूध की याद दिलावेगी ।'

जनमत रानी के मत से मिला हुआ था ही, इस समय बहुत प्रबल हो गया । परन्तु रानी ने झाँसी की हुँकार को, वीणा की टङ्कार में परिवर्तन करके भेजा । उन्होंने लिखा ।

'मिलने के लिये क्यों बुलाया—इसका ब्योरा आपने कुछ नहीं दिया। मिलाप के पर्दे में मुझे धोखा दिखलाई पड़ता है। मैं स्त्री हूं। निश्शस्त्र कैसे आ सकती हूं ? राज्य के दीवान और बख्शी ससैन्य आ सकते हैं।' रानी ने इस चिट्ठी पर अपने हस्ताक्षर किये।

भोपटकर से कहा, 'आपकी नीति का क्या फल हुआ ?'

उसने उत्तर दिया, 'यही कि अङ्गरेज लोग बिना सूचना के झाँसी पर नहीं चढ़ दौड़े।'

'मार्टिन को चिट्ठी लिखी थी ?'

'हाँ सरकार। उसने जबलपूर के कमिश्नर को और इस जनरल को अवश्य कुछ लिखा होगा।'

'फल ?'

'कुछ समय मिल गया, यही बहुत है।'

दूत को रानी की चिट्ठी दे दी गई। दूत गया। उसने प्रस्थान न कर पाया होगा कि पीरअली ने रानी के पास संदेशा भेजा, 'सरकार की आज्ञा हो तो मैं अङ्गरेज छावनी की खबर ले आऊँ कि कितनी और कैसी सेना है, तथा कितनी तोपें हैं और वे लोग किस ढङ्ग से झाँसी पर आक्रमण करेंगे।'

मोतीबाई ने इन बातों का पता लगाने का सामर्थ्य तो प्रकट किया, परन्तु पीरअली के भेजे जाने पर आक्षेप नहीं किया। पीरअली को अनुमति मिल गई।

रानी ने मोतीबाई से कहा, 'तेरा नाम कैसे सुन्दर रूप में अङ्गरेजों के पास पहुंचा है। मुझको कोई सन्देह नहीं मेरे जासूसी विभाग के सरदार को ही साईं बना लिया गया है।'

मोतीबाई बोली, 'सरकार के सामने गाली नहीं निकलती, परन्तु यदि उस मुंहझोंसे रोज को पा गई तो तोप, बन्दूक या तलवार से सच्चा नाम बतलाये बिना न मानूँगी।'

'मैंने तो दरबार में', रानी ने कहा, 'बड़ी कठिनाई से हँसी को रोक पाया। मोतीसाईं! मोतीसाईं कितना बढ़िया नाम है।' और वह खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

मोतीबाई भी हँसते-हँसते बोली, 'सरकार, मेरी चल नहीं सकती थी, नहीं तो मैं चिट्ठी के सिरनामे पर लिखवाती 'मेमसाहब रोज को मोतीसाईं का सलाम। चुपचाप हिन्दुस्थान को पीठ दिखाओ और अपनी विलायत में झख मारो।' जब यह चिट्ठी उसकी फौज में चर्चा पाती तब उस मुँहजले को मुँह दिखलाने में लाज आती।'

रानी गम्भीर हो गईं।

'पीरअली कल तो लौट आवेगा?'

'यदि उसको किसी ने मार्ग में ही समाप्त न कर दिया तो।'

'आदमी तो चतुर है।'

'बहुत काइयाँ। मुझको उस पर कभी-कभी अविश्वास हो जाता था, कुछ दिनों से वह ऐसा जी लगाकर काम करता है कि सन्देह निवृत हो गया।'

'अङ्गरेजों के साथ हिन्दुस्थानी सिपाही भी हैं।'

'मैंने भी सुना है। भोपाल और हैदराबाद की रियासतों के दस्ते हैं। कुछ तिलङ्गा पल्टन है, बाकी गोरे।'

'सब कितने होंगे?'

'सरकार, ठीक-ठीक पता तो नहीं। कई हजार हैं। ठीक बात पीरअली के लौटने पर मालूम होगी।'

[६५]

पीरअली इतनी तेजी के साथ गया कि उसको जनरल रोज का दूत मार्ग में मिल गया। उसने जनरल रोज के पास पहुँचने की प्रार्थना की। पीरअली को रोज के पास पहुंचा दिया गया। उसके पास नवाब अली-बहादुर का सन्देशा और पीरअली का नाम पहुँच चुका था। पीरअली को पाकर रोज प्रसन्न हुआ। पीरअली ने रोज को झाँसी की पक्की और कच्ची बातें सुनाईं। स्त्रियों की सेना का सविस्तार वर्णन सुनकर रोज हैरान हो गया। हिन्दुस्थान में स्त्रियाँ सिपाहीगिरी का काम करती हैं। उसको विश्वास न होता था परन्तु अलीबहादुर की चिट्ठियों से और उसने बम्बई में आते ही, विप्लवकारियों का जो वर्णन सुना था और उस वर्णन में रानी ने जो स्थान पाया था, उससे वह इस असम्भव बात को मानने के लिये तैयार हो गया।

रोज ने पूछा, 'रानी ने अङ्गरेज बच्चों और स्त्रियों को कतल करवाया ?'

'हर्गिज नहीं,' पीरअली ने सच्चा उत्तर दिया।

रोज को मार्टिन की चिट्ठी की बात जबलपुर के कमिश्नर ने बतलाई थी, और उसने मार्टिन की चिट्ठी पर अपना विश्वास भी प्रकट किया था। परन्तु रोज और उसके साथी अङ्गरेज रानी की निर्दोषिता को मानने के लिये तैयार ही न थे।

झाँसी के कुछ लोगों ने उनके बालबच्चों का वध किया था, इसलिये उनको सारी झाँसी और सारी भूमि से बदला लेना था। रानी झाँसी का सजग चिन्ह थीं, इसलिये उनको दोषमुक्त कैसे माना जा सकता था ? दूत ने रानी का जो उत्तर दिया, वह शिष्ट और मधुर होते हुये भी स्पष्ट था।

रोज ने १७ मार्च को तालबेहट से कूच करके बेतवा पार की। पीरअली आगे किस प्रकार जनरल रोज की सहायता करेगा, यह तै हो गया और वह शीघ्र झाँसी लौट आया। रोज झाँसी की ओर सावधानी के साथ बढ़ा। आसपास का प्रदेश दृढ़ता के साथ अपने अधिकार में करने में उसको दो तीन दिन लग गये।

इसी समय रोज को प्रधान सेनापति कैम्बेल का आदेश मिला—'तात्या टोपे ने चरखारी के राजा को घेर लिया है। पहले चरखारी की सहायता करो।'

रोज ने आदेश का उल्लंघन किया—वह झांसी के महत्व को जानता था।

उसने उत्तर दिया, 'मैं आज्ञा की अवज्ञा के लिये क्षमा चाहता हूँ। चरखारी का गिर पड़ना या खड़ा रहना कुछ मूल्य नहीं रखता। मुझको पहले झांसी से निबटना है।'

चरखारी को राजभक्ति का पुरस्कार मिल गया। तात्या टोपे ने चरखारी से २४ तोपें और तीन लाख रुपये छीन लिये, और कालपी लौट आया।

पीरअली ने जो समाचार रानी के पास भिजवाया वह बहुत अनोखा न था, परन्तु उसको काफी महत्व दिया गया।

उसने बतलाया कि पल्टन अमुक-अमुक नम्बर की हैं और प्रत्येक पल्टन में इतने सिपाही। तोपों की गिनती बतलाई और प्रबन्ध की खूबी को प्रकट किया। रोज की कुल सेना सात हजार कूती गई।

नाना भोपटकर तक को पीरअली का विश्वास हो गया और वह रहस्य के कार्यों में शामिल किया जाने लगा। जब मोतीबाई को ही पीरअली पर सन्देह न रहा तब रानी को सन्देह हो ही क्यों सकता था?

पीरअली ने नवाब साहब के पास भाँडेर समाचार भेज दिया और कहला भेजा कि अब बहुत समय तक कोई खबर न मिल सकेगी। पीरअली भयानक खेल खेल रहा था।

जिस दिन पीरअली लौटकर आया उसी दिन राहतगढ़ के भागे हुये लगभग पांचसौ पठान रानी के शरणार्थी हुये। रानी ने उनको नौकर रख लिया। उनके एक सरदार का नाम गुलमुहम्मद था। इन लोगों का समाचार पीरअली ने रोज को नहीं भेज पाया और इस बात का उसको खेद था।

रानी के पास जब ये पठान आये तब वे बड़ी हीन अवस्था में थे। कपड़े सब फट गये थे। न जाने कितने दिन से उनको भर पेट भोजन न मिला था। अच्छे हथियार पास न थे। कुछ के पास तो सिवाय लाठी या छुरी के और कुछ न था। रानी ने उनको सब प्रकार की सुविधायें दीं। उन्होंने प्रण किया, 'स्वराज्य के लिये रानी के कदमों में अपने सबके सिर देंगे।' इन पठानों ने अपने प्रण को जैसा निभाया उसको इतिहास जानता है और झाँसी की लोक परम्परा उसको नहीं भूली और न कभी भूलेगी।

पीरअली को कुछ पठान मिले। उसने पूछा, 'तुम्हारा कौन मुल्क है खान ?'

'झाँसी अमारा मुलक है बाबा, तुम्हारा मुलक ?'

'मैं झाँसी का ही रहने वाला हूँ।'

'तब अम तुम बाई बाई हे बाबा।'

'बाईसाहब का राज्य है खान।'

'बेशक है। और हमारा तुम्हारा बी।'

झांसी नगर के कोट के सब फाटकों पर बड़ी और छोटी तोपों का उचित प्रबन्ध कर दिया गया। बारूद और गोले फाटकों की बुर्जों में इकट्ठे कर दिये गये और निरन्तर युद्ध सामग्री तथा रसद भेजने का प्रबन्ध कर दिया गया। फसीलों के छेदों में से बन्दूकों की मार का काम जिन सिपाहियों को दिया गया, उनकी तथा उनके अफसरों की उत्कृष्ट व्यवस्था करली गई। सबसे बड़ी बात यह हुई कि एक स्थान से दूसरे स्थान को और सब स्थानों से रानी के पास तथा उनके पास से सब स्थानों, सब मोर्चों को तुरन्त समाचार और आज्ञायें भेजने का बहुत अच्छा बन्दोबस्त कर लिया गया।

ऐसा विश्वास था कि रोज दक्षिण की ओर से आ गया इसलिये, सागर खिड़की, ओर्छा फाटक और सैंयर फाटक का खास इन्तजाम किया गया।

दीवान दूल्हाजू ओर्छा फाटक पर, पीरअली सागर खिड़की पर, कुँवर खुदाबख्श सैंयर फाटक पर, कुँवर सागरसिंह खण्डेराव फाटक पर, पूरन कोरी उनाव फाटक पर नियुक्त किये गये। दीवान जवाहरसिंह के हाथ में सम्पूर्ण नगर और नगर के फाटकों की रक्षा का भार सौंपा गया। किले में हर बुर्ज पर सब मिलाकर इक्कावन बड़ी-बड़ी तोपें साजी सँभाली गईं। दक्षिणी बुर्ज की तोपें गुलाम गौसखां के संचालन में, पूर्व और उत्तर की तोपें भाऊ बख्शी के हाथ में और पश्चिम की तोपें दीवान रघुनाथसिंह के अधिकार में दी गईं। किले में पठान, चुने हुये बुन्देलखंडी सैनिक और रानी की स्त्री सेना की नियुक्ति कर दी गई। सब सैनिक लगभग चार हजार होंगे। पानी का प्रवन्ध बहुत अच्छा न था, परन्तु सन्तोषप्रद था - किले के पश्चिमी भाग में शंकरगढ़ में जहां महादेव जी का मन्दिर है—एक कुआँ था उसी से सारी सेना को पानी पिलाने के लिये ब्राह्मण नियुक्त कर दिये गये।

चैत की अमावस हो गई। नवरात्र का आरम्भ हुआ। किले में गौर की स्थापना हुई। रानी ने धूमधाम के साथ सिन्दूरोत्सव मनाया। गौर के सामने चाँदी ही चाँदी के वर्तनों की तड़क भड़क और मन्दिर के बाहर सबके लिये भीगे चने और बताशों का प्रसाद। नगर की स्त्रियाँ सजधज के साथ उत्सव में शरीक हुईं।

फूलों की सुन्दरता और सुगन्धि से महादेव जी का मन्दिर भर गया। स्त्रियाँ थोड़ी देर के लिये आने वाली विपत्ति को भूल गईं। वे अपने किले में थीं, अपनी हँसती मुस्कराती रानी के पास। उनकी तोपें, उनके गोलन्दाज, उनके सिपाही आसपास और अपनी रक्षा का पुख्ता हौसला अपने मन में। फिर किस बात की चिन्ता थी?

महादेव जी के मन्दिर के समीप पलाश का एक वृक्ष था। उसमें इन दिनों प्रति वर्ष बड़े बड़े लाल फूल लगते थे और तीक्ष्ण ग्रीष्म ऋतु में उसके हरे चिकने बड़े पत्ते छाया दिया करते थे। जङ्गल का अवशेष और स्मारक, महादेव के मन्दिर का अकेला पड़ौसी—वह वृक्ष काटने से

बचा दिया गया था। नवरात्रि में वह पलाश लाल फूलों से गस गया। स्त्रियाँ फूलों की एक-एक माला उसकी भी डालों को पहिना दे रही थीं। मानो सौन्दर्य को सुगन्धि प्रदान की गई हो। लाल फूलों पर बेला, चमेली, गेंदा और जूही की रंग-बिरंगी मालायें ऐसी लगती थीं जैसे प्रभात के समय ऊषा की किरणों ने गुलाल बिखेर दी हो। इस वृक्ष के नीचे कुआं था और कुयें के ऊपर एक बारहदरी। इस बारहदरी की रक्षा के लिये ऊंचा परकोटा था। इसके पूर्व में बहुत ऊंचाई पर किले की पश्चिमी बुर्ज और उसके पीछे जरा दूर महल।

पूजन के पश्चात् स्त्रियाँ पलाश के वृक्ष के पास से सीढ़ियों द्वारा बारहदरी में इकट्ठी हो-हो जा रही थी। रानी वहीं थीं। वहीं सिंदूरोत्सव हो रहा था—हल्दी कूं कूँ। रानी विधवा थीं, इसलिये वह स्वयं सिंदूर नहीं दे रही थीं, परन्तु वहाँ भाऊबख्शी की पत्नी थी और भी अनेक सधवायें थीं, जो आपस में सिन्दूर दे रही थीं और किसी न किसी बहाने एक दूसरे के पति का नाम लिवाने का हँस-हँसकर प्रयत्न कर रही थीं।

मोतीबाई ने भाऊ बख्शी की पत्नी से कहा, 'तुम अपने देवर को क्या कह कर पुकारोगी ?'

बख्शिन—'मेरे देवर हैं ही नहीं।'

मोतीबाई—'होता, तो बख्शिनजू कैसे पुकारतीं ?'

बख्शिन—'लाला कहती।'

रानी—'और बुन्देलखण्ड लाला के लिये दूसरा शब्द क्या है ?'

बख्शिन—'सरकार, भउआ।'

सब हँस पड़ीं।

बख्शिन ने क्रोध की मुद्रा बनाकर कहा, 'महारानी साहब की सहायता से हरा लिया, नहीं तो मैं इतना छकाती कि सब याद करती।'

रानी बोलीं, 'तुम इन सबके लिये अकेली ही बहुत हो।'

बख्शिन मोतीबाई के पीछे पड़ गई। उसे पकड़कर अकेले में ले गई।

बख्शिन—'बतलाओ भगवान का दूसरा नाम क्या है ?'

मोतीबाई—'दयासागर, परवरदिगार, रहीम......'

बख्शिन—'मैं तुम्हारा मुंह मीड़ दूंगीं। बतलाओ वह नाम जिसको मुसलमान लोग दिन रात जपते हैं, नहीं तो तुम्हारी गत बनाऊँगी।'

मोतीबाई ने धीरे से कहा, 'खुदा।'

बख्शिन ने उसका सिर पकड़कर कन्धे से लगा लिया।

बोली, 'खुदा से दूर हो या उसके पास ?'

मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'दूर हूं दीदी। यदि अच्छे दिन आये तो ब्याह करूंगी।'

रानी के सामने आने को थीं कि मोतीबाई ने बख्शिन से कहा, 'जूही से कुछ मत पूछना। वह सरदार तात्या टोपे को प्राण दिये बैठी है, पर उन्होंने आज तक प्यार की दो बातें भी उससे नहीं कीं।'

'नहीं पूछूंगी', बख्शिन ने आश्वासन दिया। रानी ने समझ लिया। छेड़छाड़ नहीं की।

झलकारी नहीं आई थी। रानी ने उसको बुलाया उसने आते ही रानी के पैर पकड़ लिये।

रानी ने कहा, 'मैंने इसके लिये नहीं बुलाया था। तू हरसाल आती थी। इस साल अब तक क्यों नहीं आई ?'

'सरकार', झलकारी ने उत्तर दिया, 'मोसें अपराध हो गओ हतो।'

रानी बोलीं, 'कोई अपराध नहीं हुआ।'

झलकारी 'बछिया घायल तौ हो गई ती।'

रानी—'हो गई होगी। मरी तो नहीं—बच गई।'

झलकारी—'सरकार ने मोय और मोरे आदमी खौं बचा लओ, नई तर कऊँ ठिकानों न हतो।'

रानी—'तुम्हारे आदमी का नाम भूल गई। उसको क्या कहते हैं ?'

झलकारी—'ऊँ...ऊँ...।'

रानी—'ऊँ...ऊँ भी कोई नाम होता है ?'

बख्शिन ने कहा, 'सरकार, ईसें बुन्देलखण्डी बोली में बोलें।'

रानी—'ऊँ··ऊँ भी कोई नाम होता है ?'

बख्शिन ने कहा, 'सरकार, ईसें बुन्देलखण्डी बोली में बोलें ।'

मोतीबाई ने आग्रह किया, 'सरकार के मुँह से यहाँ की बोली बहुत अच्छी लगती है ।'

जूही ने अनुरोध किया ।

सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई भी पीछे पड़ गईं ।

मुन्दर बोली, 'सरकार बुन्देलखण्डी में बोलें तो यह अवश्य अपने पति का नाम बतला देगी । बतलाओगी न झलकारी ? बतला देना भला, नहीं तो हम लोगों की बात बिगड़ जायगी ।'

झलकारी ने उस बारहदरी के वातावरण को परिहास, सौन्दर्य, सुगन्धि और आग्रह से भरा पाया—उसने हामीं का सिर झुकाया ।

रानी ने कहा, 'तोरे घर बारे को का नाओ झलकारी ?'

झलकारी—'हओ ऐसें सूदउँ बताओ जात कऊँ ?'

रानी—'तो कैसें बताये पनमेसरी ?'

झलकारी—'मोये कौनऊँ धोको देओ । जैसें एक बेर पूंछी हती तैसें पूंछो अपुन ।'

रानी—'आज कौन मिती है ?'

झलकारी—'पांचैं महाराज ।'

रानी—'दस दिन पाछैं का हुइये ?'

झलकारी—'पूनैं ।'

रानी हँस पड़ीं । उन्होंने फूलों की एक माला झलकारी के गले में डाली । सिर पर हाथ फेरा ।

विनोद की समाप्ति पर सब स्त्रियाँ महादेव के मन्दिर के पास उतर आईं । उतरती जाती थीं और पलाश के पेड़ को हिलाती जाती थीं । उसके लाल फूल मालाओं समेत झूम झूम जाते थे ।

महादेव का मन्दिर छोटा-सा है और आसपास का आँगन भी सकरा ही है, परन्तु उसमें बहुत स्त्रियाँ इकट्ठी थीं ।

चहल पहल को बन्द करके रानी ने स्त्रियों से कहा, 'दो चार दिन के भीतर ही अपनी झाँसी के ऊपर गोरों का प्रहार होने वाला है। तुममें से अनेक युद्ध विद्या सीख गई हो। जो जिस कार्य को कर सके वह उस कार्य को हाथ में ले। लड़ने वालों के पास गोला, बारूद, खाना पानी इत्यादि ठीक समय पर पहुँचता रहना चाहिये। आवश्यकता पड़ने पर हथियार भी चलाना पड़ेगा। तुम में से कोई मेरी बहिन के बराबर हो, कोई माता के समान। अपने बाप की, अपने ससुर की, अपने पति की, अपने भाई की लाज तुम्हारे हाथ है। ऐसे काम करना जिसमें अपने पुरखों को कीर्ति मिले। मैंने नगर का प्रबन्ध कर दिया है। तुम्हारी आवश्यकता मुझको किले में है। मेरे साथ रहना। बीच-बीच में छुट्टी मिल जाया करेगी, तब घर हो आया करो।'

झलकारी बोली, 'मैं सरकार अपने आदमी के पासई रेहों। अपुन नें उनाव फाटक की तोप उनखों सौंपी है।'

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'ऐसौइ हुइहै झलकारी। अपने आदमी के पास रइयो, पै ऊकौ नाओ तो बताओ।'

झलकारी घूँघट काढ़ कर बोली, 'हूँ—अबईं तो बताओ तौ।'

सब स्त्रियाँ हँस पड़ीं।

रानी ने कहा, 'अब एक बार सब भगवान का नाम लो, हर हर महादेव !'

सब स्त्रियों के कण्ठ से ध्वनित हुआ, 'हर हर महादेव।'

उन कोमल, किन्तु दृढ़ कंठों का वह निनाद किले की कठोर दीवालों से जा टकराया। उसकी झाँईं महादेव के मन्दिर में लौट पड़ी। हुआ 'हर हर महादेव' अनन्त दिशाओं में, अनन्तकाल में वह अनन्त अमर नाद समा गया। महल के पास सिपाहियों के कोठे थे। उनमें नवागन्तुक पठान भी थे। हल्ले को सुनकर हथियार लेकर बाहर निकल आये। बुन्देलखण्डी सिपाहियों ने उस हल्ले का उनको सविस्तार अर्थ समझाया।

उनका अगुआ गुलमुहम्मद बोला, 'बाई जहां की औरत लड़ने को एसा तयार है, वहाँ का मरद तो आसमान को चक्कर खिला देगा। और अम लोग-अम लोग—खुदा कसम—इस मुलक के लिये सब मर मिटेगा। वकत आने दो, बाई वकत !' पठानों ने दांत पीसकर मन ही मन प्रण किया।

[६७]

जनरल रोज ससैन्य २० मार्च के सवेरे झाँसी के पूर्व-दक्षिण कामासिन देवी की टौरिया के पीछे, झाँसी से लगभग तीन मील के फासले पर आ गया। थोड़ी देर में तम्बू तन गये। इन तम्बुओं को रानी ने किले के महल की छत पर से दूरबीन द्वारा देखा। झाँसी भर में सनसनी फैल गई, परन्तु वह सनसनी भय की न थी, उत्साह की थी।

किले के गोलन्दाजों ने भी दूरबीन लगाई। तोपों पर पलीते डालने के लिये हाथ सुरसुरा उठे, परन्तु उस समय की तोपों के लिये अच्छा निशाना मारने के प्रसङ्ग में तीन मील का फासला बहुत था। स्त्री गोलन्दाजों ने भी दूरबीन पकड़ी।

मोतीबाई ने उमङ्ग के साथ रानी से कहा, 'सवारों का हमला कर दिया जाय तो सब तम्बू कनातें तितर-बितर हो जायें।'

रानी बोलीं, 'समझ से काम लो। इन तम्बुओं के बीच बीच में अगल-बगल और आगे-पीछे तोपें लगी होंगी। एक सवार भी लौटकर न आ सकेगा। लड़ाई किले और परकोटे के भीतर से लड़नी पड़ेगी। घिर जायेंगे। परन्तु एक दिन तात्या टोपे राव साहब की सेना लेकर आ जावेंगे। तब रोज की सेना पर दुहरी मार पड़ेगी।'

'रावसाहब के पास सन्देसा भिजवा दिया गया?'

'आज ही भेजती हूँ।'

'पीरअली के हाथ न भेजा जाय। न जाने मन क्यों नहीं बोलता।'

'सोचती हूँ कि किसको भेजूँ। रानी ने कुछ क्षण सोचकर कहा, 'तू बतला मोती किसको भेजूँ।'

मोतीबाई बोली, 'जो नाम मन में उठते हैं, वे सब किसी न किसी काम पर लिख लिये गये हैं। मैं सोचती हूं जूही को सवार के साथ भेज दिया जाय।'

'वह सुकुमार है, कोमल है', रानी ने कहा।

मोतीबाई ने सतृष्ण नेत्रों से रानी की ओर देखा। बोली, 'सरकार, संसार की जितनी मंजुलता है, वह हमारे मालिक में निहित है। उनसे बढ़कर कोई नहीं। इतनी मृदुल होते हुये भी वे फौलाद से भी बढ़कर कठोर हैं। तब उनकी चाकरनी क्या सम्वाद-वाहक का भी काम न कर सकेगी ? और फिर वह दृढ़ भी काफी है। इस कार्य में उसका मन लगेगा। उसी को भेजने की अनुमति दी जाय। उसको तुरन्त शहर छोड़ देना चाहिये। अङ्गरेज लोग शीघ्र घेरा डालेंगे। सब फाटक बन्द होने ही वाले हैं। फिर कोई भी न आ-जा सकेगा।'

रानी ने स्वीकृति दे दी।

कहा, 'मैं जूही को भेजने की अनुमति देती हूं। उसके साथ काशी को भेजना चाहती हूँ। तुमको उसके साथ कर देती, परन्तु तुम्हारी यहाँ अधिक आवश्यकता पड़ेगी।'

रानी ने काशीबाई और जूही को उसी समय कालपी के लिये रवाना कर दिया। उन दोनों के घोड़े अच्छे थे। जरूरी सामान साथ था। दोनों सशस्त्र युवा वेश में गईं।

काशीबाई और जूही के चले जाने पर नगर के सब फाटक बन्द कर लिये गये।

झाँसी की—अनेक स्त्रियों ने उसी दिन रानी के पास सैनिक वेश में अपना निवास बनाया। ये ही स्त्रियाँ जो घर पर बात बात में चबड़ चबड़ किया करती थीं, जरा–सा कारण पाने पर परस्पर लड़ बैठती थीं, सन्ध्या के समय वस्त्राभूषणों और फूलों से सुसज्जित होकर, थालों में दिये रख-रखकर, मन्दिरों में पूजन के लिये जाती थीं, वे ही स्त्रियाँ सैनिक वेश में, तलवार बाँधे और बन्दूक कन्धे पर साधे, चुपचाप अपना अपना कर्तव्य पालन करने में निरत हो गईं ! उनका श्रृङ्गार और वाक् युद्ध—सब—तलवार की म्यान में समा गया ! लोगों की कल्पना थी कि अङ्गरेज रात को झाँसी पर हमला करेंगे। झाँसी सचेत थी, परन्तु रात को हमला नहीं हुआ।

२१ मार्च को जनरल रोज ने अपने मातहत दलपतियों के साथ दूर से झाँसी का चक्कर काटा और भूमि का सूक्ष्म निरीक्षण किया। आक्रमण और रक्षा के स्थानों में सेना की टुकड़ियाँ और तोपें लगा दीं। शहर और किले के भीतर के लोगों को जिन जिन मार्गों से सहायता या रसद मिल सकती थी, उन सबको उसने अपने अधीन कर लिया। शहर के सब फाटकों की नाकेबन्दी करली। उसी दिन चन्देरी से ब्रिगेडियर स्टुअर्ट अपने दस्ते के साथ लौट आया। रोज को और बल मिला।

जहाँ जहाँ अङ्गरेज फौज के दल लगाये गये थे वहाँ वहाँ उनकी रक्षा के लिये खाइयां खोद ली गईं। एक स्थान से दूसरे स्थान तक तार लगा दिया गया। कामासिन टौरिया पर एक बड़ी दूरबीन लगाई गई और तार घर कायम किया गया। बात की बात में युद्धक्षेत्र के एक स्थल से दूसरे स्थल को समाचार भेजने की पूरी सुविधा हो गई, और दूरबीन से देखने योग्य किले का सब हाल मालूम करना भी सुलभ कर लिया गया।

झाँसी के आसपास की सब टौरियों की आड़ से अङ्गरेजी तोपखाने मृत्यु वमन करने के लिये वैज्ञानिक तौर पर सन्नद्ध हो गये और टौरियों के बीच बीच में जो नीची जगह और खाइयाँ थीं उनमें बन्दूक चलाने के लिये छेद और नालियाँ बनाकर, सैनिक अपने जनरल की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे। रोज जैसा योग्य सेनापति था, सेना उसकी उतनी ही सीखी सिखाई हिंसामय और अनुभवी थी।

दूसरे दिन (२२ मार्च को) रोज के बीस पच्चीस घुड़सवार निरीक्षण के लिये कोट के कुछ अधिक निकट आ गये। सैंयर फाटक के पास दाहिनी ओर जहाँ ऊँची मटीली टौरियां कोट के बाहर और भीतर हैं, यहां से उन घुड़सवारों के ऊपर तड़ातड़ गोलियों की वर्षा हुई। मरा तो उनमें से कोई नहीं, परन्तु घायल अनेक हो गये। रोज को तुरन्त समाचार मिल गया। उसने समझ लिया कि झाँसी कर्रा मुकाबिला करने के लिये तैयार है। रोज ने उसी दिन झाँसी पर धावा नहीं बोला। अपने संपूर्ण साधनों

ग्रौर उपकरणों का फिर से निरीक्षण किया जहां जो त्रुटि पाई उसको सम्भाला।

मंगलवार (२३ मार्च) को रोज ने हमले की आज्ञा दी। युद्ध आरम्भ हो गया।

सैंयर फाटक की बाईं तरफ एक टेक पर अङ्गरेजों का तोपखाना था। वहाँ से सैंयर फाटक ग्रौर ग्रोर्छा फाटक पर तथा उन फाटकों के बीच की दीवार पर गोलों की बरसा हुई। चलते हुये गोलों की चादर के नीचे गोरी पल्टन संगीन बन्दूकें लिये दीमक की तरह चली। खुदाबख्श ग्रौर दूल्हाजू ने उनको बढ़ने दिया। जब मार के काफी भीतर ग्रा गये तब उन्होंने कहर को मानो उढ़ेल दिया। गोरी पल्टन धरती में बिछ गई ग्रौर फिर खुदाबख्श ने टेक के तोपखाने को ग्रपना लक्ष्य बनाया। अंग्रेज तोपची मारे गये ग्रौर तोपों का मुँह बन्द हो गया। तोपखाने के पीछे वाली सेना पीछे को भागी। उसके ऊपर गुलामगौस ने 'घनगरज' की मार फेकी। मुश्किल से कुछ ग्रादमी बचकर रोज के पास तक पहुंच पाये। पूर्व की ग्रोर से भी सागरखिड़की ग्रौर लक्ष्मी फाटक पर हमला होता हुग्रा दिखा, परन्तु उसकी गति धीमी थी लक्ष्मीताल के दक्षिणी सिरे का छोटा-सा चक्कर देना पड़ा, परन्तु भाउ बख्शी की 'कड़कबिजली' ने पूर्व का मोर्चा ऐसा साध रक्खा था कि पूर्व की ग्रोर से ग्राक्रमण की रोज की साध मन में ही समा गई।

रोज ने किले के दक्षिण में, जीवनशाह की टौरिया के ठीक बगल में पूर्व की ग्रोर—किले से तीन सौ गज के फासले पर मोर्चा बनाया, परन्तु इस मोर्चे के बनाने में उसको काफी समय ग्रौर ग्रादमी खर्च करने पड़े। संध्या तक वह बहुत कम काम कर पाया। रात में मोर्चा बनकर तैयार हो गया। इसके सिवाय रोज ने इस मोर्चे की सहायता के लिये तीन नये मोर्चे ग्रौर बनाये।

[६८]

झाँसी के तोपची और सिपाही रात भर जागते रहे। रानी ने दुहरी कुमुक का प्रबन्ध किया। दिन में अपनी अपनी जगह पर गुलामगौस, खुदाबख्श, रघुनाथसिंह, भाऊबख्शी, दूल्हाजू, पूरन और सागरसिंह, रात में उनके स्थानापन्न, रानी के स्त्री गोलन्दाज।

परन्तु यह बदली सुबह होते ही नहीं हुई। स्त्रियां इन गोलन्दाजों के पास पहुँच गईं और काम में मदद करती रहीं। दोपहर के उपरान्त बदली होनी थी।

गुलामगौस रात भर का जागा था, जो स्त्री उसके पास काम कर रही थी, उससे गौस का मन नहीं भर रहा था। उसने उसके बदले में लालता ब्राह्मण को मांगा। रानी ने लालता को भेज दिया। लालता के आते ही गौस की खुमारी चली गई।

गौस ने उससे कहा, 'रानी साहब की स्त्री-गोलन्दाज चपल बहुत हैं, मुझको ठण्डा आदमी चाहिये जो काम करने के समय गाता न हो।'

लालता हँसकर बोला, 'कभी कभी आल्हा गाते-गाते तो मैं भी काम करता हूं खाँ साहब।'

'तब वह गीत याद रखना पण्डित जी', गौस ने कहा, 'जननी जनम दियो है तोखों बस आजहिं के लानें।'

लालता ने फसील के छेद में होकर देखा कि जीवनशाह की पहाड़ी की आड़ में होकर बगल वाली टौरिया के पीछे कुछ तोपें और चढ़ाई जा रही हैं। गुलामगौस ने भी देखा।

गौस की आँख एक पल के लिये गीध की आँख की तरह सधी।

बोला, 'पण्डित जी, एक लोटा जल पिलाओ और मेरी घनगरज और उसकी छोटी बहिनों का काम देखो। मैं बारह बजे छुट्टी लूंगा। खुदा ने चाहा तो खाना-वाना खाने के बाद शाम को मिलूंगा। फिर रात को सोउँगा। हां तो एक बार वह गीत तो मन से गादो। एक सतर से ज्यादा नहीं।'

लालता ने स्वर में गाया, 'जननी जनम दियो है तोखों बस आजहि के लानै।' गीत की समाप्ति हुई कि गौस ने तोपखाने को पलीता छुलाया। 'घनगरज और उसकी छोटी बहिनों' ने इतनी जोर की गरज की कि जमीन काँप गई। दक्षिणी सिरे की सब बुर्जों से एक एक क्षण के बाद बाढ़ दगना शुरू हो गई। तोपों के भरने का उत्कृष्ट प्रबन्ध था। एक तोपखाने की बाढ़ और दूसरे की बाढ़ के दगने में थोड़ा ही अन्तर पड़ता था। रोज के तोपखानों ने जवाब दिया, परन्तु जवाब कमजोर था। गौस के तोपखानों ने ऐसी मार बरसाई कि रोज का दम फूल उठा। उसका दक्षिणी दस्ता नष्ट भ्रष्ट हो गया। कुछ तोपखाने बन्द हो गये पन्तु एक तोपखाना कोलाहल कर रहा था। समय लगभग दोपहर का हो गया था।

गुलाम गौस ने कहा, 'मुझे भूख लग रही है और गोरों का यह तोपखाना मानता नहीं। अच्छा देखता हूँ।'

गुलाम गौस ने 'घनगरज' को एक अंगुल इधर उधर सरकाया। निशाना बाँधा और एक फटने वाला गोला छोड़ा।

बारूद इन तोपों की ऐसी थी कि धुआँ न होता था, इसलिये गौस ने अपने निशाने की सफलता तुरन्त देख ली। उछल कर बोला, 'वह मारा।' उसके साथियों ने देखा कि गोरे तोपची मारे गये और तोप भी उलट कर बेकार हो गई।

अङ्गरेजों का दक्षिणी मोर्चा बिलकुल ठण्डा हो गया। गौस भोजन और आराम के लिये गया। लालता ने स्थान पकड़ा।

पूर्व की ओर से अङ्गरेजी तोपों के गोले आने लगे। कुछ किले से टकराते थे और कुछ शहर में गिर कर घरों का और लोगों का नाश करते थे; भाऊ बख्शी ने कड़कबिजली का स्थान जरासा परिवर्तित किया और निशाना साधकर पलीता दिया। थोड़ी देर में रोज का पूर्वीय मोर्चा भी ठण्डा हो गया। तोपची मारे गये और तोपें बेकार हो गईं। बख्शी अपनी पत्नी को तोपखाना सौंप कर भोजन और आराम के लिये चला गया।

मुन्दर ने रघुनाथसिंह की जगह ली। सुन्दर ने दूल्हाजू की, मोतीबाई ने खुदाबख्श की। दीवान जवाहरसिंह को थोड़ी देर के लिये छुट्टी दे दी गई। रानी घोड़े पर सवार होकर शहर के सब मोर्चों को देखने और सम्भालने के लिये चली गई। तीसरे पहर के अन्त में लौट आईं। जवाहरसिंह फिर अपने काम पर डट गया।

चौथे पहर से लेकर सन्ध्या तक स्त्री तोपचियों ने दृढ़तापूर्वक काम किया। रात को भी उन्हीं को काम पर रहना था। केवल खंडेराव फाटक पर सागरसिंह ने अपना नायब स्वयं चुन लिया और सागर-खिड़की पर बरहामुद्दीन नाम का एक बुन्देलखण्डी पठान भेज दिया गया।

इसका आना पीरअली को अच्छा नहीं लगा।

पीरअली ने कहा, 'खाँ साहब, आपको नाहक कष्ट दिया गया। मैं तो दिन-रात इस छोटी-सी खिड़की को सम्भालने को तैयार हूँ।'

'मीरसाहब', बरहामुद्दीन बोला, 'आप थोड़ा आराम कर लें, रात-भर के जागे हुये हैं।'

'गई रात तो सभी जागे हैं। आप भी तो न सोये होंगे?'

'हुकुम है। पालन करना होगा।'

'ऐसा भी क्या! अरे साहब सोइये। कल रहियेगा मेरी मदद पर।'

'नहीं, जनरल साहब सुनेंगे तो नाराज होंगे। और रानी साहब सुनेंगी तो मैं अपना मुँह न दिखला सकूँगा।'

'तो रह जाइये, मगर एक बात है—किसी को मालूम न हो।'

'मुझे किस्से-कहानी कहते फिरने से मतलब ही क्या?'

'बात यह है कि अगर फूटकर बाहर निकल जाय तो मेरे टुकड़े हो जायेंगे।'

'आप कहिये। विश्वास करिये।'

'अंग्रेजी छावनी में क्या हो रहा है, क्या होने वाला है, कहाँ-कहाँ नये मोर्चे बनाये और किस तरफ से हमला जोर का होगा इन बातों का

जासूसी करने का भार मेरे सिर है। अङ्गरेजी छावनी में भोपाल रियासत के भी सिपाही है। उनमें से एक मेरा रिश्तेदार है। जब मैं थोड़े दिन हुये तालबेहट की ओर गया था तब उसको मैंने मिला लिया था। वह कुछ और लोगों से मिला हुआ है, इसलिये ठीक-ठीक खबर मिल जायगी यह खबर अपने बड़े काम की होगी। इस खबर के लाने के लिये मैं रात को चुपचाप बाहर जाऊँगा। सवेरे के बहुत पहले आ जाऊँगा। यदि अङ्गरेजों को खबर लग गई, तो मैं मार दिया जाऊँगा। और अङ्गरेजी फौज में मेरा जो रिश्तेदार है, वह, और उसके साथी, सब मारे जायेंगे। रानी साहब का नुकसान होगा।'

'मैं किसी से न कहूँगा, मगर मैं चला जाऊँ या सो जाऊँ तो आपका ठौर खाली हो जायगा। फिर यदि दुश्मन यहाँ होकर रात में धावा बोल दे तो अपना कितना बड़ा नुकसान न होगा ?'

'यह तो छोटी-सी खिड़की है। इसकी खबर भी अंग्रेजों को न होगी।'

जैसा आप उचित समझें। मैं सोचता हूँ, हर हालत में मेरा इस ठिये पर रहना आपके लिये लाभदायक होगा।'

'खूब। आप रहिये। मगर जब सब लोग सो जायेंगे तब में जाऊँगा।'

'लेकिन फाटक नहीं खोलना चाहिये।'

'फाटक पर ताले पड़े हैं। मैं मुहरी के रास्ते जाऊँगा।'

'मुहरी। कौन-सी मुहरी ?'

'वही जो खिड़की के बगल में है ?'

जब सब सो गये, पीरअली ने बरहामुद्दीन को मुहरी दिखलाई और उसी में होकर बाहर चला गया।

आध मील चलने के उपरान्त वह अङ्गरेजी छवीने के पास पहुँचा। टोका गया। उसने पूर्व निश्चित संकेत को कहा। सन्त्री ने आगे बढ़ने दिया। कई अड्डों पर रोका जाने और अनुमति पाने पर पीरअली रोज और उसके मातहत दलनायकों के सामने पहुंचा। दुभाषिये के द्वारा तुरन्त बातचीत हुई।

रोज—'किले में से जो गोलाबारी हुई, उसका प्रधान नायक कौन है ?'

पीरअली—'गुलाम गौसखाँ और भाऊ बख्शी।'

रोज ने बागियों का रजिस्टर लौटवाया-पलटवाया। उसमें ये नाम न थे।

रोज—'ये लोग कौन हैं ?'

पीरअली—'रानी साहब के नौकर हैं।'

रोज—'ओर्छा फाटक और सैंयर फाटक पर कौन हैं ?'

पीरअली—'दीवान दूल्हाजू ओर्छा फाटक पर हैं और कुँवर खुदाबख्श सैंयर फाटक पर।'

फिर रजिस्टर देखा गया। ये नाम भी न निकले।

रोज—'कोई लालता ब्राह्मण है ?'

पीरअली—'है, किले में है।'

रोज ने दांत पीसे।

बोला, 'जनरल कौन है ?'

पीरअली—'खुद रानी साहब। उनके नीचे दीवान जवाहरसिंह जागीरदार काम करते हैं।'

रोज—'कुल कितने गोलन्दाज हैं ?'

पीरअल—'बेहिसाब। सैकड़ों। बहुत तो औरतें गोलन्दाज हैं।'

रोज—'बाई जोव ! स्टुअर्ट, यह झाँसी तो महज नरक (हैल) है। औरतें गोलन्दाज ! कल दूरबीन से अच्छी तरह देखूंगा।'

स्टुअर्ट—'बारूद बनाने का कोई कारखाना है या पहले से बनी रक्खी है ?'

पीरअली—'पहले की बनी रक्खी है और बनाने का कारखाना भी है।'

पीरअली—'इट इज स्मोक लैस पाउडर स्टुअर्ट (धुआँ न देने वाली बारूद है !) उत्तरी दरवाजे किसके सुपुर्द हैं ?'

पीरअली—'ठाकुरों, काछियों और कोरियों के हाथ में। दतिया फाटक तेलियों के हाथ में है।'

रोज—'दी होल पीपुल एगेन्सट अस (पूरी जनता हमारे खिलाफ है!) अच्छा तुम किस जगह काम करते हो?'

पीरअली—'सागर खिड़की पर।'

रोज—'हमारे हवाले कर सकोगे?'

पीरअली—खुशी से, मगर आपको फायदा कुछ न होगा। सागर खिड़की की ठीक पीठ पर खजाञ्ची की कोठी है। उस पर तोपखाना है। वह मेरे काबू का नहीं है। वहां पठान और ठाकुर हैं।'

रोज—'कोई औरतें हाथ में आ सकती हैं?'

पीरअली—'तोबा, तोबा झाँसी की औरतें पूरी शैतान हैं। एक नाचने वाली मेरी जान पहिचान की है, मगर वह जासूसी मुहकमे की प्रधान है और अब तोप चलाती हैं!'

रोज—'डैन्सिग गर्ल ए गनर! (नाचने वाली गोलन्दाज!) व्हाट एल्स हैव आई टु हियर इन दिस डैम्ड् एकर्सैड प्लेस (इस सत्यानासी पलीत जगह में मुझको अब और क्या सुनना बाकी रह गया है?')

स्टुअर्ट—'मगर जासूसी मुहकमें का अफसर तो एक मोतीसाई सुना गया था?'

पीरअली—'जी नहीं वह अफसर यही नाचने वाली है और उसका नाम मोतीबाई है।'

वे सब हँस पड़े।

रोज ने कहा, 'वी हैव मैड फूल्स् आव अस! (हम लोग बेवकूफ बन गये।) अच्छा, किसी एक फाटक वाले से हमको मिलादो। तुमको और उसको बहुत इनाम मिलेगा।'

पीरअली—'कोशिश करूँगा।'

रोज—'तुम बतला सकते हो शहर और किले पर हमारी तोप का गोला कहाँ से अच्छा पड़ेगा?'

पीरअली—'जार पहाड़ी पर से।'

रोज—'ओ सिली! (मूर्ख) जार पहाड़ी से किले का बहुत कम नुकसान होगा।'

पीरअली—'जी नहीं। किले की पश्चिमी दीवाल जो मटीली टौरिया पर है बहुत कम ऊँची है। उसकी दाहिनी बगल में शङ्करगढ़ किले का उत्तर पश्चिम हिस्सा है। इसी में पानी पीने का कुआँ और रानी साहब के पूजन का मन्दिर है। तमाम औरतें जो सिपाहीगीरी काम करती हैं, इसी जगह दुपहरी या शाम को जमा होती हैं। इस जगह के तोड़ने से किला हाथ में आ जावेगा और शहर की इमारत न बचेगी।'

रोज—'और उत्तर की ओर से?'

पीरअली—'उनाव फाटक और भाँडेरी फाटक की सीध में मटीले टेकड़े हैं, जिनकी वजह से आपका तोपखाना कामयाब न हो सकेगा।'

रोज—'अच्छा, तुम हमको दक्षिण तरफ का कोई फाटक वाला मिला दो।'

पीरअली—'मैंने अर्ज की न—कोशिश करूँगा।'

रोज ने पीरअली को धन्यवाद देकर वापिस किया।

पीरअली जब सागर खिड़की पर वापिस आया, उसने बरहामुद्दीन को सावधान पाया।

पीरअली ने कहा, 'खुदा खुदा करके लौट आया हूं। आज बहुत थोड़ा भेद मिल पाया है। कल मौका मिलते ही फिर जाऊँगा।'

बरहामुद्दीन ने पूछा, 'आज कुछ मालूम हो पाया या इतनी मिहनत सब बेकार हो गई?'

'बेकार तो नहीं गई', पीरअली ने उत्तर दिया, 'यह मालूम कर लाया हूं कि एक भी तोप या तोपखाना हिन्दुस्थानी सिपाही के हाथ में नहीं है। सब तोपें अङ्गरेजों ने अपने काबू में रख छोड़ी हैं।'

'इतना तो मुझको भी मालूम है कि अङ्गरेजों ने हिन्दुस्थानियों का भरोसा करना बिलकुल छोड़ दिया है।'

'इस पर भी गोरों के साथ भोपाल, हैदराबाद और ओर्छा रियासत के दस्ते हैं और मदरास की काली पल्टन भी।'

'ओर्छा रियासत का दस्ता उत्तर की ओर अंजनी की टौरिया पर तैनात है।'

'तुझको कैसे मालूम ?'

'किले में चर्चा थी। रानी साहब के जासूसों ने खबर दी होगी।'

पीरअली ने सोचा, 'बरहामुद्दीन चतुर मालूम होता है; सावधान होकर काम करना चाहिये।'

[६६]

उसी रात रोज ने सतर्कता के साथ जार पहाड़ी पर तोपखाने के मोर्चे बाँधे। सुबह होते ही तोपों के मुहरे ठीक किये, निशान साधे। तोपों पर पलीते पड़े और शहर का विध्वंस आरम्भ हो गया। लोग बेहिसाब मरने और घायल होने लगे। आगें लगीं बाजार बन्द रहे। साधारण जनता भूखों प्यासों मरने लगी। शहर में हाहाकार मच गया। झाँसी की गलियाँ वीरान दिखने लगीं। किले की पश्चिमी दीवार में सूराख हो उठे।

शहर का हाल जानकर रानी दुखी हुईं। तुरन्त सवार होकर किले से उतरीं और बरसते हुये गोलों में होकर प्रत्येक मुहल्ले को उत्साह दान किया। आग बुझाने का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया। अन्नक्षेत्र और सदावर्त कायम किये। तब किले को लौटीं।

लौटते ही गुलाम गौस के पास पहुंचीं। उसने भक्तिपूर्वक प्रणाम किया।

'खाँ साहब, आज पश्चिम की ओर कोई नया मोर्चा बना है। इसका निरोध होना ही चाहिये', रानी ने कहा, 'चौथाई नगर बरबाद हो गया है। कल न जाने क्या गत होगी।'

'दक्षिणी मोर्चे का सरकार इन्तजाम करदें,' गौस ने निवेदन किया, 'मैं अङ्गरेजों के उस मोर्चे को देख लूंगा।'

रानी ने कहा, 'मैं मोतीबाई को भेजती हूं।'

गौस बोला, 'वह कमाल की गोलन्दाज हैं सरकार, मगर इस मोर्चे को न संभाल पावेंगी। अङ्गरेज लोग दक्षिण के सिवाय और किसी ओर से नहीं आ सकते।'

रानी ने पूछा, 'तुम्हारा ऐसा विचार क्यों है?'

'हुजूर' गौस ने उत्तर दिया, 'इसी दिशा से किला अत्यन्त निकट पड़ता है।'

रानी ने कहा, 'बख्शिन को भेज दूं?'

'भेज दीजिये सरकार', गौस ने सहर्ष स्वीकार किया, 'वह बड़े खानदान की हैं।'

रानी की त्योरी बदली, परन्तु उन्होंने तुरन्त नियन्त्रण किया। सोचा, 'आत्मत्याग में वह वेश्या-पुत्री किस खानदान वाले से कम है? हे भगवान्, त्याग में भी ऊँचनीच !' और चली गईं।

बख्शिन ने दक्षिण बुर्ज की 'घनगरज' और उसकी 'छोटी बहिन' को संभाला। वह गौस के बतलाये हुये क्रम पर काम करती रही।

गुलाम गौस तुरन्त पश्चिमी बुर्ज पर पहुँचा। यहाँ लालता काम कर रहा था। गौस ने बारीकी के साथ दूरबीन द्वारा निरीक्षण किया।

बोला, 'पण्डित जी अङ्गरेजों का मोर्चा पहिचाना ?'

'वह देखो काली टोरों के पीछे है।'

'नहीं पण्डित जी, काली टोरों के पीछे महज बारूद का धुआँ किया जा रहा है जिसमें हम लोग धोखा खाते रहें। वे जो ताजा लाल मिट्टी के ढेर लगे हुये हैं तोपें वहाँ हैं।'

लालता ने दूरबीन पकड़ी। देखा। असहमत हुआ।

'खाँ साहब', लालता ने कहा, 'मिट्टी और बजरी के उन ढेरों में तोपें नहीं बिठलाई जा सकतीं।'

'माफ कीजिये पण्डित जी', गौस बोला, 'तोपें खास मतलब से उन्हीं ढेरों में बिठलाई गई हैं। जरा ठहरिये।'

गौस ने तोपों पर दूरबीनें कसीं। तोपों को इधर-उधर खिसका कर ठीक किया। निशाना बाँधे, बारूद और गोले भरे। इस कार्य में उसको अधिक समय नहीं लगा।

इसके बाद इधर गौस ने तोपों को पलीते दिये उधर वे मिट्टी के ढेर उधड़ गये। मरे हुये तोपची नजर आये। उल्टी हुई और टूटी तोपें। फिर बाढ़ें की गईं।

अङ्गरेजों के पश्चिमी मोर्चे का जवाब बिलकुल बंद हो गया। नगर में चैन हो गया। गौस ने जाकर रानी को प्रणाम किया। रानी ने सोने

के चूड़े मँगवाकर गौस को अपने हाथ से पहिनाये। रानी हर्ष में मग्न थीं और गौस का खुरदरा चेहरा आँसुओं से तर था। तीसरे पहर के उपरान्त कुमुक बदली। स्त्रियों ने हाथ में तोपें लीं और भीषण गोलावारी शुरू कर दी।

कामासिन टौरिया पर से रोज ने दूरबीन में से देखा। बगल में उसका फौजी डाक्टर लो था और पास ही मातहत जनरल स्टुअर्ट।

रोज ने कहा, 'ओह! स्त्रियां तोप चला रही हैं! स्त्रियाँ गोला-बारूद ढो रही हैं। कुछ खाना-पीना बाँट रही हैं। टूटी हुई दीवारों और कँगूरों की मरम्मत में मदद दे रही हैं। इतनी तरतीब से, इतनी तेजी से हिन्दुस्थानियों को काम करते आज देखा! अचरज होता है।'

लो ने दूरबीन हाथ में ली। देखते ही बोला, 'जनरल, पेड़ों की छाया में कुछ स्त्री-पुरुष काम कर रहे हैं। हमारा एक गोला उनके बीच में पड़ा। धूल फिकी। फिर भी वे सब वहीं के वहीं!'

रोज ने और स्टुअर्ट ने भी निरीक्षण किया। स्टुअर्ट बोला, 'ये सब नेपोलियन हो गये क्या?'

लो ने कहा, 'तब झाँसी हमारा वाटरलू होगा।'

रोज ने मुस्कराकर झिड़का, 'हिश, अभी बहुत घोर युद्ध करना पड़ेगा। यह रानी नेपोलियन नहीं, जौन आव आर्क सी जान पड़ती है।'

स्टुअर्ट ने कहा, 'इसको जिन्दा पकड़ सके तो कमाल होगा।'

उसी समय तार खटखटाया।

मालूम हुआ कि पश्चिमी मोर्चा सब का सब तहस-नहस हो गया। स्टुअर्ट को पश्चिमी मोर्चे को फिर सँभालने की आज्ञा दी। वह चला गया। स्टुअर्ट के ब्रिगेड का अधिकांश दक्षिणी मोर्चे पर था। उसके दलनायक को रोज ने तार द्वारा आदेश दिया, 'बहुत जोर के साथ किले की दक्षिणी बुर्ज पर गोलावारी करो। उस व्हिसलिंग डिक को किसी तरह वन्द करो।'

गौस के 'घनगरज' तोपखाने के शोर और मृत्युनमन का नाम इन लोगों ने व्हिसलिंग डिक-हल्ला करने वाला शैतान रक्खा था।

आज्ञा पाते ही दक्षिणी ब्रिगेड ने अत्यन्त तीव्रता के साथ काम शुरू किया। उनके तोपखाने लगातार भयंकर आग और गोले उगलने लगे। बख्शिन जवाब पर जवाब दे रही थी बारूद और धुयें से उसका सुन्दर चेहरा काला पड़ गया था। पसीने की रेखाओं से जितना चेहरा धुल गया था केवल उतना उसके स्वर्ण वर्ण को प्रकट कर रहा था। ब्रिगेड ने तोपों की रक्षा में किले की ओर दौर लगाई। घनगरज के तोपखाने ने उनका संहार कर दिया। बहुत अङ्गरेजी फौज मारी गई। उसको लौटना पड़ा। परन्तु उनके तोपखाने ने एक काम कर लिया।

एक गोला बुर्ज के कंगूरे को तोड़कर बख्शिन के कन्धे पर लगा। कन्धा टूट गया, उड़ गया। वह अचेत होकर गिर पड़ी।

बख्शी को पूर्वी बुर्ज पर समाचार मिला। निर्मम होकर बख्शी ने उत्तर दिया, 'उससे बढ़कर झाँसी और झाँसी की रानी हैं। शाम को देखूंगा। तब तक दाह मत करना।'

बख्शी अपने काम पर जुट गया। एक बार आकाश की ओर उसने देखा। गीता के कृष्ण को याद किया और अपने को कठोर से कठोर संकट में डालता हुआ तोपों को दुगुनी तेजी के साथ चलाने लगा। रोज का पूर्वी मोर्चा बुझ गया।

परन्तु बख्शी का पलीता सुलगता और आग देता रहा।

बख्शिन चली गई। रानी तुरन्त आईं। बख्शिन के रक्तमय शव को गोद में रख लिया। गला रुद्ध हो गया, एक शब्द भी मुँह से नहीं निकल रहा था—और न आँख से एक आँसू। तोपखाना बन्द हो गया था। अङ्गरेजों के गोले धड़ाधड़ बुर्जों और दीवारों से टकरा रहे थे और उसको ढा रहे थे। मुन्दर ने दूरबीद से अपनी बुर्ज पर से देखा। दौड़कर आई।

घबराकर बोली, 'बाई साहब !'

रानी के मुँह से केवल एक शब्द निकला, 'गौस।'

मुन्दर समझ गई। दौड़कर पश्चिमी बुर्ज से गुलाम गौस को बुला लाई।

गौस ने देखा झाँसी की रानी धूल में बैठी बख्शिन के शव से लिपटी हुई हैं।

गौस ने कहा, 'यह क्या सरकार, अभी न जाने कितने सरदार कुरबान होंगे ? हुजूर हम लोगों को समझाती हैं कि स्वराज्य की लड़ाई किसी के मरने-जीने पर निर्भर नहीं हैं। और फिर बख्शिनजू तो अमर हो गई। उठिये। देखिये उस जवाँमर्द बख्शी को। वह अपने ठिये पर अटल है। आप ऐसा मोह करेंगी तो हम लोग गोरों से कितने दिन लड़ सकेंगे ? आप यहाँ से हट जायँ और दीवानखास में बैठकर हुकुम भेजती रहें। मैं इनको मजा चखाता हूं।'

रानी बख्शिन के शव का आवश्यक प्रबन्ध करके दीवानखास में चली गई।

गौसखां ने 'बिसमिल्लाह' किया और घनगरज को सँभाला। तीन बाढ़ों में ही अङ्गरेजी मोर्चे का तोपखाना, तोपची और तोपखाने पर काम करने वाले, सब स्वाहा हो गये।

गौस ने अपने साथियों से कहा, 'यह तो मेरे साथी सरदार को मारने का बदला हुआ, अब कुछ प्रसाद भी देता हूं। देखो झोखनबाग के पूर्व में गुसाइयों के मन्दिरों की आड़ से ये लोग सैंयर-फाठक पर गोला-बारी कर रहे हैं। बिचारा खुदाबख्श मन्दिरों के लिहाज के कारण जवाब नहीं दे पाता, परन्तु मन्दिरों के बीच में सन्ध है। उसी सन्ध में होकर अङ्गरेज़ी तोपखाना काम कर रहा है। वह सन्ध खुदाबख्श की सीध में नहीं है, पर घनगरज की सीध में है।'

साथी ने अनुरोध किया, 'मन्दिर पर गोला न पड़े खांसाहब। नहीं तो बड़ा अनर्थ हो जावेगा।'

'अगर मन्दिर की एक ईंट भी मेरे गोले से टूट जाय तो तलवार से मेरी गर्दन कलम कर देना।'

गौस ने घनगरज का मुहरा मोड़ा, परन्तु वहाँ से सीध नहीं बैठती थी और न निशाना जमता था। तोप को ज्यों का त्यों करके वह रघुनाथसिंह वाली बुर्ज पर गया।

'दीवान साहब', गौस ने विनय की, 'दो पल के लिये तोप मुझे बख्श दीजिये। सैंयर-फाटक के सामने वाला अंगरेजी तोपखाना बन्द करना है।'

'तोप खुशी से लीजिये', रघुनाथसिंह ने कहा, 'परन्तु अङ्गरेजी तोपखाने पीछे मिटेंगे, मन्दिर पहले।'

गौस ने दृढ़तापूर्वक कहा, 'दूरबीन दीजिये, मुझको मन्दिरों की सन्ध से केवल अङ्गरेजी तोपखाना देखना है। मन्दिरों को मैं देखूंगा ही नहीं।'

रघुनाथसिंह को गुलाम गौस की गोलन्दाजी का भरोसा था। दूरबीन और तोप उसके हवाले कर दी।

गौस ने तोप के ठिये को सँभाला, सुधारा और दूरबीन लगाकर निश्चिन्तता के साथ गोला छोड़ा। उसका जो कुछ फल हुआ उसे रघुनाथसिंह ने दूरबीन से देखा।

अङ्गरेज तोपची मारे गये। तोपें नष्ट हो गईं और मन्दिर बच गये।

उसी समय गुलाम गौसखाँ को रानी ने अपनी तौल भर चाँदी का तोड़ा पुरस्कार में दिया। जब लालता ने सुना उसका जी गिर गया।

सन्ध्या समय बख्शिन के शव का दाह किया गया।

बख्शी हर्षोन्मत्त था, परन्तु उसकी आँखों में पागलपन था।

कभी-कभी वह असङ्गत और अप्रसङ्गिक बात कहता था। 'नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।' और कोई समझा हो या न समझा हो, परन्तु रानी इस महावाक्य को समझती थीं।

रात हुई। लड़ाई ने कुछ शान्ति पकड़ी। पीरअली के पास बरहामुद्दीन पहुँच गया।

पीरग्रली ने तुरन्त कहा, 'देखो मेरे पता लगाने के कारण गोलन्दाजों को कितना लाभ हुग्रा ।'

बरहामुद्दीन को शक हुग्रा । उसको दबाकर बोला, 'बेशक हुग्रा होगा, मगर मैं किले से गोलन्दाजी नहीं कर रहा था, इसलिये कुछ कह नहीं सकता ।'

पीरग्रली ने शेखी मारी, 'हमारी खिड़की के सामने ग्रङ्गरेजों का कोई मोर्चा नहीं पड़ता, नहीं तो दांत खट्टे कर देता ।'

बरहामुद्दीन ने खुशामद की, 'मीरसाहब कहिये दाँत ग्रौर सिर तोड़ देते ।'

पीरग्रली ने प्रसन्न होकर कहा, 'एक ही बात है ।'

जब कुछ रात बीत गई पीरग्रली ने बरहामुद्दीन से धीरे से कहा, 'ग्रब मैं जासूसी पर जाता हूं ग्राप यहाँ होशियार रहना ।'

बरहाम ने मंजूर किया ।

पीरग्रली—मुहरी के रास्ते से बाहर हो गया । ग्रौर उसके पीछे पीछे चुपचाप बरहाम । ग्राध मील चलने के बाद जब पहले छबीने के संत्री ने टोका तब पीरग्रली ने संकेत शब्द में उत्तर दिया । पीरग्रली ग्राराम के साथ ग्रङ्गरेज छावनी में दाखिल हो गया । बरहाम बहुत उदास धीरे धीरे सागर-खिड़की को लौट ग्राया ।'

जब पीरग्रली लौटा बरहाम ने प्रश्न किया, 'ग्राज की क्या खबर लाये मीरसाहब ?'

उसने उत्तर दिया, 'ज्यादा पता नहीं लगा । सिर्फ इतना मालूम कर सका कि कल शहर पर गोलाबारी पश्चिम की तरफ से होगी ।'

'ग्राज तो सरदार गुलाम गौस ने कमाल कर दिया । जिधर की तोप सँभाली उसी तरफ कहर बरसा दिया ।'

'हमारी बारूद भी बहुत ग्रच्छी है । धुग्राँ होता ही नहीं । ग्रङ्गरेजों को पता नहीं लगता कि तोपखाने किधर लगे हुये हैं ।'

'तो भी वे लोग हमारे गोलन्दाज पर गोलन्दाज मार रहे हैं। खैर है कि हमारे यहाँ तोपचियों की कमी नहीं है वरना झाँसी का घण्टे भर भी बचना मुश्किल था।'

'बारूद कहाँ बनाई जाती है खाँ साहब ?'

'महल के उत्तर में इमली के पेड़ों के नीचे। आपने क्या नहीं देखा ?'

'नहीं तो मैं उस तरफ नहीं गया खाँसाहब।'

'एक बात मुझको भी बतलाइये मीर साहब। आप अंग्रेजी छावनी में पहुँच कैसे जाते हैं ?'

'कुछ न पूछो खाँसाहब, गड्ढों, खाइयों और झाड़-झंकाड़ की आड़ें लेता हुआ जाता हूं। जराचूकूं तो गोली सिर पर पड़े। बड़ी जोखिम का काम है। सीटी का एक बँधा हुआ इशारा करता हूँ। मेरा रिश्तेदार आ जाता है और बातें बतला देता है। मैं लौट आता हूं। फिर वही मुहरी की मुसीबत। इतना बदबूदार कीचड़ है कि तोबा।'

बरहाम के पैरों में भी कीचड़ लगा हुआ था, पीरअली ने देख लिया। उसने पूछा, 'खाँसाहब तुम्हारे पैरों में कीचड़ कैसा ?'

उसने भोलेपन के साथ उत्तर दिया, 'मैं भी मुहरी में होकर बाहर थोड़ी दूर चला गया था। देखना था कि कैसा रास्ता है। आपके जाने के बाद गया और तुरन्त लौट आया।'

पीरअली को सन्देह हो गया। उसने एक निश्चय किया। बरहाम का सन्देह जाग्रत हुआ। उसने भी एक संकल्प किया।

[७०]

सुन्दर को उस रात दूल्हाजू की कुमुक सौंपी गई। उसने दूल्हाजू से गोलन्दाजी सीखी थी, इसलिये वह उसका आदर करती थी। सन्ध्या के उपरांत सुन्दर ओर्छा फाटक के ऊपर दूल्हाजू के पास पहुँच गई।

दूल्हाजू ने दिन में खूब तोप चलाई थी। वह प्रसन्न था और सुन्दर उस दिन के काम पर सन्तुष्ट थी, केवल बख्शिन के देहान्त पर कभी-कभी मन कसक उठता था।

दूल्हाजू ने सुन्दर से कहा, 'आज तो बाई मैं बहुत थक गया हूं। सारा शरीर दुख रहा है।'

'आप विश्राम करिये। मैं रात भर सावधान रहूँगी।'

'दिर भर फिर वही सब करना पड़ेगा।'

'मैं दिन में भी आपकी जगह काम करती रहूंगी।'

'और कल रात ?'

'रात को भी काम कर दूँगी। तब तक आप सुस्ता लेंगे। परसों दिन में आप तोपखाना सँभाल लेना। मैं सो लूँगी। रात का काम फिर पकड़ लूँगी।'

'सुन्दर तुम बहुत प्रबल हो।'

'आपकी कृपा।'

'और अत्यन्त सुन्दर।'

'इसका उत्तर कुछ नहीं दे सकती। भगवान ने जैसा बनाया वैसी हूँ।'

'तुमको देखते ही, तुम्हारे दर्शन करते ही न जाने मेरा चित्त कैसा हो जाता है। तुम तो महल की रानी होने योग्य हो।'

'रानी तो एक ही हैं—और एक ही हो सकती हैं।'

'सुन्दर मैं तुमको अपने हृदय से लगाना चाहता हूं। क्या कहती हो ?'

'यही कि आप बहुत नीच हैं।'

दूल्हाजू इस उत्तर की आशा नहीं कर रहा था। उसने अपनी ठेस को मुश्किल से सँभाला। उत्तेजित हुआ।

बोला—'जानती हो मैं ठाकुर हूँ।'

सुन्दर ने दृढ़ सुहावने स्वर में कहा, 'जानते हो मैं कुरणभी हूँ, जिस ज्ञाति की सहायता से छत्रपति ने एकछत्र राज्य स्थापित किया था।'

दूल्हाजू यकायक हँस पड़ा।

बोला, 'मैं सुन्दर बाई तुमसे परम प्रसन्न हुआ। मैंने तुम्हारी परीक्षा लेने के लिये ही यह सब कहा था।'

सुन्दर ने स्थिरता के साथ कहा, 'हर्ष है कि आपकी परीक्षा शीघ्र समाप्त हो गई।'

दूल्हाजू की आँख से लौ छूट पड़ी, परन्तु सुन्दर ने नहीं देखा।

'तोपखाना संभालो', दूल्हाजू बोला, 'मैं सवेरे काम पर आ जाऊंगा।' और अधिक वह कुछ न कह सका। चला गया।

अब सुन्दर का क्षोभ जाग्रत हुआ। खीझकर उसने अपने मन में कहा, 'दो जूते मुँह पर न लगा पाये। बड़ा सरदार बना फिरता है। मेरे स्त्रीत्व को इतना दुर्बल समझा!'

सवेरा होते ही दूल्हाजू अपने ठिये पर आगया। सुन्दर से कोई बात नहीं हुई। उसने ऐंठ के मारे क्षमा प्रार्थना तक नहीं की। सुन्दर ने रात का सब हाल रानी को सुनाया।

रानी ने सुन्दर को वर्जित किया, 'और किसी से कुछ मत कहना। गोलन्दाज बहुत मारे गये हैं। यदि मेरे पास काफी आदमी होते तो दूल्हाजू को अपने हाथ से कोड़े लगाती और झाँसी बाहर कर देती, परन्तु इस समय जरा सह लेना चाहिये। तुझे अनुमति देती हूं कि यदि वह फिर कोई बेहूदी बात कहे तो अकेले में जूते लगा देना। तू उसको कुश्ती में पछाड़ सकती है।'

सुन्दर को अच्छा लगा। चुप रही। रानी ने समझा कि इतने से सन्तुष्ट नहीं हुई। उन्होंने दूल्हाजू को बुलाया और अकेले में काफी डांटा-फटकारा।

कहा, अबकी बार तुमको क्षमा किया। अपना काम करो। ऐसा ओछापन न करना।'

दूल्हाजू काम पर शीघ्र लौट गया।

उसने सोचा, एक ने नीच कहा, दूसरी ने ओछा। मेरे सच्चे प्रेम को किसी ने न पहिचाना। सुन्दर एक छोटी जाति की स्त्री है। मैं उसको खुल्लम-खुल्ला रख लेता। ठाकुराइन बन जाती। लेकिन बड़ी पाजी औरत है और रानी औरतों की तरफदार। मैंने कहा ही क्या था? विश्वास दिलाया कि उसकी परीक्षा कर रहा था परन्तु रानी ने विश्वास नहीं किया। इस प्रकार का बर्ताव तो बड़े-बड़े महाराज भी मेरे साथ नहीं कर सकते।'

दूल्हाजू उस बर्ताव को अपना अपमान समझता था। वह उस पहर अपना कर्तव्य, शिथिलता और अन्यमनस्कता के साथ करता रहा। कुशल यही थी कि पिछले दिन गुसाइयों के मन्दिरों के पास वाले तोपखाने के मिट जाने के कारण और रोज के पश्चिमी मोर्चे पर अधिक जोर देने के कारण, ओर्छा फाटक ने अधिक गोलाबारी का आवाहन नहीं किया।

दोपहर के बाद धूप कड़ी हो गई। लू भी चल उठी। दोनों ओर के तोपखाने और सिपाही अवकाश लेने लगे।

पीरअली दूल्हाजू के पास आया राम रहीम होने के उपरान्त बात-चीत होने लगी। पीरअली चाहता था कि कम से कम एक सरदार को अपने पक्ष में कर लूं।

पीरअली—'दीवान साहब आपको तो बड़ा कड़ा परिश्रम करना पड़ता है आपकी वजह से मेरी खिड़की पर दुश्मन कोई दबाव ही नहीं डाल पाता।'

दूल्हाजू—'परिश्रम तो, सचमुच मीरसाहब, मुझको बहुत करना पड़ता है। मारे जाने पर मेरे परिश्रम का कोई मूल्य भी आंका जायगा या नहीं इसमें सन्देह है।'

पीरअली—'रानी साहब तो इनाम खुले हाथ देती हैं। गुलाम गौस को सोने के कड़े, अपनी तौल भर चाँदी का तोड़ा और कुंवर का खिताब बख्शा है।'

दूल्हाजू—'होगा। रानी पठानों और परदेसियों की केवल हेकड़ी पर ही प्रसन्न हो जाती हैं। खजाना उनके हाथ में है चाहे जिसको लुटावें। मैं कितनी बार ओर्छा फाटक के सामने से अङ्गरेजों को हटा चुका हूँ, कितनी बार मैंने उनके तोपखाने नष्ट किये, परन्तु मुझको तो एक पैसा भी पुरस्कार में नहीं मिला। जी चाहता है कि यह लड़ाई समाप्त हो या अवसर मिले तो अपने घर चला जाऊँ।'

पीरअली—'मैं ही, देखिये दीवान साहब, जासूसी में कितनी जान खपा रहा हूँ। पता लगाने के लिये रात में इधर-उधर अकेला भटकता हूं। एक गोली, या एक तलवार का वार पड़ जाय कि बस खतम हूँ, मगर कोई पूछने वाला नहीं कि भैया तुम्हारा क्या हाल है। मेरे साथ एक गँवार पठान को और जोड़ दिया है। उसके मारे परेशान रहता हूं।'

दूल्हाजू—'इधर मेरी भी यही परेशानी है। सुन्दरबाई मेरी नायबी में है। उसकी केवल परीक्षा लेने के लिए एक बात कही कि वह पाजीपन पर आ गई। मैंने डाटा। उसने रानी से मेरी शिकायत करदी। रानी ने मुझसे ऐसी बातें की हैं आज, कि दिल टूट रहा है।'

पीरअली ने प्रयत्न किया अपने को रानी का जासूस प्रकट करने का, दूल्हाजू ने प्रयास किया अपने को दुखाया सताया निर्दोष सिद्ध करने का, दोनों के मन परस्पर निकट आये, परन्तु एक दूसरे की बात को उनमें से किसी ने नहीं समझा।

दूल्हाजू ने कहा, 'मुझे दिखता है हम लोग अङ्गरेजों को हरा नहीं सकेंगे।'

पीरअली—'उन्होंने दिल्ली और लखनऊ को सहज ही तोड़ लिया। कानपूर को भी पराजित कर लिया है। सच्ची बात तो दीवान साहब यह है कि झाँसी बिचारी का कोई बिरता नहीं।'

दूल्हाजू—'जी चाहता है कि आज ही स्तीफा देकर, तुम्हारी मुहरी से घर चला जाऊँ।'

पीरअली—'स्तीफा देने की क्या जरूरत ? वैसे ही चले जाइये, परन्तु चारों तरफ तार लगे हुये हैं और सन्त्रियों के छबीने पड़े हुये हैं। जिनमें होकर छिपकर निकलना कठिन है।'

दूल्हाजू—'आप मीरसाहब, अङ्गरेजी छावनी में से खबर कैसे लाते हैं ?'

पीरअली—'छावनी में मेरे कुछ रिश्तेदार भोपाली दस्ते में हैं। उनकी मदद से पहुँच जाता हूं और वहाँ का हाल ले आता हूँ—और—और दीवान साहब, मैं अंगरेजों के बड़े जनरल रोज साहब के सामने भी हो आया हूँ।'

दूल्हाजू—'आप लड़ाई शुरू होने के पहले गये थे ?'

पीरअली—नहीं, कल रात को ही तो पहुँचा था।'

दूल्हाजू—'फिर बचे कैसे ?'

पीरअली—'सीधी-सी बात। उनसे कह दिया कि मैं तो आपकी तरफ से जासूसी कर रहा हूं।'

दूल्हाजू—'जनरल मान गया ?'

पीरअली—'क्यों न मानता ? दो-एक बातें बतला दीं, उसको भरोसा हो गया।'

दूल्हाजू—'मैं भी जनरल के पास चलना चाहता हूँ।'

पीरअली—'यदि रानी साहब को खबर लग गई तो ?'

दूल्हाजू—'तो जो हाल आपका होगा, वही मेरा भी।'

पीरअली—'मैं तो जासूस हूँ।'

दूल्हाजू—'मुझको भी उसी रंग में रंग लीजिये।'

पीरअली—'मगर जनरल के सामने आप अपने को जासूस नहीं कह सकेंगे।'

दूल्हाजू—'तब क्या कहूँगा ? जाना तो उसके सामने अवश्य चाहता हूँ। शर्त यह है कि बचकर लौट आऊँ और यहाँ भी कोई गड़बड़ न हो।'

पीरअली—'जनरल ने यदि आपसे किसी काम के करने के लिये कहा तो ?'

दूल्हाजू—'हाँ करनी पड़ेगी।'

पीरअली—'तो पहले हमारा आपका ईमान हो जाय और कहीं भी किसी प्रकार भी बात न फूटने पावे।'

पीरअली ने दीन की और दूल्हाजू ने धर्म की पक्की सौगन्ध खाई।

पीरअली ने कहा, 'यदि अवसर मिला तो आज रात को, नहीं तो कल रात को चलेंगे।'

दिन भर पश्चिम और दक्षिणी मोर्चों पर घोर युद्ध होता रहा। उत्तर में, उनाव, भाँडेरी और सूजेखाँ फाटकों पर भी गोलाबारी हुई। इस दिशा में ओर्छा की सेना रोज के दस्ते के साथ काम कर रही थी, परन्तु इस ओर झाँसी के सैनिक और गोलन्दाज ऐसी मुस्तैदी के साथ कर्तव्य पालन कर रहे थे कि रानी को इस दिशा से अङ्गरेजों का कोई भय ही न था। दतिया राज्य से अंगरेजों की सहायता के लिये कोई दस्ता नहीं आया था। इस राज्य को चरखारी पराजय का पता लग गया था। राजा विजयबहादुर का देहान्त हो चुका था। उत्तराधिकारी नाबालिग था। रोज के आक्रमण से पहले दतिया को रानी का भय था और अब तात्या टोपे का। इसलिये दतिया राज्य भय-ग्रस्त तटस्थता में था।

झाँसी का दतिया फाटक निर्भय था। क़िले की पश्चिमी बुर्ज का तोपखाना इसकी काफी रक्षा किये हुये था। यही हाल खण्डेराव फाटक का था। फिर भी इन फाटकों के तोपची हाथ पर हाथ धरे न बैठे थे।

संध्या हो गई। परन्तु रात में गोलाबारी बन्द न हुई। रात में गोले सर्राती हुई छोटी-छोटी लाल गेंदों की तरह मालूम पड़ते थे। इस गोलाबारी से शहर का थोड़ा-सा नुकसान हुआ, परन्तु क़िले का कुछ नहीं

बिगड़ा। उस रात पीरअली बाहर नहीं जा पाया। दूल्हाजू कम सोया। उसने पीरअली की बाट जोही।

दिन निकलने पर फिर जोर का युद्ध हुआ। अब तक गोरी पल्टनें आगे बढ़ बढ़कर मर रही थीं। अब अधिकाँश देशी पल्टनें दिखलाई पड़ीं। परन्तु तोपखाने सब अङ्गरेजों के हाथ में थे।

दोनों ओर के तोपची मर रहे थे। और दूसरे तोपची उनकी जगह पर आ रहे थे। संध्या के समय किले के पश्चिमी मोर्चे का तोपखाना बन्द हो गया, कारण था दीवार का धुस्स हो जाना।

दीवार के टूट जाने से तोपखाना दिखलाई पड़ने लगा। मुश्किल से तोपों को आड़ में किया गया। जार पहाड़ी की ओर से एक दस्ता झपटा। खण्डेराव फाटक पर से सागरसिंह ने देख लिया। फाटक पर ताले पड़े थे। वैसे भी फाटक खोलने की आज्ञा न थी। सागरसिंह ने तोप चलाई परन्तु वह जल्दबाज था, इसलिये निशाना ठीक न बैठता था। खीझ उठा।

अपने साथियों से बोला, 'आज बुन्देलों की नाक कटती है और कुंवर सागरसिंह की मूंछ जाती है। जो मेरे साथ इन गोरों का सामना कर सके वह तुरन्त नीचे उतरे।'

एक ने कहा, 'रानी साहब की या दीवान जवाहरसिंह की आज्ञा ले लो।'

सागरसिंह ने उत्तर दिया,—'बावले हुये हो? जब तक किसी की आज्ञा आवेगी तब तक ये लोग किले में घुस आयेंगे। तब उस आज्ञा को क्या हम चाटेंगे?'

रस्से की सीढ़ी लगाकर धड़ाधड़ सौ आदमी नीचे उत्तर गये। सब से पहले सागरसिंह। ये लोग सपाटे से बगल वाली टौरिया की ओट में पहुंच गये। जैसे ही अङ्गरेजी दस्ता आया इन लोगों ने भी बन्दूकों की बाढ़ छोड़ी। दस्ते ने भी बन्दूक दागी। सागरसिंह की टुकड़ी की कोई हानि नहीं हुई, परन्तु अङ्गरेजी दस्ता छिन्न-भिन्न हो गया। इकट्ठा होने ही को था कि सागरसिंह अपने साथियों सहित तलवार लेकर पिल पड़ा।

अङ्गरेजी दस्ता सब नष्ट हो गया। कुंवर सागरसिंह भी खंडेराव फाटक के पास ही मारा गया। उसके कुछ आदमी बच गये। भीतर वापिस आ गये।

इन आदमियों की वीरता ने उस दिन झाँसी का किला बचा लिया।

रात हो गई। रानी को सागरसिंह के शौर्य का समाचार मिल गया। रानी की आँखों के सामने बरवासागर की घटना का पूरा चित्र खिच गया। रानी ने मन में कहा, 'जिस देश में सागरसिंह सरीखे लोग जन्म लेते हैं वह स्वराज्य से बहुत दिनों वंचित नहीं रह सकता।'

रानी ने दीवार की मरम्मत अपने सामने करवाई। कारीगर कम्बल ओढ़ कर दीवारों की मरम्मत पर चिपट गये और रात भर में दीवार को ज्यों का त्यों कर लिया।

सवेरे पश्चिमी अङ्गरेजी मोर्चे ने दूरबीन से देखा—जैसे दीवार का कभी कुछ बिगड़ा ही न था!

उस दिन अत्यन्त भीषण युद्ध हुआ। दोनों ओर से निरन्तर और तीव्र गोलबारी हुई। इधर दीवारें टूट रही थीं। उधर अंग्रेजों के मोर्चे नष्ट हो रहे थे। इधर तोपची पर तोपची मारे जा रहे थे, उधर तोपखाने पर तोपखाने बन्द हो रहे थे। तुरन्त दूसरे तोपची तोपों को सँभाल लेते थे। रानी की स्त्री सेना इस तरह काम कर रही थी जैसे देवी दुर्गा ने अनेक शरीर और अनेक रूप धारण कर लिये हों।

दीवार टूटी कि उसकी मरम्मत हुई। वह भी दिन दहाड़े। मरम्मत करने का काम पुरुष कर रहे थे और पत्थर तथा चूना इत्यदि देने का काम स्त्रियाँ। गोले बरस रहे थे। ऐसे गोले जो फटकर अपने भीतर के कील काँटे चारों ओर सनसना देते थे, परन्तु न तो झांसी की हिम्मत टूट रही थी और न झाँसी की रानी की। जैसे जैसे संकट बढ़ता, तैसे तैसे इनका साहस बढ़ता जाता!

यकायक गोला किले के भीतर वाले गणेश मन्दिर पर गिरा और वह ध्वस्त होगया। केवल मूर्ति बची। दूसरा शंकर किले में गिरा। उस

समय आठ-दस ब्राह्मण पानी भर रहे थे। उनमें से आधे मारे गये, बाकी भाग गये। ये गोले पश्चिमी मोर्चे से आये थे।

पानी की टूट पड़ी। ३-४ घण्टे लोगों को प्यासा रहना पड़ा। किले का पश्चिमी मोर्चा सँभाला गया। अङ्गरेजी मोर्चे का मुँह बन्द हुआ। तब कुयें से पानी आ पाया। फिर रात हुई और बहुत कुछ शाँति। दोनों पक्ष थकावट में चूर थे।

इस रात पीरअली और दूल्हाजू को अवसर मिला।

[७१]

बरहामुद्दीन सागर-खिड़की की तोप पर पीरअली की जगह आगया। पीरअली ने उससे कहा, 'आज बहुत से पते लगाने के लिये अङ्गरेजी छावनी में जाना है।'

'शौक से जाइये', बरहाम बोला, 'अकेले ही जाइयेगा ? बड़ा खतरनाक काम है।'

पीरअली ने उत्तर दिया, 'अकेले ही जाऊँगा। दो आदमी होने से खतरा बढ़ जायगा।'

पीरअली खिड़की पर से उतरा। थोड़ी देर ही ठहरा था कि दूल्हाजू आ गया। ओर्छा फाटक पर उसकी जगह सुन्दर आ गई थी।

दूल्हाजू को बरहामुद्दीन ने नहीं देख पाया।

पीरअली और दूल्हाजू मुहरी में धसे। धसते ही दूल्हाजू ने नाक दबाई। धीरे से कहा, 'मीरसाहब यह तो बहुत सकरी और गन्दी रास्ता है।'

पीरअली धीरे से बोला, दीवान साहब वहाँ पहुँचने का यही एकमात्र मार्ग है।'

उन दोनों के निकल जाने पर धीरे से बरहामुद्दीन मुहरी में उतरा और आड़-ओट लेते हुये पहले संत्री के छवीने तक चला गया।

संत्री ने टोका। पीरअली ने बँधे हुये संकेत की भाषा में जवाब दिया। वे दोनों छावनी में चले गये।

बरहामुद्दीन ने सोचा, 'पीरअली अवश्य कोई घातक षड़यन्त्र रच रहा है। और वह झाँसी के लिये शुभ नहीं जान पड़ता। आज दूसरा आदमी इसके साथ कौन है ?'

बरहामुद्दीन सावधानी के साथ लौट आया। हाथ पैर धोकर मुहरी की बगल में बैठ गया और पीरअली की बाट जोहने लगा।

दूल्हाजू के साथ पीरअली रोज के सामने पेश हुआ। स्टुअर्ट पास था। पूछताछ शुरू हुई।

रोज—'तुम्हारे साथ दूसरा आदमी कौन है ?'

पीरअली--'दीवान दूल्हाजू ठाकुर साहब। ओर्छा-फाटक का तोपखाना इन्हीं के हाथ में है।'

रोज—'मैं खुश हुआ। यह किसी राजपरिवार का पुरुष है ?'

पीरअली—'जी हां।'

रोज—'आप क्या काम करोगे दीवान साहब ?'

दूल्हाजू—'जो कहा जाय।'

पीरअली—'यह सच्चे आदमी हैं साहब। गङ्गाजली की सौगन्ध लेंगे।'

रोज समझ गया।

दूल्हाजू के पसीना छूट गया। निकल भागने को जी चाहा, परन्तु वहां बाल बराबर भी सांस न थी।

रोज ने एक हिन्दू सिपाही से लोटा भर कर मंगवाया।

रोज ने कहा, 'आपको गङ्गाजी की सौगन्ध खानी पड़ेगी।'

दूल्हाजू ने लोटा दोनों हाथों में ले लिया। आँखें बन्द कर लीं।

रानी का कुपित चेहरा सामने फिर गया उसने आँखें खोल लीं। रोज ने सोचा शपथ गम्भीरता पूर्वक ले रहा है।

पीरअली ने अनुरोध किया, 'सौगन्ध ले लीजिये दीवान साहब।

दूल्हाजू ने शपथ ली, 'गङ्गाजी मुझको मारें, जो मैं बेईमानी करूँ।'

रोज—'बेईमानी किसके साथ ? शपथ लो कि कम्पनी सरकार के साथ, अङ्गरेजों के साथ बेईमानी नहीं करूँगा।'

पीरअली—'ले लीजिये सौगन्ध दीवान साहब।'

दूल्हाजू ने शपथ ली, 'कम्पनी सरकार के साथ, अङ्गरेजों के साथ बेईमानी नहीं करूँगा।' और उसने लोटा नीचे रख दिया।

रोज ने कहा, 'अभी नहीं। लोटा फिर हाथ में लीजिये और, यह कहिये कि ओर्छा फाटक का तोपखाना या तो बेकार कर देंगे या तोपखाने से गोला नहीं छोड़ेंगे और ओर्छा फाटक हमारे हवाले कर देंगे।'

दूल्हाजू ने तदनुसार कसम खाई।

पीरअली ने विनय की, 'हुजूर को इनाम भी इसी समय बतला देना चाहिये।'

रोज ने तुरन्त वरदान दिया, 'दो गाँव जागीर में दीवान साहब, हमेशा के लिये।'

दूल्हाजू ने क्षीण मुस्कराहट के साथ स्वीकार किया।

दूल्हाजू ने प्रश्न किया, 'कब ?'

रोज ने उत्तर दिया, 'जब हम झांसी पर अधिकार करके शान्ति स्थापित कर लेंगे।'

'यह नहीं पूछा', दूल्हाजू ने कहा, 'वह काम कब करना होगा ?'

रोज और स्टुअर्ट ने सलाह की।

रोज बोला, 'जब हमारे मोर्चे के पीछे लाल झंडा देखो। लेकिन जब तक लाल झण्डा न देखो तब तक गोले टेकड़ी के नीचे हिस्से में लगें, हमारे तोपखाने या दस्ते पर गोला न आवे और हमारे तोपखाने का गोला तुम्हारे ऊपर न गिरेगा। या तो दीवार की जड़ में पड़ेगा या तुम्हारे बगल में जो ऊँचाई पर बुर्ज है उस पर पड़ेगा। यदि तुमने हमारे साथ बेईमानी की तो सबसे पहले तुमको फाँसी दी जायगी।'

दूल्हाजू का चेहरा तमतमा गया।

'मैंने बहुत बड़ी कसम खाई है। इन मीरसाहब को मालूम है कि रानी साहब से मेरा दिल बिलकुल फिर गया है।'

पीरअली ने समर्थन किया।

इसके उपरन्त वे दोनों चले गये।

रोज ने स्टुअर्ट से कहा, 'राज-खानदान के लोगों को हाथ में रखना जरूरी है। डलहौजी ने इन लोगों को अपमानित करके हिन्दुस्थान को बिलकुल ही खो दिया होता।'

स्टुअर्ट—'लेकिन आगे चलकर इन लोगों को सिर पर भी नहीं बिठलाना है।'

रोज—'नहीं जी। वे सिर पर नहीं बैठना चाहते। वे तो अपनी मखमली गद्दियों पर बैठे रहना चाहते हैं। वहीं अडिग बने रहेंगे।'

पीरअली और दूल्हाजू मुहरी पर आ गये। दूल्हाजू ने फिर नाक दबाई।

पीरअली ने मुहरी के सिरे पर पहुँच कर कहा, 'दीवान साहब, लाल झण्डे वाली बात याद रखना।'

दूल्हाजू धीरे से 'हूँ' करके ओर्छा फाटक की ओर चला गया। उसके चले जाने पर पीरअली ने दीवार से सटा हुआ किसी को देखा। काँप गया।

बोला, 'कौन ?'

बरहाम ने आगे बढ़कर उत्तर दिया, 'मैं हूं मीर साहब।'

हृदय की धड़कन को दवाते हुये पीरअली ने कहा, 'म्याँ खाँ साहब, यहाँ क्या कर रहे थे ?'

'मुहरी में छपछप की आवाज सुनकर शक हुआ, इसलिये यहाँ आ गया। आपके साथ दूसरा आदमी कौन था ?'

'होगा। आपको क्या मतलब ?' पीरअली ने होश सम्भालते हुये कहा, 'जासूसी मुहकमों की बातों में दलख नहीं देना चाहिये।'

बरहाम—'आप तो कहते थे कि अकेले ही जायेंगे। दो आदमी होने से खतरा बढ़ जायगा।'

पीरअली—'आपको साथ ले जाता तो खतरा जरूर बढ़ जाता।'

बरहाम—'यह दीवान साहब कौन आदमी था ?'

पीरअली—'दीवान साहबों और खाँ साहबों की झाँसी में कोई कमी है ?'

बरहाम—'हाँ, मीरसाहब अलबत्ता बहुत थोड़े हैं।'

पीरअली—'अपना काम देखिये। मैं तो जाकर सोता हूं। इतना ख्याल रखिये कि किसी के राज में अपना पैर नहीं पटकना चाहिये।'

बरहाम—'मान लिया मीरसाहब, मान लिया। लेकिन इतना तो बतला दीजिये कि आज किस तरह पहुँचे और क्या-क्या कर आये ?'

पीरअली—'आप पीछे-पीछे क्यों न चले आये ?'

बरहाम—'गया था, लेकिन लाल झंडे की बात समझ में नहीं आई।'

पीरअली सन्नाटे में आ गया, परन्तु उसको मनोनिग्रह का काफी अभ्यास था।

बोला, 'लाल झण्डे वाली बात रानी साहब को बतलाई जावेगी, आपको नहीं।'

बरहाम ने कहा, 'रानी साहब से मैं भी कुछ अर्ज करूंगा।'

पीरअली अपने शयनागार में चला गया। उसको नींद नहीं आई। दो दिन पहले उसने एक निश्चय किया था। सवेरा होते ही वह रानी के पास पहुंचा।

पिछले रोज बहुत तोपची और सैनिक मारे गये थे। रानी ने रात में तोपचियों का प्रबन्ध कर लिया था। तड़के के पूर्व ही वह नये सैनिकों की भर्ती के उपायों में व्यस्त थीं। जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह भी उसी चिन्तन में वहीं थे।

पीरअली ने तुरन्त निवेदन किया, 'श्रीमन्त सरकार, आज पश्चिमी मोर्चे से बहुत जोर का हमला होगा। जब आपका ध्यान उस ओर अटक जायगा तब दक्षिणी मोर्चे से जो जीवनशाह की टौरिया के बगल में है, धावा बोला जायगा। रात की जासूसी का यही समाचार है।'

रानी ने उपेक्षा के साथ कहा, 'देखूंगी। प्रबन्ध हो गया है।'

वह किसी काम के लिये शहर में जाने के लिये उद्यत थीं।

पीरअली हाथ जोड़कर बोला, 'श्रीमन्त सरकार उस बरहामुद्दीन को मेरे ठिये से हटा दिया जाय। वह मेरे काम में बहुत दखल देता है।'

'देखूंगी', रानी ने कहा, 'कुछ और कहना है ?'

'हुजूर', पीरअली ने जरा थर्राये हुये स्वर में कहा, 'एक लाल झंडे के बारे में निवेदन करना है।'

रानी—'लाल पीले झंडे के विषय में जो कुछ कहना हो जल्दी कहो।'

पीरअली—'अङ्गरेज धोखा देने के लिये खूनी झण्डा किसी टेकड़ी पर उठायेंगे और वहाँ से गोलाबारी भी धूमधाम के साथ करेंगे, परन्तु हमला करेंगे किसी दूसरी दिशा से।'

रानी—'समझ लिया। कुछ और ?'

पीरअली—'बस हुजूर। केवल यह कि बरहामुद्दीन को मेरी बुर्ज पर से हटा दिया जाय।'

रानी अनसुनी करके जवाहरसिंह के साथ शहर की ओर गईं। पीरअली दूसरी ओर चला गया।

रानी को मार्ग में बरहामुद्दीन मिल गया। उसने रोक लिया।

अनुनय के साथ प्रार्थना की, 'पीरअली से होशियार हो जायें। सरकार। वह रात को अङ्गरेजी छावनी में जाते हैं।'

रानी रात की जागी थीं। सैनिकों का तुरन्त प्रबन्ध करना अत्यन्त आवश्यक था। मार्ग की टोकाटाकी सहन नहीं हो रही थी।

बोलीं, 'तुमको कैसे मालूम ?'

बरहामुद्दीन ने उत्तर दिया, 'मैं पीछे पीछे गया था। अङ्गरेज संत्री ने इनको टोका। इन्होंने इशारे की बोली में जवाब दिया सन्त्री ने तुरन्त छावनी में जाने दिया। यह पहले दिन की बात है सरकार। गई रात वे किसी एक दीवान साहब को साथ ले गये थे। मैं फिर पीछे पीछे गया। सन्त्री ने उसी तरह चिल्लाकर टोका। इन्होंने उसी तरह चिल्लाकर इशारे की बोली में जवाब दिया। दोनों को खट से छावनी में जाने की इजाजत मिल गई। ये लोग देर से लौट कर आये। जब दोनों अलग हुये पीरअली ने दूसरे से कहा, दीवान साहब लाल झण्डे वाली बात याद रखना। मैंने उन दीवान साहब को नहीं पहचान पाया। हुजूर, इस कार्रवाई में दगा है। द्रोह है। खतरा है।'

घोड़ा आगे बढ़ने के लिये लगाम चबा रहा था, पैर पटक रहा था।

रानी ने रुखाई के साथ कहा, 'तुम मूर्ख मालूम होते हो। अपना काम न करके दूसरों के पीछे-पीछे घूमते हो। अपना ठिया देखो।'

रानी आगे बढ़ गई। साथ में जवाहरसिंह। जवाहरसिंह ने विनय की, 'सरकार पठान मूर्ख नहीं है। पीरअली की जाँच होनी चाहिये।'

रानी ने उत्तर दिया, 'सामने का काम पहले निबटा लो और फिर जाँच करो। पता लगाना यह कौन दीवान साहब हैं, जो पीरअली के साथ गया था।'

नये सैनिकों का प्रबन्ध करके रानी किले को लौट आई।

जवाहरसिंह शहर के इन्तजाम में उलझ गया।

रानी ने जरा सा अवकाश मिलने पर मोतीबाई से बरहामुद्दीन वाली बात कही।

मोतीबाई बोली, 'पीरअली बेईमानी कर सकता है। साथ में दीवान दूल्हाजू गये होंगे। आप उनसे रुष्ट हुई थीं।'

रानी ने कहा, 'जब तक जाँच नहीं हुई इन दोनों पर नजर रखनी चाहिये, परन्तु सहसा ऐसा कोई काम न करना जिसके लिये पीछे पछताना पड़े। पीरअली ने पहले अच्छे कार्य किये हैं और दीवान दूल्हाजू ने ओर्छा फाटक की अच्छी सम्भाल की है। इस समय हाथ में कोई बढ़िया गोलन्दाज दूल्हाजू की जगह भेजने के लिये नहीं है।'

'मेरे मन में आता है', मोतीबाई बोली, 'सुन्दर को दीवान साहब के साथ दिन के काम के लिये कर दीजिये। रात के काम के लिये किसी और को भेज दिया जायगा।'

रानी ने स्वीकार किया।

सुन्दर रात को जागी थी। सोने के लिये तैयार हुई थी कि उसको यह योजना बतलाई गई। सुन्दर की नींद भाग गई। वह नहा-धोकर और थोड़ा-सा खा-पीकर ओर्छा फाटक पर पहुंच गई।

उस दिन भी घनघोर युद्ध हुआ। दोनों तरफ बिकट नरसंहार। केवल दो बातें विशेष हुईं, ओर्छा फाटक की वह तोप जो दूल्हाजू के हाथ

में थी अच्छी नहीं चली और एक गोला महल के सामने जहाँ बारूद बन रही थी गिरा, फटा और बारूद जलकर धड़ाके के साथ २५–३० स्त्री-पुरुषों को अपने साथ हवा में उठा ले गई—उनके अङ्गों का भी पता न चला कि कहाँ गये ।

बारूद में आग लग जाने के कारण किले में खलबली मच गई । भीषण नरसंहार तथा नगर के मकानों के भयानक विध्वन्स के कारण लोगों में निराशा फैलने लगी । किले की दीवारों में जगह जगह छेद हो गये थे । संध्या के उपरांत रानी शहर में गईं । दीवारों का निरीक्षण किया । मरम्मत कराई । उस समय जबकि अन्य रातों की अपेक्षा इस रात अधिक गोलाबारी हो रही थी और, इतनी शीघ्रता के साथ मानो कोई कल काम कर रही हो; रात को देर में लौटीं । सीधी महादेव के मन्दिर में गईं । ध्यान के उपराँत बारादरी में थोड़ी देर के लिये जा लेटीं । एक झपकी आई । उन्होंने स्वप्न में देखाः—

एक गौरवर्ण युवती, सुन्दर आकृति वाली । बड़े बड़े काले नेत्र लाल रङ्ग की साड़ी का अन्चल बांधे हुये । आभूषणों से लदी हुई । वह स्त्री किले की बुर्ज पर खड़ी हुई अङ्गरेजों के लाल लाल गोलों को अपने कोमल करों में झेल रही है । कह रही है—'लक्ष्मीबाई देख, इन गोलों को झेलते झेलते मेरे हाथ काले हो गये हैं । चिन्ता मत कर । स्वराज्य की देवी अमर है ।' रानी की आँख खुली । भयङ्कर गोलाबारी हो रही थी और होती रही । पर उन्हें न कोई चिन्ता न थकान । झटपट जीने से उतरी और स्वप्न का संवाद सेनापति और मुख्य मुख्य दलपतियों को सुनाया । सवेरा होते होते यह संवाद सर्वत्र किले और नगर में फैल गया तमाम स्त्री और पुरुषों की नसों में बिजली सी कौंध गई । डटकर युद्ध होने लगा । पहले दिन की अपेक्षा भी अधिक घोर । उस दिन पीरअली और बरहामुद्दीन वाले मामले की जाँच-पड़ताल न हो सकी परन्तु संध्या समय रानी को मालूम हो गया कि दूल्हाजू ने अनमने होकर काम किया ।

[७२]

उस दिन तोपों पर रघुनाथसिंह और मुन्दर ने मिलकर काम किया। बारूद और धुयें ने दोनों के चेहरे और हाथ काले कर दिये। नित्य ही ऐसा हो जाता था। उस दिन कालोंच कुछ और अधिक चढ़ गई थी। दोनों एक-दूसरे को देख-देखकर मुस्करा जाते थे।

दोपहर के समय रघुनाथसिंह ने कहा, 'आज अभी तक खाना नहीं आया। मुन्दरबाई, आपको क्या भूख नहीं लगी है ?'

'मैं लाती हूँ', मुन्दर ने कहा।

'एक घड़ा जल भी', रघुनाथसिंह ने प्रस्ताव किया, 'क्योंकि यहाँ के घड़े का जल पीने लायक नहीं रहा।'

मुन्दर थकी हुई थी। हवा के झोकों से उसके काले बालों की एक लट कालोंच भरे चेहरे पर फहरा गई। थकावट और गहरी लक्षित हुई।

रघुनाथसिंह ने कहा, 'नहीं आप पानी मत लाना। किसी से लिवा लाना। कोई न मिले तो खाना खाकर मैं नीचे उतरकर पी आऊँगा, तब तक आप तोप सँभाले रहना। खा-पीकर आना। कोई जल्दी नहीं है।'

थकी हुई मुन्दर हँसी। जैसे अँधेरी रात में कोई तारा छिटक कर विलीन हो गया हो।

बोली, 'मैं क्या पानी का घड़ा न ला सकूंगी ?'

रघुनाथसिंह—'थक गई हैं आप ?'

मुन्दर—'और आप ?'

रघुनाथसिंह—'मैं तो यहीं बैठा सुस्ता रहा हूँ।'

मुन्दर—'यह मेरे प्रश्न का उत्तर है ?'

रघुनाथसिंह—'अच्छा मैं नहीं थका हूं मुन्दरबाई।'

मुन्दर—'तो मैं भी दीवान साहब दो घड़े उठा ला सकती हूँ।'

रघुनाथसिंह—'ऐसा मत करना।'

मुन्दर—'खाना क्या लाऊँ ? लड्डू लाऊँ ?'

रघुनाथसिंह को उस रात के लड्डुओं की याद आ गई।

बोला, 'मुन्दरबाई लड्डू खाऊँगा और उन्हीं हाथों से।'

मुन्दर—'कालोंच भरे हाथों से ?'

रघुनाथसिंह—'नहीं तो। गंगाजल से धुले हुये हाथों से। खा-पीकर आना।'

मुन्दर—'नहीं। यहीं खाऊँगी। नहीं तो आपको देर हो जायगी।'

इतने में बुर्ज की मुड़ेर पर एक गोला टकराया।

मुन्दर ने कहा, 'यदि यह गोला मुझे लग जाता तो मैं नहीं बचती। आप मेरे शव को जला देते न ?'

रघुनाथसिंह जरा तीव्र स्वर में बोला, 'और मुझको लग जाता तो आप मुझको दो लकड़ी दे देतीं या नहीं ?'

मुन्दर की आँख में आँसू आ गये।

काँपते हुये गले से बोली, 'मैं पहले मरूँगी। आप आज गाँठ बाँध लीजिये। यदि फिर यह बात कही तो लड्डू-वड्डू कुछ नहीं खिलाऊँगी।'

उन आँसुओं के दर्पण में रघुनाथसिंह ने अपने प्राणों की झांकी देखी।

रघुनाथसिंह ने गद्गद होकर कहा, 'मैं ऐसा कभी नहीं कहूंगा मुन्दरबाई, और न आप कभी ऐसा बोल मुँह से निकलाना।'

मुन्दर आँसू पोंछकर धीरे धीरे चली गई।

रघुनाथसिंह को सारा वातावरण नवप्रस्फुटित कलियों से भरा दिखलाई पड़ा। तोप एक खिलवाड़, बारूद और गोले प्यार के खिलौने जान पड़े।

उसने प्रण किया, 'मुन्दर अखण्ड रूप से मेरे हृदय का सम्पूर्ण सम्मान प्राप्त करेगी—कभी समय आवेगा।'

मुन्दर पानी का घड़ा और लड्डू, लेकर शीघ्र लौट आई।

रघुनाथसिंह ने रोषपूर्ण स्वर में कहा, 'मैं इस बुर्ज का प्रधान हूँ मुन्दरबाई। जानती हो ?'

मुन्दर कुछ आश्चर्य, कुछ कुतूहल और कुछ शरारत के साथ देखने लगी।

रघुनाथसिंह के स्वर का रोष तुरन्त अवरोध में परिणित हुआ। बोला, 'मैंने कहा था कि खा-पीकर आना। वैसे ही क्यों चली आईं? मेरी बात की अवज्ञा क्यों की?'

मुन्दर ने मुस्कराकर कहा, 'मैंने भी जता दिया था कि यहीं आकर खाऊंगी।'

रघुनाथसिंह के थके हुये चेहरे पर मुस्कराहट दौड़ गई। बोला, 'याद आ गया तो अब हाथ मुँह धोकर खाओ।'

'पहले आप', मुन्दर ने अनुरोध किया।

रघुनाथसिंह ने हठ किया, 'पहले तुम।'

'तुम' शब्द ने मुन्दर को पुलकित कर दिया। बोली, 'मेरे हाथ से खाना हो तो आरम्भ करो।'

'नहीं तो?' रघुनाथसिंह ने प्रश्न किया।

'नहीं तो क्या, लड्डू अपने हाथ से खाने पड़ेंगे।' मुन्दर ने उत्तर दिया।

रघुनाथसिंह ने स्वीकार कर लिया। हाथ मुँह धोया। मुन्दर ने एक ओर बैठकर लड्डू खिलाये।

रघुनाथसिंह ने प्रस्ताव किया, 'अब मैं तुमको खिलाऊँगा।'

मुन्दर बहुत हँसी।

बोली, 'अरे वाह, ऐसा कहीं होता है! मैं अकेले में बैठ कर खाऊँगी।'

रघुनाथसिंह मान गया। उसने सब कुछ पा लिया।

उसको मृत्यु का कोई भय नहीं रहा।

और मुन्दर को?

लक्ष्मीबाई की सहेली को मृत्यु का क्या डर!

[७३]

तात्या टोपे चरखारी को जीतकर कालपी लौटा। उसकी सेना में ग्वालियर का वह यूथ भी था जिसने कानपूर में जनरल विंढम को पराजित करने में हाथ बटाया था। सिपाही विजयोत्सव मना रहे थे और तात्या कालपी के विशाल शास्त्रागार का निरीक्षण कर रहा था। भांति भांति के गोले ढाले जा रहे थे। बन्दूकें बनाई और बांधी जा रही थीं। दो हजार मन बारूद के होते हुये भी और बारूद तेजी के साथ तैयार की जा रही थी। अन्य प्रकार के शस्त्र और उसके अङ्गोपाङ्ग बनाये और खराद मशीनों पर संभाले जा रहे थे। बहुत सी मशीनें नई विलायती थीं।

उसी समय दो सवार पहरे वालों के पास उतरे। दोनों सुन्दर युवक जुल्फों पर साफा बाँधे हुये।

पहरे वालों से कहा, 'सरदार साहब से इसी समय मिलना है। झाँसी की रानी साहब की चिट्ठी लाये हैं।'

उन लोगों ने झाँसी के युद्ध की गति के विषय में जिज्ञासा प्रकट की। युवकों ने संक्षेप में बतला दिया। शीघ्र ही दोनों तात्या के सामने पहुँचा दिये गये।

तात्या ने अकेले में ले जाकर कहा, एक साहब को तो पहिचान पाया हूं। दूसरे साहब—?'

जूही ने उत्तर दिया, 'आप काशीबाई जी हैं।'

तात्या ने अभिवादन किया। दोनों ने झाँसी के युद्ध का वृत्तान्त जितना उनके सामने हो चुका था और जो उन्होंने मार्ग के बटोहियों से सुना था विस्तार पूर्वक सुना दिया। रानी की चिट्ठी भी पढ़ी।

तात्या बोला, 'आज ही झाँसी की ओर कूच करता हूँ। सेना को चरखारी से लौट कर काफी विश्राम मिल चुका है। आप लोग हमारे साथ चलिये। अब अकेले लौटना ठीक नहीं हैं।'

काशीबाई ने कहा, 'फाटक बन्द हो चुके हैं। चारों ओर अङ्गरेजों का कड़ा पहरा है।'

तात्या—'आप लोग हमारे साथ सुरक्षित रहेंगे।'

काशीबाई—'हम लोग भी लड़ना जानते हैं।'

जूही—'जानती हैं।' और वह मुस्कराई।

तात्या ने हँसकर कहा, 'उसी भाषा में बोलिये। मैं सैनिकों का भी सन्देह जाग्रत नहीं करना चाहता हूँ।'

तात्या ने उसी दिन कूच कर दिया। साथ में बीस सहस्र सेना। बाकी सेना और कालपी का प्रबन्ध रावसाहब के हाथ में छोड़ दिया।

तात्या को झाँसी तक पहुँचने में कुछ समय लगा। परन्तु उसके पहुंचने के पहले ही रोज को पता लग गया कि एक बड़ी सेना और भारी तोपें लिये हुये तात्या झाँसी की सहायता के लिये आ रहा है। रोज चिन्तित हुआ। उसने अपने यूथनायकों और दलनायकों की सम्मति से एक योजना बनाई। प्रत्येक मोर्चे के तोपखानों से एक एक तोप ली। केवल जरूरी सेना झाँसी के इर्द गिर्द छोड़कर, बाकी के कई दस्ते बनाये। कुछ को झाँसी कालपी का मार्ग रुद्ध करने के लिये झाँसी से सात मील दिगारा की दुतर्फी टौरियों पर भेज कर छिपा दिया। कुछ उत्तर की ओर दस मील पर गढ़मऊ की झील की पहाड़ियों पर। कुछ को कामासिन टौरिया और ओर्छा के मार्ग के अगल-बगल जमा दिया।

तात्या ने अपनी सेना का बड़ा भाग अपने पास बेतवा से झाँसी की ओर दो मील पर नदी के किनारे नोहट घाट और तिलैथा घाट के बीच में रक्खा और बड़ी बड़ी तोपें। बाकी सेना को तीन भागों में विभक्त करके गढ़मऊ की ओर दिगारा की टौरियों के बीच में होकर झाँसी की ओर भेजा। इन दस्तों के पास छोटी तोपें थीं। साथ में काशी और जूही थी।

पहली अप्रैल का प्रातःकाल हुआ। झाँसी पर बन्दूकचियों के हमले तो बिलकुल नहीं हुये; परन्तु गोलाबारी भयानक हुई। गोलों के ठीक निशाने नहीं पड़ रहे थे। साफ था कि अङ्गरेजी तोपखाने अपना बरकाव कर रहे हैं और झाँसी वालों को केवल व्यस्त रखना उनका उद्देश्य है। परन्तु जवाहरसिंह ने इसका यह अर्थ लगाया कि अंग्रेजों के

निपुण तोपची मारे गये हैं और अब कच्चे आदमी काम कर रहे हैं। रानी सहमत नहीं हुईं।

उन्होंने कहा—'अङ्गरेजों के सामने कोई नई दुविधा आ गई है। सेना और तोपखानों को बाँट दिया गया है, और कोई बात नहीं।'

रानी ने बड़ी दूरबीन उठाई। झाँसी की ओर आने वाले तात्या के दस्तों को दूरी पर देखा। मुस्कराकर दूरबीन जवाहरसिंह के हाथ में दी। बोलीं, 'अब झांसी का उद्धार निकट है।'

जवाहरसिंह दूरबीन से देखकर उछल पड़ा। झाँसी भर में समाचार फैल गया कि झाँसी की सहायता के लिये पेशवा की सेना आ गई।'

झांसी से दिन भर गोलाबारी बहुत हल्की रही।

लालता ने सम्मति दी, 'हमारे गोले कहीं पेशवा की सेना पर न पड़ें।'

और गोलन्दाजों का भी यही मत था। पूर्व और उत्तर के तोपखाने करीब-करीब बन्द रहे। केवल पश्चिम और दक्षिण के तोपखाने कुछ काम करते रहे।

झाँसी की दिन भर की आशा सन्ध्या समय निराशा में परिवर्तित होने को थी।

टौरियों के बीचों बीच आते ही तात्या के दस्तों पर अंग्रेजी तोपखानों ने गोले बरसाये। ठोस और पोले भी जो फटकर तात्या के घुड़सवारों का सर्वनाश कर रहे थे। दस्ते तितर बितर होने लगे। एक ओर काशीबाई पड़ गई और दूसरी ओर जूही को जाना पड़ा।

काशीबाई वाला बचा खुचा दस्ता अङ्गरेज घुड़सवारों के बीच में फंस गया। पहले पिस्तौलें चलीं, फिर तलवार खिची।

काशीबाई ने 'हर हर महादेव' कहा और पिल पड़ी। उसका स्वर कोयल का सा था। अङ्गरेज घुड़सवार समझ गये कि पुरुष वेश में स्त्री है।

उनको भ्रम हुआ।

एक बोला, 'रानी है।'

दूसरे ने कहा, 'झाँसी की रानी। उसको जिन्दा पकड़ो।'

परन्तु काशीबाई की तलवार ने यह मन्सूबा असम्भव कर दिया। ऐसी चलाई कि दो सवार तो अश्व समेत कट गये। कई घायल हो गये। परन्तु एक सवार की तलवार से उसका घोड़ा मारा गया। काशीबाई पैदल लड़ी। उस स्थिति में भी उसने कई सवारों को घायल किया। अन्त में काशीबाई के सिर पर एक तलवार पड़ी। लोहे की टोपी के कारण सिर बच गया, परन्तु कन्धा कट गया। तो भी काशीबाई शिथिल नहीं हुई। फिर दूसरी तलवार। काशीबाई का अन्त हो गया—उस समय उसके मुंह से निकला—'हर हर महा·····'

गोरे प्रसन्न थे। उठाकर रोज के पास ले गये।

'यह बहुत लड़ी हुजूर। औरत के शरीर में शैतान है।'

रोज ने काशी के शव को पहिचनवाया। पहिचानने वाले ने सिर हिलाकर आश्वासन दिया, 'यह रानी नहीं है। रानी की बहिन हो या सहेली हो या तात्या की कोई नातेदार।'

रोज नें काशी का शव सुरक्षित रक्खा, और तात्या की सेना की ओर ध्यान दिया। पेशवा के दस्तों के पैर उखड़ चुके थे। वे भागे। जूही भी भागकर तात्या के पास पहुंची।

बोली, 'काशी कहीं फँस गई है। मारी गई होगी।'

उसी समय रोज के गोले तात्या की बेतवा-तटवर्ती सेना पर गिरे। तात्या ने जवाब दिया। परन्तु रोज के दूसरे अनेक दस्तों ने छोटी हलकी तोपों से उस पर कई पार्श्वों से आक्रमण किया। तात्या को अपनी सेना बेतवा पार ले जानी पड़ी। रोज ने पीछा नहीं छोड़ा। तात्या की बड़ी-बड़ी तोपें अपने बोझ के कारण बेतवा की रेत में धँस गईं। न खिच सकीं। तात्या को छोड़नी पड़ीं। हार खाकर भागना पड़ा। रोज के दस्तों ने लगभग सोलह मील तक उसका पीछा किया। अङ्गरेजों के हाथ बहुत सामान और तोपखाने लगे। सन्ध्या तक मैदान साफ हो गया। तात्या के पन्द्रह सौ सैनिक मरे। वह मुश्किल से एरच घाट होकर कोंच होता

हुआ, कई दिन बाद कालपी पहुँच गया। जूही झाँसी नहीं लौट सकी। उसको तात्या की टूटी-फूटी सेना के साथ कालपी जाना पड़ा।

दूरबीन की सहायता और तोपों की दूर से हट-हटकर सुनाई पड़ने वाली आवाजों से झाँसी वालों को विश्वास हो गया कि तात्या की सेना हार गई। झाँसी में निराशा के काले बादल छा गये।

रोज की सेना के हर्ष का पार न रहा। एक दिन पहले रोज की सेना जब तब कर उठी थी। इस रात विजयश्री मुट्ठी के भीतर दिखलाई पड़ने लगी। थके-माँदे सिपाहियों को विश्राम दिया गया। सन्ध्या के समय काशीबाई का शव फिर पहचनवाया गया। ओर्छे की सेना के कुछ लोग रानी को अच्छी तरह जानते थे। जिन्होंने आश्वासन दिया, 'यह रानी नहीं है।'

काशी का शव जला दिया गया।

रात में थोड़ी गोलाबारी जारी रही। परंतु अधिक समय मोर्चों पर तोपों को यथावत जमाने में गया।

जवाहरसिंह ने रानी को शहर की वार्ता सुनाई। रानी ने अपने सरदारों को इकट्ठा किया। उनसे मुस्कराकर कहा—

'पेशवा की सेना आज लौट गई, तो कल फिर वापिस आ सकती है। तात्या असाधारण सेनापति है और पेशवा के अधिकार में असंख्य सेना और तोपें हैं। आप लोगों को घबराना नहीं चाहिये। मान लो कि पेशवा की सेना न आती तो क्या हम लोग हथियार डालकर झाँसी के मुंह पर कालिख पोतते? अपने पुरखों का स्मरण करो। स्वराज्य की स्थापना में कितने खप गये! यह आवश्यक नहीं है कि स्वराज्य की स्थापना हम अपने जीवन-काल में ही देख लें। सीढ़ी के डण्डे पर पैर रखते ही हम छत पर नहीं पहुँच जाते। एक ही त्याग, एक ही मरण, से स्वराज्य नहीं मिलता है। स्मरण रक्खो—हमको केवल कर्म करने का अधिकार है, फल पर नहीं। दृढ़ उद्देश्य और निरन्तर कर्म—हमारा केवल ध्येय यह है। जीवन कर्तव्य-पालन का नाम है—कर्तव्य-पालन

करते हुये मरना जीवन का ही दूसरा नाम है। जो लोग अंग्रेजों से डरते हों, मौत से डरते हों वे हथियार रख कर आराम के साथ अपने घर चले जायें। जो लोग स्वराज्य के लिये प्राण विसर्जन करना चाहते हों, वे मेरे पास बने रहें।'

रानी फिर मुस्कराईं। सब लोगों की ओर देखा। किसी ने 'हथियार रखकर आराम के साथ घर जाने' की बात नहीं कही। सबने लड़ मरने का रानी को आश्वासन दिया।

'श्रीमन्त सरकार आज रात से ही, अभी से, अपनी घनगरज का काम देखें।' गुलामगौस ने कहा।

भाऊ बख्शी बोला, 'सरकार को सपने में जो देवी दिखलाई दी थी वही मेरी तोप पर काम करेगी। कड़क बिजली ने कामासिन पहाड़ी तक को न उड़ा दिया तो बात काहे की।'

'सरकार', खुदाबख्श ने कहा, 'सैंयर फाटक पर से अब जो कुछ होगा, उस पर आपको बहुत हर्ष होगा।'

मोतीबाई बोली, 'सरकार, मुझको और मेरी संगिनों को अलग मोर्चे दिये जायें और फिर देखा जाय कि स्वराज्य की लड़ाई के लिये झाँसी की स्त्रियाँ अकेले क्या क्या कर सकती हैं।'

बाहर से आये हुये पठानों के सरदार गुलमुहम्मद ने कहा, 'अल-हमदुलिल्लाह, हुजूर अम न बहुत समझता है और न बहुत सुनता है। सिर्फ इतना अरज है कि हम लोग झाँसी की मिट्टी में मिलेगा और वहिश्त लेगा। सोराज की आप जानो।'

रानी ने सरदारों को जी खोलकर पुरस्कार बाँटे और उनके सिपाहियों के लिये भी इनाम दिये। मुख्य मुख्य लोगों को रणकङ्कण अपने हाथ से बाँधे और पीठ पर हाथ फेरा। पुरस्कृत केवल तीन व्यक्ति नहीं हुये, वे उस समय किले में भी थे नहीं,-दूल्हाजू, पीरअली और बरहामुदीन।

निराशा के वातावरण का कुहरा छट गया। उत्साह का तीव्ररवि चढ़ आया। रात भर बिकट, तीक्ष्ण, भीषण गोलाबारी किले और बाहर

की बुर्जों पर से हुई। रोज की सेना ने बहुत हलका जवाब दिया। सैनिक रक्षा के स्थानों में पड़े पड़े विश्राम करते रहे। यदि उस रात झांसी की सेना फाटक खोलकर टूट पड़ती, तो रोज की सारी सेना नष्ट-भ्रष्ट हो जाती। झांसी का गोलाबारी का शोरगुल अत्यन्त तीव्र हुआ, परन्तु उससे अङ्गरेजी सेना को साक्षेप में हानि बहुत कम पहुँची। रोज को आश्चर्य था—झाँसी में इतनी युद्ध सामग्री कहाँ से आ रही है !

रानी का वही क्रम जारी था—एक मोर्चे से दूसरे मोर्चे पर पहुँचना निरीक्षण करना और उत्साह प्रदान करना। एक स्थल पर जवाहरसिंह से भेंट हो गई।

रानी ने पूछा, 'उस मामले की जांच की ?'

जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'जी हाँ सरकार पीरअली बुरी कसम खाता है। कहता है कि दीवान दूल्हाजू को रक्षा के लिये साथ ले गया था। रात में जो जासूसी उसने की उससे और कुछ पता तो नहीं लगा क्योंकि रोज ने अपनी योजना केवल अपने मातहत जनरलों को बतलाई थी, परन्तु यह अवश्य मालूम हो गया है कि अङ्गरेजों को अभी तक दो लाख रुपये की बारूद ही खर्च करनी पड़ी है। उनके पास बारूद की कमी हो गई है और गोले भी बहुत नहीं हैं। शायद कलकत्ते से कुमुक मँगवाई है।'

रानी ने कहा, 'मुझे भासता है अङ्गरेज लोग कल विकट युद्ध करेंगे। तात्या का जो सामान उन लोगों के हाथ पड़ा होगा उससे उनको बहुत सहायता मिलेगी। न जाने बिचारी काशी और जूही कहां होंगीं।'

जवाहरसिंह उत्तर ही क्या दे सकता था ?

रानी ने एक क्षण सोचकर कहा, 'दीवान दूल्हाजू मिले ? उनसे पूछा ?'

'नहीं मिले', जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'कुमुक बदल गई है। सुन्दरबाई ओर्छा फाटक पर है। दीवान साहब कहीं चले गये हैं।'

'बरहामुद्दीन ?' रानी ने प्रश्न किया।

जवाहरसिंह ने जवाब दिया, 'सागर–खिड़की पर था। मैंने उसको सावधान रहने के लिये झिड़क दिया है।'

इसी समय किले वाले महल पर जोर का धड़ाका हुआ। रानी किले की तरफ चलीं। जवाहरसिंह भी। रानी ने निवारण किया, 'आप शहर के मोर्चों को एक बार फिर देखकर थोड़ा विश्राम करलो। मैं देखती हूँ यह क्या है।'

रानी ने किले में जाकर देखा। गोला महल पर पड़ा था। महल के दो खण्ड नष्ट हो गये। पानी भरने वाले ब्राह्मण और मन्दिरों के पुजारी महल के बीचोंबीच नीचे वाले खण्ड में छिपे हुये थे। रानी ने उनको दिलासा दी। खुद महल के बाहर टहलने लगीं। दो बज गये थे। गुलाम गौस पश्चिम तोपखाने पर अन्य तोपचियों के साथ था—लालता मारा जा चुका था। दक्षिणी तोपखाने पर मोतीबाई, पूर्वीय पर भाऊ बख्शी और केन्द्रीय पर मुन्दर। इन लोगों को महल का हाल बतलाया। उन्होंने निशाने साधे। अनुभव से दुश्मन के ठीक स्थलों की सही जानकारी हो गई थी। गोलाबारी से अङ्गरेजी तोपखाने बन्द हो गये। महल में छिपे हुये ब्राह्मण इत्यादि पसीने में तर बाहर निकल आये और सुखपूर्वक सो गये।

सवेरे एक चिट्ठी बरहामुद्दीन ने रानी के हाथ में दी। वह उसका इस्तीफा था। उसमें लिखा था:—

'मेरा विश्वास नहीं किया गया। मुझको उल्टा डाटा-फटकारा गया। मेरा मन काम में नहीं लगता। मैं नौकरी छोड़ता हूं। हथियार पीरअली को दे दिये हैं। पीरअली और दूल्हाजू से होशियार रहियेगा।'

रानी को क्रोध आने को हुआ, परन्तु उन्होंने संयम कर लिया।

बोलीं, 'ऐन समय पर तुम जैसे लोग ही काम छोड़ते हैं। जाओ हटो।' और चिट्ठी उन्होंने अङ्गरखे की जेब में रख ली।

[७४]

दूसरे दिन जैसा युद्ध हुआ उससे रोज की सेना के छक्के छूट गये। बहुत उपाय करने पर भी रोज उस दिन एक अंगुल बराबर भी सफलता प्राप्त न कर सका। नित्य की वही कहानी—दीवारों में छेद हुये, बुर्जों की मुडेरें जगह जगह पर टूटीं, शहर में मकान ध्वस्त हुये, आगें लगी, कुछ लोग मरे, दीवारों और बुर्जों की मरम्मत तुरन्त करली गई, आगें बुझा ली गईं, लोगों के मरने से जीवितों में और अधिक हिंसा जागी और दृढ़ता बढ़ी। रात को भी वही क्रम। युद्ध की भयंकरता ने स्थिरता पकड़ ली। वह झाँसी वालों के जीवन में एक नित्य की बात हो गई।

रानी ओर्छा फाटक पर पहुंचीं। दूल्हाजू अभी ठिये से हटा न था। सुन्दर भी मौजूद थी।

रानी ने यकायक पूछा, 'दूल्हाजू, तुम पीरअली के साथ अङ्गरेजी छावनी में कभी गये थे?'

'अङ्गरेज छावनी में मैं···मैं,' रुँधे गले से दूल्हाजू ने जवाब दिया, 'मैं सरकार, कब?'

रानी—'कभी सही। गये या नहीं?'

दूल्हाजू—'मैं! मैं···तो, कभी···कहाँ···गया!'

रानी—'नहीं गये?'

दूल्हाजू—'नहीं सरकार।'

रानी—'पीरअली कहता है कि तुम उसके साथ गये थे।'

दूल्हाजू—'वह झूठ बोलता है, सरकार।'

रानी—'सम्भव है। और यह लाल झण्डा क्या है?'

दूल्हाजू—'लाल झण्डा! लाल कैसा? झण्डा क्या सरकार?'

रानी—'घबड़ाओ मत, मैं लाल झण्डे की सब बात जानती हूं।'

दूल्हाजू—'मैं थक गया हूं सरकार। दिमाग काम नहीं कर रहा है। कुछ समझ में नहीं आ रहा है। लाल झण्डा! पीरअली बड़ा बेईमान और झूठा है।'

मुन्दर—'आज इनसे तोप ठीक नहीं चली।'

'ये मुझ से व्यर्थ रुष्ट हैं। इनको बराबर प्रसन्न रखने का प्रयत्न करता हूँ।'

रानी—'कोई बात नहीं। कल ठीक ठीक काम करना। सुन्दर साथ है। वह सहायता करेगी।'

रानी को बरहामुद्दीन याद आ गया। वह और अधिक इस्तीफे नहीं चाहती थीं।

सुन्दर बोली, 'इनको किले में रख लीजिये। मैं आज रात और कल दिन भर तोपखाना सँभाले रहूंगी।'

रानी ने कहा, 'आज रात आराम के साथ काम करलो, कल दिन में अवकाश नहीं मिलेगा। कल रात इस मोर्चे का ऐसा प्रबन्ध करूँगी जिसमें तुम दोनों को काफी विश्राम मिल जाय।'

रानी सागर खिड़की पर पहुंची। उस समय पीरअली कार्यभार अपने स्थानापन्न को सौंप रहा था।

उनको देखते ही हड़बड़ा गया।

रानी ने कहा, 'दूल्हाजू कहते हैं कि कल तुम्हारे साथ कभी बाहर नहीं गये। तुमने दीवान जवाहरसिंह से कहा कि तुम्हारे साथ गये?'

पीरअली ने हिम्मत बांधी। बोला,

'वे मेरे साथ जरूर गये सरकार। डर के मारे उन्होंने सच्ची बात नहीं कही। व्यर्थ झूठ बोले। मैं उनके मुँह पर कह सकता हूँ। दिशा मैदान के बाद हाजिर हो जाऊँगा।'

रानी ने कहा, 'कोई जल्दी नहीं थोड़ी देर में किले पर आओ।'

'बहुत अच्छा 'हुजूर', पीरअली ने मुक्ति की साँस लेकर कहा।

रानी पूर्व और उत्तरी फाटकों पर होती हुई उन्नाव फाटक पर आई। यहाँ पूरन कोरी अन्य कोरियों के साथ तोप पर था कोरियों को शाबाशी दी।

पूरन से पूछा, 'झलकारी कहां है? अच्छी तरह तो है?'

'सरकार', पूरन ने कहा, 'घरै है। अबईं बुलाउत, दिन भर इतै काम करत रई, अबईं थोड़ी देर भई जब गई।'

'नहीं, बुलाओ मत।' रानी बोलीं, 'वैसे ही पूछा।'

वे आगे बढ़ गईं।

सब फाटकों से घूमती हुई हलवाई पुरे में आईं। बाजार का चौधरी मिला। लखपतियों में से था। यह सवेरे इतने पानी से हाथ-मुँह धोया करता था कि पानी सौ सवा सौ गज तक बह जाता था!

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'अब भी उतने ही पानी से हाथ धोते हो?'

'सरकार', चौधरी ने उत्तर दिया, 'आज कल सब व्योपार बन्द हैं। मुँह हाथ धोते धोते इतने व्यापारियों से बात करनी पड़ती थी कि पानी बहाने का ध्यान ही न रहता था।'

रानी ने कहा, 'अब व्योपार के साथ पानी बहाना भी बन्द है।'

उस महा कठिन परिस्थिति में भी रानी की इस बात पर बाजार वाले हँसे, हँसते रहे और विपत्ति में धैर्य और साहस पाते रहे।

जो मिला उससे कोई न कोई मीठी बात कह कर, ढाढ़स बँधाती हुई रानी किले पर लौट आईं। गोलाबारी का वही काम जारी था।

रात समाप्त हुई।

रानी ने सवेरा होते ही सिपाहियों और उनके सरदारों में समाचार भेजा—'आज मैं स्वयं अपने लोगों के लिये कलेवा तैयार करूँगी। खूब खाओ और डटकर लड़ो।'

सुनते ही थके माँदे और मृत सिपाहियों तक की छातियाँ फूल उठीं।

ब्राह्मणों ने आटा रांधा। रानी ने उसमें हाथ लगाया। ब्राह्मणों ने ही पूड़ियां सेंकी। रानी ने उसमें भी सहयोग दिया। किले के भीतर वाले सरदारों को उन्होंने अपने हाथ से उनके ठियों पर जा जाकर कलेवा वितरित किया।

हर्ष और अभिमान के मारे वे सब के सब उन्मत्त हो गये। रानी की छुई हुई पूड़ी तक के एक एक टुकड़े को पगड़ी के, अङ्गरखे के छोर में कसके बांध लिया और कस कर बाँधे—प्राणों की गांठ में प्रण।

रानी को पीरअली का स्मरण आया—भूलती तो वे कभी कुछ थी ही नहीं। बुलवाया। मालूम हुआ कि दिशा मैदान के लिये जाने के बाद फिर नहीं दिखलाई पड़ा; यह भी पता लगा कि दिशा निस्तार के लिये मुहरी के रास्ते से गया था।

रानी एक क्षण के लिये असमंजस में पड़ीं।

उनको विश्वास हो गया कि पीरअली, झूठ बोलता है, और कदाचित् दूल्हाजू सच, परन्तु बरहामुद्दीन ने लिख कर दिया था—पीरअली और दूल्हाजू से होशियार रहियेगा! किसी निश्चय पर पहुँच चुकी थीं कि चारों दिशाओं से अङ्गरेजों ने गोलाबारी शुरू करदी।

[७५]

रानी ने झटपट दलपतियों और गोलन्दाजों को यथोचित आज्ञायें दीं।

अङ्गरेजों का निश्चय जान पड़ता था कि कहीं से भी परकोटे की दीवार को फोड़ें और झाँसी में घुस पड़ें और झाँसी वालों का निश्चय था कि जब तक शरीर में रक्त है तब तक दुश्मन का पैर झाँसी के भीतर न पड़ने देंगे।

झाँसी की गोलाबारी से आकाश में चलते हुए गोलों की आग की चादर तन गई। इस चादर में से अङ्गरेजी सेना के सिर पर फटे हुये गोलों से गोलियाँ, कीलें-किर्चें बरसती थीं। भूनकर खाक कर डालने वाली हवाइयाँ विस्फोट कर रही थीं। दक्षिणी मोर्चे पर, जीवनशाह की टौरियों से लेकर ओर्छा फाटक के सामने वाली टेक* तक अङ्गरेजी तोपखाने अत्यन्त वेग के साथ जवाब दे रहे थे।

अपने तोपखानों की रक्षा में अंग्रेज बन्दूकची जीवनशाह की टौरिया से ओर्छा फाटक की टेकड़ी के बीच में सतरें बाँधकर ओर्छा फाटक और सैंयर फाटक की ओर बढ़े। परकोटे की बुर्जों और कोट की दीवार के छेदों में से बन्दूकों और हलकी तोपों ने यमराज के शापों को उगला। अङ्गरेजी पल्टन बिछने लगी। पैर उखड़े। पीछे भागने को हुई। परन्तु उस क्रिया में भी उद्धार न पाकर मार्ग के पत्थरों की ओट में छिप गई। लेकिन एक दस्ता ओर्छा फाटक की ओर बढ़ आया। अङ्गरेजी तोपखाने ने भीषणतर गोलाबारी आरम्भ की। सैंयर फाटक की ओर भी एक दस्ता बढ़ा।

रानी और मोतीबाई ने दूरबीन से देखा। ओर्छा फाटक के सामने वाली टेक के पीछे लाल झण्डा उठा। ओर्छा फाटक पर का तोपखाना कुछ धीमा पड़ा।

'सरकार', मोतीबाई ने अनुनय किया, 'मुझको उस ओर जाने दीजिये। सुन्दर अकेली है। दूल्हाजू के हाथ पाँव ढीले हो गये हैं।'

*अब इस पर मैकडानैल हाई-स्कूल और बोर्डिङ्ग-हाउस बन गये हैं।

'जाओ मोती। हीरा बन कर लौटना', रानी ने कहा।

मोतीबाई चली गई। खुदाबख्श सैंयर फाटक पर था। उसने मोतीबाई को आगे नहीं बढ़ने दिया।

बोला, 'ओर्छा फाटक पर मत जाओ। यहीं मेरे साथ रहो आज मैं अपने देश, अपनी रानी का नमक अदा करूँगा। मरूँगा। मेरी लाश को ठिकाने लगा देना।'

मोतीबाई का चेहरा कुम्हलाया हुआ था परन्तु उसके सौन्दर्य की किरणें छुटकी पड़ पड़ रही थीं। आँखों में आँसू आ गये।

तोप पर पलीता डालते डालते खुदाबख्श ने चिल्लाकर कहा, 'यह वक्त आँसुओं का है?'

मोतीबाई ने बारूद की कालोंच वाले हाथों से आँसू मसल डाले। बोली, 'नहीं। अब आँसू नहीं आवेंगे।'

खुदाबख्श ने उमङ्ग के साथ कहा, 'आज मैं आपका, हमेशा के लिये, कैदी हो गया।'

मोतीबाई आँख मिला कर बोली, 'और हमेशा के लिये मैं आपकी।'

खुदाबख्श ने देखा कि रास्ते पर गोरे फाटक की ओर बढ़े चले आ रहे हैं। तोपों और बन्दूकों की बाढ़ हुई।

खुदाबख्श ने मोतीबाई को आदेश दिया, 'दाहिने हाथ की पूरी सतर तक बन्दूकें, पत्थर, कटे हुये पेड़ों के लक्कड़ इन लोगों के सिर पर पटकवाओ। दौड़ो। अङ्गरेज वहाँ से सीढ़ी लगाकर चढ़ने का उपाय कर रहे हैं।'

मोतीबाई दौड़ी। सीढ़ी लगाने का उपाय करने वाले सब के सब मारे गये—उनके ऊपर गोलियाँ, पत्थरों के बड़े बड़े ढोंके और कटे हुये पेड़ों के लक्कड़ जो वहाँ पहले से जमा थे बरसाये। शहर और किले से ढोल, ताशे और तुरही का कान फोड़ने वाला नाद हुआ। अङ्गरेजों ने अपनी पैदल पल्टन को वापिस बुलाने का बिगुल बजाया। पल्टन गिरते-पड़ते लौट पड़ी।

रोज जीवनशाह की टौरिया के पीछे घोड़े पर था ग्रौर उसके मातहत ग्रफसर बगल में।

रोज ने कहा, 'नाऊ ग्रार नैव्हर (या तो ग्रभी या कभी नहीं)।' तार से यह ग्रादेश ग्रोर्छा फाटक टेक ग्रौर जार पहाड़ी के तोपखानों को दिया गया। ग्रोर्छा फाटक टेक ने इसका जो ग्रर्थ लगाया वह लाल झंडे को ग्रौर ऊँचा करना था।

इधर रोज के चार ग्रफसर—चारों लैफ्टिनेंट—यौवन प्रमत्त—टेकड़ियों, पत्थरों ग्रौर ग्रपनी तोपों की वाढ़ों की ग्राड़ें लेते हुए सैंयर फाटक की दाहिनी बगल की टेकड़ी की दीवार के नीचे पहुंच गये। उस जगह दीवार थोड़ी देर पहले ही ग्राधी धुस्स हो गई थी। साथ ही उस जगह वाले झाँसी के सैनिक मारे गये थे। इन ग्रफसरों में से दो ने ग्रपनी ग्रपनी सेना के एक दस्ते को संकेत किया। दस्ता ग्रागे बढ़ा। इतने में तलवार लिये मोतीबाई टूट पड़ी। लैफ्टिनेंट ने पिस्तौल चलाई। खाली गई। मोतीबाई ने एक बार में ही उसको खतम कर दिया। दूसरे लैफ्टिनेंट ने तलवार के हाथ किये परन्तु मोतीबाई ने उसको भी समाप्त किया। नीचे वाले दोनों ग्रफसर एक पत्थर की ग्राड़ में छिप गये। इतने में झाँसी के दूसरे सिपाही वहाँ ग्रा गये। खुदाबख्श के तोपखाने ने ग्रागे बढ़ते हुये दस्ते को नष्ट कर दिया ग्रौर मोतीबाई के निकट वाले सिपाहियों ने उन दोनों लैफ्टिनेंटों को बन्दूक से समाप्त कर दिया। यह ग्रङ्गरेजी सेना की दूसरी हार हुई।

उत्तरी फाटकों पर जोर का हमला था परन्तु ठाकुरों, कछियों, कोरियों ग्रौर तेलियों की चतुरता तथा बहादुरी के कारण वहाँ ग्रङ्गरेज कुछ नहीं कर पा रहे थे।

इधर दक्षिणी मोर्चों पर ग्रङ्गरेजों ने तीसरा ग्राक्रमण शुरू किया।

रानी ने किले पर से देखा कि ओर्छा फाटक का तोपखाना बहुत मन्द गति से काम कर रहा है। उन्होंने रामचन्द्र देशमुख को तुरन्त भेजा; परन्तु देशमुख को वहां तक पहुँचने के लिये समय चाहिये था।

मोतीबाई खुदाबख्श के पास पहुंच गई। ओर्छा फाटक की टेक के पीछे लाल झण्डा और ऊँचा हुआ। खूब हिला और फिर छिप गया। दूल्हाजू ने केवल बारूद भर भरकर तोप चलाई—उसमें से गोले निकलते ही कैसे ?

सुन्दर उससे पश्चिम की ओर जरा हट कर ऊँची बुर्ज पर से तोप चला रही थी। उसके साथी गोलन्दाज मारे जा चुके थे। केवल उसकी तोप कुछ काम कर रही थी। उसने दूल्हाजू का व्यापार देख लिया।

सामने की टेक के पीछे से गोरी पल्टनें टिड्डी-दल की तरह उबर पड़ी और 'हुर्रा' घोष करती हुई भरोसे के साथ ओर्छा फाटक पर दौड़ीं। दूल्हाजू लोहे का एक छड़ हाथ में लेकर बुर्ज से नीचे तुरन्त उतरा। सुन्दर को समझने में एक क्षण की भी देर नहीं लगी। उसने भी तोप छोड़ दी। केवल तलवार उसके पास थी। तलवार खींचकर अपनी बुर्ज से नीचे उतरी। वहाँ से ओर्छा फाटक जरा दूर पड़ता था।

सुन्दर के नीचे उतर पाने के पहले ही दूल्हाजू फाटक के पास पहुंच चुका था। फाटक पर मोटी सांकलों और कुन्दों में मोटी झर वाले ताले पड़े हुये थे। कुञ्जियाँ किले में थीं परन्तु दूल्हाजू के हाथ में लोहे की मोटी छड़ तो थी। उसने जरा भी विलम्ब नहीं किया।

उछल कर ताले में छड़ डाली। तड़ाक से ताला टूट गया। दूसरे और तीसरे में डाली। सब टूट गये। दो सांकलों को भी तोड़ दिया और तीसरी सांकल खोल दी। फाटक केवल भिड़े रह गये। दूल्हाजू फाटकों को नहीं खोल पाया था कि नङ्गी तलवार लिये सुन्दर आ पहुंची।

'देशद्रोही, नरक के कीड़े', सुन्दर ने कड़ककर कहा, 'तू अङ्गरेजों से कुछ नहीं पावेगा।' सुन्दर दूल्हाजू पर पिल पड़ी।

उसकी तलवार का वार दूल्हाजू ने लोहे की छड़ पर झेला। तलवार झन्ना कर बीच से टूट गई ! तलवार का जो टुकड़ा सुन्दर की मुट्ठी में बचा था उसी को तान कर सुन्दर दूल्हाजू पर उछली। दूल्हाजू ने छड़ का सीधा हूला दिया। वह ठप से बायें वक्ष पर लगा। साथ ही बाहर तुमुल 'हुर्रा' घोष हुआ।

चोट की परवाह न करके सुन्दर ने फिर वार किया। दूल्हाजू पीछे हटा। परन्तु उसने सुन्दर के पेट पर छड़ अड़ा दी। उधर गोरों ने धक्के से फाटक खोल लिया। सुन्दर के मुँह से 'हर हर महादेव' निकला था कि एक गोरे की गोली ने सौन्दर्यमयी सुन्दर को अमर कर दिया। गोली उसके सिर पर पड़ी थी।

दूल्हाजू ने छड़ पृथ्वी पर टेक दी। दूल्हाजू पर भी गोरों की बन्दूकें सीधी हुई परन्तु उनके अफसर ब्रिगेडियर ने तुरन्त निवारण किया, 'आवर मैन' (अपना आदमी है)।

गोरों ने बन्दूकें नीची कर लीं। टिड्डी दल की तरह भीतर घुस पड़े।

अफसर ने कहा, 'यह रानी है ?'

दूल्हाजू ने उत्तर दिया, 'नहीं साहब महज नौकरानी।'

अफसर ने अपने साथियों से कहा, 'बट ए सोल्जर। शी विल हैव ए सोल्जर्स आनर।' (लेकिन सिपाही है। सिपाही की इज्जत उसको मिलेगी)।

स्वर्गवासिनी सुन्दर की दृढ़ मुट्ठी अभी ढीली नहीं हुई थी। तलवार का छोटा सा टुकड़ा अब भी उसकी मुट्ठी में था। दो गोरे उसके शरीर को बाहर ले गये और पत्थरों से दाब दिया। जहां उनके और नत्थेखाँ के भी अनेक सिपाही दबे हुये थे। उसके उपरांत वे लोग सब दिशाओं में, शहर में घुसने लगे।

टेक के पीछे से रोज के पास तार द्वारा नगर विजय का सम्वाद पहुँचा।

रोज ने अफसरों से कहा, 'उस आदमी को जागीर में दो गांव पक्के हुये।' दूल्हाजू के उस कृत्य का समाचार बहुत शीघ्र चारों ओर फैल गया।

फिर रोज ने तुरन्त आदेश दिया कि सैंयर फाटक को तोड़ो शहर में बढ़ो और सब बागियों का नाश करो।

खुदाबख्श के फाटक पर कहर पर कहर बरसने लगे। इसी समय राचमन्द्र देशमुख घोड़े पर आया। उसी समय एक गोली खुदाबख्श को लगी। सैंयर फाटक का तोपखाना बन्द हुआ। एक अंग्रेज दीवार पर चढ़ा। मोतीबाई ने तलवार से उसका सिर कतल कर दिया और खुदाबख्श की लाश को टांग कर नीचे उतर आई। रामचन्द्र ने मतीबाई को अपने पीछे घोड़े पर बिठलाया और लाश को सामने लाद कर किले पर चढ़ आया। उसके किले में आते ही किले का फाटक बन्द कर लिया गया। लाश को महल के पास रख कर ढक दिया गया। मोतीबाई की आँख से आँसू नहीं निकला।

रानी आ गईं।

'मोतीबाई', रानी ने कहा, 'तुम लोगों का अक्षय कर्म मैंने अपनी आँखों देखा है।'

'सरकार', मोतीबाई ने भर्राये हुये स्वर में कहा, 'काम देखिये। अपने पास किला अब भी है और आप हैं। में इनका प्रबन्ध करती हूँ।'

'महल के बिलकुल निकट ही', रानी कण्ठ को संयत करके बोलीं, 'कुंवर साहब को दफनाया जावे।'

देशमुख ने पूछा, 'सुन्दर ?'

'ओर्छा फाटक पर मारी गई', मोतीवाई ने उत्तर दिया, 'दूल्हाजू ने देश द्रोह करके फाटक खोल दिया।'

रानी ने ओंठ सटाये।

धीरे से बोलीं, 'जीवन में यही बड़ा भारी धोखा खाया।'

फिर उन्होंने जरा जोर से कहा, 'बरहामुद्दीन ने ठीक कहा था उसके साथ अन्याय हुआ। कहाँ है, कुछ जानते हो देशमुख ?'

'नहीं सरकार,' देशमुख ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

रानी ने अंगरखे की जेब में हाथ डाला।

बरहामुद्दीन का स्तीफा जेब में था। उसको उन्होंने वहीं पड़ा रहने दिया।

मोतीबाई ने महल के पास ही कबर के लिये मिट्टी खुदवानी आरम्भ करदी और बहुत शीघ्र एक गड्ढा खुदवा लिया।

रानी दूरबीन लेकर ऊपर के बुर्ज पर चढ़ गईं।

रोज नगर की बुर्ज पर बुर्ज अपने अधिकार में करता चला जा रहा था। गोरे शहर भर में फैलते जा रहे थे। झाँसी की सेना मरती-कटती जा रही थी। आगें लगाई जा रही थीं। झाँसी में हाहाकार हो रहा था और उसके साथ तुमुल 'हुर्रा' घोष। रानी ने देखा कि शहर वाले महल, नाटकशाला और महल के सामने वाले विशाल पुस्तकालय को गोरे घेरने का प्रयास कर रहे है और इन स्थानों के भीतर बन्द झाँसी के सैनिक लड़ रहे हैं। तब वे बुर्ज से नीचे उतर आईं।

एक पेड़ के नीचे पत्थर पर बैठकर सोचने लगीं, 'झाँसी का सर्वनाश होने को है। स्वराज्ज की स्थापना अभी दूर है। परन्तु कर्म करने मात्र का अधिकार है, फल से हमको क्या ?'

उठ खड़ी हुईं।

जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह, गुलामगौस, भाऊ बख्शी, गुलमुहम्मुद, भोपटकर इत्यादि सरदारों को बुलवाया। उन लोगों को अपना निश्चय सुनाया:—

'बाहर निकल कर लड़ो, गोरों को शहर से निकालो और झाँसी की रक्षा करो।'

सलाह सम्मति का न तो समय था और न मौका।

गुलमुहम्मद ने कहा, 'हुजूर को शुक्रिया। फौरन चलें। गोरों को शहर से निकालें।'

रानी ने आदेश दिया, 'गोलन्दाज अपने अपने ठियों पर काम करते रहें।'

भाऊ बख्शी ने आगे बढ़कर रानी के पैर पकड़ लिये।

प्रार्थना की, 'सरकार मुझको बाहर साथ जाने की आज्ञा दी जाय। मेरी तोप पर किसी और को कर दिया जाय।'

'अच्छा, गोलन्दाजों में से केवल तुम', रानी ने कहा, 'जल्दी करो। विलम्ब का काम नहीं है।'

बख्शी साथ हो गया।

भोपटकर की इच्छा न थी कि रानी बाहर जाकर लड़ें परन्तु वह स्तब्ध रह गया। रानी फुर्ती के साथ तैयार होकर किले के बाहर हो गईं। साथ में पठान, बुन्देलखण्डी इत्यादि पन्द्रह सौ सैनिक। पीछे भोपटकर भी गया। दक्षिण की ओर से आ-आकर गोरे महल के पश्चिम की ओर बढ़ रहे थे।

रानी झंझावात की तरह पहले दक्षिण की ओर झपटीं, जहाँ से अंग्रेजी सेना घुसी चली आ रही थी। रानी का छापा इतना प्रचण्ड था कि अंग्रेजी सेना भागी। पूर्व की ओर के मकानों की आड़ से बन्दूकें चलाने लगी। तलवारों की मार के सामने वह बिलकुल न ठहर सकी।

रानी ने चिल्लाकर कहा, 'आज प्रमाणित कर दो कि हिन्दुस्थानी सिपाही की तलवार के सामने संसार का कोई योद्धा नहीं टिक सकता।'

उनके दस्ते ने ऐसी तलवार चलाई कि गोरी पल्टन बिखर कर हट गई, परन्तु मकानों की आड़ से गोलियाँ चलाने लगी। पाँच सौ पठान दक्षिण और पूर्व दिशाओं में फैलकर फिर भी गोरों को पीछे हटाते रहे—और मरते रहे। रानी के महल और हाथीखाने के आसपास* टकसाल तक गोरी सेना फैली हुई थी और उसके लिये मकानों की आड़ थी। उसका जवाब देने के लिए रानी की सेना भी उसी प्रकार और उसी दिशा में फैली। गोरी सेना के कुछ सिपाही दबाव पड़ने के कारण

*अब यहाँ सदर अस्पताल है। अस्पताल के उत्तर में टकसाल मुहल्ला।

पश्चिम दिशा की ओर खण्डेराव फाटक की ओर बढ़े। वहाँ उनको अटकना पड़ा।

रानी उसी ओर बढ़ रही थीं कि उन्होंने देखा एक सिपाही किसी मकान में से निकल पड़ा और अकेले उन कई गोरों से भिड़ गया। उसने ऐसी तलवार चलाई कि कई गोरे हताहत हुये। कुछ और गोरे आ गये। वह सिपाही घिर गया। तो भी वह अकेला उनको पछेलता गया। रानी ने अपने घोड़े को तेज किया। पीछे-पीछे उनके सिपाही दौड़े। रानी के पहुंचते पहुँचते वह सिपाही और गोरे पचकुइयों से नीचे की तरफ पहुंच गये। उस अकेले सिपाही ने फिर कई गोरों को तलवार के घाट उतारा परन्तु यकायक उस पर कई वार पड़े और गिर गया। इतने में रानी सैनिकों सहित आ पहुँचीं। गोरे भाग गये।

रानी ने पास जाकर देखा—बरहामुद्दीन था। उसके मरने में कुछ क्षरण बाकी थे। बेचैन था। रानी घोड़े पर से उतरीं। बरहाम के सिर पर हाथ फेरा। बरहाम ने पहिचान लिया। उसने आँखें फाड़ी। पूरा बल लगाया। लेकिन कठिनाई से बोल पाया, 'हुजूर, माफी।'

मुश्किल से रानी के मुंह से निकला, 'तुम सच्चे सिपाही हो। माफ किया।'

फिर ज़ोर लगाकर बरहाम ने कहा, 'सरकार, जान नहीं निकलती। मेरी चि···ट्ठी।'

रानी ने जेब से उसके इस्तीफे का कागज निकाला। 'यह लो', रानी बोली।

'नहीं, स··र··का··र', बड़ी मुश्किल से बरहाम ने कहा, 'फाड़ डा···लि···ये··तब···जान नि · क··ले···गी।'

रानी ने तुरन्त चिट्ठी की चिन्दी चिन्दी कर डाली।

बरहामुद्दीन के मुखमण्डल पर घोर पीड़ा में आनन्द की छाप लग गई। उसके अन्तिम शब्द थे : 'ज···ल···बा··अल्ला ··ह।'

भाऊ ने आकाश की ओर दृष्टि करके कहा,

'आहा कैसा मीठा मरण है यह ! भगवान् मेरी भी ऐसी ही सद्गति हो।'

बरहामुद्दीन का प्राणान्त हो गया।

रानी ने हुकुम दिया। इसी स्थान पर इसकी कबर बनाई जाय।*

पास के रहने वालों को कबर का प्रबन्ध देकर रानी और उनके सैनिक गोरों पर झपटे। वे भागे। अब पश्चिम से पूर्व होती हुई दक्षिण तक रानी के सैनिकों की पाँत-सी बन गई। पीठ पर किला था।

यकायक वृद्ध नाना भोपटकर रानी के सामने आ गया।

बोला, 'पहले इस बूढ़े ब्राह्मण का वध करिये तब आप गोली खाइये।'

रानी—'नाना साहब, यह क्या ?'

नाना—'आप देखती नहीं हैं, गोरे मकानों की आड़ से गोली चला रहे हैं और आपके सैनिक हताहत हो रहे हैं। आप पर एक गोली पड़ी कि समग्र झाँसी रसातल को गई। अभी अपने हाथ में किला है। लड़ाई जारी रखी जा सकती है। लौटिये या मेरा वध करिये।'

रानी की समझ में आ गया।

गुलमुहम्मद पास आ गया। उसने भी कहा, 'सरकार, बुड्ढा ठीक बोलता है। अन्दर चलें।'

उत्तरी फाटक से रानी किले में भाऊ और नाना भोपटकर के साथ चली गईं। गुलमुहम्मद के साथ तीन सौ पठान ही भीतर जा सके। बाकी सब बाहर लड़ाई में मारे गये। बुन्देलखण्डी सैनिक लगभग सब कट मरे। किले के फाटक बन्द कर लिये गये।

---

*बरहामुद्दीन की कबर उसी जगह बा० जादोनाथ चौधरी के बाग में, और कबरों के पास है।

[७६]

गोरों ने शहर के सब फाटकों पर अपना प्रबन्ध कर लिया, उनको अपने उन निश्शस्त्र पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों के खून का बदला लेना था, जिनको बख्शिशअली इत्यादि बहुत थोड़े-से हिन्दुस्थानियों ने मारा था। पांच वर्ष की आयु से अस्सी वर्ष तक के जितने पुरुष मिले उनका कतल शुरू कर दिया। हलवाईपुरा में आग लगा दी। कुछ स्त्रियाँ अपने सतीत्व के नष्ट होने के भय से कुओं में गिरकर मर गईं। रोज का आदेश था कि स्त्रियों को न मारा जाय, उनको जानबूझ कर गोरों ने नहीं मारा। लेकिन अपने पति की रक्षा के लिये जो स्त्रियाँ उनकी आड़ बनने के लिये आ गईं, वे गोलियों से मरीं। झाँसी के कवि और गायक भी लड़े थे, वे मारे गये या घायल हुये। गवैयों में केवल मुगलखाँ बचा और नर्तकियों में दुर्गा और एक और।

गोरों ने घर-घर में घुसना और सोना-चांदी इत्यादि सामान लूटना शुरू किया।

शहर वाले राज महल के चारों ओर अंग्रेजी सेना का सबसे अधिक उपद्रव हुआ। नाटकशाला के सामने दक्षिण की ओर रानी का अस्तबल था। उस अस्तबल को रानी के बुन्देलखण्डी सिपाहियों ने किले की लड़ाई में परिवर्तित कर दिया। थे लगभग कुल पचास ही। परन्तु जब तक एक भी जिन्दा रहा अंग्रेजों ने अस्तबल पर कब्जा नहीं कर पाया। एक-एक दीवार, एक-एक कोठरी, एक-एक ईंट पर कब्जा करने में अंग्रेजों को न जाने कितने सिपाही बलिदान करने पड़े।

इसके बाद महल की एक-एक इञ्च भूमि के लिये युद्ध हुआ। जब महल के सब सिपाही खतम हो गये, तब उसपर भी कब्जा हो गया। सब सामान लूटा। एक बक्स में से यूनियन जैक झण्डा मिला, जिसे लार्ड विलियम बेंटिक ने रामचन्द्रराव को दिया था। महल के सिर पर वह झण्डा लगा दिया गया। महल के केवल उस भाग को छोड़कर, जिस पर यूनियन जैक फहरा रहा था, बाकी महल में आग लगा दी गई। नाटक-

शाला भी न बची। सुन्दर पर्दे, जिनकी सहायता से शकुन्तला, रत्नावली और हरिश्चन्द्र नाटक खेले जाते थे, खाक कर दिये गये।

और इसके बाद जो कुछ हुआ उससे उन बर्बरों की पाशविकता इतिहास में अमिट अक्षरों में लिख ली गई—महल के सामने वाले विशाल पुस्तकालय में आग लगा दी गई ! थोड़ी ही देर में कक्षाओं का वह भण्डार अग्नि की गगनभेदी लौ फेकने लगा। कभी रोम, सिकन्दरिया और राजगृह में भी ऐसा हुआ था परन्तु वह बर्बर युग था ! और यह विज्ञान का सभ्य युग !!

रानी ने किले पर से देखा। उनके हाथ में दूरबीन न होती तो भी दिखलाई पड़ सकता था। पर दूरबीन ने सब कुछ स्पष्ट दृष्टिगोचर करा दिया।

अस्तबल मिटा—फिर बन सकता था। राजमहल जला—उसके बनाने वाले फिर उत्पन्न हो जायेंगे। लेकिन पुस्तकालय ? वेद, शास्त्र, पुराण, काव्य, इतिहास इत्यादि संस्कृत के और अरबी-फारसी के अनेक हस्तलिखित ग्रन्थ जिनकी प्रतिलिपि करने के लिये दूर दूर के विद्याव्यसनी आते थे, फिर कौन पैदा करेगा ? रानी का माथा घूमने लगा। जिसको किसी कष्ट, किसी समस्या, किसी विपत्ति ने कभी नहीं हिला पाया था, वह जलते हुये पुस्कालय को देखकर मूर्छित होने को हुई। मुन्दर साथ थी। उसने सँभाल लिया। रानी ने प्रबल प्रयत्न करके मूर्छा को दूर किया। पानी मँगवाया, पिया। इतने में हलवाईपुरा और कोरियों के मुहल्ला की आगों की लपटें दिखलाई दीं। क्रन्दन, पुकार और चीत्कार की समग्र ध्वनियाँ यकायक सुनाई पड़ीं। जन-वध, कतले-आम, लोक-सँहार का प्रत्यक्ष प्रमाण। रानी का हृदय धसने लगा।

'मुन्दर, मुन्दर, मेरी प्यारी झाँसी की यह कुगति, यह दुर्गति ! और मेरे जीते जी मेरी आँखों के सामने !' रानी ने भरे गले से कहा। गला फट सा गया। मुन्दर उनको खींचकर नीचे ले आई।

महल की चौखट पर बैठकर वह रोई। लक्ष्मीबाई रोई ! वह जिसकी आँखों ने आंसुओं से कभी परिचय भी न किया था ! वह जिसका वक्षस्थल वज्र का और हाथ फौलाद के थे ! वह जिसके कोश में निराशा का शब्द न था ! वह जो भारतीय नारीत्व का गौरव और शान थी ! मानो उस दिन हिन्दुओं की दुर्गा रोई।

मुश्किल से आँसुओं की अविरल धारा टूटी थी कि रामचन्द्र देशमुख ने कर्तय वश समाचार दिया, 'सरकार कुंवर गुलाम गौसखाँ दुश्मन की गोली से मारे गये।'

रानी सिंहनी की तरह उछल कर खड़ी हो गईं। अंगरखे के छोर से आँसू पोंछ डाले। और गला साफ किया।

आज्ञा दी, 'भाऊ को उनकी जगह भेजो और लाश को महल के पास।'

आज्ञा पालन के लिये देशमुख चला गया। रानी। मुन्दर को साथ लेकर दक्षिणी बुर्ज के नीचे, जहाँ खुदाबख्श के शव के लिये कबर तैयार हो चुकी थी, आईं। मोतीबाई वहाँ थी।

पश्चिमी बुर्ज से भाऊ बख्शी अङ्गरेजी शिविर पर धड़ाधड़ गोलाबारी कर रहा था। केन्द्रीय बुर्ज से रघुनाथसिंह। दक्षिणी बुर्ज शान्त थी।

'मोतीबाई', रानी ने कहा, 'मैं दफनाने का प्रबन्ध करती हूं, तुम तब तक इस बुर्ज के तोपखाने को जगा दो।'

खुदाबख्श के शव के मोह में मोतीबाई जरा ठमठमाई।

रानी बोलीं, 'अभी विलम्ब है कुंवर गुलाम गौसखाँ का भी शव यहीं आ रहा है।'

विस्फारित लोचन मोतीबाई ने विस्मय के साथ कहा, 'क्या उस्ताद मारे गये ?'

'हाँ मोती', रानी ने उत्तर दिया। मोतीबाई तोप पर चली गई। पहली बाढ़ दागी थी कि उस पर नजदीक से गोलियों की बौछार हुई। अङ्गरेज किले के सदर फाटक के पास आ गये थे और उनको पास से

निशाना लेने का सुअवसर था। बुर्जों की मुड़ेरें उस दिन युद्ध में टूट गई थीं और उनकी मरम्मत न हो पाई थी। अन्य गोलियाँ तो मोतीबाई के आसपास से निकल गईं परन्तु एक ने कन्धा नीचे फोड़ दिया। हृदय उसका बच गया, मृत्यु अवश्यम्भावी थी।

उधर से गुलामगौस की लाश आई इधर से एक सैनिक मोतीबाई को उठा लाया। उसको पानी पिलाया गया। रुधिर बहुतायत से जारी था परन्तु वह अचेत न थी।

मुन्दर ने रानी से दक्षिण बुर्ज के तोपखाने को सँभालने की अनुमति चाही।

रानी ने दृढ़तापूर्वक इनकार किया, 'नहीं। यहीं ठहर। तुझको अब सहज ही नहीं खोऊँगी।'

मोतीबाई का सिर रानी ने गोद में रख लिया।

मोतीबाई की आंखों में आंसू भर आये। बोली, 'इस गोदी में सिर रक्खे हुए मरना किसी और के भाग्य में नहीं था, बाईसाहब।'

रानी ने सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, 'मेरी मोती तू आज हीरा हुई।'

'सरकार', मोतीबाई ने व्याकुल स्वर में कहा, 'मैं कुछ भी हूं परन्तु शुद्ध हूं।'

'नहीं तू शुद्ध ही नहीं', रानी बोलीं, 'तू पवित्र है। देख हीरा, एक दिन सबको मरना है, परन्तु सत्कार्य में प्राण देना, भगवान का ध्यान करते करते मरना, यह जन्म भर की अच्छी कमाई से ही प्राप्त होता है।'

मोतीबाई ने आंख मीची। उसका चेहरा पीला पड़ गया।

रानी ने कहा, 'आत्मा अमर है। शरीर का चाहे जो कुछ हो, वही एक प्रकाश शेष रहता है।'

मोतीबाई अचेत हो गई।

रानी ने दो कबरें और तैयार करने के लिये आज्ञा दी। कबरें तुरन्त तैयार हो गईं।

रानी की गोदी मोतीबाई के खून से तर हो गई। मोतीबाई का पीला मुर्झाया चेहरा एकदम प्रदीप्त हुआ। आँखें अधमुदी हुईं। होठ फड़के। उसके मुंह से निकला—'रानी···उजाला···ला···' और वह मुर्झाया हुआ फूल अनन्त विकास पाकर बिखर गया।

मुन्दर ने कहा, 'सरकार, इनको और कुँवर खुदाबख्श को एक ही कबर में रक्खा जावे।'

रानी बोलीं 'ऐसा नहीं होता और फिर यह कुमारी थी।'

तीनों को अलग-अलग कबरों में परन्तु पास-पास दफना दिया गया। अन्त्येष्टि क्रिया गुलमुहम्मद ने की। रघुनाथसिंह ने उन तीनों वीरों को तोप की सलामी दी।

सन्ध्या होने को आ रही थी। इसलिये जल्दी जल्दी में चबूतरा इन तीनों का पक्का और एक ही बाँध दिया गया। चबूतरे के ऊपर निशान इन तीनों के अलग-अलग बना दिये गये।*

इसके उपरान्त रानी ने नहाया-धोया। कपड़े बदले, वेश वही पुरुष सैनिक का।

महल के नीचे के खण्ड में मुख्य-मुख्य लोगों को इकट्ठा किया।

बोलीं, 'आज तक आप लोगों ने अप्रतिम वीरता से झाँसी की रक्षा की। प्राणों की होड़ लगा दी। परन्तु अब चिन्ह अच्छे नहीं देख पड़ते हैं। हमारे लगभग सभी सूरमा, दलपति और गोलन्दाज काम आ गये। दीवारों और फाटकों के रक्षक वीर मारे गये। किले की चार सहस्र सेना में से उतने सौ भी नहीं बचे हैं। अङ्गरेजों ने किला घेर लिया है। वे एकाध दिन में ही भीतर आ जावेंगे। आप लोगों में से जो लड़ते-लड़ते

---

*यह चबूतरा महल के दक्षिणी कोने पर अब भी स्थित है। उसकी जियारत होती है और चादरें चढ़ती हैं—लेकिन साल भर में केवल शिवरात्रि के दिन जब किले का यह भाग हिन्दुस्थानियों को सुलभ हो जाता है।

बचेंगे उनको कैद और फाँसी होगी। मैं पकड़ी तो नहीं जा सकती परन्तु मेरे शव को फिरंगी स्पर्श करेंगे। इतने से ही मेरे पुरखों का, मेरे विख्यात ससुर का अपमान हो जायगा। अब शिवराव भाऊ की बहू के लिये केवल एक साधन शेष है। बारूद की कोठी में सैकड़ों मन बारूद है। मैं वहाँ जाती हूँ और पिस्तौल के धड़ाके के साथ अपने पुरखों में मिली जाती हूँ। किले से बाहर जाने के लिये कई गुप्त मार्ग हैं। आप लोग उनसे निकल जायें। अभी संध्या होने में कुछ देर है। रात का काफी अँधेरा आप लोगों को मिल जायगा।'

भाऊ बख्शी थर्राते हुये कण्ठ से बोला, 'मैं भी उसी बारूद के साथ, सरकार की सेवा के लिये यात्रा करूँगा।'

नाना भोपटकर ने तुरन्त कहा, 'आप आत्मघात करने जा रही हैं। यही न? कृष्ण का पूरा गीता जिसको कण्ठाग्र याद है, और जो गीता के अठारहवें अध्याय को अपने जीवन में बर्तती चली आई है, और जो प्रत्येक परिस्थिति में स्वराज्य की स्थापना के यज्ञ की वेदी पर संकल्प कर चुकी है, वह आत्मघात करेगी! अङ्गरेजों ने हमारे पुस्तकालय को भस्म करके जो आघात हमारे कृष्ण को नहीं पहुँचा पाया है वह आपका आत्मघात पहुंचावेगा। करिये कृष्ण का, गीता का अपमान। आप रानी हैं। आपकी आज्ञा का पालन तो सबको करना ही है। परन्तु आपके उपरान्त देश की जनता आपके लिये क्या कहेगी—जिसकी रक्षा के लिये आपने बीड़ा उठाया था?'

रानी ने सिर नीचा कर लिया।

वृद्ध भोपटकर कहता गया, 'आप राजमाता हैं। आपके नन्हा-सा दामोदरराव पुत्र है। वह आपके पुरखों का प्रतीक, झाँसी की आशा है। कालपी में अभी पेशवा की सेना मौजूद है। दिल्ली, लखनऊ, कानपूर इत्यादि के पतन हो जाने पर भी जनता का पतन नहीं हुआ है। विन्ध्यखण्ड, महाराष्ट्र और अवध अक्षय हैं। किले के भीतर वाले और किले से बाहर दूर दूर वाले पठान देश के लिये कट मरने को कटिबद्ध हैं।

आप किले के बाहर होइये अङ्गरेजों की सेना को चीरतीं हुईं निकल जाइये और कालपी पहुँच कर पुनश्च हरिओ३म् कीजिये।'

रानी सोचने लगीं। भोपटकर ने मुन्दर को दामोदरराव को लिवा लाने के लिये इशारा किया। वह उसको लेने के लिये चली गई।

रानी की आंखों के सामने एक दृश्य घूम गयाः—

कुरुक्षेत्र का मैदान है। कौरव पाण्डवों की सेनायें एक दूसरे के सामने डटी हुई हैं। अर्जुन ने कृष्ण से कहा, भगवन् मेरा साहस डिग गया है। मेरा सामर्थ्य हिल गया है। मैं असमर्थ हूं। लड़ना नहीं चाहता। भगवान कृष्ण ने उद्‌बोधन किया। अर्जुन ने फिर गाँडीव धनुष हाथ में ले लिया।

आँखों के भीतर ही रानी को एक चमत्कार की अभिव्यक्ति हुई।

इतने में दामोदरराव वहाँ आ गया। दौड़कर रानी की गोद में बैठ गया।

गुलमुहम्मद ने कहा, 'सरकार अमारा सारा कौम मुलक वास्ते कट मरेगा।'

रानी उठीं। उन्होंने नाना भोपटकर के पैर छुये। कहा, 'एक दिन मैंने आपकी राजनीति पर आक्षेप किया था। मुझको क्षमा करना नाना साहब।' फिर एक क्षण बाद बोलीं, 'भाइयो, मेरी इस क्षणिक दुर्बलता को भूल जाना। मैं लड़ूंगी। आज सबके सामने प्रण करती हूँ कि यदि समस्त अङ्गरेजों का मुझको अकेले सामना करना पड़े, तो करूँगी।'

उस अत्यन्त हीन परिस्थिति में भी किले के भीतर वाले नर-नारियों में उमङ्ग का उजाला भर गया।

रानी ने कहा, 'थोड़ा सा खा-पी लो। जो लोग शस्त्र ग्रहण नहीं कर सकते वे गुप्त मार्ग से निकल जायें। शेष मेरे साथ उत्तरी द्वार से भंडेरी फाटक होते हुये कालपी की ओर चलें। भंडेरी फाटक का प्रबन्ध कौन करेगा ?'

भाऊ बख्शी ने जिम्मा लिया। उसका मकान कोरियों के मुहल्ले के निकट था। और वह उन लोगों को अच्छी तरह जानता था।* बख्शी गुप्त मार्ग से किले के बाहर चला गया। रानी ने अपने पुराने सेवक सेविकाओं को पुरस्कार देकर बिदा किया। वे पैर छू-छूकर, रो-रोकर वहां से चले गये। नाना भोपटकर भी चला गया।

जवाहरसिंह को रानी ने आज्ञा दी, 'आप अपने इलाके में जाकर सैन्य संग्रह करिये और कालपी आ जाइये।'

जवाहरसिंह ने प्रार्थना की, 'मैं आपको सुरक्षित स्थान में पहुंचाकर लौटूंगा अन्यथा नहीं। केवल इस आज्ञा का जीवन में उल्लंघन किया है। इस अपराध के लिये क्षमा चाहता हूं।'

रानी ने स्वीकार किया।

थोड़े समय उपरान्त रानी और मुन्दर महादेव के मन्दिर में गईं। वन्दना की। ध्यान किया।

समाप्ति पर रानी ने मुन्दर से कहा, 'वह पलाश अब भी फूल रहा है। सिन्दूरोत्सव के दिन की मालायें अब भी उससे लिपटी होंगी।'

मुन्दर बोली, 'एक बार उसको भेंट लीजिये बाई साहब।'

'अवश्य', रानी ने कहा, 'वह हर साल फूलेगा और झाँसी हरसाल सिन्दूरोत्सव मनायेगी। झाँसी का सिन्दूर अमर हो।'

उन दोनों ने उस पलाश से भेंट की।

मुन्दर बोली, 'फूल की मालायें सूख गई हैं।'

रानी ने कहा, 'उनकी आत्मा तो हरी-भरी है। ये उनके चढ़ाये फूल हैं जो इस युद्ध में बलिदान हो गई हैं।'

इसके बाद वे दोनों महल पर आ गईं।

---

*बख्शी की हवेली के नाम से वह मकान अब भी प्रसिद्ध है। श्री सेठ जिनदास कोचर के अधिकार में है। एमेरिकन मिशन की कुछ स्त्रियाँ उसमें किराये से रहती थीं।

मोरोपन्त ताम्बे ने बहुत सा द्रव्य और जवाहर इकट्ठे किये। किले के उत्तरी भाग में नीचे की ओर द्वार की बगल में एक हवेली, हाथीखाना और घुड़सार थी। लड़ाई के दिनों में जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह इसी हवेली में रहते। मोरोपन्त ने एक हाथी पर जवाहर और अशर्फियाँ लादीं। और लोगों ने कमर में असर्फियाँ बाँधी। रानी और मुन्दर पुरुष वेश में घोड़ों पर सवार हुईं।

उस समय रात बहुत नहीं गई थी। पूर्व दिशा में बड़ा तारा ऊपर चढ़ आया था। घना अन्धेरा केवल शहर की आगों से फट-फट जा रहा था। अन्धेरे के ऊपर बड़े छोटे तारे दमदमा रहे थे। नीचे शहर के अंधेरे पर उन आगों के बड़े बड़े लाल-पीले छपके से पड़ पड़ जाते थे।

रानी ने एक चादर से दामोदरराव को पीठ पर कसा और अपने तेजस्वी सफेद घोड़े को किले के उत्तरी भाग से निकाल कर आगे किया। पीछे-पीछे पठान, मुन्दर, जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह इत्यादि। द्वार से निकलते ही उन्होंने किले को नमस्कार किया, झाँसी को नमस्कार किया। कण्ठ में कुछ अवरोध सा अवगत किया। इस भय से कि कहीं आँख में आँसू न आ जाय उन्होंने उत्तर दिशा की ओर मुंह मोड़ा और किले के उतार के नीचे आ गईं। किला बिल्कुल सूना छोड़ा।

मोरोपन्त का हाथी बीच में था। सवार अधिक न थे। उनकी रक्षा के हेतु बाकी सैनिक पैदल थे। नङ्गी तलवारें लिये हुये।

यह टोली टकसाल के पश्चिम वाले मार्ग से भांडेरी फाटक की ओर अग्रसर हुई। जैसे ही कोतवाली की बराबरी पर आई अंगरेजी सेना से भिड़ा-भिड़ी हो गई। रानी 'हर हर महादेव' उच्चार करती हुई उनको चीरती-फाड़ती मुन्दर सहित निकल गईं। पठान शत्रुओं से बेतरह लड़े। बहुत से मारे गये बाकी आगे बढ़े।

जगह-जगह जलते हुये मकानों से उजाला हो रहा था। रानी और अनेक संगी द्रुत गति से भाँडेरी फाटक के निकट पहुंच गये। वहाँ बख्शी कोरियों को लिये हुये अंगरेजी फौज की एक टुकड़ी को तलवार के युद्ध

में उलझाये हुये था। इधर से रानी की टुकड़ी पहुँची। जलते हुये मकानों के प्रकाश में थोड़ी देर के लिये विकट युद्ध हुआ। बख्शी ने फाटक खोल दिया और फिर अपने कोरी सैनिकों को लेकर अङ्गरेजी टुकड़ी पर टूट पड़ा। जान पड़ता था कि उसको जीवन का मोह नहीं। वैसे ही निर्मोही पठान थे। बख्शी फाटक की बगल में मारा गया। उसने मरने के पहले रानी को देख लिया था। मरने के पहले उसने 'हर हर महादेव' और 'झाँसी की रानी की जय' का घोष किया था। उसके शरीर पात को रानी ने देखा, परन्तु इतना समय भी न था कि मुंह से 'धन्य' भी कह पातीं।

थोड़े से लोगों के साथ रानी बाहर हो गईं। मरने से बचे हुये अंग्रेज सैनिक भाग गये। कोरियों ने भांडेरी फाटक फिर बन्द कर लिया* और भाऊ बख्शी को एक जलते हुये मकान के अङ्गारों में डालकर उस की अन्त्येष्टि करदी।

रानी और उसके साथियों को कोट के बाहर की भूमि का राई रत्ती पता था। अन्धेरे में वह सहज ही बढ़ती चली गईं। बातचीत बिल्कुल धीरे धीरे होती थी। अञ्जनी की टोरिया के पास ओर्छे की सेना का पहरा था और एक अंग्रेजी छावनी का। यहाँ रोक टोक हुई लड़ाई भी। यहाँ से रानी के साथ केवल दस बारह सवार रह गये और मुन्दर।

आगे निर्गम मार्ग। अगाध अन्धेरा। झींगुर झंकार रहे थे। उनके ऊपर घोड़ों की टापों की आवाज हो रही थी। सब ओर सन्नाटा छाया हुआ था। पीछे झाँसी में आगें जल रही थीं और आवाजें आ रही थीं। आगे अन्धकार में जङ्गल और गढ़मऊ का पहाड़ लिपटे हुये, दबे हुये से दिखलाई पड़ रहे थे। चिड़ियाँ पेड़ों पर से भड़भड़ा कर उठतीं और घोड़ों को चौंका देतीं। घोड़े जल्दी चलाये जाने के कारण ठोकर ले ले पड़ते थे। आगे का मार्ग अन्धकार पूर्ण और भविष्य तिमिराच्छन्न। ज्यों त्यों

*यह फाटक ७५ वर्ष तक ज्यों का त्यों बन्द रहा। १९३३ के जाड़ों में खोला गया।

रानी लक्ष्मीबाई अँग्रेजी सेना में से मार्ग बना कर जवाहरसिंह, गुल मुहम्मद आदि
चुने हुये सरदारों के साथ झाँसी छोड़ रही हैं।

करके आरी नामक ग्राम के पास से यह टोली आगे बढ़ गई। पहूज नदी मिली। लोगों ने चुल्लुओं से पानी पिया और फिर आगे बढ़े। कभी धीमी गति से कभी तेजी के साथ। जब दस बारह मील निकल आये तब ये लोग कुछ क्षण के लिये ठहरे।

रानी ने जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह से कहा, 'अब आप लोग लौट जाओ और सेना एकत्र करके मुझे कालपी में आकर मिलो।'

रघुनाथसिंह ने तुरन्त कहा, 'यह कार्य दीवान जवाहरसिंह अच्छा कर सकते हैं। मैं तो साथ चलूंगा।'

रानी मान गयीं। जवाहरसिंह ने उनके पैर छुये और कटीली की ओर चला गया।

रानी की टोली आगे बढ़ी। इसमें गुलमुहम्मद और उसके कुछ पठान भी थे।

जनरल रोज को रानी के निकल जाने का पता बहुत शीघ्र लग गया। उसने लैफ्टिनेंट बोकर नामक अफसर को कुछ गोरों और निजाम हैदराबाद के एक दस्ते के साथ रानी का पीछा करने के लिये भेजा।

मोरोपन्त भांड़ेरी फाटक से निकल कर अञ्जनी की टोरिया तक आया, परन्तु जैसे ही यहां लड़ाई छिड़ी उसने समझ लिया कि हाथी महान संकट का कारण होगा। उसने दतिया की दिशा में हाथी को मोड़ दिया और जितनी तेजी सम्भव थी उतनी तेजी के साथ भागा। कुछ अङ्गरेज सवारों ने पीछा किया। उसकी जांघ में किसी घुड़सवार की तलवार का घाव भी लगा, परन्तु वह निकल गया और सवेरे दतिया में पहुंच गया। एक तम्बोली के यहां ठहरा। परन्तु छिपाये छिप नहीं सकता था। राज्याधिकारियों को मालूम हो गया। राज्य ने हीरे-जवाहर सब जब्त कर लिये और मोरोपन्त को पकड़कर तुरन्त झांसी भेज दिया।

रोज ने दिन के दो बजे जलते हुए महल और भस्मीभूत पुस्तकालय के बीचों बीच मोरोपन्त को फांसी दे दी।

[७७]

जैसे ही झलकारी को मालूम हुआ कि रानी भांडेरी फाटक से बाहर निकल गयीं, उसने चैन की सांस ली। घर के एक कोने में थोड़ी देर पड़ी रही। पूरन बाहर से आया।

बोला, 'अब इतै सें भगने पर है।'

झलकारी—'तुम चले जाग्रो। मैं घरै हों। गोरा लुगाइयन सें नईं बोल हैं।'

पूरन—'मैं कहत इतैं से चल। जिद्द जिन कर। तैं मारी जैय ग्रौर मैं मारो जैग्रों।'

झलकारी—'देखो मोसें हट न करौ, कऊँ जा दुकौ। मैं घर न छोड़ हों, न छोड़ हों, बालाजी की सौगन्ध।'

पूरन उसके हठीले स्वभाव को जानता था। वह एक लोटा पानी लेकर एक खण्डहल में जा छिपा।

थोड़ी देर में झलकारी को ग्रपने दरवाजे के सामने घोड़े की टाप का शब्द सुनाई पड़ा। झांक कर देखा। बिना सवार का बढ़िया घोड़ा जीन लगाम समेत। जीन से जान पड़ता था कि झाँसी की सेना का है। झलकारी समझ गई कि सवार मारा गया ग्रौर घोड़ा भाग खड़ा हुग्रा।

झलकारी ने किवाड़ खोले। घोड़े को पकड़ा। ग्रौर घर के पास वाले पेड़ से बाँध दिया। फिर भीतर चली गई।

उसने एक योजना सोची ग्रौर उसको कार्यान्वित करने का निश्चय किया। जब उसने निश्चय किया तब वह सीधी तनकर खड़ी हो गई थी।

झलकारी ने ग्रपना श्रृङ्गार किया। बढ़िया से बढ़िया कपड़े पहिने—ठीक उसी तरह जैसे लक्ष्मीबाई करती थीं। गले के लिए हार न था, परन्तु काँच की गुरियों का कण्ठा था। उसको गले में डाल लिया। प्रातःकाल की प्रतीक्षा करने लगी।

प्रातःकाल के पहले ही हाथ मुंह धोकर तैयार हो गई।

पौ फटते ही घोड़े पर बैठी और बड़ी ऐंठ के साथ अङ्गरेजी छावनी की ओर चल दी। साथ में कोई हथियार न लिया। चोली में केवल एक छुरी रख ली।

थोड़ी ही दूर पर गोरों का पहरा मिला। टोकी गई।

झलकारी को अपने भीतर भाषा और शब्दों की कमी पहले पहल जान पड़ी। परन्तु वह जानती थी कि गोरों के साथ चाहे जैसा भी बोलने में कोई हानि न होगी।

झलकारी ने टोकने के उत्तर में कहा, 'हम तुम्हारे जंडेल के पास जाउता हैं।'

यदि कोई हिन्दुस्थानी इस भाषा को सुनता तो उसको हँसी बिना आये न रहती।

एक गोरा हिन्दी के कुछ शब्द जानता था। बोला, 'कौन ?

'रानी—झाँसी की रानी, लक्ष्मीबाई', झलकारी ने बड़ी हेकड़ी के साथ जवाब दिया।

गोरों ने उसको घेर लिया।

उन लोगों ने आपस में तुरन्त सलाह की।

'जनरल रोज के पास अविलम्ब ले चलना चाहिये।'

उसको घेरकर गोरे अपनी छावनी की ओर बढ़े।

शहर भर के गोरों में हल्ला फैल गया कि झाँसी की रानी पकड़ ली गई। गोरे सिपाही खुशी में पागल हो गये। उनसे बढ़कर पागल झलकारी थी।

उसको विश्वास था कि मेरी जांच-पड़ताल और हत्या में जब तक अङ्गरेज उलझेंगे तब तक रानी को इतना समय मिल जावेगा कि काफी दूर निकल जावेंगी और बच जावेंगी।

झलकारी रोज के सामने पहुँचाई गई। वह घोड़े से नहीं उतरी। रानियों की सी शान, वैसा ही अभिमान, वही हेकड़ी। रोज भी कुछ देर के लिये धोखे में आ गया।

शकल सूरत वैसी ही सुन्दर। केवल रङ्ग वह नहीं था।

रोज ने स्टुअर्ट से कहा, 'हाउ हैण्डसम, दो डार्क एण्ड टैरिबिल (कितनी सुन्दर है, यद्यपि श्यामल और भयानक)

स्टुअर्ट बोला, 'लैफ्टिनेंट बोकर को सदल व्यर्थ ही भेजा।'

परन्तु छावनी में राव दूल्हाजू था। वह खबर पाकर तुरन्त एक आड़ में आया। उसने बारीकी के साथ देखा।

रोज के पास आकर दूल्हाजू बोला, 'यह रानी नहीं है जनरल साहब। झलकारी कोरिन है। रानी इस प्रकार सामने नहीं आ सकती।'

झलकारी ने दूल्हाजू को पहचान लिया। उसको क्रोध आ गया और वह अपना अभिनय नितान्त भूल गई।

क्रुद्ध स्वर में बोली, 'अरे पापी, ठाकुर होकै तैनें जौ का करौ।'

दूल्हाजू जिमीन में गढ़ सा गया।

रोज को झलकारी की वास्तविकता समझाई गई।

रोज के मुंह से निकला, 'यह औरत पागल हो गई है।'

रोज ने झलकारी को घोड़े पर से उतरवाया।

रोज—'तुम रानी नहीं हो झलकारी कोरिन हो। तुमको गोली मारी जायगी।'

झलकारी ने निर्भय होकर कहा, 'मार दै, मैं का मरवे खों डरात हों ? जैसे इत्ते सिपाही मरे तैसें एक मैं सई।'

रोज ने झलकारी के पागलपने का कारण तलाश किया।

मालूम होने पर दङ्ग रह गया।

स्टुअर्ट बोला, 'शी इज मैड (वह पागल है)।'

रोज ने सिर हिलाकर कहा, 'नो स्टुग्रर्ट, इफ वन परसेंट ग्राव इण्डियन वीमन बिकम सो मैड एज दिस गर्ल इज वी विल हैव टु लीव ग्राल दैट वी हैव इन दिस कण्ट्री।' (न स्टुग्रर्ट, यदि भारतीय स्त्रियों में एक प्रतिशत भी ऐसी पागल हो जायें जैसी यह स्त्री है तो हमको हिन्दुस्थान में अपना सब कुछ छोड़कर चला जाना पड़ेगा।)

स्टुग्रर्ट की समझ में न ग्राया।

रोज ने समझाया, 'यह स्त्री हम लोगों को अपने धोखे में उलझा कर रानी के भाग निकलने का समय पाने के लिये यह प्रपञ्च रचकर ग्राई है, परन्तु बोकर पीछे पीछे गया है। ग्राशा है कि वह इस धोखे से बच गया होगा।'

जनरल रोज ने झलकारी को तङ्ग नहीं किया। केवल कैद में डाल दिया ग्रौर एक सप्ताह उपरांत छोड़ दिया।

[७८]

सवेरा होते होते रानी भांडेर के नीचे बहने वाली पहूज नदी के किनारे पहुँच गईं। तुरन्त नहाया धोया, दामोदरराव को कलेवा करवाया। उनके साथियों ने भी थोड़ा-सा जलपान किया। रानी ने केवल कुछ अञ्जली पानी पिया। झाँसी की दुर्दशा और अपने स्नेहपात्रों के मारे जाने के कारण, उनका कलेजा इतना भरा हुआ था कि कलेवा के नाम से उनको अरुचि हुई।

अन्तिम अञ्जली का पानी मुँह में डाला था कि झाँसी की ओर से धूल उड़ती हुई दिखाई पड़ी। रानी ने समझ लिया कि पीछा करने वाले लोग आ रहे हैं।

गुलमुहम्मद ने दूरबीन से देखा। बोला, 'ये अङ्गरेज लोग अमारा इधर बी पिच्छा करता है। हुजूर आगे बढ़ें। अम लोग देखता है।'

'नहीं', रानी ने कहा, और झटपट दामोदरराव को पीठ पर कसा। घोड़े पर सवार होकर बोलीं, 'इस तरह हम लोग सब बीन बीन कर मारे जायेंगे। यहाँ आसपास छोटी छोटी टौरियाँ हैं। इनके पीछे खड़े हो जाओ। जैसे ही बैरी का दस्ता निकट आवे पिस्तौल दागो। दस्ता बन्दूक या पिस्तौल से जवाब देगा, जवाब चुकने पर तुरन्त तलवार से आक्रमण करो।'

गुलमुहम्मद ने समझ लिया—थोड़े से आदमियों को लेकर रानी कितने बड़े दस्ते का मुकाबला कर सकती हैं!

लैफ्टिनेंट बोकर का दस्ता घुड़सवारों का था। ठोस पाँत में वे लोग घोड़े दौड़ाते हुये चले आ रहे थे। जैसे ही पिस्तौल की मार में आये रानी की टोली ने आढ़ से पिस्तौलों की बाढ़ दागी। बाढ़ का भयङ्कर प्रभाव हुआ। बोकर के दल के पास पिस्तौलें और बन्दूकें भी थीं, परन्तु बन्दूकें आवरों में पड़ी हुई थीं। उन्होंने घबराकर पिस्तौलें खाली करदीं रानी ने तुरन्त तलवार से हमला किया अङ्गरेज दस्ते के दोदो तीन तीन

सवार रानी के साथियों के पल्ले पड़े। एक सवार को तो रानी ने कमाल की सवारी करके घोड़े समेत चीर दिया। बोकर रानी के ऊपर घोड़े को जोर की एड़ लगाकर लपका। रानी ने विलक्षण चतुरता के साथ अपने घोड़े को पीछे हटाकर बोकर के सपाटे को व्यर्थ कर दिया। फिर वह उस पर झपटीं और तलवार का वार किया।

बोकर घायल होकर गिरा। शेष दस्ता अपने प्राण लेकर भागा। रानी पर भागते हुये सवारों में से एक ने गोली चलाई। रानी बच गईं। गोली घोड़े का पिछला हिस्सा छीलती हुई चली गई।

रानी की गाँठ में अब केवल मुन्दर, गुलमुहम्मद, देशमुख और रघुनाथसिंह बचे—बाकी सब मारे गये। परन्तु इन बहादुरों ने बोकर के दस्ते को कुण्ठित कर दिया, लौटा दिया। बोकर को उसके संगी झाँसी उठा ले गये। उसके लौटने पर रोज को झलकारी के कृत्य का पूरा मर्म और अच्छी तरह समझ में आ गया!

रानी पहूज पार करके कालपी की ओर तेजी के साथ चल पड़ीं।

मार्ग में उनका प्यारा घोड़ा यकायक रुका। उसके घाव से बहुत खून निकल चुका था, और उसको दिलतोड़ परिश्रम करना पड़ा था। मर गया। एक गाँव वाले ने उनको अपना अच्छा घोड़ा दे दिया। रानी केवल पानी पीती हुई आधीरात के लगभग कालपी पहुँचीं। एक सौ दो मील का मार्ग तै करके! दिन भर कुछ भी न खाकर उस तेज धूप में इस पर भी पहुंचते ही उन्होंने काशीबाई और जूही के सम्बन्ध में तात्या से प्रश्न किया।

तात्या ने उत्तर दिया, 'काशीबाई झाँसी के संग्राम में मारी गई। जूही बच गई। इस समय वह शिविर में रावसाहब के रनवास के साथ है। आज्ञा हो तो बुलवाऊँ?'

'नहीं', रानी ने निषेध किया, 'कल सन्ध्या समय मिलूंगी।'

इसके उपरान्त तात्या ने सविस्तार अपनी झाँसी वाली लड़ाई का वृतान्त थोड़े ही समय में सुना दिया। उन्होंने धैर्य के साथ सुना।

फिर उन्होंने स्नान किया। कपड़े बदले और केवल शर्बत पीकर सो गईं।

इधर उस दिन झाँसी में जो कुछ हुआ वह एक अत्यन्त वीभत्स कांड है। इङ्गलैंड के माथे का अमिट कलंक। झाँसी उसको कभी न भूली।

किले पर अधिकार करने के बाद असंख्य मकान जलाये गये। बालक, युवा, वृद्ध गोलियों से उड़ाये गये। बेहद लूटमार की गई। लाशों के ढेर लग गये। गायें और बछड़े अनाथ होकर भटकने और जलने लगे। सात दिन तक लाशें सड़ती रहीं। लगभग तीन सहस्र निरपराध व्यक्तियों का वध किया गया।

महालक्ष्मी का मन्दिर लूटा गया।

अङ्गरेजी सेना के नायकों और ऊँचे अफसरों तक ने एक अत्यन्त बर्बर कृत्य में भाग लिया। शेक्सपियर, मिल्टन, स्काट और वर्क के देश के शिक्षित तथा विज्ञान विदग्ध अफसरों ने, मन्दिरों की मूर्तियाँ, सिंहासनों पर से उठाईं, झोलों में रक्खीं और अपने शराबखानों को सजाने के लिये सदा के लिये ले गये। और इस कुकृत्य को अङ्गरेज इतिहास लेखक ने इस प्रकार प्रकट किया, 'मूर्तियों का चुराना 'लूट' नहीं थी, यह तो कुतूहलजनित जिज्ञासा की पूर्ति मात्र थी?'

मुरलीमनोहर के मन्दिर की मूर्ति बचा दी तो वुढ्ढे पुजारी को मन्दिर के भीतर ही मार डाला। उसके जवान लड़के को पकड़कर मन्दिर के बाहर लाये। एक गोली चली। फिर उसकी बुड्ढी माँ को कभी पता नहीं चला कि लड़का कहाँ गया।*

पहले दिन अङ्गरेजों ने लूटमार की। दूसरे दिन मद्रासी दस्ते को अवसर दिया गया। तीसरे दिन निजाम हैदराबाद की पल्टन की बारी आई। अनाज, बर्तन, कपड़े तक न छोड़े गये।

---

*वृद्ध पुजारी का नाम रामचन्द्र गोलवलकर और लड़के का नाम कृष्णराव था।

केवल एक स्थान वध से बचा। वह था बिहारीलाल जी का मन्दिर। कदाचित् इस कारण कि वह एक कोने में था और उस पर कोई शिखर न था।

आरम्भ के कतल के बाद कुछ लोग माधवराव भिड़े के बाग में आ छिपे। एक अङ्गरेज अफसर के हृदय के किसी कोने में कुछ मानवता बाकी थी। उसने इन लोगों का वध नहीं होने दिया। इस बाग की चौड़ी दीवारें पोली थीं। पूना के पास का एक शास्त्री उन दिनों अपने दुर्भाग्य से झाँसी में आ फँसा था। वह दीवार की एक खोल में रात भर ठुसा रहा। पीठ से पीठ सटाकर वहीं एक स्त्री भी प्राणों की खैर मनाती रही। समय पाकर शास्त्री किसी प्रकार अपने निवास स्थान पर पहुंचा। तमाखू खाने की आदत थी, पर लुटेरे घर में से उसे भी गत दिवस की लूट में उठा ले गये थे। उसी समय कुछ मदरासी दस्ते वाले फिर घुस आये। उन्होंने बचे-खुचे बर्तन भी खसोटे। शास्त्री ने भी अपनी एक जरूरत पूरी की।

लुटेरों से कहा, 'थोड़ी खाने की तमाखू हो तो दिये जाओ।'

बर्तनों के बदले में थोड़ी-सी तमाखू मिल गई! विदेशी होते तो शायद खाने को सङ्गीन मिलती।

रोज का एक दस्ता घूमता-भटकता, टक्करें लेता-देता मऊरानीपुर होकर निकला। झाँसी के पतन का समाचार पाने पर भी काशीनाथ भैया और आनन्दराय इस दस्ते से भिड़ गये।

मऊ की गढ़ी छोटीसी थी। तोपें गाँठ में न थीं। इसलिये ये लोग अपना छोटा-सा बन्दूकची दल लेकर मऊ के बाहर की टौरियों की आड़ में पहुँचे और मुकाबला किया। खूब डटकर लड़े और सब मारे गये। आनन्दराय का लड़का भी साथ था। मरने के पहले आनन्दराय ने लड़के से कहा,—

'यदि कभी रानी साहब के दर्शन हों तो कहना कि मऊ झाँसी से पीछे नहीं रही।'

लड़का कुछ महीने बाद गिरफ्तार हो गया। परन्तु उन्हीं दिनों विक्टोरिया की क्षमा घोषणा हुई और वह फाँसी से बच गया। इस प्रकार की घटनायें झाँसी जिले के उन गाँवों में हुईं जहाँ एक छोटी-मोटी भी गढ़ी थी और जनता को हथियार पकड़ने की साँस मिली थी।

आठवें दिन झाँसी में रोज का ऐलान हुआ, 'खलक खुदा का, मुल्क बादशाह का, अमल कम्पनी सरकार का।'

परन्तु इन सात दिनों हवा में जो स्तब्ध घोषणा घूमी थी वह यह थी,—

'खलक शैतान का, मुल्क शैतान का, अमल शैतान का।'

रोज को झांसी जिले में 'कम्पनी सरकार' का अमल, कायम करने में करीब एक महीना लग गया।

[७९]

कालपी खासा नगर था। यमुना नदी के किनारे। एक ओर मजबूत किला। तीन ओर परकोटा, और चौथी ओर यमुना नदी। किले के पश्चिम की तरफ एक मैदान, उसके बाद नगर। नगर से कुछ दूर चौरासी गुम्बज का क्षेत्र। छत्रसाल के पीछे कालपी का भूखण्ड गोविन्द पन्त के अधिकार में आया। सन् १८०६ की सन्धि के द्वारा अङ्गरेजों ने गोविन्द पन्त के वंशजों से कालपी को पाया सन् १८२५ में इसी वंश के एक नाना पण्डित ने कालपी को फिर अपने हाथ में कर लिया परन्तु झाँसी के राजा रामचन्द्रराव की सहायता से अङ्गरेजों ने कालपी को वापिस ले लिया। सन् १८५७ के विप्लव में कालपी की छावनी ने कानपूर से आये हुये विप्लवकारियों का साथ दिया। थोड़े समय उपरान्त रावसाहब अपनी सेना यहाँ लेकर आ गया और कालपी-नगर विप्लवकारियों का एक प्रधान अड्डा बन गया।

जब रानी कालपी पहुँचीं रावसाहब—नाना का भाई—और तात्या वहीं थे।

दूसरे दिन रानी की इन लोगों से भेंट हुई। रानी का इन लोगों ने जी खोलकर आदर-सत्कार किया।

परन्तु रानी आदर की भूखी न थीं। वे काम चाहती थीं। लेकिन वह कालपी में अस्तव्यस्त था। तात्या सरीखे उत्कृष्ट सेनापति के होते हुये भी सेना का प्रबन्ध अव्यवस्थित था। कारण तात्या का एक स्वभावगत दोष था—वह था राव साहब को अपने तनमन का सम्पूर्ण स्वामी मानना और अपने सैनिकों के व्यसनों को क्षमा करते रहना। रावसाहब का और सैनिकों का, वह अत्यन्त स्नेहभाजन था परन्तु इससे सेना की अनुशासनहीनता की पूर्ति नहीं हो सकती थी।

रानी की सूक्ष्म दृष्टि ने इस बात को शीघ्र देख लिया।

विश्राम करने के बाद संध्या समय रानी उन लोगों से मिलीं।

रानी ने सेना के अनुशासन, कवादय-परेड और युद्ध-सामग्री इत्यादि प्रसङ्गों पर प्रश्न किये। सिवाय युद्ध-सामग्री के और सब प्रसङ्गों पर उनको असन्तोषजनक उत्तर मिले।

रानी ने अन्त में कहा, 'बहुत कसर है, रावसाहब।'

राव जल्दी से बोला, 'सब ठीक हो जायगा बाईसाहब, शीघ्र सब ठीक हो जायगा। इन्हीं सिपाहियों और इसी तात्या ने तीन बड़े-बड़े जनरलों को हराया और बहुत सों को छकाया।'

'चौथा भी हराया जा सकता था', रानी ने कहा, 'परन्तु हमारी ओर से एक अनिवार्य गलती हुई।'

तात्या उनके मुँह की ओर देखने लगा।

रानी बोलीं, 'उस दिन मेरे गोलन्दाजों ने भरपूर गोलाबारी न करने की सम्मति दी और मैंने मान ली। एक भय था भी—कहीं हमारे किले की गोलाबारी से आपकी सेना नष्ट न हो जाय। फिर भी चूक हुई। यह मानना पड़ेगा।'

तात्या ने कहा, 'उस दिन आपकी सेना को कोट के बाहर निकलकर अङ्गरेजी सेना पर छापा मारना था।'

'टौरियों की ओट पड़ जाने से कालपी की सेना अदृश्य हो गई', रानी बोलीं, 'मालूम नहीं पड़ता था कि किस ओर से प्रकट होगी। फिर संध्या हो गई और प्रतीत हो गया कि कालपी की सेना लौट गई, और झाँसी अकेली रह गई।'

रावसाहब ने कहा, 'अब सब ठीक हो जायगा, बाईसाहब। आप कुछ चिन्ता न करें। नाना साहब लखनऊ की ओर प्रयत्नशील हैं। बानपूर और शाहगढ़ के राजा तथा बांदा के नवाब ससैन्य शीघ्र कालपी आ रहे हैं। हम लोग यहाँ योजना तैयार करके, फिर कानपूर और झाँसी को हस्तगत करेंगे।'

संध्या समय रानी को जूही मिली। वह फूट-फूटकर रोई। रानी ने शान्त किया। समझाया,—

'जूही, तपस्या में क्षय पहले है और अक्षय पीछे। यह युद्ध स्वराज्य की अन्तिम साधना नहीं है और न हम लोग उसके अन्तिम साधक।'

फिर रानी ने अपने स्त्री-पुरुष वीरों के बलिदानों की कथा सुनाई।

जूही ने कहा, 'मोतीबाई के साथ मैं भी घायल होती तो इसी गोद में प्राण जाते।'

'सहज ही प्राण त्याग न करो जूही,' रानी बोलीं, 'अभी बहुत काम करने को पड़ा है।'

दूसरे ही दिन पेशवा की सेना को व्यवस्थित करने की योजनायें बनानी आरम्भ करदीं, कुछ कार्यान्वित हुई। अनेक पेशवा की ढील-ढाल में यों ही पड़ी रहीं।

कालपी की सेना का शिथिल संगठन देखकर रानी का जी दुख-दुख जाता था।

[८०]

अप्रैल के तीसरे सप्ताह में बानपूर, शाहगढ़ और बाँदा की सेनायें कालपी में आ गईं। झाँसी का कड़ा प्रबन्ध करके रोज ने अप्रैल की पच्चीस तारीख को कालपी पर चढ़ाई की आज्ञा दी। इसी समय उसको खबर मिली कि रानी कोंच होती हुई झाँसी पर फिर आने वाली हैं। रोज का एक दस्ता पूँछ पहाड़गाँव पर पहुँचा। विद्रोहियों से कर्री मुठभेड़ हुई। अङ्गरेजी दस्ता सफल हुआ। फिर एक युद्ध सैदनगर कोटरा पर हुआ। अङ्गरेजी दस्ता हारा।

कोंच पर अधिकार करने के लिये रोज ने लुहारी के किले को लेने का पहले प्रयत्न किया। कोंच में पेशवा की काफी सेना इकट्ठी हो गई। बानपूर और शाहगढ़ के राजा तथा बाँदा के नवाब भी यहीं आ गये। पुनः बीस सहस्त्र सैनिक इकट्ठे हो गये। रानी और तात्या सरीखे सेनापति। किस बात की कमी थी? जिस बात की कमी थी उसको रानी जानती थी। इस सेना में बहुत से लुटेरे और बदमाश भी इकट्ठे हो गये थे। उनको स्वराज्य या युद्ध में उतनी रुचि न थी जितनी विजय या पराजय के उपरान्त लूट-खसोट करने में थी, वे इतने पतित थे कि मौका मिलने पर अपनी ही छावनी लूट सकते थे। इस सेना में बहुत से तो कवायद परेड ही नहीं जानते थे और अनुशासन का नाम न सुना था। वे केवल अपने सरदारों का, या जिन्होंने उनको भर्ती किया था उनका, आदेश मानने को तैयार थे। सो भी उतना, जितना उनके मन के अनुकूल होता। रानी का बस चलता तो वे कम से कम आधी संख्या को अपने-अपने घर लौटा देतीं।

केवल कल्पना में इस सेना का प्रधान संचालक रावसाहब था! वास्तव में अपनी-अपनी ढपली अपना-अपना राग था। पूर्ण सत्ता एक व्यक्ति के हाथ में न थी। और युद्ध को सफलता-पूर्वक लड़ने के लिये, सैन्य-संचालन एकाधिपत्य चाहता है, वह इस सेना में न था।

उधर रोज लुहारी के किले को, कोंच का पहला मोर्चा समझ कर ले लेने के प्रयत्न में था; इधर कोंच में रात को रावसाहब, बानपूर और शाहगढ़ के राजा तथा बांदा के नवाब की इच्छा नाच देखने की हुई। इन लोगों ने सुना था कि झाँसी की जूही, जो उस समय कोंच में रानी के शिविर में थी, बहुत अच्छा नाचती है। इसलिये भङ्ग पीने के उपरांत उसके बुलाने का हठ किया गया।

रावसाहब को सरूर आ चुका था, परन्तु जबान ढीली नहीं हुई थी। तात्या को बुलाया। वह भङ्ग नहीं पिये था। न पीता था।

रावसाहब ने कहा, 'आज दिन में बहुत गरमी रही। अब ठण्डक है। सब लोग मजे में हैं। युद्ध पर युद्ध होते रहते हैं। बीच बीच में कुछ आनन्द भी चाहिये।'

तात्या ने खीझ को दबाकर निवेदन किया, 'आज्ञा हो।'

'अरे यार मेरे', बाँदा के नवाब ने कहा, 'और आज्ञा होगी ही क्या ? किसी को नाचने गाने के लिये बुला लाओ।'

बानपूर का राजा बोला, 'सरदार साहब, माफ करना आप शंकर की बूटी का सेवन नहीं करते, इसलिये इस मजे को नहीं जानते, परन्तु हम लोगों के मन तो बढ़ावे पर, इन्हीं कमानों पर आते हैं।'

शाहगढ़ का राजा जरा और अग्रसर हुआ, 'भाई टोपे साहब, वह जो झाँसी का तुहफा छावनी में है, उसका नृत्य-गान कब देखने को मिलेगा ?'

तात्या सन्नाटे में आ गया।

रावसाहब ने कहा, 'उसका नाम जूही है। बड़ा सुन्दर नाम है। सिपाहीगिरी भी करती है और नृत्य-गान भी। झाँसी की नाटकशाला में बढ़िया अभिनय करती थी। बेढव हाव-भाव। जब से यहाँ आई उदास बनी रही। मातम सा मनाती रही। अब उसकी स्वामिनी आ गई हैं, प्रसन्न है। नाचने-गाने की नाहीं करने का कोई कारण नहीं। रात भी

बहुत नहीं गई है। घण्टे आध घण्टे के लिये, यह दरबार रसीला-रङ्गीला हो जाये। बुला लाओ।'

तात्या ने माथे का पसीना पोंछा।

बोला, 'जो आज्ञा, परन्तु रानी साहब—'

नवाब—'म्याँ किन्तु परन्तु क्या ?'

रावसाहब—'रानी साहब पूजा में होंगी। बुला भी लाओ।'

तात्या गया—उस मण्डली का सरूर और बढ़ा।

तात्या ने जूही को एकांत में बुलाया।

जूही बहुत प्रसन्न थी।

जूही—'सरदार साहब, आपने क्यों कष्ट किया ?'

तात्या—'एक बात कहने आया हूँ।'

जूही—'मैं उस बात को सुनने के लिये बरसों से तरस रही हूं।'

तात्या—'एक प्रार्थना करने के लिये आया हूं।'

जूही—'मेरे सरदार मुझसे प्रार्थना करें! जिस शब्द के सुनने के लिये बरसों तपस्या की, अपने तन और मन की रक्षा की, उस एक शब्द के सुनने के लिये, आपकी जूही के भाग्य का आज उदय हुआ, परन्तु—'

तात्या—'परन्तु क्या जूही ?'

जूही—'परन्तु सरदार साहब, मेरी रानी का स्वराज्य-संग्राम पहले सफल हो और मैं आपकी जन्म-संगिनी बनकर रहूं। बहुत दिनों से इस बात को कहने के लिये संकल्प पर संकल्प किये परन्तु आज लाज-संकोच त्याग कर कह पा रही हूं। आपने अवसर देने की कृपा की।'

पेशवा के प्रधान सेनापति का सिर नीचा पड़ गया। कुछ क्षण में हिम्मत बाँधकर बोला, 'मेरी प्रार्थना यह है। मेरी प्रार्थना—'

जूही ने टोककर कहा, 'आपके मुँह से प्रार्थना का शब्द नहीं सुहाता, आज्ञा हो, आपकी जूही का सिर चरणों में पहुँचेगा, परन्तु जिस शर्त का निवेदन कर चुकी हूं, वह अटल है।'

तात्या का दिल धड़का । उसने धड़कन दबाई । मुट्ठी बाँधी और हिम्मत को कड़ा किया ।

तात्या—'अभी तो केवल यह प्रार्थना है कि आप रावसाहब के शिविर में चलें, वहाँ बाँदा के नवाब साहब, मदनपूर और बानपूर के राजा साहब बैठे हुये हैं । आपके नृत्यगान का रसास्वादन करना चाहते हैं ।'

जूही—'ओह, यह बात । यह प्रार्थना ! सरदार साहब, मैं आपको मन ही मन अपना हृदय भेंट कर चुकी हूँ परन्तु आपको इतना स्मरण रहे कि मैं झाँसी की रानी की सिपाही हूँ और किसी राजा या नवाब से अपने को कम कहीं समझती । ये लोग समझते होंगे कि वेश्या-पुत्री हूं, परन्तु वेश्या नहीं हूं, और न नाचने-गाने का पेशा करती हूं । मेरा प्रस्ताव उस मण्डली में किसने किया, सरदार साहब ? और आपके मुंह से यह प्रस्ताव निकला कैसे ?'

तात्या—'मैंने नहीं किया जूही । आप विश्वास करो । मैं रावसाहब की आज्ञा को देवता की आज्ञा के समान समझता हूं उन्हीं के कहने से आपके पास आने का साहस किया ।'

जूही—'आप आप कहकर मेरा अपमान मत कीजिये । मैं आपके लिये तुम हूँ । उन लोगों से कह दीजिये कि मैं उनके लिये उस रानी की कर्नल हूं, जो जनरल रोज के परदादों को कब्र में हिला डालने की हिम्मत और तरकीब रखती है ।'

तात्या चला गया । जब तक वह पेशवा के सामने पहुँचा तब तक भंग ने अपना गहरा रङ्ग चढ़ा दिया था । वे लोग अपनी पहली धुन को इस बीच में भूल गये थे और किसी दूसरी धुन को पकड़ लिया था । इसलिये तात्या को बात बनाने की जरूरत नहीं पड़ी ।

जूही रानी के शिविर में लौट आई । रानी गीता के पारायण से उसी समय फारिग हुई थीं ।

रानी ने साधारण प्रश्न किया, 'कहाँ हो आई जूही ?'

जूही ने भर्राये हुये स्वर में उसाँस लेकर उत्तर दिया, 'सरदार साहब आये थे।'

रानी—'कौन सरदार साहब ? यहाँ तो मुझको सब सरदार ही दिखते हैं। संसार की किसी भी सेना की ऐसी अस्तव्यस्त स्थिति न होगी जो मुझको इस सेना की दिखलाई पड़ रही है। कोई भी एक ऐसा नहीं जिसकी सब कोई मानें।'

जूही—'सरदार तात्या साहब आये थे।'

रानी—'क्या कहते थे ?'

जूही—'कहते थे कि श्रीमन्त रावसाहब पेशवा नृत्य-गान के लिये बुला रहे हैं। महफिल बाँदा, बानपूर और शाहगढ़ के रईसों की है।'

रानी—'हाँ ! यह मौज ! तूने क्या उत्तर दिया ?'

जूही—'मैंने कह दिया सरकार कि मैं रानी साहब की कर्नल हूँ, नाचने-गाने वाली नहीं।'

रानी –'जूही तूने अपने योग्य ही उत्तर दिया। दो-एक दिन में ही कोंच में लड़ाई होने वाली है। और इन लोगों का यह हाल है ! जी चाहता है कि इसी समय इनको कुछ खरी-खोटी सुनाऊँ, परन्तु अवसर उपयुक्त नहीं है। किसी समय कहना अवश्य पड़ेगा। और कुछ···दण्ड···'

[८१]

दूसरे दिन समाचार मिला कि लुहारी के किले का पतन हो गया और रोज कोंच को ग्रसने के लिये आ रहा है।

पेशवा इत्यादि की सेना को अपने अग्रभाग का सुदृढ़ और सुसंगठित प्रबन्ध करके लड़ने का अभ्यास सा पड़ गया था। रोज जानता था कि इनकी सेना का पृष्ट भाग उतना व्यवस्थित नहीं रहता। इसलिये उसने विरोधी सेना पर आक्रमण करने के लिये अपनी सेना के तीन भाग किये। दो को कोंच की सेना के पीछे दांय-बाएं भेज दिया और एक को सामने ले चला।

पेशवा की सेना को उसके केवल सामने वाले दस्ते का पता लगा और उसी से तात्या को भिड़ा दिया। लक्ष्मीवाई को पीछे की ओर रक्खा। दोनों ओर से विकट युद्ध हुआ।

बँधे इशारे पर रोज के पीछे वाले दस्तों ने धावा किया और उनकी तोपों के प्रहार से कोंच की सेना बुरी मार खाकर भागी। तात्या और लक्ष्मीबाई ने अपने कौशल से उनको रोज के व्यूह से बचा निकाला। रोज ने कोंच को ले लिया। आठ तोपें हाथ आईं और बहुत सी युद्ध सामग्री। रोज को बहुत आश्चर्य इस बात पर था कि सबके सब सरदार और बाकी सेना तथा सामान किस हिकमत से कौन निकाल ले गया। उसका सन्देह बार बार झाँसी की रानी और तात्या टोपे पर जाता था।

तात्या कोंच से निकल कर कालपी नहीं गया। वह अपने पिता के पास चला आया। उसने उस समय, पेशवा की भी कदाचित् केवल उस समय, अनसुनी करदी।

पेशवा ने अपनी सेना के साथ कालपी में आकर दम लिया। शायद उस रात भङ्ग नहीं छनी! दूसरे दिन पेशवा ने आगे की योजना बनाने के लिये सरदारों का दरबार किया। रानी भी दरबार में थीं।

रावसाहब ने कोंच की हार का किसी पर भी दोषारोपण नहीं किया और बचकर निकल आने के चातुर्य पर प्रशंसा बरसाई। इसके उपरान्त आगे की योजना की बात छिड़ी।

रानी अपने आसन से उठीं। कमर से तलवार निकाल कर पेशवा के सामने मूठ की ओर से रख दी और आसन पर बैठकर बोलीं, 'आप के पूर्वजों ने यह तलवार हम लोगों को दी थी। भगवान की दया से मेरे पूर्वजों ने और मैंने भी इसका उचित उपयोग किया। परन्तु अब आप की कृपा से यह तलवार वंचित हो गई है इसलिये इसे वापिस लीजिये।'

दरबार में उपस्थित सब सरदार स्तम्भित रह गये।

रावसाहब ने कहा, 'आपके पुरखों ने और आपने स्वराज्य की स्थापना के लिये जो कुछ किया है वह चिरस्मरणीय है। आपने झाँसी में अङ्गरेजों का जैसा करारा मुकाबिला किया वह अवर्णनीय है। कोंच से हमारी सेना और युद्ध सामग्री को बचाकर ले आने में आपका बहुत बड़ा हिस्सा है। आप सरीखा निपुण सेनापति शायद ही कोई हो। आप जो योजना बतलावें हम लोग शिरोधार्य करेंगे। आप इन सब रणसूर रईसों को अपना सहयोग देने की कृपा कीजिये और अपने स्वराज्य के प्रण का स्मरण करिये।'

रानी बोली, 'कोंच की लड़ाई में आपका प्रबन्ध बहुत रद्दी था। सेना में कोई व्यवस्था नहीं है। अङ्गरेजी सेना अपनी अच्छी व्यवस्था के कारण ही विजय प्राप्त करती है। हमारे सैनिक शूरवीरी और पराक्रम में अङ्गरेजों से बढ़े-चढ़े हैं परन्तु व्यवस्था और दूरदर्शी योजना की कमी के कारण उनका शौर्य विफल हो जाता है। झाँसी की सहायता के लिये आपकी इतनी बड़ी सेना आई परन्तु अव्यवस्था के कारण हार खाकर लौट गई। जब तक आप अपनी सेना का अच्छा प्रबन्ध नहीं करेंगे और संयम से काम न लेंगे, युद्ध में यश प्राप्त न होगा। अव्यवस्था का कारण है एक व्यक्ति को मुख्याधिकारी न मानना और अपनी अपनी मनचाही योजना को काम में लाना तथा समय को व्यर्थ बातों में नष्ट करना।'

रावसाहब तलवार को लेकर उठा। रानी के सामने विनम्र भाव से खड़ा हुआ।

'आप कृपापूर्वक तलवार ग्रहण करें', रावसाहब ने कहा, 'आपकी सम्मति बिलकुल, उचित है और मानी जायगी।'

रानी ने तलवार ले ली और म्यान में डाल ली।

उपस्थित सरदारों ने रावसाहब को प्रधान सेनापति नियुक्त किया। उसने स्वीकार कर लिया। सरदारों ने रानी को प्रधान सेनापति न बनाकर इतिहास में अपनी पराजय पेशगी लिख दी। परन्तु योजना बनाने के लिये रानी से अनुरोध किया। रानी ने योजना बतलाई। उसके अनुसार मोर्चे बनाये गये। तोपें रक्खी गईं। गोलन्दाज नियुक्त और सरदार विभक्त किये गये। रानी को लालकुर्ती वाले ढाई सौ सवार दिये गये और वाम पार्श्व की रक्षा का भार।

[८२]

रानी ने निर्देशन किया था, 'जो सरदार जिस मोर्चे को बाँधे हो वहीं डटकर लड़े, किसी प्रलोभन या उत्तेजन में आकर अपने स्थान को छोड़कर अङ्गरेजी सेना के ऊपर न झपटे। जब रिसाले या पैदल पल्टन को आदेश हो तभी बतलाई हुई दिशा में हमला करे।'

रावसाहब ने समर्थन करते हुये कहा था, 'ऐसा ही होगा; ऐसा ही हो। सब लोग गाँठ बाँध लेना।'

रावसाहब सहज सन्तोषी और परम महत्वाकांक्षी था। यदि नाना साहब लखनऊ के जय-पराजय के क्रमावर्त में न फँसा होता और कालपी में होता तो वह, लक्ष्मीबाई और तात्या, रोज सरीखे अत्यन्त योग्य और रणकुशल सेनापति के लिये भी काफी से अधिक प्रबल बैठते। परन्तु रावसाहब की लोकप्रियता, उसकी उदारता, शिथिलता और सहजवर्ती स्वभाव के कारण थी, न कि योग्यता के कारण। वह प्रधान सेनापति की आज्ञाओं का विधिवत् पालन करा ही नहीं सकता था। इस कार्य के लिये तो रानी का सा तेजस्वी और तपस्वी व्यक्तित्व ही ठीक बैठ सकता था।

रोज को इस मोर्चा बन्दी का पता आसानी से लग गया। उसने अवगत कर लिया कि जहाँ मोर्चादारों से उनका ठिया छुटवा पाया कि गड़बड़ फैल जायगी।

कोंच की मार और रानी की भर्त्सना के कारण पेशवाई सेना अंग्रेजों को मार मिटाने के लिये दांत पीस रही थी, अपनी वासना को सहायता पहुँचाने के लिये सेना ने भङ्ग भी खूब पी। रानी का निषेध न चला।

रोज का एक छोटा सा दस्ता हल्का तोपखाना लिये आगे आया। कालपी की सेना ने समझा कि रोज की सम्पूर्ण सेना आगई। ठिया छोड़-छोड़ कर उस पर दौड़ पड़े। गोलाबारी हुई। असमय मार-काट शुरू हो गई। रानी ने मना करवाया परन्तु राव नियन्त्रण न कर सका। रोज ने मौका ताककर इर्द-गिर्द वाले अपने दस्तों द्वारा गोलाबारी शुरू कर दी

और कालपी की सेना का ठिये छोड़ देने के कारण अविलम्ब सर्वनाश होने लगा। रईस सेनापतियों ने भागने का विचार किया रानी ने डाटना-फटकारना व्यर्थ समझ कर उनको–धैर्य धराया, कहा—'अब जहाँ हो वहीं बने रहो, भगदड़ मत मचाओ मैं इनके तोपखानों को बन्द करती हूं। जिस समय तोपखाने बन्द हो जायें, दो पार्श्वों से घुड़सवार और बीच में पैदल बन्दूकची भेजना।'

रानी को केवल ढाईसौ सवार दिये गये थे। ये सवार अपने नेता को पहिचान गये थे और उन लोगों की उनके प्रति अपार भक्ति थी। रानी ने इन लोगों के पाँच भाग किये और एक-एक को देशमुख, गुल-मुहम्मद, रघुनाथसिंह, जूही और अपने अधीन रक्खा। मुन्दर उनके साथ उनकी नायबी में रही। रानी ने यमुना के एक टीले की ओट से दूरबीन लगाकर रणक्षेत्र का निरीक्षण, कुछ क्षण किया। वे रोज के कमजोर बाजू को ताड़ गईं।

रानी ने अपने पाँचों दस्तों को रोज के दाहिने पार्श्व की ओर कुछ दूर जाकर घुमाया और फिर टूट पड़ीं। जैसे चिड़ियों के ऊपर बाज? यह आक्रमण अङ्गरेजों को तूफान की तरह लगा और वे एकदम पीछे हटे। अङ्गरेज अफसर और सिपाही कट-कटकर गिरने लगे। रानी ने ऐसे शौर्य, ऐसे विवेक और ऐसे कौशल के साथ युद्ध किया कि अङ्गरेजों का तोपखाना थोड़ी देर के लिये बिलकुल बन्द हो गया। गोलन्दाज उस तूफानी हमले से स्तब्ध रह गये। रानी तोप के मुहानों पर बीस फीट के फासले तक मारती-काटती पहुंच गई!! अब कालपी की सेना आगे बढ़ी। परन्तु सैनिक इतनी भंग पिये थे कि आज्ञाओं का ठीक-ठीक पालन नहीं कर सकते थे। केवल रानी का एक अद्भुत पराक्रम इन सैनिकों के नशे को और उनके सरदारों की मूर्खता को कुछ ढक रहा था—रानी ने अपने घोड़े की लगाम मुंह में दाबी और दोनों हाथों से तलवारों के वज्रपात करने लगीं। पेशवा-सेना बहादुरी के साथ लड़ने लगी। जो अङ्गरेज गोलन्दाज रानी और उनके दस्तों द्वारा कटने से बचे, वे

मैदान छोड़कर भागे। ब्रिगेडियर स्टुअर्ट ने देखा कि बाजी खिसकी। तुरन्त वह हलके तोपखाने लिये पीछे से आगे आया। गोलाबारी की। भगते हुये गोलन्दाजों को उत्साहित किया। रोज एक जगह ऊँट-तोपखाना लिये डटा था।

अपनी सेना की भगदड़ का समाचार पाते ही वह इस तोपखाने को लेकर दोड़ा आया और छोटे गोलों की बौछार पर बौछार की। कालपी की सेना तितर-बितर होने लगी। अपने दस्तों को लेकर रानी ने रोज के निरोध का प्रयत्न किया परन्तु भंगेड़ी सिपाहियों को भङ्ग ने भागने की सुझाई। उनके पैर उखड़ गये। विवश होकर रानी को अपने दस्ते रण-भूमि से हटाने पड़े। अपेक्षाकृत उनके सैनिक कम हताहत हुये। जो बचे उनको लेकर रानी पेशवा की छावनी में लौट आईं।

दो दिन और मारकाट हुई परन्तु उसको लड़ाई नहीं कह सकते। पेशवा की सेना के काफी सिपाही अन्तिम विजय से निराश होकर अपने अपने गांवों को भाग गये।

दो दिन पेशवा ने लष्टम-पष्टम गोलाबारी अङ्गरेजों से बदली। इस सेना में अधिकतर लुटेरे और बदमाश रह गये थे। जैसे ही उन्होंने देखा कि पेशवा हारे, कालपी की लूट शुरू कर दी और शकर की दुकानों की पहले घात लगाई।

पेशवा ने कालपी छोड़ी। थोड़ी सी सेना उनके साथ लगी गई। रानी अपने पांच दलपतियों तथा अपनी बची-बचाई छोटी लालकुर्ती सेना सहित निकल गईं। यह हारा थका दल गोपालपुरा में, जो ग्वालियर के नैऋत्य में ४६ मील की दूरी पर था, जा टिका। कोंच की पराजय के उपरान्त तात्या अपने पिता के पास जालौन चला आया था। कालपी के पराभव का वृतांत सुनकर उसको ग्लानि हुई और वह पेशवा के पास गोपालपुरा पहुंच गया। बाँदा का नवाब भी इधर-उधर भटकता हुआ गोपालपुरा आ गया। राजा मर्दनसिंह और राजा बखतबली इसके उपरान्त लड़ाई के नक्शे में फिर नहीं आते। कुछ समय बाद राजा

बखतबली को अङ्गरेजों ने कैद करके लाहौर भेज दिया। मर्दनसिंह भी कैद हो गया।

रोज को कालपी में पेशवा की बहुत बहुमूल्य युद्ध सामग्री मिली। पन्द्रह तोपें, सात सौ मन बारूद, असंख्य बन्दूकें और तलवारें और नये तर्ज के हथियार ढालने-बनाने की विलायती मशीनें हाथ लगीं। रोज को यह विजय चौबीस मई के दिन मिली। यह दिवस विक्टोरिया के जन्म का था। इसलिये अङ्गरेजों ने धूमधाम के साथ कालपी पर अपना झंडा चढ़ाया और कतल तथा लूट से पाई हुई शकर के प्रसाद के जशन मनाये। और फिर तीन दिन कालपी को मुस्तैदी के साथ लूटा।

जनरल रोज ने नर्मदा के उत्तर भाग से कालपी तक अपने अधीन कर लिया। नर्मदा के उत्तरपूर्वीय भाग को दबाता हुआ करवी, महोबा, बाँदा इत्यादि को लूटता-कुचलता विटलाक रोज से कालपी में आ मिला। राजपूताने की ओर से कर्नल स्मिथ अपनी सेना लिये हुये आगरा ग्वालियर की दिशा में आ रहा था। 'बलवाइयों' के पकड़े जाने के लिये गाँव गाँव में इनामी इश्तहार बांटे जा रहे थे।

रावसाहब के पास रईस और सरदार काफी थे परन्तु सेना बहुत कम थी। तोपें नहीं थीं, सामान नहीं बचा था। और व्यवस्था तो कभी भी न थी।

दिन भर लू चली। रात को भी काफी गरम हवा चल रही थी। तारे धूल की पतली चादर से ढके हुये थे। गोपालपुरा के एक बगीचे में रावसाहब, तात्या, बाँदा के नवाब इत्यादि आगे की योजना के आकार प्रकार बना-बिगाड़ रहे थे। रात अंधेरी थी। पास में कोई उजाला न था। इसलिये किसके चेहरे पर क्या गुजर रही थी, कोई नहीं देख सकता था।

रानी लक्ष्मीबाई अपने शिविर में थीं। उस दरबार में न थीं।

रावसाहब ने कहा, 'किसी प्रकार नागपूर की ओर पहुँच पावें तो शीघ्र सैन्य संग्रह हो। इन्दोर की छावनी से भी सहायता मिले।'

बाँदा के नवाब ने अपनी घबराहट प्रकट की, 'हैदराबाद के निजाम के मारे नागपूर के पड़ौस में ठहर पाना दूभर हो जायगा।'

तात्या बोला, 'निजाम का कोई भय नहीं। वहाँ की जनता तुरन्त हमारा साथ देगी।'

रावसाहब—'वहाँ से महाराष्ट्र सरक जाने में बड़ा सुभीता रहेगा। पहाड़ियाँ, किले, घाटियाँ और नदियाँ बारगी और भूबँधी-दोनों प्रकार की लड़ाइयों के लिये बहुत उपयोगी हैं।'

नवाब—'परन्तु वहाँ तक पहुँचेंगे कैसे?'

तात्या—'पहुंचाने का जिम्मा मैं लेता हूं।'

नवाब—'जासूसी से जो खबरें मिली हैं, उनसे हर हालत में इस नतीजे पर पहुँचने के लिये विवश हूँ कि हम लोग पिंजड़े में फँस गये हैं।'

रावसाहब—'अवध की तरफ चलना ज्यादा अच्छा होगा। अवध पास है। मार्ग सीधा है। वहाँ की जनता अदम्य है। लखनऊ का पतन हो गया तो क्या हुआ। नाना साहब अभी वहाँ है। बेगम साहब भी हैं।'

तात्या—'अवध में हम लोग बहुत काम कर सकते हैं। एक बाधा अवश्य है।'

रावसाहब—'वह क्या?'

तात्या—'उस प्रदेश में किले बहुत कम हैं।'

नवाब—'एक बड़ी बाधा और है। अङ्गरेजों की बेशुमार पल्टनें अवध में फैल गई हैं और ज्यादा कलकत्ते से आ रही हैं।'

एक सरदार—'मेरी समझ में तो यह आता है कि छोटी-छोटी टुकड़ियों में बट कर इधर-उधर फैल जाओ और अङ्गरेजी इलाके की लूटमार शुरू कर दो।'

दूसरा सरदार—'और नये-नये लोगों को इन टुकड़ियों से भर्ती करते जाओ। एक दिन काफी बड़ी सेना बिना परेशानी के अपने पास हो जावेगी तब हम लोग अङ्गरेजों को चित्त कर देंगे।'

तात्या—'इसमें कितने दिन लगेंगे?'

रावसाहब—'समय की चिन्ता क्या है ? अङ्गरेजी सेना में फिर कोई बलवा होगा। तोपें हाथ आजायेंगी और काम बन जायगा।'

नवाब—'लेकिन तोपें अब हिन्दुस्थानी फौज के हाथ में कभी नहीं आवेंगी। तोपखानों को अङ्गरेज अपने हाथ में रखने लगे हैं।'

एक सरदार—'परन्तु जनता के पास तो हथियार हैं।'

नवाब—'जब तक आप फौज इकट्ठी करेंगे तब तक अङ्गरेज लोग सारी जनता के हथियार अपने मालखाने में रखवा लेंगे।'

रावसाहब—'कहीं कालपी फिर वापिस मिल जाय तो सब दिक्कतें दूर हो जायें।'

नवाब—'हम तो चाहते हैं कि दिल्ली और लखनऊ भी हाथ में आ जायें, मगर चाहने से होता क्या है ?'

सरदार—'मेरा कहना मानिये। टुकड़ियों में बटकर लूटमार शुरू कर दीजिये।'

तात्या—'जनता साथ न देगी।'

रावसाहब—'तुम अवध के लड़ाकों को भर्ती करके यहाँ ले आओ।'

तात्या—'जो आज्ञा।'

नवाब—'लेकिन इसमें वक्त लगेगा, और तब तक हम आप क्या करेंगे ?'

रावसाहब—'तो फिर राजा बखतबली और राजा मर्दनसिंह को बुन्देलखण्डी सेना सहित फिर बुलवाओ।'

नवाब—'उनको हमारा साथ देना होता तो गोपालपुरा में आज कभी के आ जाते।'

रावसाहब—'तब फिर क्या किया जाय ?'

सरदार—'राजपूताने की तरफ चलिये। वहाँ की छावनियों ने अभी तक कुछ नहीं किया है।'

तात्या—'वहाँ की छावनियाँ बहुत करके अपना साथ न देंगी।'

रावसाहब—'मेरा मन दक्षिण भारत के लिये बहुत बोलता है।'

नवाब—'परन्तु वहाँ तक पहुँचें कैसे ?'

तात्या—'मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूँ कि पहुँचा मैं दूँगा।'

नवाब—'मैं जरा पहले अर्ज कर चुका हूँ कि झाँसी, सागर, सीहौर वगैरह में बहुत सी अङ्गरेजी फौज है और हम यहाँ पिंजड़े में फँस गये हैं।

सरदार—'तब फिर अङ्गरेजों के हाथ अपने को सौंप दिया जाय ?'

नवाब—'यह मैंने हरगिज नहीं कहा।'

रावसाहब—'तब फिर किसी अङ्गरेजी छावनी पर एकदम टूट पड़ें और उसको चीरते हुये आगे बढ़कर भाग्य की परीक्षा करें।'

नवाब—'परन्तु बिना बड़ी तोपों की मदद के छावनी के ऊपर हमला करना मौत के मुँह में जाना है।'

रावसाहब—'यदि तात्या महाराष्ट्र में जाकर जनता को जाग्रत करदे तो अङ्गरेज वहाँ उलझ जायेंगे और तब हम सरपट महाराष्ट्र में पहुँच सकते हैं।'

नवाब—'लेकिन फिर वही सवाल उठता है तब तक हम लोग यहां क्या करें ?'

तात्या—'रानी साहब की राय ली जाय।'

रावसाहब—'मैं रानी साहब की राय की कदर करता हूँ। वे बहुत अच्छी सैनिक हैं और लड़ाई के मैदान में विजय भी प्राप्त करा सकती हैं परन्तु स्त्री हैं और जितना संसार हम लोगों ने नापा है उतना उन्होंने नहीं।'

नवाब—'इस पर भी उन्होंने दस महीने खूबी के साथ झाँसी का राज्य किया। ऐसा कि प्रजा उन पर कुर्बान हो गई।'

रावसाहब—'यह सब ठीक है, बिलकुल ठीक है। सलाह लेने में कोई हर्ज नहीं। मानना न मानना अपने हाथ में है।'

तात्या—'उनको सवेरे लिवा लाऊँ ?'

सरदार—'सवेरे के जरा बाद। सवेरा होने में बहुत देर भी नहीं है। वे अपने भजन-पूजन से निवृत्त हो जायेंगी, तब तक अपुन लोग जरा नशा-पत्ता करेंगे। कई दिन से नहीं छनी है। कहीं से कोई अच्छी सलाह न मिली तो विजया भवानी सिर पर चढ़कर सब कुछ बोल बता देंगी।'

रावसाहब—'बड़ा अच्छा है। अभी अङ्गरेज हम लोगों से काफी दूर हैं। हवा पर बैठ कर तो आये नहीं जाते। परन्तु भाई गहरी न छने। नहीं तो रानीसाहब कुछ ज्यादा डाट-फटकार करेंगी।'

इस तरह रात भर यह विवाद जारी रहा, परन्तु ये लोग किसी भी निश्चय पर न पहुँच सके।

प्रातःकाल के उपरान्त तात्या रानी को लिवा लाया। तात्या ने उनको रात के अधिवेशन का संक्षेप में वृतान्त सुना दिया था।

लोग भंग पीकर निवृत्त हो गये थे। हुक्के गुड़गुड़ा रहे थे कि वे आ गईं। लोग उनका अदब करते थे, इसलिये हुक्के हटा दिये गये।

पेशवाई सेना की अधोगति का उनको पता था। तो भी उन्होंने अपने क्षोभ को दबाकर परिस्थिति को भली भाँति समझने के लिये प्रश्न किये। जो उत्तर मिले उनका निचोड़ वही था जो रात की बैठक में बाँदा के नवाब ने बतलाया था—'हम लोग पिंजड़े में फँस गये हैं।'

रानी ने कहा, 'अब तक हम लोग जहाँ जहां अङ्गरेजों से जम कर लड़ पाये, वहां वहां किलों का आश्रय लेकर। फिर किसी मजबूत किले को हाथ में करना चाहिये। तोपें सहज ही ढल जायँगी। काम चालू हो जायगा।'

रावसाहब—'परन्तु झाँसी और कालपी के किले तो फिर नहीं मिल सकते। कम से कम अभी हाथ नहीं आ सकते।'

रानी—'इनको कुछ दिनों विचार से अलग रखिये।'

तात्या—'नरवर का किला बहुत अच्छा है। निकट सिन्ध नदी है। आसपास पहाड़ और जंगल हैं।'

नवाब—'करेरा का भी किला अच्छा है।'

रानी—'न।'

रावसाहब—'तब फिर कौन-सा किला ?'

रानी—'ग्वालियर का। वही यहाँ से अत्यन्त निकट है।'

रावसाहब—'ग्वालियर का किला !'

नवाब—'ग्वालियर का !'

रानी—'हाँ ग्वालियर का। ग्वालियर की वस्तुस्थिति का पुनः अनुसन्धान करके तुरन्त ग्वालियर पर आक्रमण कर देना चाहिये। राजा और वहाँ के दो-तीन सरदार अङ्गरेज कम्पनी के पक्षपाती हैं। परन्तु सेना और जनता नहीं है। सेना यदि हमारा पक्ष प्रबलता के साथ न भी पकड़ेगी तो ढुलमुल अवश्य रहेगी। ग्वालियर में बनी-बनाई सजी-सजाई बढ़िया तोपें, गोले-गोली, सैकड़ों मन बारूद और अन्य प्रकार की युद्ध-सामग्री तथा अटूट कोष है।'

नवाब—'लेकिन...'

रावसाहब—'हाँ, परन्तु...'

रानी—'किन्तु, परन्तु, कुछ नहीं। बिना किले के कोई भी प्रयास आत्म-वध के समान होगा और सिवाय ग्वालियर के किले के हमारे लिये सब किले इस समय स्वप्न हैं।'

रावसाहब—'बात तो ठीक कह रही हैं बाईसाहब, आप भी सोचिये नवाब साहब। क्यों तात्या ?'

नवाब—'मैं रानी साहब की राय को मानने के लिये तैयार हूँ। लेकिन ग्वायलिर की सेना या कुछ सरदारों को, चढ़ाई के पहले मिला लेना चाहिये।'

तात्या—'वहाँ का हाल मुझको मालूम है। माहुरकर, बलवन्तराव और दिनकरराव दीवान के सिवाय और सब सरदार स्वराज्य-स्थापना के पक्ष में हैं। सेना का काफी अंश हमारा साथ देगा।'

रानी—'एक बार फिर जाओ। शीघ्र जाओ और पूरा पता लगा कर शीघ्र आओ।'

रावसाहब—'शीघ्रता के लिये तो तात्या शेरों का शेर है।'

आज्ञा पाकर तात्या तुरन्त ग्वालियर की ओर रवाना हुआ।

[८३]

सन्ध्या के होते ही रानी थोड़ी देर के लिये ध्यान–मग्न हुईं। ध्यान के उपरान्त वे शिविर के बाहर निकली थीं कि रामचन्द्र देशमुख, रघुनाथसिंह और गुलमुहम्मद आ गये।

रानी के पास उस समय लालकुर्ती वाले केवल दो सौ सवार रह गये थे। हिन्दू और मुसलमान। इस रिसाले की प्रधान सेनाध्यक्ष रानी थीं और उनके अधीन यूथपति ये तीन पुरुष और वे दो स्त्रियाँ–जिनमें मुन्दर तो रानी के साथ छाया की तरह रहती थी। यह छोटी सी सेना उनकी परम भक्त थी और संयम निष्ठ।

रघुनाथसिंह ने कहा, 'सरकार दीवान जवाहरसिंह अपने इलाके के बाहर नहीं निकल पा रहे हैं। उन्होंने कुछ सेना इकट्‌ठी की थी। कंपनी के दस्ते उनको पछिया रहे हैं। वे अब इस ओर शायद ही आ सकें।'

गुलमुहम्मद बोला, 'सरकार हम अपने मुल्क पहुँच पाये तो इतना पठान लाये कि दुश्मनों को कच्चा चबा जाये।

देशमुख ने कहा, 'सिपाही आगे के हुकुम की प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

रानी बोलीं, 'प्रधान सेनापति रावसाहब पेशवा हैं। मैं इस समय कुछ नहीं बतला सकती। परन्तु शीघ्र कुछ होगा, यह कह सकती हूं।'

देशमुख—'अपना रिसाला लड़ने के लिये उकता रहा है।'

रानी —'यह सैनिक का एक दोष है, गुण नहीं। उकताना नहीं चाहिये। उनको समय पर भोजन, आराम, वेतन मिलता जा रहा है?'

उन तीनों ने हाँ में उत्तर दिया।

रानी ने कहा, 'किसी समय भी, तनिक सी भी कमी जान पड़े, मुझ से तुरन्त कहना। मेरे पास अभी बहुत से हीरे जवाहर हैं। तुम लोगों को और तुम्हारे रिसाले को किसी प्रकार कष्ट न हो, मैं यही चाहती हूँ।'

'कभी नहीं हो सकता', कहकर वे लोग चले गये। भोजन करने के उपरान्त रानी ने शयन किया मुन्दर पैर दाबने लगी।

रानी ने पैर खींचकर कहा, 'तेरी यह आदत न जाने क्यों नहीं जाती। मेरा शरीर नहीं दुख रहा है। उस दिन नहीं दुखा जब झांसी से कालपी आई थी। आज तो कोई परिश्रम ही नहीं किया।'

'हाँ, नहीं जाती', मुन्दर ने हठपूर्वक और इठलाकर कहा, 'चाहे जैसी पीड़ा सिर पर आ जाय आप कभी कहती थोड़े ही हैं।'

मुन्दर पैर दाबने लगी।

'तो तू क्या जन्म भर मेरे पैर दाबा करेगी ?'

'जी हाँ, जन्म भर।'

'रिसाले की कर्नल होकर ?'

'जी हाँ, जब एक दिन जनरल हो जाऊँगी, तब भी इन पैरों का दाबना नहीं छोड़ूँगी।'

'पैरों के दाबने वाले जनरल का नाम सुनकर लोग क्या कहेंगे ?'

'जिन लोगों को यह न मालूम होगा कि इन चरणों की धूल में जनरल बनाने का गुण है, वे भले ही कुछ कहें !'

'कदाचित् ऐसा हो, परन्तु मेरी वाणी में यह गुण नहीं है। इन लोगों को सम्मति देती हूँ। हाँ-हाँ कर देते हैं, परन्तु करते मनमानी हैं। कालपी का युद्ध क्या हारने योग्य था ?'

'इनमें कोई रण-पण्डित है ही नहीं।'

'एक है—तात्या टोपे, परन्तु उसकी चलती नहीं और वह आवश्यकता से अधिक आज्ञानुवर्ती है। प्रतिवाद करना जानता ही नहीं।'

'वे कालपी के युद्ध में नहीं थे। घर चले गये थे।'

'उस समय उसको क्षोभ हो गया था। कारण को उघारना व्यर्थ है ! तू जानती है, यदि इन असंख्य सेनापतियों में गाँठ की कोई बुद्धि होती तो इनके व्यसन न खटकते, परन्तु व्यसनी हैं और मूर्ख हैं।'

'यही बात जूही कहती है। अपने अन्य सरदार भी कहते हैं।'

'गुलमुहम्मद बात करने में जैसा लट्ठ जान पड़ता है वैसा वास्तव में नहीं है। वह चतुर और वीर दल नायक है। वैसे ही देशमुख और रघुनाथसिंह हैं।'

'हाँ सरकार।'

'एक बात बतला मुन्दर।'

'आज्ञा सरकार।'

'तू संसार में सबसे अधिक किसको चाहती है ? सच-सच कहना।'

'सच कहती हूँ। भगवान जानते हैं—मैं आपको सबसे अधिक चाहती हूँ।'

'मेरे उपरान्त किसको ?'

मुन्दर ने उनके पैर पकड़ लिये। सिर नीचा कर लिया।

'और कौन है सरकार ?'

'नाम बतलाऊँ ?'

'नहीं।'

'मुन्दर, तू विवाह करना।'

'जब सरकार स्वराज्य स्थापित कर चुकेंगी तब।'

'स्वराज्य तो देर-सवेर स्थापित होगा ही। तू विवाह के लिये क्यों रुके ?'

'वह जीवन का मुख्य कार्य नहीं है।'

'यह तेरी इच्छा पर निर्भर है, परन्तु मेरी अनुमति है।'

'असम्भव सरकार। मेरा प्रण है।'

'जूही ने भी प्रण किया है। उस पर मुझको दया आती है।'

'उसने मरणपर्यन्त कौमार्य व्रत का प्रण किया है।'

'असम्भव नहीं है।'

'मैं सरकार से एक बात पूछना चाहती हूँ।'

'पूछ।'

'जितनी निर्भय आप हैं, क्या कोई और हो सकता है।'

'अवश्य । कुछ कठिन नहीं ।'

'सो कैसे ?'

'सहज ही । काफी शारीरिक श्रम कर, शीघ्र ही ध्यान और विश्वास से सहज हो जायगा ।'

मुन्दर गद्गद् हो गई । कुछ क्षण चुप रहने के बाद यकायक बोली, 'बाईसाहब, मैं आपके समक्ष मर जाऊँ, तो मुझे बड़ा सुख होगा। मोतीबाई की सी मृत्यु की आराधना करती हूँ ।'

'जो बात मैंने बतलाई वह इससे कहीं बढ़कर है ।'

[८४]

सन् १८४४ में अङ्गरेजों ने सिन्धिया की सेना को, जो होलकर सिन्धिया के परस्पर युद्धों के कारण पहले ही क्षीण हो चुकी थी, पराजित किया था। तब से ग्वालियर को केवल दस सहस्र सिपाही रखने का अधिकार रह गया था और तब से लगातार अंग्रेज रेजीडेंट ग्वालियर का शासन सूत्र अपने हाथ में रक्खे रहा था। सन् १८५३ में जयाजीराव को शासनाधिकार मिल गये, परन्तु सूत्र रेजीडेंट के ही हाथ में रहा। बची-खुची सलाह सम्मति के लिये आगरा में लैफ्टिनेंट गवर्नर था ही !

ग्वालियर में सिन्धिया की दस सहस्र सेना के अतिरिक्त, पोषित एक अंग्रेजी सेना भी थी। इस पोष्य (सबसीडियरी) सेना ने भी सन् ५७ ने विद्रोह में भाग लिया। तात्या यहाँ आया-जाया करता ही था। यह सेना तात्या के साथ कानपूर पहुँच गई। परन्तु इस सेना ने जयाजी राव और दीवान दिनकरराव के कौशल के कारण ग्वालियर स्थित अंग्रेजों का भी कुछ नहीं बिगाड़ पाया और वे सुरक्षित आगरा पहुंचा दिये गये, जयाजीराव ने किसी प्रकार अपनी सेना को शान्त रक्खा यदि ग्वालियर राज्य अङ्गरेजों के विरुद्ध हो जाता, तो निजाम और सिख राजाओं के कम्पनी-भक्त रहते हुये भी, अङ्गरेजी राज्य हिन्दुस्थान में किसी प्रकार भी नहीं टिक सकता था। ग्वालियर कोई बड़ा प्रबल राज्य नहीं था, परन्तु ग्वालियर के विरुद्ध होते ही, अङ्गरेजी राज्य के खिलाफ स्वराज्य का संक्रामक गुण इतनी प्रचण्डता और वेग के साथ आस-पास के राज्यों, विंध्यखण्ड और दक्षिण भारत में फैलता कि अंग्रेजी राज्य उससे बच ही नहीं सकता था।

जब तात्या ग्वालियर पहुँचा तब उसने वहाँ की सेना के एक बड़े अंग और अधिकतर सरदारों को रानी तथा पेशवा के बहुत कुछ अनुकूल पाया। सिंधिया सरकार को पेशवाई सेना के गोपालपूर में आ जमने की सूचना मिल गई थी। गवर्नर जनरल को तुरन्त समाचार दिया गया और अपनी दृढ़ तथा प्रबल राजभक्ति का पक्का आश्वासन।

गवर्नर जनरल लार्ड कैंकिंग ने इङ्गलैण्ड को तार दिया, 'यदि सिन्धिया बलवाइयों में शामिल हो जाय तो मुझको कल ही बँधना-बोरिया बाँधकर यहाँ से चल देना पड़ेगा।'*

तात्या ने रावसाहब इत्यादि को ग्वालियर का हाल दूसरे दिन लौट कर सुनाया। रानी ने तुरन्त आक्रमण कर देने की सलाह दी।

रावसाहब ने सिन्धिया सरकार को एक पत्र लिखा जिसका तात्पर्य यह था कि हम दक्षिण की ओर स्वराज्य-स्थापना के प्रयत्न में जा रहेहैं। आप हमारे पुराने नाते का स्मरण करिये और हमें सहायता दीजिये।

दिनकरराव ने जो उत्तर दिया, यह गोल-मटोल था। न उसमें हामी थी और न इनकार। दिनकरराव ने रेजीडेण्ट को सूचना भेज दी।

पेशवा की सेना कालपी के युद्ध के चार दिन बाद ग्वालियर राज्य में धँस गई। सिन्धिया सरकार का एक अफसर चारसौ पैदल और डेढ़सौ घुड़सवार लेकर रोकने के लिये पहुंच गया। वह जरा-सी डाट-फटकार में ही पीछे हट आया। दो दिन बाद रावसाहब की सेना ग्वालियर से नौ मील की दूरी पर एक गाँव के पास ठहर गई, रावसाहब ने सिन्धिया को एक पत्र फिर सहायता के लिये लिखा। इस पर ग्वालियर की राजसभा में विवाद हुआ। राजा का इरादा था 'बलवाइयों' पर तुरन्त हल्ला बोल देने का। दीवान की नीति थी ह्यू रोज के आने तक 'बलबाइयों' को किसी बहाने अटकाये रहना और अपनी सेना को किसी प्रकार काबू में रखना। राजा ने नहीं माना और पहली जून को मुरार के पूर्व बहादुर-पुर गाँव के निकट पेशवा का मुकाबिला करने के लिये छः हजार पैदल, बारह सौ भड़कीले सवार और आठ आधुनिक बड़ी तोपें लेकर मोर्चा जा पकड़ा। प्रातःकाल होते ही सिन्धिया ने पेशवा की ओर गोले फेकने शुरू कर दिये। जब तक सिर पर गोले नहीं पड़े, रावसाहब और तात्या ने भी समझा कि ग्वालियर की तोपें पेशवा की अगवानी के लिये सलामी दाग

"If the Scindhia joins the mutiny, I shall have to pack off tomorrow."

रही हैं । उस क्षण पेशवा की सेना में लड़ाई की कोई तैयारी न थी । रानी की आज्ञा पर रघुनाथसिंह ने तुरन्त तैयार हो जाने का बिगुल भी बजाया, परन्तु उस नक्कारखाने में इस तूती की आवाज को कौन सुनता था ? जब सिन्धिया के गोलन्दाजों ने पेशवा की छावनी पर ताक-ताककर गोलाबारी की, तब भगदड़ मच गई ।

परन्तु रानी, उनके दलपति और सवार पहले से कमर कसे तैयार थे । तात्या टोपे को छावनी का बरकाव करने के लिये कहकर रानी लक्ष्मीबाई सिन्धिया सरकार की सेना पर केवल दो सौ सवार लेकर टूट पड़ीं । कुछ गोलन्दाज मारे गये, कुछ तोपें छोड़कर भागे । तात्या ने तुरन्त अपनी छावनी के दो भाग करके उसको गतिवान किया और उसे एक ओर हटा ले गया—वह इस विद्या में अत्यन्त निपुण था । लक्ष्मीवाई के पराक्रम को, और तात्या की दोनों टुकड़ियों को दूसरी दिशा से आता हुआ देखकर सिन्धिया के वे छः हजार पैदल मैदान खाली कर गये परन्तु बारह सौ भड़कीले सवार अब भी साथ में थे । इन पर लक्ष्मीबाई के उन कसदार दो सौ सवारों का सपाटा पड़ा । थोड़ी देर तक तलवार चली और खूब चली, परन्तु वे रानी के सवारों की टक्कर को न झेल सके; कटने और भागने लगे । जयाजीराव को तुरन्त मैदान छोड़कर भागना पड़ा । पहले राजमहल का रास्ता पकड़ा, फिर वह और दिनकर-राव, दो एक विश्वसनीय सरदारों को लेकर धौलपूर होते हुये आगरा पहुँचे । वहाँ किले में उन लोगों को शरण मिली ।

[८५]

राजा के आगरा चले जाने पर रानियाँ नरवर के किले में चली गईं। पेशवाई सेना ने हर्ष और गर्व के साथ नगर में प्रवेश किया। ग्वालियर की बिखरी हुई फौज एकत्र हो गई, उसने पेशवा को तोपों की सलामी दी और उसकी अधीनता में आ गई। पेशवा बड़े ठाट के साथ माङ्गलिक वाद्य बजवाता हुआ, सिन्धिया के राजमहल के पहुँचा और वहीं डेरा डाला। रानीलक्ष्मीबाई ने अपना शिविर नौलखा बाग में रक्खा। पेशवा के साथी सरदार शहर के भिन्न भिन्न महलों में जा उतरे। तात्या के दस्ते के लिये किले वालों ने फाटक खोल दिये। बहुत सी सामग्री हाथ आ गई। किले पर पेशवा का झण्डा फहराने लगा। सिन्धिया का खजाना कब्जे में आ गया। अब पेशवा के बराबर था ही कौन ?'

पेशवाई सेना के कम्पनी-विद्रोही भाग ने रेजीडेन्सी में आग लगाई और उसका माल-असबाब लूट लिया। दीवान दिनकरराव सरदार बलवन्तराव और सरदार माहुरकर की हवेलियों को भी, जो अङ्गरेजों के पक्षपाती थे, खाक कर दिया। एक बार मन का बन्धेज उठा कि फिर उसमें सीमाओं की पहचान न रही—शहर का लूटना भी आरम्भ कर दिया। परन्तु पेशवा को ठीक समय पर मालूम हो गया। उसने तात्या को भेजकर यह लूटमार बन्द करवा दी।

ग्वालियर के दरबारी पेशवा के अनुकूल थे और जनता का मन उसके साथ था। विजय के हर्ष और गर्व ने उसकी छाती और दिमाग को फुला दिया था, इसलिये कायदे के साथ सिंहासनारूढ़ होने का निश्चय किया। ज्योतिषियों ने मुहूर्त शोध किया। पेशवा की स्वराज्य-कामना अपने निज के उत्थान के रूप में पलट गई।

तीसरी जून को फूलबाग में एक विशाल दरबार किया गया।

पेशवा ने राजसी कपड़े पहिने। कानों में मोतियों के चौकड़े, गले में मोती-जवाहरों के कण्ठे। शान के साथ चोबदारों के प्रणाम लेता हुआ

मङ्गल-ध्वनि के साथ सिंहासनारूढ़ हो गया। सरदारों ने ताजीम दी। पेशवा ने उनका अभिनन्दन किया और खिल्तें बख्शीं। अष्ट प्रधान और एक प्रधान मन्त्री मुकर्रर किये। तात्या टोपे को प्रधान सेनापति। अपने फौजियों को बीस लाख रुपया इनाम बाँटा। असंख्य ब्राह्मणों के भोजन का प्रबन्ध करवाया। सहस्रों व्यक्तियों को तो रसोई बनाने के लिये ही नियुक्त करना पड़ा। भङ्ग-बूटी और शकर बादाम की पूरी योजना कार्यान्वित हुई।

आनन्द के इस तूफान में यदि कोई नहीं पड़ा तो लक्ष्मीबाई और उनके पाँच नायक—उनकी लालकुर्ती सेना अवश्य इनाम की भागी बनी।

ग्वालियर का गायन-वादन शताब्दियों से प्रसिद्ध रहा है। इसलिये उसका अखण्ड उपयोग किया जाने लगा। नृत्य और गायन से दिन और रात ओत-प्रोत हो गये। ग्वालियर की ऐसी कोई भी नर्तकी और गायिका न थी, जिसको अपने कला-कौशल के दिखलाने का काफी अवसर और समय न मिला हो। कवि सम्मेलन और मुशायरे भी हुये जिनमें कवि-कल्पना ने शब्दों के पुल बाँध-बाँध कर, जमीन आसमान एक कर दिये। कोई पेशवा की तुलना रामचन्द्र जी के साथ कर रहा था और कोई इन्द्र के साथ। दूसरी ओर भांड़ों की नकलें जारी थीं, जिनसे परिहास और अट्टहास के फव्वारे छूट रहे थे।

रानी किसी उत्सव में शामिल नहीं होती थीं। इस वैराग्य वृत्ति के कारण उनको उत्सवों में बुलाया ही नहीं जाता था।

तात्या के मन के कोने में से एक दबी हुई वासना उभड़ पड़ी और वह भी अपने स्वामी पेशवा के साथ नृत्य-गान के रस में डूब गया।

नृत्य-गान के एक बड़े उत्सव में रानी के सरदारों को हठपूर्वक बुलाया गया। रानी ने अनुमति दे दी। मुन्दर नहीं गई। बाकी गये।

उत्सव में ग्वालियर की चुनी हुई प्रसिद्ध नर्तकियाँ और गायिकायें बुलाई गईं। गायन के साथ साथ नृत्य भी हुआ।

पेशवा ने आज्ञा दी, 'गायन और नृत्य के साथ पूरा हाव–भाव तो दिखलाओ।'

उन्होंने ब्योरे के साथ विविध प्रकार का हावभाव प्रदर्शन आरम्भ किया।

जूही मन लगा कर देख रही थी। गायन के तोड़ों को वह सूक्ष्मता के साथ जाँच रही थी। ताल की परनों के साथ उसके पैर की उँगलियां घूम जाती थीं और सम पर सिर हिल जाता था। एक जगह नर्तकी पखावजी के विलक्षण कौशल के कारण क्षण के एक अंश के पहले ही सम पर घुंघरू ठुमका गई। जूही ने त्योरी बदल कर मुँह बिचकाया। तात्या ध्यान के साथ नर्तकी के सुन्दर रूप, कलापूर्ण नृत्य, मनमोही हावभाव प्रदर्शन पर आँख गड़ाये था। जूही ने तात्या के इस ध्यान को परखा। एक बड़ी ग्लानि उसके मन में उठी।

देशमुख, रघुनाथसिंह और गुलमुहम्मद पास पास बैठे थे।

गुलमुहम्मद ने धीरे से कहा, 'बाई यह सब बड़ा अजीब है। अमारे यहाँ तो ऐसा कोई नई नाचता।'

देशमुख—'ग्वालियर इन बातों के लिये मशहूर है।'

गुलमुहम्मद—'लेकिन अगर अङ्गरेज इस वक्त आ जाय तो।'

देशमुख—'तो सबको भागना पड़ेगा।'

रघुनाथसिंह—'और बचेगा कोई नहीं!'

गुलमुहम्मद—'बहुत देख लिया। अमारा तो तेट भर गया। अमारा रानी सो गया होगा। छावनी अकेला है। चलबी बाई।'

जूही ने सुन लिया। चलने के प्रस्ताव का समर्थन किया।

पेशवा से मांफी मांगी। इजाजत ली। तात्या ने जूही की ओर देखा। उसने एक करारी त्योरी ली और अभिमान के साथ सिर फेर लिया। ये सब वहां से अपनी छावनी चले आये।

थोड़े क्षणों के लिये उत्सव बन्द हो गया। बीच के इस विक्षेप के कारण रसियों को बहुत बुरा लगा।

किसी ने पूछा, 'ये लालकुर्ती वाले कौन थे ?'

पेशवा ने धीरे से कहा, 'कुछ बात नहीं। अपने ही लोग हैं। बुन्देलखण्ड के केन्द्र झाँसी के हैं। जरा गंवार हैं।'

तात्या को रानी की याद आ गई और वह कांप गया, परन्तु उसने कहा कुछ नहीं—कह भी क्या सकता था ? उत्सव रात भर होता रहा। सवेरे खूब भंग छनी। डटकर लड्डुओं का और श्री खंड का भोजन हुआ और फिर दिन भर सोना और रात को नाचरङ्ग। जब जरा फुरसत मिली तो पूछताछ हो गई कि ब्राह्मण भोजन यथाविधि चल रहा है और सेना भी खूब आनन्द मना रही है या नहीं।

बस यही अबाध क्रम।

लड्डू और श्रीखण्ड खाते खाते बहुत ब्राह्मण बीमार पड़ गये। उन में से एक नारायण शास्त्री था।

छोटी ने उसकी इतनी सेवा सुश्रूषा की कि यह शीघ्र अच्छा हो गया।

गाँठ में थोड़ासा पैसा कर लेने की इच्छा से छोटी ने भी पेशवा के दरबार में नृत्य करने का निश्चय किया।

नारायण ने मना किया, 'मैं अच्छी तरह चलने फिरने योग्य होते ही बहुत धन कमा लूंगा। तुम इन सरदारों के उत्सव में नाचने मत जाओ। ये लोग बड़े कुरुचिपूर्ण हैं।'

छोटी ने प्रश्न किया, 'मुझ पर आपको क्या भरोसा नहीं है ?'

नारायण—'भरोसा तो पूरा है छोटी, परन्तु यह काम जघन्य है।'

छोटी—'जब पल्टनों में नाचती गाती थी, तब वह काम श्रेष्ठ था !'

नारायण—'उसका मतलब ऊँचा था।'

छोटी—'पास में रुपया पैसा कुछ नहीं है। आप चलने फिरने लायक कुछ देर में हो पावेंगे। मैं आज के ही नाच में काफी पैसा ले आऊँगी। मन ऊँचा बना रहे तो कोई काम नीचा नहीं।'

शास्त्री को छोटी का हठ निभाना पड़ा। छोटी सुन्दर वेष में पेशवा के उत्सव में पहुंच गई और उसका नाच गान हुआ।

गाना उसका बहुत साधारण श्रेणी का था। उसकी विशेषता केवल उसका सुरीला और मधुर कण्ठ थी। नृत्य भी उसका एक बँधे हुये प्रकार का था। लय जरूर बहुत द्रुत थी। सुन्दरी थी, इसलिये उसको टोका नहीं गया।

उसके सीधे-सादे गाने और नाचने पर रावसाहब मुग्ध हो गया। अच्छा पुरस्कार दिया। बोला, 'तुम क्या यहीं की रहने वाली हो? तुम्हारा नृत्य शास्त्रीय ढङ्ग का न होने पर भी निराला है। तुम बराबर नाचने आया करो।'

छोटी ने उत्तर दिया, 'सरकार मैं झाँसी की रहने वाली हूँ। लश्कर में कुछ समय से हूँ।'

तात्या छोटी को बड़ी देर से देख रहा था। पहिचानने की चेष्टा कर रहा था। अब उसको भ्रम न रहा।

तात्या ने रावसाहब से कहा, 'यह जाति की मेहतरानी है श्रीमन्त।'

पेशवा—'मेहतरानी!'

तात्या—'सरकार।'

पेशवा—'तो भी क्या हुआ? उसके पास विद्या है। नाचती क्या है जादू डालती है।'

तात्या—'यह नारायण शास्त्री के साथ झाँसी से भागी थी।'

पेशवा—'नारायण शास्त्री के साथ! ब्राह्मण को पतित करके!!'

रावसाहब का कला-प्रेम समाप्त हो गया। क्रुद्ध-स्वर में बोला, 'तूने यहाँ आने की कैसे हिम्मत की?'

छोटी—'जैसे पल्टनों में जाने की, देश का कार्य करने की करती थी।'

पेशवा ने तात्या की ओर देखा।

तात्या ने कहा, 'पल्टनों में जागृति फैलाने का काम तो इसने ग्वालियर में बहुत किया है।'

पेशवा—'तो क्या हुआ? अब जो कुछ कर रही है और जो कुछ इसने झाँसी में किया, वह दण्डनीय है।'

छोटी ने अदम्य भाव से कहा, 'मुझको दण्ड और इनाम जो कुछ मिलना था, पा चुकी।'

पेशवा—'तू ग्वालियर में नहीं रह सकती। यहाँ मेरा राज्य है। तुरन्त खाली कर।'

छोटी—'कहाँ जाऊँ?'

पेशवा—'चाहे जहाँ। अंगरेजों के राज्य में।'

छोटी—'जाती हूँ। परन्तु अंग्रेजों के राज्य में नहीं जाऊँगी, क्योंकि वे लोग हमको क्षमा नहीं करेंगे।'

छोटी चली आई। नारायण को पुरस्कार के रुपये दिये और सब हाल सुनाया।

पहले तो उसको बहुत क्षोभ आया। बोला, 'इन अपवित्र रुपयों को नहीं लूंगा। चलो छोटी, ऐसी जगह चलें जहाँ पेशवा का अत्याचार पीछा न कर सके।'

छोटी ने कहा, 'रुपये अपवित्र नहीं हैं। पसीना बहाकर लाई हूं। पेशवा का राज्य सारे संसार में नही है।'

नारायण—'परन्तु जात-पांत का राज्य तो है।'

छोटी—'आप कहा करते हैं कि वैष्णव हो जाने पर जात-पांत का भूत भाग जाता है।'

नारायण—'मैं गलत नहीं कहता हूं। चलो। यही वेश हमारी रक्षा करेगा।'

वे दोनों चले गये, और फिर पेशवा को उनका पता नहीं लगा।

उधर रोज को पहली जून के दिन ही, खबर मिल गई कि 'बलवाई' ग्वालियर की ओर बढ़ते जा रहे हैं। कालपी की जीत के उपरान्त वह छुट्टी लेकर बम्बई जा रहा था। इस खबर के पाते ही उसने अपनी छुट्टी काट दी और जगह-जगह से दलपतियों को ग्वालियार की ओर बढ़ने का आग्रह-समाचार भेज दिया। चार जून को उसे समाचार मिला कि

ग्वालियर का पतन हो गया ग्रौर राजा तथा दिनकरराव ग्रागरा भाग गये । सन्नाटे में ग्रा गया । कालपी की इतनी बड़ी ग्रौर बुरी पराजय के उपरांत भी ग्वालियर हस्तगत करने का विचार ग्रौर साहस कौन कर सकता था ? कौन इतना बड़ा मन्सूबा गाँठ सकता था ? किसमें इतना बड़ा हौसला था ?

रोज ने सोचा, 'झाँसी की रानी के सिवाय ग्रौर कोई नहीं हो सकता । जब तक रानी को नहीं पकड़ा या मारा तब तक हिन्दुस्थान में हमारे राज्य की खैरियत नहीं ।'

दृढ़ता के साथ रोज ग्रपने काम में जुट गया।

[८६]

इन उत्सवों का प्रतिरोध करने के लिये रानी ने पेशवा से भेंट करने का प्रयत्न किया, परन्तु वहाँ नाच से छुट्टी मिली तो भंग और निद्रा, और भंग तथा निद्रा से निस्तार पाया तो नाचरंग। तात्या इस नाचरंग में डूब तो गया ही, उसको यह घमंड भी हो गया कि कोई भी अङ्गरेज जनरल उसका मुकाबिला नहीं कर सकता।

निदान एक दिन तीसरे पहर रानी को ऐश्वर्य प्रमत्त पेशवा से थोड़ी देर की भेंट प्राप्त हो गई। रानी उदास थीं और क्षुब्ध। पेशवा सोकर उठा था रात की खुमारी और सवेरे की भंग की छाया अब भी शेष थी। आँखें लाल थीं और शरीर अङ्गड़ाइयाँ चाहता था। अभिवादन के बाद उसने रानी से कहा, 'बड़ी गरमी पड़ रही है। न दिन चैन, न रात।'

'कभी कभी बदली हो जाती है दस पांच दिन में वर्षा हो उठेगी।'

'अभी तो नक्षत्र तप रहे हैं।'

'परन्तु इन्हीं दिनों में छत्रपति और पंत प्रधान सब से अधिक पराक्रम दिखलाया करते थे।'

आपने भी तो इन्हीं दिनों वह कर दिखलाया जो ग्वालियर के महाराज और अङ्गरेज कभी न भूलेंगे।'

'और इन्हीं दिनों हमारे आपके ऊपर विपद के वे बादल उठ रहे हैं, जो थोड़े में दिनों कष्टों की मूसलाधार बरसावेंगे।'

'हमारी सेना डटकर लड़ेगी। तब तक पानी बरस पड़ेगा। नदी नाले ऐसे चढ़ेंगे कि दुश्मन हमारा कुछ भी न कर सकेंगे।'

'ये ही नदी नाले हम लोगों को भी निरुपाय और असमर्थ कर डालेंगे। सेना में वैसे ही काफी अव्यवस्था है। फिर तो वह अकर्मण्य होकर निस्तेज ही हो जायगी।'

'अपने पास इतना बड़ा किला तो है, बाईसाहब।'

'और यदि किला छिन गया तो ?'

'तब निस्संदेह लोग सब व्यर्थ हो जायेंगे।'

'अङ्गरेजों की पल्टनें सब दिशाओं से अपने ऊपर टूटने के लिये आ रही हैं। थोड़ा सा ही समय रह गया है। अपनी सेना को छावनी-बन्द कीजिये। कायदा बर्तिये। किले में बन्द होकर लड़ने की बात मत सोचिये। अङ्गरेजी फौज का आगे बढ़कर सामना कीजिये। और सबसे प्रथम सिन्धिया की इस सेना को अपने सरदारों में बांटकर कड़ा अनुशासन जारी कर दीजिये।'

'हो जायगा बाईसाहब, सब हो जायगा। इस समय भी कुछ आवश्यक काम ही हो रहा है। धर्म की नींव पर ही सब कुछ टिकता है। धर्म ही विजय का कारण होता है। इसलिये धर्म कराया जा रहा है। ब्राह्मण भोजन से विजय का आशीर्वाद मिलेगा। दूर दूर के ब्राह्मण भोजन और दक्षिणा के लिये उमड़े चले आ रहे हैं। इसका आशीर्वाद क्या विफल जायगा ?'

'मैं नहीं कहती कि ब्राह्मण भोजन मत करवाइये, परन्तु सेना के सुप्रबन्ध और आगे बढ़कर अङ्गरेजों से मोर्चा ले लेने के सङ्गठन को उतना ही महत्व तो दीजिये।'

'आप हैं। तात्या है। बाँदा के नवाब साहब हैं। आप लोगों के रहते अङ्गरेज हमारा क्या बिगाड़ सकते हैं ?'

'अङ्गरेज अत्यन्त चालाक और उद्योगशील हैं। जो समय आप नाच रङ्ग को देते हैं, उस समय को वे लोग अपनी योजनाओं के सृजन में व्यय करते हैं ?'

'अपनी योजनायें तो बनी बनाई रक्खी हैं। और क्या करना है ? एक बात शेष थी, वह हो गई। जनता और फौज राजा के सिवाय और किसी का नायकत्व ग्रहण नहीं करती, सो मैंने पेशवाई स्वीकार करली है। जब तक ऐसा न करता तब तक जनसामान्य मुझको एक साधारण जन समझता और हम लोगों के नायकत्व को मानता ही नहीं।'

'आप में ये बड़े परिवर्तन देखकर मुझको अचम्भा होता है।'

'कौन से परिवर्तन ?'

'भङ्ग, नाच-रङ्ग, दिन में दीर्घ निद्रा।'

'बाईसाहब, पेशवाई स्वीकार करने के बाद उत्सवों का, दरबारों का करना अनिवार्य हो गया। अन्यथा लोग कहते, ये कैसे राजाओं के राजा, जो चुपचाप सिंहासन पर बैठकर, चुपचाप महल में जा बैठे ! यहाँ के सरदार नृत्य-गान के लालची हैं। उनका मन भरना आवश्यक था। करना पड़ा। इन सरदारों की सहानुभूति के बिना काम नहीं बन सकता।'

'कितने दिन और चलेगा यह सब ?'

'बस थोड़े दिन, बहुत थोड़े दिन। परन्तु ब्राह्मण-भोजन, दान-पुण्य निरन्तर जारी रहेगा। धर्म के आशीर्वाद से जो स्वराज्य स्थापित होगा वह अक्षय होगा। छत्रपति भी कर्मकाण्ड को बहुत मानते थे, सो आप भी जानती हैं, और धर्म के विषय में आपसे बात करने का मैं अधिकारी ही क्या हूँ ?'

'धर्म की गति को तो महात्मा लोग ही जानते हैं। मैं तो केवल यह कह सकती हूं कि ब्राह्मण-भोजन दान-पुण्य इत्यादि के साथ सेना का तुरन्त अच्छा प्रबन्ध करिये। उन्हें कुछ काम दीजिये और उत्सव इत्यादि तुरन्त बन्द कर दीजिये।'

[८७]

रानी के समझाने पर भी रावसाहब न माना। भंग और नाचरङ्ग का वही क्रम जारी रहा। लड्डुओं और श्रीखंड के लिये इतनी शकर खर्च होने लगी कि सिपाहियों को भङ्ग के लिये उसका मिलना दुर्लभ हो गया। श्रीखंड के लिये दही की इतनी माँग हो गई कि मट्ठा अप्राप्य हो गया।

ब्राह्मण भोजन और दान-पुण्य की आड़ में बेहिसाब भिखमङ्गी बढ़ गई। कोई प्रतिबन्ध या प्रबन्ध न था, इसलिये अनेक सिपाही भी इस मुफ्तखोरी में सन गये।

रानी लक्ष्मीबाई ने देखा कि जब वे अपने किले में घिर गई थीं तब स्वतन्त्र थीं, और ग्वालियर में स्वच्छन्द होते हुये भी उनकी दशा एक कैदी की सी है।

रानी का स्वभाव था कि वे जहाँ जाती थीं, उसके चौगिर्द का बारीकी के साथ निरीक्षण करती थीं। इस निरीक्षण से उनको युद्ध के लिये मोर्चे बनाने में बड़ी सुविधा होती थी। उनकी रणनीति में इस क्रिया का विशेष स्थान था।

उन्होंने देखा कि ग्वालियर का किला और पश्चिम-दक्षिण की पहाड़ियाँ ग्वालियर की बस्ती और लश्कर के नगर की अच्छी रक्षा कर सकती हैं। पूर्व की ओर पहाड़ियों का सिलसिला लश्कर से लगभग दो मील पड़ता था—यह भी रक्षा का साधन हो सकता था, परन्तु उत्तर-पूर्व में मुरार की ओर दिशा खुली पड़ी थी। उसको ढकने के लिये सोनरेखा नाम का केवल एक नाला था, जो लश्कर को तीन ओर से घेर कर कतराता हुआ मुरार की ओर चला गया था। परन्तु यह कोई बड़ा साधन न था, उल्टे कुछ अड़चन डाल सकता था। इसके सिवाय दक्षिणवर्ती पहाड़ियों का क्रम, जिसके अगले भाग पर दुर्गा का मन्दिर था, शत्रुओं के लिये भी लाभदायक हो सकता था, और, पूर्व की ओर की पहाड़ियाँ यदि शत्रु की तोपों के लिये मिल जायें तो लश्कर का नगर और

ग्वालियर तथा मुरार की बस्तियाँ पूरे संकट में आ जायें। उनकी इच्छा थी कि यदि पेशवा की सेना के दस्ते सब ओर से बढ़ती हुई आने वाली अङ्गरेजी सेनाओं को आगे जाकर मुकाबिला न करें तो कम से कम इन पहाड़ियों पर यथास्थान तोपखाने तो लगा लें। परन्तु वहां भङ्ग की तरङ्ग श्रीखण्ड की अखण्डता में उनकी सुनता ही कौन था ?

इस निरीक्षण के सिलसिले में उनको एक बाबा गङ्गादास का पता चला। इनकी कुटी सोनरेखा नाले से उत्तर की ओर कुछ दूरी पर हट कर थी—किले के दक्षिणी छोर से पूर्व की दिशा में। बाबा गङ्गादास की कुटी फूस और लकड़ी का छान-छप्पर थी। निरीक्षण करते-करते रानी को प्यास लगी। बाबा ने पानी पिलाया। उस समय उनको मालूम हुआ कि झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई हैं। उन्होंने बाबा की आँखों में शान्ति का एक अद्भुत आकर्षण देखा।

पेशवा के अनसुनी कर देने के दिन से उनका मन खिन्न-सा रहने लगा था। निरीक्षण करती थीं, लड़ाई के नक्शे बनाती थीं, अपने सिपाहियों को कवायद-परेड कराती थीं, और समय पर पूजन-ध्यान करती थीं, परन्तु मन का अनमनापन नहीं जाता था।

सन्ध्या होने में विलम्ब था। लू तेज चल रही थी। रानी मुन्दर के साथ स्त्री-वेश में बाबा गङ्गादास की कुटी पर पहुँचीं। घोड़े एक पेड़ से बांध दिये गये। बाबा के सामने पहुंचकर नमस्कार किया। बाब ने आसन दिया। ठण्डा पानी पिलाया।

रानी ने कहा, 'मैं आप से कुछ पूछने आई हूँ। मेरा मन अशान्त है। आपके उत्तर से शान्ति मिलने की आशा है।'

बाबा बोले, 'मैं रामभजन के सिवाय और कुछ जानता ही नहीं हूँ।'

रानी—'आप ब्राह्मण-भोजन में गये ?'

बाबा—'नहीं गया। यहीं बहुत खाने को मिल जाता है।'

रानी—'इसीलिये आपके पास आई। आप टाल नहीं सकेंगे।'

बतलाना होगा। आपने अकेले अपने मन को शान्त कर लिया तो क्या हुआ? हम लोगों को भी शान्ति दीजिये।'

बाबा—'पूछो बेटी। यदि समझ में आ जायगा तो बतला दूँगा।'

रानी—'यहाँ थोड़े दिनों में युद्ध होने वाला है। आपकी कुटी का स्थान रक्षित नहीं है। किसी सुरक्षित स्थान में चले जाइये।'

बाबा—'सुरक्षित है। बात पूछो।'

रानी—'इस देश को स्वराज्य कैसे प्राप्त होगा?'

बाबा—'इस प्रश्न का उत्तर तो राजा लोग दे सकते हैं।'

रानी—'नहीं दे सकते, तभी आपसे पूछने आई हूं।'

बाबा—'जैसे प्राप्त होता आया है वैसे ही होगा।'

रानी—'कैसे बाबा जी?'

बाबा—'सेवा, तपस्या, बलिदान से।'

रानी—'हम लोग कैसे स्वराज्य स्थापित कर पावेंगे?'

बाबा—'गड्ढे कैसे भरे जाते हैं? नींव कैसे पूरी जाती है? एक पत्थर गिरता है, फिर दूसरा, फिर तीसरा और चौथा, इस प्रकार और, तब उसके ऊपर भवन खड़ा होता है। नीव के पत्थर भवन को नहीं देख पाते। परन्तु भवन खड़ा होता है उन्हीं के भरोसे—जो नींव में गड़े हुये हैं। वह गड्ढा या नींव एक पत्थर से नहीं भरी जाती। और, न एक दिन में। अनवरत प्रयत्न, निरन्तर बलिदान आवश्यक है।'

रानी—'हम लोगों के जीवनकाल में स्वराज्य स्थापित हो जायगा?'

बाबा—'यह मोह क्यों? तुमने आरम्भ किये हुये कार्य को आगे बढ़ा दिया है। अन्य लोग आयेंगे। वे इसको बढ़ाते जायेंगे। अभी कसर है। स्वराज्य स्थापना के आदर्शवादी अपने-अपने छोटे-छोटे राज्य बनाकर बैठ जाते हैं। जनता और उनके बीच का अन्तर नहीं मिटता—घटता ही बहुत कम है। जनता त्रस्त बनी रहती है। जब जनता का पूरा सहयोग राज्य को प्राप्त हो जाय और राजा टीमटाम और विलासिता का दासत्व छोड़कर प्रजा का सेवक बन जाय तब जानो स्वराज्य की नींव

भर गई और भवन बनना आरम्भ हो गया। शाश्वत धर्म का रूप बिगड़ गया है। इसके सुधार के बिना यह भवन खड़ा न हो पायगा।'

रानी—'हम लोग प्रयत्न करते रहें ?'

बाबा—'अवश्य। तुम तो भगवान कृष्ण और गीता की भक्त हो।'

रानी—'आपने कैसे जाना ?'

बाबा मुस्कराये।

बोले, 'सब कहते हैं।'

रानी—'मैं पाठ करती हूँ, परन्तु समझते तो आप महात्मा लोग ही हैं।'

बाबा—'गृहस्थ से बढ़कर और कोई साधू नहीं। मुझसे कुछ और नहीं हो सका, इसलिए कुटी बना ली।'

सूर्यास्त होने को आया। रानी को संध्या-ध्यान का स्मरण हुआ। कहा, 'बाबा जी फिर कभी दर्शन करूंगी। आपकी इतनी बात से चित को बहुत शान्ति मिली।' और नमस्कार करके चली गईं।

मार्ग में मुन्दर ने कहा, 'सरकार भी इन्हीं बातों को बतलाया करती हैं।'

'परन्तु', रानी बोलीं, 'बाबा के समान होने में बहुत देर है।'

[८८]

रावसाहब पेशवा का ऐश-आराम और ब्राह्मण-भोजन जारी रहा। जनरल रोज के उद्योग ने पहले की अपेक्षा और अधिक सबलता पकड़ी।

रोज ने अपनी सेना के कई भाग करके अनुभवी अफसरों के सुपुर्द किया। ब्रिगेडियर स्मिथ को ग्वालियर के पूर्व की ओर पाँच मील पर कोटे की सराय भेजा। एक अफसर को ग्वालियर और आगरे के मार्ग पर, स्वयं एक प्रबल दल लेकर कालपी से ग्वालियर की ओर ६ जून को बढ़ा। मार्ग में उसको ब्रिगेडियर स्टुअर्ट ससैन्य मिल गया। १६ जून को जनरल रोज बहादुर ग्राम पर आ गया, जहाँ जयाजीराव की हार हुई थी। जनरल रोज के साथ मध्यभारत और ग्वालियर के पोलिटिकल एजेन्ट भी थे। इन्होंने इस बीच में एक चाल खेली—जयाजीराव और दिनकरराव को आगरे से बुलवा लिया।

मुरार में पेशवा की सेना काफी थी, बाकी इधर उधर बिखरी हुई पड़ी थी। इनमें से अधिकाँश सैनिक सिन्धिया की सेना के ही नौकर थे। यदि ये बारह तेरह दिन नष्ट न किये गये होते और यदि इन सैनिकों को विभक्त करके अपने विश्वसनीय दलपतियों की अधीनता में, शुरू से ही उनका अनुशासनमय संसर्ग स्थापित कर दिया गया होता, तो बात न बिगड़ती।

जनरल रोज ने दो घण्टे की कड़ी लड़ाई में पेशवा की मुरार वाली सेना को हरा दिया और मुरार को कब्जे में कर लिया। पेशवा की यह पराजित सेना भाग कर ग्वालियर आई। अब रावसाहब पेशवा का नशा फरार हुआ!

रोज ने जयाजीराव द्वारा पेशवा के उन सैनिकों को जो उनकी ग्वालियर फौज के थे, माफी का आश्वासन दिलवाया और यह लिखित घोषणा प्रकाशित करवाई कि अङ्गरेज ग्वालियर के राजा को पुनः

गद्दी दिलवाने के लिये ही लड़ने आये हैं। सरदारों और सैनिकों में फूट पड़ गई। उनके मन फिर गये। उत्सवों की रिश्वत बेकार गई !

पेशवा, बाँदा के नवाब किंकर्तव्य विमूढ़ हो गये। कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें।

तब झाँसी की रानी की याद आई, परन्तु उनके पास जाने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी—कैसे मुंह दिखलायें ?

तात्या को भेजा।

तात्या कलेजा साधकर उनके सामने गया। उस समय उनके पास जूही और मुन्दर थीं। तात्या नमस्कार करने के उपरान्त हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

'क्या बात है, सरदार साहब ?' रानी ने व्यंग किया, 'वे तोपें कहाँ चल रही थीं ?'

तात्या ने विनीत भाव से कहा, 'अब क्षमा प्रार्थना तक का समय नहीं है, बाईसाहब।'

रानी बोलीं, 'क्या भंग छानने का भी समय नहीं ? एक तान भी सुनने के लिये समय नहीं ?'

तात्या उनके पैरों पर गिरने को हुआ, 'रक्षा करो देवी।'

रानी ने उसको बीच में ही पकड़ लिया।

जूही बोली, 'सरकार क्षमा कर दीजिये।'

रानी मुस्कराईं।

'तात्या' उन्होंने कहा, 'तुमसे मुझको बड़ी-बड़ी आशाएँ थीं। अब भी बहुत कुछ कर सकोगे, परन्तु दृढ़ हो जाओ तो।'

तात्या बोला, 'जो जो आज्ञा होगी उसका तनमन से पालन करूँगा आपको कभी उलहने का अवसर न दूँगा।'

रानी ने उठती हुई सांस को दबाकर कहा, 'मेरा कदाचित् यह अंतिम युद्ध होगा। क्यों मुन्दर, स्मरण है बाबा गङ्गादास ने क्या कहा था ?'

जूही बोली, 'कदापि नहीं सरकार।'

रानी ने गम्भीर स्वर में कहा, 'स्वराज्य के भवन की नींव एक दो पत्थरों से नहीं भरेगी।'

तात्या अधीर होकर कातरता के साथ मुंह ताकने लगा।

रानी फिर मुस्कराईं। तात्या को आश्वासन दिया, 'घबराओ नहीं। पेशवा से कहो धैर्य के साथ काम लें। जो योजना बतलाती हूँ, उसके अनुसार काम करें। कदाचित् विजय प्राप्त हो जाय। न भी हो तो युद्ध सामग्री और सेना को दक्षिण की ओर ले चलने का प्रबन्ध रखना। तुम इस क्रिया के आचार्य हो।'

रानी ने तात्या को थोड़े समय में ही अपनी योजना, विस्तार-पूर्वक समझा दी और फिर अपने पाँचों सरदारों की बुद्धि में बिठला दी।

ग्वालियर की पूर्वीय ओर की रक्षा का भार, रानी ने स्वयं लिया। पूर्वीय पहाड़ियों पर जहां तक अङ्गरेजों का अधिकार नहीं हो पाया था, तोपखाने, पीछे पैदल और रिसाले का यत्र-तत्र क्रमिक मोर्चा रक्खा गया। सबसे आगे और बीच-बीच में अपनी लालकुर्ती के सवार। अलग बगल की पहाड़ियों पर तोपें-दक्षिण दिशा तक। उत्तर का भार तात्या के जिम्मे किया गया। उसने रुहेली और अवधी सेना के भग्नावशेष पर अपना दस्ता बनाया था। इस दस्ते को तोपों सहित तात्या ने जमाया। पश्चिम का भार रावसाहब के ऊपर रक्खा गया। इसके साथ अधिकांश सिन्धिया वाली फौज थी। शहर के भीतर बाहर की रक्षा का प्रबन्ध बाँदा के नवाब के हाथ में दिया गया। किले की खास रक्षा के लिये ज्यादा चिन्ता में नहीं पड़ना पड़ा। तोपें गोलन्दाज और कुछ सिपाही काफी समझे गये, क्योंकि बिना किसी बड़े और विशेष कारण के किले में बन्द होकर लड़ना मराठी युद्ध प्रणाली के विरुद्ध था।

रानी ने अपने सवारों की कवायद ली और उनको काम की सब बातें समझा दीं!

१७ जून को सवेरे ब्रिगेडियर स्मिथ ने लड़ाई का बिगुल बजाया। लड़ाई आरम्भ हो गई। ब्रिगेडियर स्मिथ का आक्रमण कोटा की सराय

से शहर पर होना था, पूर्व दिशा से, जहाँ लक्ष्मीबाई का मोर्चा था। जैसे ही अङ्गरेजी सेना रानी की तोपों के मार के भीतर आई, रानी ने गोलन्दाजों को संकेत दिया। गोलाबारी होते ही अङ्गरेजी सेना की दुर्गति हुई और वह पीछे हटी। रानी के लालकुर्ती सवारों ने तुरन्त छापा मारा। स्मिथ ने एक चतुर चाल खेली—उसने अपनी उस टुकड़ी को और अधिक पीछे खींचा और रानी के सवारों को आगे बढ़ने दिया। इन सवारों के ज्यादा आगे निकल जाने से उसका स्थान खाली हो गया। स्मिथ ने कई दिशाओं से रानी के मोर्चों पर आक्रमण किया। घमासान युद्ध हुआ। तलवार चली। लोहे ने लोहे से चिनगारियाँ छिटकाईं। स्मिथ ने रानी के पार्श्व पर अपनी दो पल्टनें और फेकीं जो अभी तक चुपचाप खड़ी थीं। रानी के सवारों को पीछे हटना पड़ा। ब्रिगेडियर स्मिथ ने अपने सामने की पांतों को फोड़ कर रिसाले समेत बढ़ने का सङ्कल्प किया। उद्देश्य था फूल बाग पर अधिकार करने का।

अपने सवारों को पीछे हटता देख कर रानी घोड़े को तेज करके तुरन्त उनके समीप पहुंचीं। गुलमुहम्मद दिखलाई दिया। उसके पास घोड़ा दौड़ा कर बढ़ते हुये अङ्गरेजों की ओर तलवार की नोक करके बोलीं, 'खान, आज हाथ ढीला क्यों पड़ रहा है ?'

गुलमुहम्मद चिल्लाकर बोला, 'हुजूर अमारा हाथ अब मुलाहिजा करें।'

पठान सरदार चिल्लाता हुआ, रेलपेल करता हुआ, लालकुर्तियों को बढ़ावा देता हुआ, आगे फिका। रानी साथ में।

गुलमुहम्मद ने प्रखर स्वर में रानी से प्रार्थना की, 'हुजूर जूही सरदार का तोपखाना ठीक करें।'

रानी लौट पड़ीं। एक टौरिया के पीछे जूही तोपखाना की मार को जारी किये थी, परन्तु लालकुर्ती को पीछे हटा देखकर हड़बड़ा गई थी। गोरा रिसाला उसकी ओर बढ़ रहा था।

'जूही', रानी ने आदेश किया, 'तोप का मुहरा एक अंगुल नीचा कर।'

'जो आज्ञा,' उसने उत्साहित होकर कहा और अपने साथियों की सहायता से तुरन्त वैसा ही किया।

'मार,' रानी ने दूसरा आदेश दिया। तोप ने धाँय किया। गोरे सवार बिछ गये। लौट पड़े।

रानी दूसरे स्थान पर पहुँचीं। वे जहाँ पहुंचती वहीं अपने सिपाहियों पर तेज छिटक देतीं।

यद्यपि उनके योधाओं की संख्या कम थी, परन्तु वे उनके प्रति अटल विश्वास रखते थे। फिर बढ़े। उनकी रानी उनके साथ—दोनों हाथों एक समान कौशल और शक्ति के साथ तलवार चलाने वालीं।

अंग्रेज वीरता के साथ लड़े और बहुत मरे। रानी के उन थोड़े से लालकुर्ती सवारों ने तो कमाल ही कर दिया। यथावत् आज्ञा का पालन करते हुये उन लोगों ने अङ्गरेजों के छक्के छुटा दिये। ब्रिगेडियर स्मिथ को रानी ने उस दिन की चालों में और शूरवीरी में मात दी। स्मिथ उनके व्यूह को न भेद सका। उसको लक्ष्मीबाई के मुकाबले में हारकर लौटना पड़ा। अंग्रेजों ने उस दिन का युद्ध बन्द करके दम ली।

रानी ने उस दिन निरन्तर परिश्रम किया था और उनके सरदारों ने भी। इस पर भी उन्होंने रात को काफी समय तक अथक परिश्रम किया—योजनायें सुधारीं, परिवर्तित कीं, सलाह सम्मति दी, उनके जिन योधाओं ने उस दिन के युद्ध में कोई विशेष कार्य किया था, उनको शाबाशी दी और पुरस्कार दिये। और गुलमुहम्मद को कुंवर की उपाधि प्रदान की।

ग्वालियर की सेना पर जीवाजीराव की उस घोषणा के कारण प्रभाव पड़ चुका था, परन्तु उस दिन उस सेना ने कोई ऐसा स्पष्ट काम नहीं किया जिससे उस पर तात्या या पेशवा को अविश्वास होता, परन्तु रानी को सन्देह था। तात्या और रावसाहब ने निवारण किया। अविश्वास करने से अब होता भी क्या था? लाचार होकर दूसरे दिन के युद्ध में वे ही साधन काम में लाने पड़े जो उनको उपलब्ध थे।

[८६]

अठारह जून आई। ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी। शुक्रवार। सफेद और पीली पौ फटी। ऊषा ने अपनी मुस्कान बिखेरी। रानी स्नान-ध्यान और गीता के अठारहवें अध्याय के पाठ से निबट चुकीं। झींगुरों की झंकार पर एकाध चिड़िया ने चहक लगाई। रानी ने नित्यवत् अपने रिशाले की लालकुर्ती की मर्दाना पोशाक पहिनी। दोनों ओर एक एक तलवार बाँधी और पिस्तौलें लटकाईं। गले में मोतियों और हीरों की माला—जिससे संग्राम के घमासान में उनके सिपाहियों को उन्हें पहिचानने में सुविधा रहे। लोहे के कुले पर चंदेरी का जरतारी लाल साफा बाँधा। लोहे के दस्ताने और भुजबन्द पहिने। इतने में उनके पाँचों सरदार आगये।

मुन्दर ने कहा, 'सरकार घोड़ा लंगड़ाता है। कल की लड़ाई में या तो घायल हो गया है या ठोकर खा गया है।'

रानी ने आज्ञा दी, 'तुरन्त दूसरा अच्छा और मजबूत घोड़ा ले आ।'

मुन्दर घोड़ा लेने गई और उसने अस्तबल में से एक बहुत तगड़ा और देखने में पानीदार घोड़ा चुना।

अस्तबल के प्रहरी ने कहा, 'हमारे सिन्धिया सरकार का यह खास घोड़ा है।'

मुन्दर बोली, 'खास ही चाहिये। हमारी सरकार की सवारी में आवेगा।'

प्रहरी—'झाँसी की रानी साहब की सवारी में?'

मुन्दर—'हाँ।'

प्रहरी—'खैर ठीक है। हमारे सरकार जब इस पर बैठते थे बहुत ऊबते थे। इसके जाने से कुछ रंज होता है।'

मुन्दर—'क्यों?'

प्रहरी—'जब सरकार इसको न पावेंगे, दुखी होंगे।'

मुन्दर जल्दी में थी। घोड़ा लेकर चली आई।

रानी ने अपने सरदारों को हिदायतें दीं।

रानी ने कहा, 'कुँवर गुलमुहम्मद आज तुमको अपने जौहर का जौहर दिखलाना है। कल की लड़ाई का हाल देखकर आज जीत की आशा होती है। परन्तु यदि पश्चिम या उत्तर का मोर्चा उखड़ जाय तो उसको सँभालना और दक्षिण चल पड़ने की तैयारी में रहना।'

'सरकार', गुलमुहम्मद बोला, 'अम सब पठान आज कट जाने का कसम खाया है। जो बचेगा वो दखन जायगा। आप दखन जाना सरकार। अमारा राहतगढ़ लेना। अमारा भौत पठान वहाँ मारा गया। उनका यादगार बनवाना।'

'नहीं कुँवर साहब हम जीतेंगे', रानी ने कहा, 'दक्षिण जाने की बात तो तब उठेगी जब यहाँ कुछ हाथ न रहे। फौजदार के विचार में जीतने की बात पहले उठनी ही चाहिये, परन्तु दूसरी बात जो तै की जावे वह बच निकलने और फिर कहीं जमकर युद्ध करने की है।'

मुन्दर बोली, 'सरकार कुछ जलपान करलें। इसी समय से हवा में कुछ कुछ गरमी है। दिखता है लू बहुत चलेगी।'

रानी ने कहा, 'तुम लोग कुछ खालो। दामोदरराव को खूब खिला पिला लो। पीठ पर पानी का प्रबन्ध रखना। मैं केवल शर्बत पियूँगी।

जूही—'मैं भी शर्बत पियूँगी।'

रानी—'देशमुख, तुम ?'

देशमुख—'मैं तो कुछ खा-पी आया।'

रानी—'रघुनाथसिंह ?'

रघुनाथसिंह—'मैं कुछ खाऊँगा।'

रानी—'तुम और मुन्दर कुछ खा-पीकर झटपट शर्बत बना लाओ।'

मुन्दर और रघुनाथसिंह गये। दामोदरराव आ गया। रानी ने उसको खिलाया-पिलाया।

रानी ने जूही से कहा, 'आज तेरी सुगन्धि ऐसी बरसे कि बैरी बिछ जायँ।'

जूही प्रसन्न होकर बोली, 'आज मैं जो कुछ कर सकूं, कह नहीं सकती, परन्तु आंख खुलते ही जो कुछ प्रण किया है उसके अनुसार अवश्य काम करूँगी।'

रानी—'परन्तु जो कुछ करे, ठंडक के साथ करना। केवल उत्तेजना से बहुत सहायता नहीं मिलेगी।'

जूही—'तभी तो सरकार मैं हँस रही हूँ। एक हसरत मन में रही जाती है—आपको गाना न सुना पाया।'

रानी—'किसी दिन सुनूँगी।'

जूही—'हाँ सरकार, अवश्य।' जूही जरा ज्यादा हँस पड़ी।

रानी—'तेरी हँसी आज कुछ भीषण है।'

जूही—'काम इससे अधिक भीषण होगा, सरकार।'

[६०]

मुन्दर और रघुनाथसिंह ने कुछ भी न खाकर जेबों में कलेवा डाला और पीठ पर पानी का बर्तन कस लिया। झटपट शर्बत बनाया।

'मुन्दरबाई', रघुनाथसिंह ने कहा, 'रानी साहब का साथ एक क्षण के लिये भी न छूटने पावे। आज अन्तिम युद्ध लड़ने जा रही हैं।'

मुन्दर—'आप कहाँ रहेंगे ?'

रघुनाथसिंह—'जहाँ उनकी आज्ञा होगी। वैसे आप लोगों के समीप ही रहने का प्रयत्न करूँगा।'

मुन्दर—'मैं चाहती हूँ आप बिलकुल निकट रहें। मुझे लगता है, मैं आज मारी जाऊँगी। आपके निकट होने से शान्ति मिलेगी।'

रघुनाथसिंह—'मैं भी नहीं बचूंगा। रानी साहब को किसी प्रकार सुरक्षित रखना है। मैं तुम्हें तुरन्त ही स्वर्ग में मिलूंगा। केवल आगे पीछे की बात है।' वह जरा सूखी हँसी हँसा।

मुन्दर ने रघुनाथसिंह की ओर आंसू भरी आँखों से देखा। कुछ कहने के लिये होठ हिले। रघुनाथसिंह की आँखें भी धुंधली हुईं।

दूर से दुश्मन के बिगुल के शब्द की झाईं कान में पड़ी। मुन्दर ने रघुनाथसिंह को मस्तक नवाकर प्रणाम किया और उसने ओट में जल्दी आंसू पोंछ डाले। रघुनाथसिंह ने मुन्दर को नमस्कार किया फिर दोनों शर्बत लिये हुये रानी के पास पहुँचे।

मुन्दर ने जूही को पिलाया रघुनाथसिंह ने रानी को। अङ्गरेजों की बिगुल का साफ शब्द सुनाई दिया। तोप का धड़ाका हुआ, गोला सन्ना कर ऊपर से निकल गया। रानी ने दूसरा कटोरा नहीं पी पाया।

रानी ने रामचन्द्र देशमुख को आदेश किया, 'दामोदर को आज तुम पीठ पर बाँधो। यदि मैं मारी जाऊँ तो इसको किसी तरह दक्षिण सुरक्षित पहुंचा देना। तुमको आज मेरे प्राणों से बढ़कर अपनी रक्षा की चिन्ता करनी होगी। दूसरी बात यह है कि मारी जाने पर ये विधर्मी मेरी देह को न छूने पायें। बस। घोड़ा लाओ।'

मुन्दर घोड़े ले आई। उसकी आँखें छलछला रही थीं। पूर्व दिशा में अरुणिमा फैल गई। अबकी बार कई तोपों का धड़ाका हुआ।

रानी मुस्कराईं। बोलीं, 'यह तात्या की तोपों का जवाब है।'

मुन्दर की छलछलाती हुई आँखों को देखकर कहा, 'यह समय आंसुओं का नहीं है, मुन्दर। जा, तुरन्त अपने घोड़े पर सवार हो।'

अपने लिये आये हुये घोड़े को देखकर बोलीं, 'यह अस्तबल को प्यार करने वाला जानवर है। परन्तु अब दूसरे को चुनने का समय ही नहीं है। इसी से काम निकालूंगी।'

जूही के सिर पर हाथ फेरकर कहा, 'जा जूही अपने तोपखाने पर। छका तो दे इन बैरियों को आज।'

जूही ने प्रणाम किया। जाते हुये कह गई, 'इस जीवन का यथोचित अभिनय आपको न दिखला पाया। खैर।'

अङ्गरेजों के गोलों की वर्षा हो उठी। रानी के सब सरदार और सवार घोड़ों पर जम गये, जूही का तोपखाना आग उगलने लगा।

इतने में सूर्य का उदय हुआ।

सूर्य की किरणों ने रानी के सुन्दर मुख को प्रदीप्त किया। उनके नेत्रों की ज्योति दुहरे चमत्कार से भासमान हुई। लाल वर्दी के ऊपर मोती-हीरों का कण्ठा दमक उठा और, चमक पड़ी म्यान से निकली हुई तलवार।

रानी ने घोड़े को एड़ लगाई। पहले जरा हिचका फिर तेज हो गया। रानी ने सोचा कई दिन का बँधा होगा, थोड़ी देर में गरम हो जायगा।

उत्तर और पश्चिम की दिशाओं में तात्या और राव साहब के मोर्चे थे। दक्षिण में बाँदा के नवाब का, रानी ने पूर्व की ओर झपट लगाई।

गत दिवस की हार के कारण अङ्गरेज जनरल सावधान और चिंतित हो गये थे। इन लोगों ने अपनी पैदल पल्टनें पूर्व और दक्षिण के बीहड़ में छिपा लीं और हुजर* सवारों को कई दिशाओं से आक्रमण करने

---

* Hussars

की योजना की। तोपें पीठ पर रक्षा के लिये थीं ही। हुजर सवारों ने पहला हमला कड़ाबीन बन्दूकों से किया। बन्दूकों का जवाब बन्दूकों से दिया गया। रानी ने आक्रमण पर आक्रमण करके हुजर सवारों को पीछे हटाया। दोनों ओर के सवारों की बेहिसाब दौड़ से धूल के बादल छा गये। रानी के रणकौशल के मारे अंग्रेज जनरल थर्रा गये। काफी समय हो गया परन्तु अङ्गरेजों को पेशवाई मोर्चों से निकल जाने की गुञ्जायश न मिली !

जूही की तोपें गजब ढा रही थीं। अंग्रेज नायक ने इन तोपों का मुँह बन्द करना तै किया। हुजर सवार बढ़ते जाते थे, मरते जाते थे, परन्तु उन्होंने इस तरफ की तोपों को चुप करने का निश्चय कर लिया था। रानी ने जूही की सहायता के लिये कुमुक भेजी। उसी समय उनको खबर मिली कि पेशवा की अधिकाँश ग्वालियरी सेना और सरदार 'अपने महाराज' की शरण में चले गये।

मुन्दर ने रानी से कहा, 'सवेरे अस्तवल का प्रहरी रिस–रिस कर अपने 'सरकार' का स्मरण कर रहा था। मुझे सन्देह हो गया था कि ग्वालियरी कुछ गड़बड़ी करेंगे।'

'गाँठ में समय न होने के कारण कुछ नहीं किया जा सकता था', रानी बोलीं, 'अब जो कुछ सम्भव है वह करो।'

इनकी लालकुर्ती अब तलवार खींचकर आगे बढ़ी। उस धूल धूसरित प्रकाश में भी तलवारों की चमचमाहट ने चकाचोंध लगा दी।

कुछ ही समय उपरान्त समाचार मिला कि ग्वालियरी सेना के परपक्ष में मिल जाने के कारण रावसाहब के दो मोर्चे छिन गये और अंग्रेज उनमें से घुसने लगे हैं। रानी के पीछे पैदल पल्टन थी। उसको स्थिति संभालने की आज्ञा देकर वह एक ओर आगे बढ़ीं। उधर हुजर-सवार जूही के तोपखाने पर जा टूटे। जूही तलवार से भिड़ गई। घिर गई और मारी गई। मरते समय उसने आह तक नहीं की। चिर गई थी। परन्तु शत्रु की तलवार चीरने में, जिस बात में असमर्थ रही —

वह थी जूही की क्षीण मुस्कराहट जो उसके ओठों पर अनन्त दिव्यता की गोद में खेल गई।

वर्दी के कट जाने पर हुजरों ने देखा कि तोपखाने का अफसर गोरे रङ्ग की एक सुन्दर युवती थी ! और उस के ओठों पर मुस्कराहट थी !!

समाचार मिलते ही रानी ने इस तोपखाने का प्रबन्ध किया।

इतने में ब्रिगेडियर स्मिथ ने अपने छिपे हुये पैदलों को छिपे हुये स्थानों से निकाला। वे संगीनें सीधी किए रानी के पीछे वाली पैदल पल्टन पर दो पार्श्वों से झपटे। पेशवा की पैदल पल्टन घबरा गई। उसके पैर उखड़े। भाग उठी। रानी ने प्रोत्साहन, उत्तेजन दिया। परन्तु उनके और उस भागती हुई पल्टन के बीच में गोरों की सङ्गीनें और हुजरों के घोड़े आ चुके थे।

अङ्गरेजों की कड़ाबीनें, संगीनें और तोपें पेशवाई सेना का संहार कर उठीं। पेशवा की दो तोपें भी उन लोगों ने छीन लीं। अङ्गरेजी सेना बाढ़ पर आई हुई नदी की तरह बढ़ने और फैलने लगी।

रानी की रक्षा के लिये लालकुर्ती सवार अटूट शौर्य और अपार विक्रम दिखलाने लगे। न कड़ाबीन की परवाह, न सङ्गीन का भय और तलवार तो मानो उनको ईश्वरीय देन थी। उस तेजस्वी दल ने घण्टों अंगरेजों का प्रचण्ड सामना किया। रानी धीरे-धीरे पश्चिम-दक्षिण की ओर अपने मोर्चे की शेष सेना से मिलने के लिये मुड़ीं। यह मिलान लगभग असम्भव था, क्योंकि उस भागती हुई पैदल पल्टन और रानी के बीच में बहुसंख्यक हुजर सवार और संगीन बरदार पैदल थे। परन्तु उन बचे-खुचे लालकुर्ती वीरों ने अपनी तलवारों की आड़ बनाई।

रानी ने घोड़े की लगाम अपने दाँतों में थामी और दोनों हाथों से तलवार चलाकर अपना मार्ग बनाना आरम्भ कर दिया। दक्षिण-पश्चिम की ओर सोनरेखा नाला था। आगे चलकर बाबा गङ्गादास की कुटी थी। कुटी के पीछे दक्षिण और पश्चिम की ओर हटती हुई पेशवाई पैदल पल्टन।

मुन्दर रानी के साथ थी। अगल-बगल रघुनाथसिंह और रामचन्द्र देशमुख। पीछे कुँवर गुलमुहम्मद और केवल बीस-पचीस अवशिष्ट लाल सवार। अंग्रेजों ने थोड़ी देर में इन सबके चारों तरफ घेरा डाल दिया। सिमट सिमट कर उस घेरे को कम करते जा रहे थे।

परन्तु रानी की दुहत्थू तलवारें आगे का मार्ग साफ करती चली जा रही थीं। पीछे के वीर सवारों की संख्या घटते घटते नगण्य हो गई। उसी समय तात्या ने रुहेली और अवधी सैनिकों की सहायता से अंग्रेजों के व्यूह पर प्रहार किया। तात्या कठिन से कठिन व्यूह में होकर बच निकलने की रणविद्या का पारङ्गत पण्डित था। अंग्रेज थोड़े से सवारों को लालकुर्ती का पीछा करने के लिये छोड़कर तात्या की ओर मुड़ गये। सूर्यास्त होने में कुछ विलम्ब था।

लालकुर्ती का अन्तिम सवार मारा गया। रानी के साथ केवल चार सरदार और उनकी तलवारें रह गईं। पीछे से कड़ाबीन और तलवार वाले दस-पन्द्रह गोरे सवार। आगे कुछ सङ्गीन वाले गोरे पैदल।

रानी के पीछे की तरफ देखा—रघुनाथसिंह और गुलमुहम्मद तलवार से अङ्गरेज सैनिकों की संख्या कम कर रहे थे। एक ओर रामचन्द्र देशमुख दामोदरराव की रक्षा की चिन्ता में बरकाव कर करके लड़ रहा था। रानी ने देशमुख की सहायता के लिये मुन्दर को इशारा किया और वह स्वयं सङ्गीनबरदारों को दोनों हाथों की तलवारों से खटाखट साफ करके आगे बढ़ने लगीं। एक सङ्गीनबरदार की हूल रानी के सीने के नीचे पड़ी। उन्होंने उसी समय तलवार से उस सङ्गीनबरदार को खतम किया। हूल करारी थी, परन्तु आँतें बच गईं।

रानी ने सोचा, 'स्वराज्य की नींव का पत्थर बनने जा रही हूं।' रानी के खून बह निकला।

उस सङ्गीनबरदार के खतम होते ही बाकी भागे। रानी आगे निकल गईं। उनके साथी भी दायें बायें और पीछे। आठ-दस गोरे घुड़सवार उनको पछियाते हुये।

रघुनाथसिंह पास था। रानी ने कहा, 'मेरी देह को अङ्गरेज न छूने पावें।'

गुलमुम्मद ने भी सुना—और समझ लिया। वह और भी जोर से लड़ा।

एक अङ्गरेज सवार ने मुन्दर पर पिस्तौल दागी। उसके मुँह से केवल ये शब्द निकले : 'बाईसाहब, मैं मरी। मेरी देह·· भगवन्।' अन्तिम शब्द के साथ उसने एक दृष्टि रघुनाथसिंह पर डाली और वह लटक गई। रानी ने मुड़कर देखा।

रघुनाथसिंह से कहा, 'सँभालो उसे। उसके शरीर को वे न छूने पावें।' और वे घोड़े को मोड़कर अङ्गरेज सवारों पर तलवारों की बौछार करने लगीं। कई कटे। मुन्दर का मारने वाला मारा गया।

रघुनाथसिंह फुर्ती के साथ घोड़े से उतरा। अपना साफा फाड़ा। मुन्दर के शव को पीठ पर कसा और घोड़े पर सवार होकर आगे बढ़ा। गुलमुहम्मद बाकी सवारों से उलझा। रानी ने फिर सोनरेखा नाले की ओर घोड़े को बढ़ाया। देशमुख साथ हो गया।

अङ्गरेज सवार चार-पाँच रह गये थे। गुलमुहम्मद उनको वहकावा देकर रानी के साथ हो लिया। रानी तेजी के साथ नाले की ढीपर आ गईं।

घोड़े ने आगे बढ़ने से इनकार कर दिया—बिलकुल अड़ गया। रानी ने पुचकारा। कई प्रयत्न किये परन्तु सब व्यर्थ।

वे अङ्गरेज सवार आ पहुँचे।

एक गोरे ने पिस्तौल निकाली और रानी पर दागी। गोली उनकी बाईं जंघा में पड़ी। वे गले में मोती-हीरों का दमदमाता हुआ कण्ठा पहने हुये थीं। उस अङ्गरेज सवार ने रानी को कोई बड़ा सरदार समझकर विश्वास कर लिया कि अब कण्ठा मेरा हुआ। रानी ने बायें हाथ की तलवार फेंक कर घोड़े की अयाल पकड़ी और दूसरी जांघ तथा हाथ की सहायता से अपना आसन सँभाला। इतने में वह सवार और भी निकट

आया। रानी ने दाएँ हाथ के वार से उसको समाप्त कर दिया। उस सवार के पीछे से एक और सवार निकल पड़ा।

रानी ने आगे बढ़ने के लिये फिर एक पैर की एड़ लगाई।

घोड़ा बहुत प्रयत्न करने पर भी अड़ा रहा। वह दो पैरों से खड़ा हो गया। रानी को पीछे खिसकना पड़ा। एक जांघ काम नहीं कर रही थी। बहुत पीड़ा थी। खून के फव्वारे पेट और जांघ के घाव से छूट रहे थे।

गुलमुहम्मद आगे बढ़े हुये अङ्गरेज सवार की ओर लपका।

परन्तु अङ्गरेज सवार ने गुलमुहम्मद के आ पहुँचने के पहले ही तलवार का वार रानी के सिर पर किया। वह उनकी दाईं ओर पड़ा। सिर का वह हिस्सा कट गया और दाईं आँख बाहर निकल पड़ी। इस पर भी उन्होंने अपने घातक पर तलवार चलाई और उसका कँधा काट दिया!

गुलमुहम्मद ने उस सवार के ऊपर कसकर भरपूर हाथ छोड़ा। उसके दो टुकड़े हो गये।

बाकी दो तीन अङ्गरेज सवार बचे थे। उन पर गुलमुहम्मद बिजली की तरह टूटा। उसने एक को घायल कर दिया। दूसरे के घोड़े को लगभग अधमरा। वे तीनों मैदान छोड़कर भाग गये। अब वहाँ कोई शत्रु न था। जब गुलमुहम्मद मुड़ा तो उसने देखा--रामचन्द्र देशमुख घोड़े से गिरती हुई रानी को साधे हुये है।

दिन भर के थके मांदे, भूखे-प्यासे, धूल और खून में सने हुये गुलमुहम्मद ने पश्चिम की ओर मुंह फेर कर कहा, 'खुदा, पाक परवरदिगार, रहम रहम!'

उस कट्टर सिपाही की आँखें आँसुओं को मानो बरसाने लगीं और वह बच्चों की तरह हिलक-हिलक कर रोने लगा।

रघुनाथसिंह और देशमुख ने रानी को घोड़े पर से संभालकर उतारा। आवेश में आकर उस अड़ियल घोड़े को एक लात मारी। वह अपने अस्तबल की दिशा में भाग गया।

रघुनाथसिंह ने देशमुख से कहा, 'एक क्षण का भी विलम्ब नहीं होना चाहिये। अपने घोड़े पर इनको होशियारी के साथ रक्खो और बाबा गङ्गादास की कुटी पर चलो। सूर्यास्त हुआ ही चाहता है।'

देशमुख का गला रुंधा हुआ था। बालक दामोदरराव अपनी माता के लिये चुपचाप रो रहा था।

रामचन्द्र ने पुचकार कर कहा, 'इनकी दवा करेंगे, अच्छी हो जायेंगी, रोओ मत।'

रामचन्द्र ने रघुनाथसिंह की सहायता से रानी को संभाल कर अपने घोड़े पर रक्खा।

रघुनाथसिंह ने गुलमुहम्मद से कहा, 'कुंवर साहब, इस कमजोरी से काम और बिगड़ेगा। याद करिये, अपने मालिक ने क्या कहा था। अङ्गरेज अब भी मारते काटते दौड़ धूप कर रहे हैं। यदि आ गये तो रानी साहब की देह का क्या होगा ?'

गुलमुहम्मद चौंक पड़ा। साफे के छोर से आँसू पोंछे। गला बिलकुल सूख गया था। आगे बढ़ने का इशारा किया। वे सब द्रुतगति से बाबा गङ्गादास की कुटी पर पहुँचे।

[९१]

बिसूरते हुये दामोदरराव को एक ओर बिठलाकर रामचन्द्रराव ने अपनी वर्दी पर रानी को लिटाया और बचे हुये साफे के टुकड़े से उनके सिर के घाव को बाँधा। रघुनाथसिंह ने अपनी वर्दी पर मुन्दर के शव को रख दिया। गुलमुहम्मद ने घोड़े को जरा दूर पेड़ों से जा अटकाया।

बाबा गङ्गादास ने पहिचान लिया। बोले, 'सीता और सावित्री के देश की लड़कियाँ हैं ये।'

रानी ने पानी के लिये मुंह खोला। बाबा गङ्गादास तुरन्त गङ्गाजल ले आये। रानी को पिलाया। उनको कुछ चेत आया।

मुँह से पीड़ित स्वर में धीरे से निकला, 'हर हर महादेव।' उनका चेहरा कष्ट के मारे बिलकुल पीला पड़ गया। अचेत हो गईं।

बाबा गङ्गादास ने पश्चिम की ओर देखकर कहा, 'अभी कुछ प्रकाश है। परन्तु अधिक विलम्ब नहीं। थोड़ी दूर घास की गञ्जी लगी हुई है। उसी पर चिता बनाओ।'

मुन्दर की ओर देखकर बोले, 'यह इस कुटी में रानी लक्ष्मीबाई के साथ कई बार आई थी। इसका तो प्राणान्त हो गया है।'

रघुनाथसिंह के रुद्ध कण्ठ से केवल 'जी' निकला।

उसके मुंह में भी बाबा ने गङ्गाजल की कुछ बूँदें डालीं।

रानी फिर थोड़े से चेत में आईं। कम से कम रघुनाथसिंह इत्यादि को यही जान पड़ा। दामोदरराव पास आ गया। उसको अवगत हुआ कि माँ बच गईं और फिर खड़ी हो जायेंगी। उत्सुकता के साथ उनकी ओर टकटकी लगाई।

रानी के मुंह से बहुत टूटे स्वर में निकला, 'ओ३म् वासुदेवायनमः'

इसके उपरान्त उनके मुंह से जो कुछ निकला वह अस्पष्ट था। होठ हिल रहे थे। वे लोग कान लगाकर सुनने लगे। उनकी समझ में केवल तीन टूटे शब्द आये…'

'…द · ह…ति…नै . यं…पावकः' मुख-मण्डल प्रदीप्त हो गया।

सूर्यास्त हुआ। प्रकाश का अरुण पुञ्ज दिशा की भाल पर था। उसकी अगणित रेखायें गगन में फैली हुई थीं।

देशमुख ने बिलख कर कहा, 'झाँसी का सूर्य अस्त हो गया।'

रघुनाथसिंह बिलख-बिलखकर रोने लगा।

दामोदरराव ने चीत्कार किया।

बाबा गङ्गादास ने कहा, 'प्रकाश अनन्त है। वह कण-कण को भासमान कर रहा है। फिर उदय होगा। फिर प्रत्येक कण मुखरित हो उठेगा।'

[९२]

बाबा गङ्गादास ने सचेत किया, 'झाँसी की रानी के सिधार जाने को अस्त होना कहते हो ! यह तुम्हारा मोह है। वह अस्त नहीं हुई। वह अमर हो गई। कायरता का त्याग करो। उस घास की गंजी पर इन दोनों देवियों के शवों का दाह-संस्कार करो। अङ्गरेज इन लोगों की खोज में आते होंगे। शीघ्रता करो।'

वे दोनों सम्भले।

देशमुख ने कहा, 'घास की गंजी बड़ी है ?'

बाबा गङ्गादास ने उत्तर दिया, 'गंजी तो छोटी-सी है।'

देशमुख कष्टपूर्ण स्वर में बोला, 'झाँसी की रानी के दाह के लिये आज लकड़ी भी सुलभ नहीं ! घास की अग्नि तो इन दो शवों को केवल झोंस देगी। सवेरे शत्रु इनके अर्धदग्ध शरीर देखेंगे, हँसेंगे और शायद कहीं फेंक देंगे।'

बाबा ने सिर उठाकर अपनी कुटिया को देखा।

बोले, 'इस कुटिया में काफी लकड़ी है। उधेड़ डालो। अन्त्येष्टि का आरम्भ करो।'

रघुनाथसिंह ने प्रार्थना की, 'आपकी कुटी की लकड़ी ! आप एक कृपा करें तो।'

बाबा ने पूछा, 'क्या ?'

रघुनाथसिंह ने उत्तर दिया, 'फिर से कुटी बनाने में आपको असुविधा होगी, इसलिये कुछ भेंट ग्रहण करली जावे।'

बाबा मुस्कराये।

बोले, 'यह लकड़ी मेरी नहीं है। जिन्होंने पहले दी थी वे फिर दे देंगे। देर मत करो। कुटिया को उधेड़ो।'

देशमुख ने कहा, 'उसमें का सामान बाहर निकाल लिया जाय।'

बाबा भीतर से एक कम्बल, तूँबी, चटाई और लँगोटी उठा लाये। बोले, 'बस और कुछ नहीं है। जल्दी करो।'

दोनों शवों को बाहर रखकर, दामोदरराव को एक ओर बिठलाया और वे तीनों सिपाही कुटी को उधेड़ने में लग गये। बात की बात में कुटी को तोड़कर लकड़ी इकट्ठी कर ली।

गन्जी की कुछ घास घोड़ों को डाल दी और कुछ से चिता का काम लिया।

रानी का कंठा उतार कर दामोदरराव के पास रख दिया। मोतियों की एक छोटी कंठी उनके गले में रहने दी। उनका कवच और तवे भी।

चिता चुनने के पश्चात् रानी लक्ष्मीबाई और मुन्दरबाई के शवों को चिता पर देशमुख ने रख दिया और अग्नि-संस्कार कर दिया। अपनी और रघुनाथसिंह की वर्दियाँ भी चिता पर रख दीं।

आधी घड़ी में चिता प्रज्वलित हो गई।

उस कुटी की भूमि पर रक्त बह गया था। उसको देशमुख ने धो डाला।

परन्तु उन रक्त की बूँदों ने पृथ्वी पर जो इतिहास लिख दिया था वह अमिट रहा।

[६३]

कुछ दूरी पर रिसाले की टापों का शब्द सुनाई पड़ा। वह रिसाला अङ्गरेजों का था।

देशमुख—'रानी साहब की तलाश में वैरी घूम रहे हैं।'

रघुनाथसिंह—'आप दामोदरराव को लेकर तुरन्त निकल जाइये।'

देशमुख—'आप दीवान साहब क्या झाँसी की ओर जायेंगे ?'

रघुनाथसिंह—'झाँसी में मेरा अब क्या रक्खा है। मैं इन सवारों को मारकर मरूँगा। ये लोग चिता की ओर जायेंगे। इसे उसेलेंगे। जाइये तुरन्त जाइये। रात को कहीं छिप जाना। विश्राम करना।'

देशमुख—'कण्ठे का क्या होगा ?'

रघुनाथसिंह—'मृत सिपाहियों के बाल-बच्चों में बाँट देना या कुछ भी करना।' देशमुख ने दामोदरराव को पीठ पर बांधा और घोड़े पर सवार होकर चल दिया।

रघुनाथसिंह ने गुलमुहम्मद से कहा, 'कुंवर साहब आप भी जाइये। मेरे घोड़े को छोड़ दीजिये, उस बेचारे को कोई न कोई रख लेगा। आवरे में से मेरी बन्दूक और गोली बारूद का झोला लाने की कृपा करिये।'

गुलमुहम्मद घोड़े के पास गया। दोनों के आवरों में से गोली बारूद और बन्दूकें निकाल लीं। और, दोनों को जीन सहित छोड़ दिया।

गुलमुहम्मद ने रघुनाथसिंह को बन्दूक और गोली बारूद देते हुये कहा, 'दीवान साहब, अम कहां जायगा ? अम राहतगढ़ से जब चला तब पांच सौ पठान था। अब एक रह गया। अकेला कहां जायगा ? अम भी मरेगा और मरेगा। बाई, हमको मत हटाओ।'

रघुनाथसिंह ने कहा, 'मैं चाहता हूँ आप जिन्दा रहें और इनकी पवित्र हड्डियों और भस्म को किसी गैर को न छूने दें। रहा मैं, सो जाने की बहुत जल्दी पड़ रही है। वे अभी रास्ते में होंगी उनसे जल्दी मिलना है।' और बन्दूकें भरने लगा।

रघुनाथसिंह पागलों का-सा हँसा ।

गुलमुहम्मद ने एक क्षण सोचा । बोला, 'यह फकीर साहब हड्डियों की हिफाजत करेगा ।'

रघुनाथसिंह ने कहा, 'फकीर नहीं करेगा । आप चाहें तो कर सकते हैं ।'

'अच्छा', गुलमुहम्मद बोला, 'अम जिन्दा रहेगा । खाक और हड्डियों पर चबूतरा बना देगा ।'

'अपनी बन्दूक भी मुझको दे दो कुंवर साहब', रघुनाथसिंह ने प्रस्ताव किया ।

गुलमुहम्मद ने प्रतिवाद किया, 'अब कुंवर साहब नहीं । अम फकीर बनकर रहेगा । गुलसाईं नाम होगा ।'

उसने अपनी बन्दूक दे दी ।

'इसको भर दीजिये', रघुनाथसिंह ने अनुरोध किया ।

'बस बाई । अब बन्दूक या कोई हथियार नहीं छुयेगा । अम खुदा-पाक की याद में बाकी जिन्दगी खतम करेगा ।'

एक तरफ जाकर गुलमुहम्मद ने अपनी वर्दी जलती हुई चिता पर फेककर खाक करदी—केवल साफा रक्खा । उसके एक टुकड़े की लँगोटी लगाई । बाकी ओढ़ने-बिछाने को रख लिया ।

खूब हँसकर बोला, 'अब अम बिलकुल आजाद हो गया बाई ।'

रघुनाथसिंह ने दोनों बन्दूकें भरलीं । गोली-बारूद के झोले लटकाये । गुलमुहम्मद के पास गया । उसको देखकर विस्मित हुआ ।

बोला, 'आप तो सचमुच फकीर हो गये ! अच्छा सलाम कुंवर, साईं साहब । भूल-चूक गलती माफ कीजिये ।'

'सलाम', गुलमुहम्मद ने कहा ।

जिस ओर से टापों का शब्द आ रहा था । रघुनाथसिंह उसी दिशा में गया । पास जाकर एक आड़ ली । लेट गया । प्रतीति कर ली कि अङ्गरेजों का रिसाला है और कुटी की ओर आ रहा है ।

'धाँय धाँय' बन्दूक चलाई।

'धाँय धाँय', अङ्गरेजी रिसाले का जवाब आया।

काफी समय तक रिसाले के सैनिकों को हताहत करता रहा। फिर एक गोली से मारा गया।

चिता 'साँय–साँय' जलती रही।

गुलमुहम्मद चिता से कुछ दूर जाकर लेट गया। साफे के टुकड़े से अपने को ढका। बेहद थका हुआ था, सो गया। सवेरे जब आँख खुली देखा कि चिता के स्थान पर कुछ जली हड्डियां बाकी रह गई हैं।

उसके मुंह से निकल पड़ा, 'ओफ रानी साहब का सिर्फ यह हड्डी रह गया है। और उस हसीन लड़की का !'

फिर तुरन्त उसने मन में कहा, 'ओ: कबी नहीं। वो मरा नहीं। वो कभी नईं मरेगा। वो मुर्दों को जान बख्शता रहेगा।'

चिता के ठण्डे हो जाने पर गुलमुहम्मद ने उस स्थान पर एक चबूतरा बाँधा और कहीं से फूल लाकर उस पर चढ़ाये।

अङ्गरेजी सेना का एक दल रानी की ढूँढ़ खोज में वहां पर आया। चबूतरा अभी सूखा न था। उस दल के अगुआ का कुतूहल जागा। गुलमुहम्मद से उसने पूछा, 'यह किसका मजार है साईं साहब ?'

गुलमुस्मद ने उत्तर दिया, 'अमारे पीर का, बौ बौत बड़ा वली था।'

परिशिष्ट

(१)

कई दिन तक अङ्गरेजों को रानी के शरीरान्त का पता न लगा। जब लगा तब जनरल रोज ने कहा था, 'यह थी उनमें सर्वश्रेष्ठ और सर्वोत्कृष्ट वीर।'*

अठारह जून के सूर्यास्त के पहले ही रावसाहब के मोर्चे छीन लिये गये थे। थोड़ी देर तक तात्या ने बिगड़े को बनाने का अथक परिश्रम किया, परन्तु अन्त में दोनों को रणक्षेत्र छोड़ना पड़ा। रावसाहब छिपते-भटकते चार वर्ष बाद साधु वेश में पकड़ा गया और उसको बिठूर में फाँसी दी गई। उसके सम्पूर्ण जीवन में उसका परिणाम ही महान् था और अङ्गरेजों की प्रतिहिंसा की विराटता थी, उसको बिठूर में ले जाकर फाँसी पर चढ़ाना। तात्या ने निस्सन्देह कभी हार नहीं मानी। वह लक्ष्मीबाई के ऊंचे राजनैतिक आदर्श तथा रण-पाँडित्य का सच्चा अनुयोगी और उत्तराधिकारी था। जब अङ्गरेजों ने १८५८ के अन्त तक सारे हिन्दुस्तान को अपने फौजी शिकञ्जे में जकड़ लिया, तब भी तात्या आँधी और बिजली की तरह तड़पता और तड़कता रहा और अङ्गरेजों को भूल-भुलैयां खिलाता रहा। तात्या को आशा थी कि इतना सब खो जाने पर भी मैं देश को जगा दूंगा और खड़ा कर लूंगा, परन्तु जैसे कि इस अभागे देश में होता चला आया था, राजपूताने के एक उसके मित्र राजा ने विश्वासघात करके पकड़वा दिया। तात्या को शिवपुरी में अप्रैल सन् १८५९ में फाँसी दी गई।

तात्या का मरण उसके जीवन से भी बढ़कर ज्वलन्त था। फाँसी पर चढ़ने के समय वह योगियों की तरह शान्त था। उसने कहा था,

---

*She was the best and the bravest of them all.

'मैंने जो कुछ किया अपने स्वामी पेशवा की आज्ञा से किया, और कुछ बुरा नहीं किया।' नाना साहब का कोई पता नहीं चला। पहली नवम्बर सन् १८५८ को विक्टोरिया का विख्यात घोषणा पत्र जारी किया गया। बांदा के नवाब ने आत्मसमर्पण किया और उनको कुछ पैंशन मिल गई। कम्पनी का, थोड़े-से अंग्रेज पूंजीपतियों और व्योपारियों का राज्य समाप्त हुआ और यह पुराना देश नये इङ्गलैंड के समग्र पूंजीपतियों और व्योपारियों के केन्द्रस्थ शासन के समक्ष हो गया।

झाँसी के हृदय में झाँसी की रानी का राज्य सदा बना रहा—लावनियों में, फाँगों में, गाँवों और शहरों में, किसान और मजदूर उनके सम्बन्ध में अपने निजत्व को प्रकट करते रहे हैं। उनकी एक-एक स्मृति झाँसी नगर में आज भी जनता को पकड़े हुये है—होली जलने के बाद की प्रथमा के दिन झाँसी वाला होली नहीं मनाता, वह दिन उसके लिये सूतक का है।

यदि हैदराबाद के निजाम और ग्वालियर के सिंधिया अङ्गरेजों का पक्ष न लेते, तो अङ्गरेज १८५८ के बाद इस देश में बिलकुल नहीं ठहर सकते थे।

उनके उस समय चले जाने के पश्चात् यहाँ क्या होता यह देश के विवेक और अविवेक के लिये एक वहुत बड़ी समस्या होती।

उसी समय से अंग्रेजों ने समझ लिया कि हिन्दुस्थानी सेना में चुने हुये लोग भर्ती किये जाने चाहिये, मारके ऊंचे पदों से उनको दूर रखना, सारे देश को निश्शस्त्र कर देना और मृग-मारीचिकायें दिखलाते रहना चाहिये।

परन्तु राजाओं और नवाबों को हाथ में रखना सदा आवश्यक समझा गया।

गोद का कानून स्वीकार किया गया। धार्मिक स्वतन्त्रता मानली गई। मानो हिन्दुस्थान को बड़ी गनीमत मिली।

झाँसी की रानी, तात्या, बहादुरशाह इत्यादि के पीछे जो लोग हुये,

भारतीय आत्मा की अमरता के साथ उनका अटूट क्रम रहा है। केवल थोड़े के ही नाम बतलाये जा सकते हैं……।

'परमहंस रामकृष्ण, स्वामी दयानन्द, विवेकानन्द, महात्मा…और, और…

[२]

झाँसी में जनेऊ का आन्दोलन घोर रूप पकड़ता, परन्तु बिठूर के मिहमानों का लिहाज करके राजा गङ्गाधरराव थोड़े नरम पड़ गये थे। तमेरों ने जनेऊ पहिने थे और वे अपने जनेऊ की आन पर मर-मिटने को तैयार थे। उपन्यास में जाति का नाम नहीं दिया गया।

(३)

पजनेश ने जिस स्त्री को प्रेम के वशीभूत होकर रख लिया था, उसकी जाति उन्होंने अपनी कविता में लिख दी थी। उनका छन्द कवि की स्वच्छन्दता और उस समय की अवस्था का द्योतक है। पूरा छन्द इस प्रकार है:—

सिवि चूके सची से अप्सरा सें इन्द्र चूके
कृष्ण चूके कुबजा सें सुरत न संभारी है।
बड़े बड़े देव और दानव से चूक जात
तुमहू न चूको तो सकल का तुम्हारी है ?
भन पजनेस एक खत्रानी से हमहूं चूके
चूक जात जग में बिना सक नरनारी है।
कोमल तन ललित नैन बसत निसिबासर मन
प्यारी हमारी की लाज गंग धारी है।

(४)

हृदयेश ने अपनी कविता जितनी लिख पाई थी वह पूरी की पूरी नीचे दी जाती है। मेरे पास हृदयेश की कविता उन्हीं के हाथ की लिखी है, जो मुझको भाई श्री भगवानदास सेठ की कृपा से प्राप्त हुई:—

बड़े बड़े असराफ गरद कर ऐसो कलजुग झाला
बिभचारिन बिस्वन के उर में वर मुक्तन की माला
भन हृदेश पंडित गुनमंडित ते धारे मृगछाला
गान तान वारे धन वारे ओढ़ें फिरें दुसाला। १।

महावीर वीरन के वेटा बैठे गहें किनाला
खसिया भँडुआ रांड मिलावें बांधे फिरें दिवाला
कीमखाब के पैरन वारे भोगें अन्न कसाला
घोड़िन की खिजमित कर तिनके परे कान में आला। २।

पतिव्रता लरकन को तरसें बिभचारिन घर लाला
झूठे के मुख लाली देखी सांचे के मुख काला
सत्य बचन परमान चलन को परे दुष्ट के जाला
चुगलखोर धनचोर मसखरा परे सेज सुखसाला। ३।

देव मन्दिरिन दिया न बाती गोरन पै उजियाला
भूमदेव विप्रन के देखो कोंड़ी देत कसाला
रंडिन कों भोजन कों सिन्नी ऊपर पान मसाला
साधुन कों नहिं चून चनन को सेवें देव दिवाला। ४।

चतुर नरन को बदसूरत की कूरन के घर बाला
मूरख बैठे मौज उड़ावें परबीनन पग छाला
भूपत कृपा करत नीचन पै कर अनीत प्रतिपाला
जबर जोर कलिकाल काल कौ गुन को चलै न चाला। ५।

मुसलमान सीतापति सुमिरें हिन्दू मुख हकताला
मुसलमान मौसी कर टेरें हिन्दू टेरें खाला
साँची कहें सुनै को बिनती भयौ नीच बल वाला
अधरम प्रकट भयो भूतल पै धसगौ धरम पताला। ६।
जगतगुरू विप्रन कों निन्दत बनिक पुत्र घर बाला
मुछमुंडन की दच्छा लै लै फेरें तुलसीसाला। ७।

मालपुआ हलुआ भोजन दै गुप्त खिलावत लाला
अधरम नाम जपत सीतापत डार गोमुखी माला
दीसें भक्त बड़े ठाकुर के तिलक सरसरे भाला
जाचत देख विप्र साधुन कों होत क्रोध को जाला । ८ ।
कासीपुरी अजुध्या मथुरा इनको जात कसाला
दोम दोम कर जात मदारन दाब काँख में लाला
पूजत प्रेत गुरैया बाबा छोड़ देव बिसाला
निजपति मुच्छ तुच्छ कर जारत उपपति हित प्रतिपाला । ९ ।
बिछिया दृगन कोर भर काजर अङ्ग आभरन जाला
मुलकट कंचुक कसत कुचन पै उर धारें बनमाला
अधरम··· ··· ···
यहाँ तक कवि ने लिख पाया ।

(५)

नारायण शास्त्री की प्रेमिका छोटी का असली नाम लोग मछरिया बतलाते हैं । उपन्यास में जितने नाम आये हैं सब वास्तविक हैं । मैंने केवल मछरिया का नाम बदलकर छोटी कर दिया है । झाँसी में नारायण शास्त्री में तंत्रबल का जो रूप जनपरम्परा में मिला है वह बड़ा संकेतपूर्ण है । कहते हैं कि एक रात नारायण शास्त्री. काली का पूजन करके माँस और मदिरा का सेवन करना ही चाहते थे कि राजा गङ्गाधरराव टोह लगाकर आ पहुँचे । राजा ने पूछा, 'बोतल में क्या है ?'

शास्त्री ने उत्तर दिया, 'दूध ।'

'और कटोरे में क्या है शास्त्री जी ?'

'गुलाब के फूल ।'

राजा ने बोतल और कटोरे का निरीक्षण किया तो बोतल में दूध और कटोरे में गुलाब के फूल पाये । जब नव्वे वर्ष के भीतर ही जन-परम्परा ने एक वास्तविकता को यह रूप दे दिया तो अपने बड़ों के स्वा-

भाविक किन्तु लोकाचार विरुद्ध कृत्यों को, उसने गाथाओं में जो रूप दे दिये हैं, उनको समझने में बहुत बाधा नहीं रहनी चाहिये।

[६]

गङ्गाधरराव अत्यन्त क्रोधी थे। उनके अत्याचारों की बहुत सी कहानियाँ प्रसिद्ध हैं। उनके प्रति जनता की घृणा रानी लक्ष्मीबाई के नाम के कारण नरम पड़ गई थी और अब भी नरम है।

[७]

झाँसी में हरदी कूं कूं उत्सव महाराष्ट्रों में बहुत उत्साह के साथ मनाया जाता था। झाँसी की साधारण जनता भी उसको मनाया करती थी। अब भी यह सुन्दर उत्सव मनाया जाता है, परन्तु उसमें अब वह ओज नहीं रहा। जीवन के संघर्षों और वर्तमान उदासीनता में वह घिस गया है। रानी लक्ष्मीबाई इस उत्सव को कितनी उमंग के साथ मनाती थी, उसका ब्योरेवार वर्णन विष्णुराव गोडशे के 'माझा प्रवास' में है।

[८]

पेशवा के साथ अङ्गरेजों ने सन् १८०२ में जो सन्धि की थी, उसको पारसनीस ने अपनी पुस्तक में उद्धृत किया है।

[९]

भग्गी दाउजू जाति के सुनार थे। वे झाँसी के गंदीगर मुहल्ले में रहते थे। नत्थेखाँ की लड़ाई पर उन्होंने तीन चार पृष्ठों में एक रायसा लिखा था। वह श्री नारायण दास शृङ्गीऋषि के पास है। उन्हीं की कृपा से रायसा मुझको प्राप्त हुआ। मन्जु छन्द में है। प्रत्येक छन्द का चौथा चरण है—

'झाँसी की जो लटी तकै तिहिं खायें कालका माई।'

भग्गी ने 'रानी की जो लटी तकै' नहीं लिखा है; उन्होंने 'झाँसी' शब्द प्रयुक्त किया है और उसकी सार्थकता बहुत द्योतक है। झाँसी १८५७ के विप्लव के जमाने में जोश से उमड़ पड़ी थी। किसी जाति के लिये भी नहीं कहा जा सकता कि उसमें लड़ाई के लिये कम जोश था।

यह ऐतिहासिक सत्य है कि उनाव दरवाजे पर कोरियों की तोप थी और तोपखाने का सञ्चालक पूरन कोरी था। उसके पौत्र ने मुझको सारी घटनायें बतलाईं और झलकारी के बिकट और निर्भीक पराक्रम का हाल सुनाया। जनरल रोज ने अपनी डायरी में झलकारी की घटना का वर्णन नहीं किया है, परन्तु कोरियों में वह घटना विख्यात है। ४ एप्रिल १८५८ की रात को रानी के निकल जाने पर, पांच के बड़े सवेरे झलकारी घोड़े पर बैठकर रोज के सामने पहुंची और उससे कहा, 'रानी को कहां ढूँढ़ते फिरते हो ? मैं हूं रानी, पकड़लो मुझको।' झलकारी बहुत उमर पाकर मरी। मुझको उसके दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हो पाया। उसके मरने का पता तब लगा, जब रानी की बातों का पता लगाते लगाते मैं कोरियों के सम्पर्क में आया। झाँसी में ऊँची जाति के कहलाने वाले लोग कोरियों के हाथ का पानी पीते हैं, घर तो उनके इतने स्वच्छ हैं कि जान पड़ता है कि अभी अभी किसी यज्ञ को समाप्त करके निबटे हों। कोई आश्चर्य नहीं यदि रानी ने हरदी कूँ कूँ के उत्सव में झलकारी को अपने अङ्क में भर लिया हो।

(१०)

अङ्गरेज इतिहासकारों ने रानी के वाक्य को, जिसका उच्चार उन्होंने अङ्गरेजों द्वारा झाँसी के अपहरण के समय किया था, यह रूप दिया—

'मेरा झाँसी देंगा नहीं।'

इसकी नकल बहुत से भारतीय लेखकों ने की है। रानी हिन्दी और मराठी दोनों जानती थीं। इतनी कुशाग्र बुद्धि थीं कि झांसी आकर उन्होंने बुन्देलखण्डी भी सीख ली थी। उनके वाक्य का तोड़-मरोड़ एलिस ने अपने लेख में किया और भारतीय लेखकों ने बिना जाने बूझे उसकी नकल करदी। १८५७ के लगभग अङ्गरेज खासी हिन्दी भाषा को बोल लेते थे, परन्तु हिन्दी भाषा को कुरूप करना उनकी राष्ट्रीय और स्वभावनिहित उपेक्षा का एक उदाहरण है। वे आज भी फ्रेन्च; जर्मन और रूसी शब्दों का तोड़-मरोड़ करते हैं। यहाँ तक कि एमेरिका में बोली

और लिखी जाने वाली अङ्गरेजी तक पर नाक भोंह सिकोड़ लेते हैं। रानी के मुंह से निकले हुये हिन्दी के प्रतिवाद वाक्य को सुरक्षित रखने में एलिस या किसी भी अङ्गरेज को रुचि हो ही क्यों सकती थी ?

(११)

रानी ने शूरमाओं की एक कुँवरमण्डली स्थापित की थी। वे स्त्री-पुरुषों की सूक्ष्म जाँच करने की बड़ी क्षमता रखती थीं। झाँसी की रक्षा के लिये उनको ऐसे लोगों की जरूरत थी जो अपने को होम देने के लिये सदा तैयार रहते हों। जिसको उन्होंने सुपात्र समझा उसको 'कुंवर' का सम्बोधन मिल जाता था। रानी ने जितनों को यह उपाधि दी, उनमें से किसी ने भी अपने बलिदान में कसर नहीं लगाई।

(१२)

रानी ने जो स्त्री सेना बनाई थी वह भारत का एक अचम्भा है। जनरल रोज, जनरल स्टुअर्ट, डाक्टर लो इत्यादि ने जो रानी के मुकाबिले में लड़ने वाली अंगरेजी सेना में झाँसी आये थे दूरबीनों द्वारा इस सेना का नियम संयम, शौर्य पराक्रम, और दुश्मन का होश ठिकाने लगाने वाली दृढ़ता को देखा था। इस सेना में महाराष्ट्र स्त्रियाँ बहुत कम थीं। बुन्देलखण्डी स्त्रियाँ बहुत ज्यादा और विविध जातियों की। यदि लक्ष्मीबाई स्वराज्य स्थापना के प्रयत्न में सफल हो जातीं तो भारत की नारी उस गिरी हालत में कदापि न होती जिसमें उसका एक अंश आज है। 'माझा प्रवास' का लेखक विष्णुराव गोडशे जब झाँसी आया तब झाँसी की स्त्रियों की स्वाधीनता को देखकर विस्मित हो गया उसको तो गुस्सा भी आया। स्त्रियाँ शान और हेकड़ी के साथ सन्ध्या समय मन्दिरों में जाती थीं, यह बात विष्णुराव को बहुत खटकी, क्योंकि उसने अन्यत्र न देखी थी। पर क्या अन्यत्र स्त्रियों की कोई बँटालियन थी ? कोई रेजीमेंट था ? उनमें से कोई कर्नल या कप्तान थीं ? सवेरे परेड में मर्दों को सबक सिखलाने वालीं, और घुड़सवारी में मर्दों के कान पकड़ने वालीं स्त्रियां, क्या शाम को मंदिर जाने के समय झेंपतीं, शर्मातीं और घूँघट डालकर

नायिका भेद को प्रोत्साहन देतीं ? परन्तु 'माझा प्रवास' का लेखक असली बात समझा न था।

मेरी दादी परदादी कहा करती थीं कि रानी जिस मिट्टी के ढेले को छू देती थीं वह सोना हो जाता था, जिस काठ के टुकड़े को स्पर्श कर देती थीं वह फौलाद बन जाता था ! मुझको आश्चर्य होता था। पर बात लगती बहुत अच्छी थी। सोचता था यदि मैं उस जमाने में होता तो डलियों ढेले उनके पास ले जाता और उनसे स्पर्श करवाकर सोना बनवा लेता, फिर दादी परदादी से पैसे मांगने की जरूरत ही न रहती। और वे काठ के टुकड़ों को फौलाद बना देती थीं ! यह उतना अच्छा नहीं लगता था। और आज ? आह ! उस रानी का स्पर्श तो प्राप्त नहीं है, पर नाम ने मिट्टी के ढेलों का स्वर्ण बना दिया और काठ के टुकड़ों को वज्र—और जब तक भारत भारत है वह नाम यह काम करता ही रहेगा।

यही कारण है कि अङ्गरेज पल्टन के बलवाइयों के सामने लक्ष्मी–बाई महल के झरोखे पर चुनौती देती हुई अकेली खड़ी हो गई ! यही कारण है कि सदाशिवराव नेवालकर के झाँसी नरेश बन जाने की घोषणा पर कोई भी सीखी सिखाई सेना हाथ में न होते हुये भी लक्ष्मीबाई कुछ मिट्टी के ढेलों और काठ के टुकड़ों को लेकर करेरा में भिड़ गई और सदाशिवराव को परास्त कर दिया ! यही कारण है कि लक्ष्मीबाई नत्थेखाँ के बीस-हजार सिपाहियों का मुकाबला झाँसी के अधकचरे स्त्री पुरुष सिपाहियों को लेकर कर गई ! और उसको मार भगाया !!

सागरसिंह डाकू से जनरल बना और खण्डेराव फाटक की रक्षा में मरकर अनन्त गौरव पा गया।

(१३)

जान रसल ने जो आवेदन पत्र दिल्ली १७१२ में भेजा था उसका अनुवाद पारसनीस की पुस्तक में है। उसका सारांश मैंने इस उपन्यास में दे दिया है।

(१४)

सर जान मालकम सन् १८२५ के लगभग मध्यप्रदेश का प्रधान सेनापति और गवर्नर था। उसने एक पुस्तक Memories of Central India लिखी है। अब यह पुस्तक अप्राप्य है! मुझको कलकत्ते की Imperial Library से उधार मिल गई थी। मालकम ने लिखा है कि वह जमाना चाहे दूर हो, पर आवेगा अवश्य जब हमको हिन्दुस्थानियों का देश उन्हें वापिस करना पड़ेगा।

(१५)

ग्वालियर से नाटक मंडली लगभग जनवरी सन् १८५८ में आई थी। रानी यदि फौज को विकट तैयारी और पराक्रम दे सकती थीं तो कलाओं को प्राण देने की भी साध रखती थीं।

ग्वालियर से आई हुई नाटक मंडली को हरिश्चन्द्र नाटक का अभिनय करने के उपलक्ष में उन्होंने चार हजार रुपया पुरस्कार में दिया था। गवैये, बीनकार, पखावजी इत्यादि सब उनका आश्रय पाये हुये थे। सुखलाल चित्रकार जाति का काछी था। उसकी चित्रकला को वे पुरस्कृत करती रहती थीं। मुख पृष्ठ पर दिया गया रानी का और गङ्गाधरराव का चित्र उसका ही बनाया है।

(१६)

विष्णुराव गोडशे पूना की दिशा से, ग्वालियर होता हुआ आया था। वह भट्ट भिक्षुक था। रानी ने जब झाँसी में यज्ञ किया तब वह मौजूद था और युद्ध के दिनों में किले में ही था। उसने उन दिनों का आंखों देखा हाल अपने 'माझा प्रवास' में लिखा है; उपन्यास की कुछ घटनाएँ 'माझा प्रवास' के आधार पर हैं। उनके सत्य का निर्धार किम्वदन्तियों और जनरल रोज के खरीतों से होता है। पारसनीस ने अपनी पुस्तक में बहुत सामग्री विष्णुराव की पुस्तक से ली है। परन्तु पारसनीस

ने विष्णुराव की पुस्तक का कोई हवाला नहीं दिया है। कम से कम हिन्दी के अनुवाद में मुझको नहीं मिला।

यज्ञ के समय यज्ञ विधान की एक समस्या खड़ी हो गई। समस्या का जिक्र उपन्यास में है। उसको विष्णुराव ने अपने शास्त्र ज्ञान से सुलझाया था। उसने जरा दंभ से—और शायद वह दंभ गलत भी न था—अपने पाँडित्य का वर्णन 'माझा प्रवास' में किया है।

(१७)

रानी लक्ष्मीबाई का महल १८५८ में पुस्तकालय के साथ जलाया गया था। पुस्तकालय तो बिलकुल खाक हो गया था परन्तु, महल बच गया था। इसमें सन् १८९६ के लगभग फिर आग लगी। मैं उस समय छः वर्ष का था। मेरे सामने जल रहा था और न जाने मैं क्यों वहाँ खड़ा खड़ा रो रहा था। शायद मेरे आँसुओं की जिम्मेसारी परदादी की बतलाई हुई कहानियों पर थी—ऐसी रानी की कहानियाँ जिसके छूने से मिट्टी के ढेले सोना हो जाते थे और काठ के टुकड़े फौलाद!

बख्शी की हवेली का पता मुझको १९१६ में लगा था, परन्तु उसका इतिहास १९३२ के उपरांत मालूम हुआ। बख्शी का नाम उसकी जाति में अब तक इतना प्रिय है कि बच्चों के नाम भाऊ रख दिये जाते हैं! बख्शी की हवेली अच्छी हालत में है और श्री जिनदास कोचर के अधिकार में है।

(१८)

अभी हाल में श्री सी० ए० किंकेड, पेंशन प्राप्त आई० सी० एस० ने एक पुस्तक अंगरेजी में लिखी है Laksmi Bai, rani of Jhansi. पुस्तक में कुल १०२ सफे हैं, परन्तु लक्ष्मीबाई को कुल १४ सफे दिये हैं, और, नाम है 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई!' इन १४ पृष्ठों में भी अनेक गलतियाँ हैं। उन्होंने जहाँ जनरल रोज के लिये कहा है कि वह बेहद, शक्ति वाला और अत्यन्त चतुर सेनापति था तहाँ रानी की प्रशंसा में भी कुछ शब्द कहे हैं-*He* (General Rose) was a man of

boundless energy and of the highest military talents, रानी के लिये श्री किंकेड ने कहा है—वह शिक्षित और संस्कृतिमयी थीं (She was an educated and polished lady.) श्री किंकेड की कल्पना है कि न तो लक्ष्मीबाई हत्यारी थीं और न उन्होंने गदर किया। उनका कहना है कि वह एक Lost Cause--हारी पाली–के लिये लड़ीं अङ्गरेज को भले ही कबूल हो, पर मुझको मान्य नहीं।

रानी स्वराज्य के लिये लड़ीं, स्वराज्य के लिये मरीं और स्वराज्य की नींव का पत्थर बनीं।

उनके देश वाले यही मानते आये हैं और जब तक भारत में नारीत्व और नरत्व रहेगा यही माना जायगा। परिशिष्ठ का यह खण्ड प्रतिकूल इतिहासकारों और किंकेड सरीखे अनुकूल लेखकों की आलोचना के लिये नहीं लिख रहा हूं। जिनको वास्तव में भ्रम निवारण करना हो वे इस उपन्यास को पढ़ें।

(१९)

दहेज में दासियों का दिया जाना राजपूताने की विशेषता है। यह जहर मध्यभारत का नहीं है। बुन्देलखण्ड में तो इसका नाम भी नहीं। 'माझा प्रवास' के लेखक ने उज्जैन के यज्ञ का जिक्र करते हुये लिखा है कि एक ब्राह्मण को १३ दासियाँ दी गई थीं और वे उस ब्राह्मण के साथ अपना अञ्चल बांधकर चल दीं थीं! झाँसी की रानी को भी कई दासियाँ मिलीं थीं, परन्तु उन्होंने इनके साथ सदा सखी–भाव वर्ता।

(२०)

सुन्दर जिस बुर्ज पर काम कर रही थी वह अब भी टूटी फूटी हालत में है। उसके पराक्रम का प्रमाण ओर्छे दरवाजे बाहर उन अङ्गरेजों की कब्रें हैं जिनको कर्नल सुन्दरबाई की तोपों का मुकाबला करना पड़ा था।

(२१)

जूही की कोई कब्र नहीं बनी और न काशीबाई का कोई चैत्य। झाँसी वालों के हृदय में जो आसीन हों उनको कब्र या चैत्य की क्या

जरूरत ? सौन्दर्य और शौर्य का सम्मेलन संसार में बहुत नहीं दिखलाई पड़ता, परन्तु उनमें बहुत था।

(२२)

रानी घोड़े की अद्भुत पहिचान रखती थीं। एक बार एक सौदागर दो घोड़े लाया। दोनों का दाम एक एक हजार बतलाया। रानी ने जल्दी जाँच कर ली। जांच पड़ताल करने के बाद एक का दाम उन्होंने एक हजार रुपये कूता और दूसरे का पचास रुपया! दोनों घोड़े एकसे थे। देखने वाले दंग रह गये। सौदागर तो अपने घोड़ों को जानता ही था, परन्तु उसने कुतूहल शान्ति के लिये रानी से प्रश्न किया।

'इस घोड़े का दाम एक हजार और दूसरे का पचास क्यों श्रीमन्त ?'

उत्तर मिला, 'जिसके दाम पचास रुपये बतलाये हैं उसकी छाती के भीतर एक पुरानी चोट है।'

सौदागर ने स्वीकार किया।

(२३)

दामोदरराव को रामचन्द्र देशमुख ग्वालियर से ले जाकर कुछ दिनों जंगलों में छिपाये रहा। जब रानी विक्टोरिया की क्षमा-घोषणा हो गई तब देशमुख उसको लेकर इन्दौर में प्रकट हो गया। दामोदरराव का देहान्त कुछ वर्ष हुये तब हुआ था और रामचन्द्र देशमुख का लगभग १८८५ में। मैं दामोदरराव से मिला हूं और बातचीत भी की है।

(२४)

रानी लक्ष्मीबाई के भाई की प्रपौत्री श्रीमती शेवडे नागपूर में हैं। वे कर्वे यूनिवर्सिटी की ग्रेजुयेट हैं। उन्होंने इस उपन्यास का अनुवाद मराठी में किया है।

डा० वृन्दावनलाल वर्मा-साहित्य

उपन्यास

झांसी की रानी लक्ष्मीबाई	६)
माधव जी सिन्धिया	६)
मृगनयनी	५)
अमरबेल	५)
कचनार	४॥)
टूटे कांटे	४।)
गढ़कुण्डार	४)
बिराटा की पद्मिनी	४)
भुवन विक्रम	३॥)
अचल मेरा कोई	३।॥)
सोना	३)
आहत	३)
अहल्याबाई	२।)
कुण्डली चक्र	२।)
संगम	२।)
उदय किरण	२)
रामगढ़ की रानी	२)
प्रत्यागत	१॥)
मुसाहिब जू	१॥)
प्रेम की भेंट	१।)
लगन	१।)
कभी न कभी	१।)

कहानी संग्रह

दबेपांव	२)
ऐतिहासिक कहानियां	१)
शरणागत	१।)
कलाकार का दण्ड	[illegible]
१८५७ के अमरवीर	१)

मेंढकी का ब्याह	[illegible]
अंगूठी का दान	[illegible]
[illegible] समूह	१)
[illegible]	॥)

नाटक

[illegible] की रानी	२)
[illegible]	२।)
पूर्व की ओर	२।)
ललितविक्रम	१॥)
राखी की लाज	[illegible]
[illegible]वट	२।)
[illegible] की खोज	१।)
[illegible] कण्ठ	१।)
[illegible] रबल	१।)
फूलों की बोली	१।)
बांस की फांस	[illegible]
निस्तार	१)
मंगलसूत्र	१)
देखा देखी	॥=)

एकाङ्की

[illegible]	१)
[illegible] का कांटा	१)
लो भाई पंचो लो	॥)
पीले हाथ	॥)
जहांदारशाह	॥)
सगुन	॥)

स्फुट

बुन्देलखण्ड के लोकगीत	॥)

वर्मा जी को

उनके

अमर साहित्य पर

भारत सरकार

उत्तर प्रदेश राज्य

म० प्र० राज्य

तथा

साहित्यकार-संसद

हिन्दुस्तानी एकेडेमी

नागरी प्रचारिणी

के

सर्व श्रेष्ठ पुरस्कार

भेंट किये जा

चुके हैं

प्राप्ति [illegible]

[illegible]यूर प्रकाशन